# दक्षिण-एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की समस्यायें एवं सम्भावनायें (१९५० से १९९१ तक)

बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय की
पीएच० डी० (राजनीति विज्ञान) उपाधि हेतु
शोध-प्रबन्ध

१९९२



निर्देशिका
डॉ० जयश्री
एम० ए०, पीएच० डी०
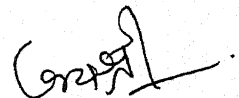
प्रस्तुति
विश्व आभा
एम० ए०, एम० एड०

राजनीति विज्ञान विभाग
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झांसी (उ. प्र.)

# CERTIFICATE

It is certified that the thesis entitled " दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोगी की समस्यायें एवं सम्भावनायें " (1950-1991) being submitted by **Miss VISHWA ABHA TRIPATHI** for the award of **Ph. D. in Political Science** of Bundelkhand University, Jhansi (U.P.) This is a record of candidate's work carried under my supervision and guidence , and has never been submitted for the award of any degree in any University.

**Dr. JAISHREE**
Head of the Department of Political Science
D.V. Post Graduate College
**ORAI (U.P.)**

## अनुक्रमाणिका

पृष्ठ संख्या

**परिशिष्ट :-**

## प्राक्कथन

*******************

दक्षिण एशिया एक भौगोलिक इकाई है जिसके नवोदित राष्ट्र विश्व की महाशक्तियों का आकर्षण केन्द्र बने हुये हैं । महाशक्तियों की दूषित महत्वाकांक्षायें समस्त दक्षिण एशिया को आक्रान्त एवं अशांत बनाने में संलग्न है । भारत दक्षिण एशिया का हृदय स्थल है । दक्षिण एशिया में भारत ही एकमात्र सशक्त एवं विकसित राष्ट्र है । महाशक्तियों की कूटनीति के कारण आज भारत की समस्त सीमायें युद्ध के लिये सर्वाधिक संवेदनशील हैं। वर्तमान समय में केवल मालदीव को छोड़कर समस्त पड़ोसियों के साथ भारत के सम्बन्धों में मतभेद, विवाद एवं तनाव व्याप्त है । पाकिस्तान का परमाणु कार्यक्रम , आंतकवाद एवं कश्मीर समस्या चिंता का कारण बनी हुई है । बांग्लादेश -पाकिस्तान सम्बन्ध भारत की अपेक्षा अच्छे हैं । श्रीलंका में शांति सेना की वापसी के पश्चात् भी स्थिति नाजुक बनी हुई है तथा नेपाल एवं भूटान जैसे पड़ोसी राष्ट्रों के साथ भारत के सम्बन्धों में गतिरोध उत्पन्न हो गये है ।

दक्षिण एशिया में व्याप्त तनावों को देखते हुये यह आवश्यक है कि समस्त राष्ट्र अपनी अखण्डता एवं अस्तित्व की रक्षा हेतु परस्पर सहयोग स्थापित करें। भारत पड़ोसी देशों के प्रति अपनायी गयी नीति पर पुर्नविचार करें जिससे समस्त अविकसित राष्ट्रों को अपने प्रति व्याप्त भय से मुक्ति दिला सके क्योंकि पड़ोसी राष्ट्रों से तनावयुकत वातावरण, जिससे समस्त दक्षिण एशिया अशांत बना हुआ है- भारत के लिये एक अभिशाप है । दक्षिण एशिया में सहयोग स्थापित करने हेतु ही बांग्लादेश के राष्ट्रपति स्व0 जियाउर्रहमान ने दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन " दक्षेस " का निर्माण किया । इस संगठन का भविष्य भी दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के पारस्परिक सम्बन्धों पर निर्भर करता है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध की विषयवस्तु दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की संभावनाओं की खोज करना है । क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने में किन-किन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है एवं इन समस्याओं को दूर करने के प्रयत्नों के पश्चात् भविष्य में सहयोग की क्या संभावनायें नज़र आ रही है , इसका अध्ययन शोध प्रबन्ध में करने का प्रयास किया गया है । शोध प्रबन्ध में ऐतिहासिक, तुलनात्मक, वर्णनात्मक एवं विश्लेषणात्मक पद्धतियों के द्वारा वैज्ञानिक अध्ययन करने का प्रयास किया गया है । अध्ययन हेतु दक्षिण एशिया के केवल सात राष्ट्रों- भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका एवं मालदीव जो दक्षेस संगठन के सदस्य है, को ही चुना गया है । बर्मा एवं अफगानिस्तान देशों की मात्र भौगोलिक स्थिति का ही वर्णन है । शोध प्रबन्ध में सन् 1950 से लेकर 1991 तक की ही घटनाओं का प्रस्तुतीकरण है ।

शोध प्रबन्ध के प्रथम अध्याय में इस क्षेत्र के समस्त देशों की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक स्थिति का वर्णन करते हुये समस्त देशों के पारस्परिक सम्बन्धों पर प्रकाश डाला गया है । द्वितीय अध्याय में समस्त देशों की आर्थिक, राजनैतिक एवं सामरिक स्थितियों का वर्णन करते हुये प्रत्येक देश के बाह्य राष्ट्रों से स्थापित सम्बन्धों को उजागर किया गया है । तृतीय अध्याय में क्षेत्रीय सहयोग की आवश्यकता पर बल देते हुये यह जानने का प्रयास किया गया है कि सहयोग की स्थापना हेतु इन देशों की क्या आकांक्षायें रहीं ? इन आकांक्षाओं की पूर्ति न होने पर क्या मतभेद व विवाद उत्पन्न हुये ? महाशक्तियों ने उन विवादों में क्या भूमिका अदा की ? शाति की स्थापना के लिये अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, क्षेत्रीय संगठनों का वर्णन किया गया है । चतुर्थ अध्याय में दक्षेस की स्थापना के लिये 1945 से 1980 तक परिस्थितियों के निर्माण, 1980 से 1985 तक स्थापना हेतु किये गये प्रयास एवं 1985 में दक्षेस की स्थापना का वर्णन किया गया है । पंचम अध्ययन में दक्षेस के सम्पन्न हुये ससम्मेलनों एवं उनकी समीक्षा

की गयी है । षष्ठ अध्याय में दक्षेस के कार्यों की सफलताओं एवं असफलताओं को बताते हुये दक्षेस के मार्ग में आने वाली समस्याओं का वर्णन है । दक्षेस के संगठनात्मक दोषो को बताया गया है एवं उन दोषों को दूर करने के लिये सुझाव भी प्रस्तुत किये गये है । अंत में सप्तम अध्याय में विभिन्न समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में दक्षेस के भविष्य पर विचार किया गया है एवं इसे राजनैतिक समझ का मंच बताते हुये सहयोग के आयामों की खोज की गयी है ।

## आ भा र

सर्वप्रथम मैं जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय के पुस्तकालयाध्यक्ष को इस शोध-प्रबन्ध हेतु , आवश्यक सामग्री उपलब्ध कराने के लिये अपना आभार प्रदर्शित करती हूँ । मैं इंडियन काउन्सिल ऑफ वर्ल्ड अफेयर्स , सप्रू हाऊस के पुस्तकालय अध्यक्ष एवं समस्त कर्मचारियों के प्रति आभारी हूँ, जिन्होंने अध्ययन-सामग्री उपलब्ध कराने में अपना सहयोग दिया । इंडियन काउन्सिल ऑफ सोशल साइंस रिसर्च के प्रति भी मैं अपना आभार प्रकट करती हूँ जिनके द्वारा इस शोधकार्य के लिये सहयोग प्राप्त हुआ । मैं तीनमूर्ति भवन स्थित नेहरू स्मृति पुस्तकालय एवं संसद पुस्तकालय , संसद भवन के प्रति भी हृदय से आभारी हूँ । जहाँ मुझे शोध-सामग्री प्राप्त कराने में भरपूर सहयोग दिया गया । मैं मेरठ विश्वविद्यालय , आगरा कालेज पुस्तकालय, बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय पुस्तकालय झाँसी, दयानन्द वैदिक महाविद्यालय पुस्तकालय उरई एवं पुस्तक मंदिर बनस्थली विद्यापीठ राज0 के प्रति भी सहायता हेतु आभारी हूँ । तद्उपरान्त मैं दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संघ के काठमाण्डू स्थित सचिवालय, एवं दक्षिण एशियायी देशों के दिल्ली स्थित दूतावासों के प्रति भी अपना आभार प्रकट करती हूँ , जिन्होंने उक्त शोध-प्रबंध के लिये मुझे समय समय पर अध्ययन - सामग्री भेजी ।

मैं डा0 जयश्री पुरवार अध्यक्ष राजनीति विज्ञान विभाग, दयानन्द वैदिक महाविद्यालय उरई की हृदय से आभारी हूँ जिनके कुशल निर्देशन में उपरोक्त शोधकार्य सम्पन्न हुआ । शोध प्रबन्ध के निर्माण में उनके मूल्यवान निर्देश , उपयोगी सुझाव, तार्किक पद्धति एवं प्रेरणादायी प्रोत्साहन से ही अभियोजित अध्ययन पूर्ण हो सका । मैं डॉ0 राजेन्द्र कुमार (राजनीति विज्ञान विभाग) दयानन्द वैदकि महाविद्यालय का सहृदय

आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने इस शोध-प्रबन्ध के संपादन में अपना महत्वपूर्ण समय देकर मेरा मार्गदर्शन एवं उत्साहवर्धन किया । मैं अपने स्व0 माता-पिता ( श्रीमती शांति त्रिपाठी एवं श्री कृष्ण देव त्रिपाठी , भू0 पू0 सांसद एवं प्राचार्य ) का वन्दन करती हूँ, जिन्होंने स्नातकोत्तर कक्षा में ही मुझे इस शोध कार्य के लिये प्रेरित किया था । इस सम्पूर्ण शोधकार्य में उनकी प्रेरणादायी स्मृतियाँ हर समय मेरा उत्साहवर्धन करती रहीं। मैं अपनी सहयोगी बहन डॉ0 कल्पना बाजपेई प्रवक्ता राजनीति विज्ञान विभाग , गाँधी महाविद्यालय उरई के अभूतपूर्व सहयोग के लिये भी सदैव ऋणी रहूँगी । मैं अपनी बहन विश्व प्रभा, भाई प्रियांशू एवं मित्र मिर्जा साबिर की आभारी हूँ जिनके सक्रिय सहयोग एवं स्नेह के बिना प्रस्तुत अध्ययन की सफल परिणति मेरे लिये असम्भव थी । इसके अतिरिक्त मैं प्रवक्ता स्व0 ओ0 पी0 वर्मा , कृष्ण कुमार दीक्षित, राजेश दीक्षित, मधूलिका अग्रवाल , रेखा वर्मा एवं मौली लिली को सहयोग के लिये धन्यवाद देती हूँ । अंत में मैं श्री दिनेश साहू को धन्यवाद देती हूँ जिन्होंने इस शोध प्रबन्ध को अथक परिश्रम एवं निष्ठापूर्वक अतिशीघ्र टाइप किया ।

दिनांकः- 21.11.92 | **विश्व आभा**

# प्रथम अध्याय

दक्षिण एशिया के देश एवं उनकी स्थिति-

(अ) भौगोलिक स्थिति एवं सीमा.

(ब) ऐतिहासिक स्थिति एवं पारस्परिक सम्बन्ध.

**दक्षिण एशिया के देश एवं उनकी स्थिति-**

भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल , भूटान , श्रीलंका , मालदीव, बर्मा एवं अफगानिस्तान मिलकर दक्षिण एशिया की भौगोलिक इकाई का निर्माण करते हैं । इस क्षेत्र की उत्तरी सीमा पर हिमालय पर्वत तथा दक्षिणी सीमा पर हिन्दमहासागर अपनी शाखाओं, बंगाल की खाड़ी एवं अरब सागर के साथ स्थित है । इसकी पूर्वी सीमा पर पर्वतमालायें तथा जंगल तथा उत्तरी पश्चिमी सीमा पर अफगानिस्तान, दक्षिण एशिया क्षेत्र में संगम के समान फैला हुआ है ।[1] दक्षिण एशिया की भौगोलिक , सामरिक स्थिति तथा इसकी सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक एकरूपता इस क्षेत्र को पूर्ण या अधिकाँश रूप से सार्थक बनाने के लिये उत्तरदायी है ।[2] दक्षिण एशिया के ये समस्त देश जलवायु, जाति, धर्म, इतिहास एवं सामाजिक परम्पराओं के आधार पर एक दूसरे से पृथक प्रतीत होते हैं किन्तु एक क्षेत्र में स्थित होने के कारण इनके अनेक क्षेत्रों में एकरूपता के लक्षण विद्यमान हैं ।

द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व यह क्षेत्र ब्रिटेन के नियंत्रण में था । दो सौ वर्षो के ब्रिटिश शासन ने विरासत के रूप में इन राष्ट्रों को लगभग समान राजनैतिक समस्यायें प्रदान की हैं । द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व ये देश अपनी आवश्यकताओं के लिये बाह्य राष्ट्रों पर निर्भर थे । इन देशों के द्वारा राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी वर्तमान समय तक यहाँ नवउपनिवेशवाद किसी न किसी रूप में विद्यमान रहा है । दक्षिण एशिया के ये देश पारस्परिक सहयोग के द्वारा इस नवउपनिवेशवाद को समाप्त करने की दिशा में तथा आत्मनिर्भरता की ओर बढ़ने के लिये महत्वपूर्ण प्रयास कर सकते हैं ।

---

{1} रोजीनो एण्ड थामसन " वर्ल्ड पालिटिक्स " पृष्ठ-50

{2} वहीं ।
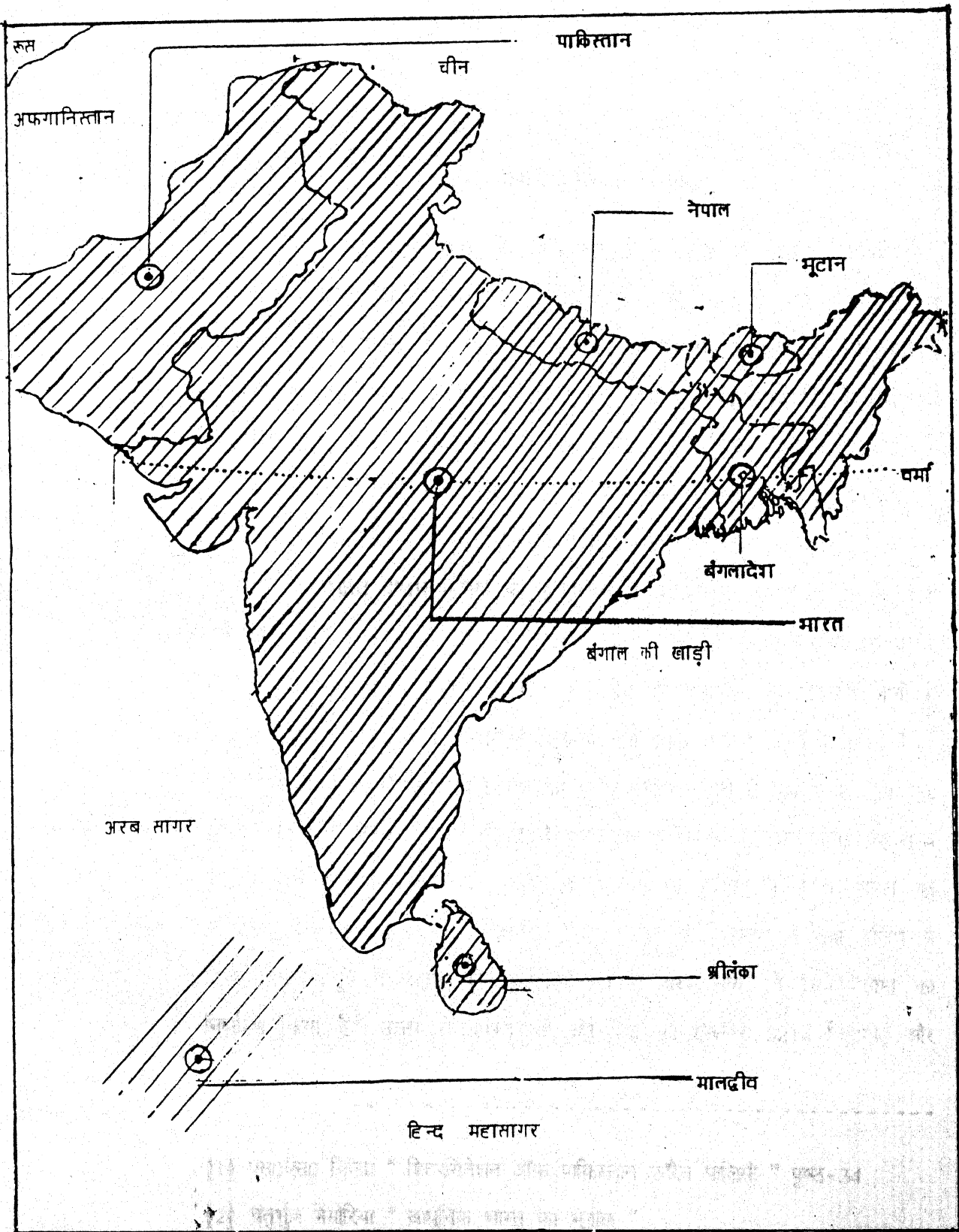
रूस

पाकिस्तान

चीन

अफगानिस्तान

नेपाल

भूटान

बर्मा

बंगलादेश

भारत

बंगाल की खाड़ी

अरब सागर

श्रीलंका

मालद्वीव

हिन्द महासागर

दक्षिण एशियाइ क्षेत्रीय सहयोग संगठन

## (अ) भौगोलिक स्थिति एवं सीमा

भूगोल एक राज्य के लिये अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में सामरिक आवश्यकता, व्यवसायिक हितों, आपसी सम्बन्धों , अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की सदस्यता, विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मंचों-संयुक्त राष्ट्र संघ और इसके विशेष संगठनों से सम्बन्धों को निर्धारित करने में महत्वपूर्ण स्थान रखता है ।[1] कोई भी राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में भौगोलिक परिस्थितियों का तिरस्कार करके अपने राष्ट्रीय हितों की सुरक्षा नहीं कर सकता । दक्षिण एशिया के देशों में भौगोलिक स्थिति एवं सीमा इस क्षेत्र के सशक्त देशों के राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय हितों की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान रखती है ।

**भारत** दक्षिण एशिया का हृदयस्थल है । दक्षिण एशिया के सम्पूर्ण देशों की सीमा भारत से स्पर्श करती है । भारत हिन्दमहासागर के उत्तरी सिरे में इस प्रकार स्थित है कि वह पूर्वीय गोलार्द्ध के मध्य में यूरोप एवं अमेरिका के पश्चिमी भागों से लगभग समान दूरी पर है । अन्तर्राष्ट्रीय समुद्री मार्ग इसके तट से होकर निकलते हैं । भारत पश्चिम कला कौशल प्रधान देशों को पूर्वीय खेतिहर देशों से मिलाने के लिये एक श्रृंखला का कार्य करता है ।[2] प्रकृति ने भारत को दक्षिण में हिन्दमहासागर पर अरव प्रायद्वीप एवं हिन्दचीन प्रायद्वीप के मध्य केन्द्रीय स्थिति प्रदान की है । भारत का भौगोलिक क्षेत्रफल 32,88,815 कि0मी0 है । उत्तर में हिमालय ने तथा दक्षिण में हिन्दमहासागर, पूर्व में बंगाल की खाड़ी, पश्चिम में अरब सागर ने इसकी सीमा का निर्धारण किया है[3] उत्तर से दक्षिण की ओर देश का विस्तार 3214 कि0मी0 और

---

(1) एस0एस0 विन्द्रा " डिटरमिनेशन ऑफ पाकिस्तान फॉरैन पालिसी " पृष्ठ-34

(2) चतुर्भुज मेमोरिया " आधुनिक भारत का भूगोल "

(3) डा0 परमानन्द " पोलिटिकल डेवलपमेण्ट इन साउथ एशिया " पृष्ठ-3

और पूर्व से पश्चिम में 2933 कि0मी0 है । देश में 25 बड़े राज्य व 7 केन्द्रशासित संघीय राज्य हैं । इसकी राजधानी नई दिल्ली है । 1991 में इसकी अनुमानित जनसंख्या लगभग 84 करोड़ 50 लाख है । भारत विश्व के औद्योगिक राष्ट्रों में सातवाँ स्थान तथा वैज्ञानिक महाशक्ति में तीसरा स्थान रखता है ।[1]

विभाजन से पूर्व **पाकिस्तान** भारत का ही एक अंग था । ब्रिटिश संसद के भारतीय स्वतन्त्रता कानून के अनुसार 14 अगस्त 1947 को पाकिस्तान एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में उदित हुआ । भौगोलिक रूप से पाकिस्तान दक्षिण एशिया के पश्चिमी सिरे पर स्थित है ।[2] पाकिस्तान के उत्तर-पश्चिम में अफगानिस्तान, दक्षिण में अरबसागर तथा पश्चिम में ईरान स्थित है । पाकिस्तान की पूर्वीय सीमाओं का निर्धारण भारत के जम्मूकश्मीर, पंजाब , राजस्थान एवं गुजरात राज्य करते हैं । पाकिस्तान का क्षेत्रफल 803 , 400 वर्ग कि0मी0 है । पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद है । इसकी जनसंख्या लगभग 10,92,00,000 है । इस देश की आबादी का 45% भाग 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों का है। 71% आबादी गाँवों में और 29% आबादी शहरों में निवास करती है ।

16 दिसम्बर 1971 को **बांग्लादेश** का अभ्युदय भारतीय उपमहाद्वीप की सर्वाधिक महत्वपूर्ण घटना थी । 1947 में पूर्वीय पाकिस्तान का निर्माण होते समय अविभाजित बंगाल के जलपाईगुड़ी, दीनाजपुर, माल्दा, नदियाँ एवं जैसोर ज़िलों के खण्ड तथा असम के सिलहट ज़िले के खण्ड प्राप्त हुए थे । बांग्लादेश के उद्भव के साथ इसे पूर्वी पाकिस्तान की समस्त भूमि प्राप्त हो गई । बांग्लादेश की सीमा उत्तर-पश्चिम में भारत से तथा पूर्व में भारत तथा बर्मा से एवं दक्षिण में बंगाल की खाड़ी से घिरी हुई है।[3] गंगा यमुना एवं मेघना नदियाँ इसकी पूर्वी सीमा का निर्धारण करती हैं । बांग्लादेश का मैदानी क्षेत्रफल 1,44,000 वर्ग कि0मी0 है तथा इसकी जनसंख्या लगभग 11 करोड़ है ।

---

(1) डॉ0 परमानन्द " पोलिटिकल डेवलपमेण्ट इन साउथ एशिया" पृष्ठ-4

(2) यू0एस0बाजपेयी "इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहुड " पृष्ठ 2।

(3) डॉ0 परमानन्द "पोलिटिकल डेवलपमेण्ट इन साउथ एशिया" पृष्ठ-1

बांग्लादेश दक्षिण एशिया का सर्वाधिक जनबहुल राष्ट्र है । जनसंख्या की दृष्टि से यह विश्व का आठवां राष्ट्र है तथा यह विश्व का सर्वाधिक घना बसा हुआ राष्ट्र है ।[1] बांग्लादेश की अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आधारित है । चावल यहाँ की मुख्य खाद्य फसल है । जूट , सूती - कपड़े , चाय आदि यहाँ की मुख्य औद्योगिक वस्तुएं हैं । इसकी राजधानी ढ़ाका है ।

**नेपाल** दक्षिण एशियायी क्षेत्र का एकमात्र हिन्दू राज्य है। हिमालय की पर्वत श्रेणियों से घिरा हुआ यह एक छोटा सा पर्वतीय देश है । इसे पर्वतीय शिखर पर महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है । यह दक्षिण एशियायी उपमहाद्वीप को मध्य एवं पूर्व एशियां से विभाजित करता है । इसके पूर्वी क्षेत्र में सिक्किम व भूटान स्थित है ।[2] इसकी उत्तरी सीमा चीनी गणराज्य के तिब्बती क्षेत्र से जुड़ी हुई है । पूर्व , पश्चिम एवं दक्षिण में यह भारत की सीमाओं से घिरा हुआ है । नेपाल का आकार त्रिकोणात्मक है तथा इसका क्षेत्रफल 1,42,212 वर्ग कि0मी0 है । सम्पूर्ण देश को तीन भौगोलिक क्षेत्रों में विभक्त किया जा सकता है :-

(1) हिमालयी क्षेत्र , (2) पर्वतीय क्षेत्र , (3) तराई क्षेत्र । नेपाल की राष्ट्र भाषा नेपाली है । काठमाण्डू यहाँ की राजधानी है । वीरगंज, राजवीराज, जनकपुर, पोखरा आदि यहाँ के मुख्य शहर हैं । इसके उत्तरी सीमान्त क्षेत्र पर तिब्बती और बर्मी लोगों की अधिकता है । यहाँ की जनसंख्या लगभग 1,88,00,000 है । कुछ समय पूर्व यह एशिया का एक ऐसा देश गिना जाता था जिसके बारे में सबसे कम ज्ञान था । नेपाल की अर्थव्यवस्था मुख्य रूप से कृषि पर आधारित है ।

---

(1) यू0एस0 बाजपेयी " इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहुड " पृष्ठ 272

(2) लियो ई0 रोज एण्ड जॉन टी स्काल्ज " नेपाल प्रोफाइल ऑफ दि हिमालयन किंगडम " पृष्ठ-1

**भूटान** दक्षिण एशिया के एक भूबद्ध राज्य के रूप में विशाल हिमालय पर्वत श्रेणी के दक्षिणी ढ़ाल के गिरि शिखरों पर अवस्थित है । यह भारत की उत्तरी - पूर्वी सीमा पर स्थित है । हिमालय पर्वत की विभिन्न शाखायें इस देश को अपनी गोद में समेटे हुए हैं । इसकी पूर्वी-पश्चिमी एवं दक्षिणी सीमायें भारत से घिरी हुई हैं। इसके उत्तर व उत्तर-पश्चिम में चीनी गणराज्य का तिब्बत प्रदेश है । स्थल रूप से इसकी आकृति आयताकार है । इसका क्षेत्रफल 47,000 को कि0मी0 है तथा यहाँ की जनसंख्या लगभग 15,38,000 है । यह माना गया है कि भूटानी जनता का विशाल बहुमत भारतीय मंगोल प्रजाति से निर्मित है [1] तथापि दक्षिणी भाग में नेपाली मूल के निवासियों का आधिक्य है ।

भूटान के नीचे दक्षिण में थोड़ी सी सकरी तराई के क्षेत्र के बाद एकदम ऊँचा पहाड़ी क्षेत्र प्रारम्भ हो गया है । इन्हीं ऊँची पहाड़ियों में स्थित अनेक नदी घाटियों में यहाँ की अति बिरली जनसंख्या निवास करती है । यहाँ अधिकतर भूटिया जाति के लोग रहते है । इसकी भाषा तिब्बती भाषा से मिलती जुलती है । [2] इसकी राजधानी थिम्पू है । भूटान की अर्थव्यवस्था कृषि तथा प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित है । इसकी मुख्य उपजें चावल, बार्ले व आलू हैं ।

**श्रीलंका** हिन्दमहासागर में भारत के दक्षिणी भौगोलिक सीमाओं के समीप आम के आकार का एक द्वीप है । भौगोलिक दृष्टिकोण से श्रीलंका भारतीय प्रायद्वीप का एक विशिष्ट अंग है जो लघु समुद्री मार्ग पाक-जल संयोजक [3] द्वारा विभाजित है । श्रीलंका

---

(1) वी0 एच0 कोयले " सिक्किम एवं भूटान " पृष्ठ-79

(2) बसन्त कुमार सर्राफ " भारत और आधुनिक विश्व " पृष्ठ 121

(3) पाक-जल संयोजक-यह एक जलस्रोत है जिसका नाम मद्रास के गवर्नर राबर्ट पाक के नाम से पड़ा था ।

को हिन्दमहासागर में महित्वपूर्ण केंद्रीय स्थिति प्राप्त होने तथा भारत की दक्षिणी सीमाओं के अति समीप स्थिति होने के कारण यह द्वीप भारत की प्रतिरक्षा के लिये महत्व महत्वपूर्ण रहा । इसकी उत्तरी एवं उत्तरी-पश्चिमी सीमा भारत के अति समीप स्थित है तथा दक्षिणी-पश्चिमी सीमा मालदीव के समीप स्थित है । इसका क्षेत्रफल 65,610 वर्ग कि0मी0 है।[1] श्रीलंका की जनसंख्या लगभग 16,900000 है । यह जनसंख्या जाति, भाषा, धर्म, पहनावा एवं खान-पान के आधार पर पृथक-पृथक समुदायों में विभक्त है। मुख्य समुदाय सिंहली है, जो छठी शताब्दी ई0पू0 में उत्तर से आये थे तथा द्वीप पर विजय प्राप्त की थी । ये बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं जो श्रीलंका में तीसरी शताब्दी ई0पू0 में भारत से आये थे । श्रीलंका के उत्तरी भाग में तमिल लोग रहते हैं जो हिन्दू धर्म के अनुयायी हैं। ये लोग प्राचीन काल में विजेताओं के रूप में या अर्वाचीन कमाल में चाय, रबड़ कहवा के बगीचों में मजदूर की हैसियत से आये ।[2] यहाँ की दो प्रमुख भाषायें-सिंहली तथा तमिल हैं । श्रीलंका भी एक कृषि प्रधान देश है । इसकी मुख्य उपजें चाय, रबड़ , नारियल, शकरकंद, मक्का आदि है । इसकी राजधानी कोलम्बो है।

**मालदीव** मूँगे के आकार के छोटे-छोट द्वीपों से बना हुआ टापुओं का समुदाय है, जो हिन्द महासागर के मध्य में स्थित है । यह श्रीलंका से लगभग 450 मील दूर दक्षिण पश्चिम में स्थित है। मालदीव का उत्तरी भाग भारत से 400 कि0मी0 दूर है। हिन्द महासागर में स्थित इस द्वीप समूह से डियागोगार्सिया केवल 240 मील दूर स्थित है जिसके कारण हिन्द महासागर की वर्तमान राजनीति में सामरिक रूप से यह महत्वपूर्ण स्थान रखता है।[3] इसका क्षेत्रफल 41,000 वर्गमील है। इसकी लम्बाई 500 मी0 व

---

(1) रविकान्त दुबे " इण्डिया एण्ड श्रीलंका रिलेशन्स" पृ0-98

(2) एल0डडले स्टैम्प " एशिया का भूगोल " पृ0-342

(3) उर्मिला फडनीस एण्ड इलादत्त" मालदीव्ज,विण्ड एण्ड चेंज इन एन स्टाल स्टेट पृ0-2

चौड़ाई 8। मी0 है । [1] इसकी जनसंख्या लगभग 2,00000 है । इसमें सिंहली, भारतीय आर्य एवं द्रविड़ आदि सम्मिलित हैं । इसकी राजधानी माले है । कृषि मालदीव का सत्वहीन आर्थिकस्रोत है । यहाँ पर मुख्य रूप से मत्स्य उद्योग प्रचलित है । 60% जनसंख्या इस उद्योग से जुड़ी हुई है । [2] ये लोग कुशल व्यापारी हैं ।

**अफगानिस्तान** सोवियत रूस तथा पाकिस्तान के मध्य में स्थित है तथा एशिया महाद्वीप की शांति सुरक्षा में विशेष स्थान रखता है । अफगानिस्तान की स्थिति के सम्वन्ध में कहा जा सकता है कि वह भारत की पर्वतीय दीवार के चौड़े शिखर पर विराजमान है जहाँ से एक ओर भारत के उपजाऊ मैदान तथा दूसरी ओर एशियाई रूस के महत्वपूर्ण मैदान दिखाई पड़ते हैं । इस देश की सीमायें बहुत सी संधियों का परिणाम हैं । उत्तर में तुर्किस्तान के मैदान की एक पेटी को छोड़कर समस्त अफगानिस्तान उच्च पर्वतों तथा पठारों से परिपूर्ण है । दक्षिण तथा पश्चिम के मरूस्थल देश के भाग को घेरे हुये हैं । पश्चिम में सीस्तान तथा पूर्व में रेजिस्तान के बीच हेलमन्द की हरी-हरी घाटी स्थित है । अफगानिस्तान का क्षेत्रफल 243,000 तथा 270,000 वर्गमील के बीच में है जो सम्पूर्ण ब्रिटिश द्वीप समूह के क्षेत्रफल का दूना है । [3] यहाँ की जनसंख्या लगभग 1,65,92,000 है अफगानिस्तान का इतिहास बफर राज्य का इतिहास है । अधिकाँश आक्रमणकारी जो उत्तर पश्चिम से भारत में आये, अफगानिस्तान से होकर आये हैं। अफगानिस्तान की राजधानी काबुल है । यहाँ की मुख्य फसलें गेहूँ, जौ, मटर, ज्वार, बाजरा , मक्का तथा चावल हैं । अफगानिस्तान का विदेशी व्यापार मुख्यतः पेशावर द्वारा भारत से तथा रूसी तुर्किस्तान से होता है ।

---

(1) उर्मिला फडनीस एण्ड दूलादत्त " मालदीव्ज, विण्ड एण्ड चेंज इन एन एटाल स्टेट" पृष्ठ-2

(2) वहीं- पृष्ठ 58

(3) एल0डैडले स्टैम्प " एशिया का भूगोल " पृष्ठ 173

**बर्मा** एक अर्द्ध-पर्वतीय देश है । यह चीन , उत्तरी एवं दक्षिणी वियतनाम के समीप एक भौगोलिक इकाई के रूप में स्थित है । पर्वत श्रेणियों ने बर्मा को पड़ोसी देशों से पृथक कर रखा है जिससे यह एकान्तवासी देश कहलाता है। भौगोलिक दृष्टिकोण से वर्मा भारत का नहीं अपितु हिन्दचीन का भाग है तथा बहुत समय तक फ्रांस निवासी उसे ब्रिटिशचीन के नाम से ही जानते थे । 1886 में अंग्रेजों के साथ युद्ध में बर्मा की पराजय हुई और वह ब्रिटिश काल में भारत से जोड़ दिया गया और वर्मा भारत का एक प्रान्त बन गया । 1947 में बर्मा और ब्रिटिश सरकार में एक समझौता हुआ और 1948 में बर्मा स्वतंत्र हुआ।[1] बर्मा का क्षेत्रफल 262.000 वर्गमील है ।[2] तथा यहाँ की जनसंख्या लगभग 40300000 है । बर्मा दक्षिण पूर्वी एशिया का एक वृद्ध एवं जनसंख्या की दृष्टि से तृतीय स्थान का राष्ट्र है । इसके समुद्री तट दक्षिण एवं पूर्व में बंगाल की खाड़ी एवं अण्डमान सागर के समीप हैं तथा इसके पास महत्वपूर्ण बन्दरगाह भी हैं । बर्मा एक कृषि प्रधान देश है । चावल यहाँ की मुख्य उपज है । महत्वपूर्ण उद्योग मत्स्य उद्योग है । बर्मन लोग बौद्य हैं तथा उनके जीवन में धर्म का विशेष स्थान है । बर्मा की राजधानी रंगून है । बर्मा का नाम म्यानमार हो गया है ।

---

(1) डा0 नरेन्द्र कुमार श्रीवास्तव " भारत की विदेश नीति " पृष्ठ - 196-197

(2) यू0एस0 बाजपेई " इण्डिया एण्ड नेबरहूड " पृष्ठ - 339

**(ब) ऐतिहासिक स्थिति एवं पारस्परिक सम्बन्ध**

प्रत्येक देश का इतिहास उसके राजनैतिक,सामाजिक,आर्थिक एवं सांस्कृतिक जीवन के आपसी सम्बन्धों एवं उसके उत्थान-पतन का क्रमबद्ध ज्ञान होता है अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के परिचालन में विभिन्न देशों की विदेशनीति एवं उनके अन्य देशों के साथ सम्बन्ध निर्धारण करने में इतिहास एवं तत्कालीन परिस्थितियाँ विशेष रूप से प्रभावित करती हैं । दक्षिण एशिया क्षेत्र के समस्त राष्ट्रों के सम्बन्धों की पृष्ठभूमि में ऐतिहासिक तत्व महत्वपूर्ण स्थान रखता है ।

प्रत्येक देश की विदेशनीति में पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों का निर्धारण तथा उनके प्रति निर्धारित की गयी नीति महत्वपूर्ण स्थान रखती है । प्रत्येक देश अपनी समस्त सीमाओं पर शाँति एवं सुरक्षा का आकाँक्षी होता है इसलिये वह पड़ोसी देशों के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने के लिये प्रयत्नशील रहता है ।दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्र भी आपस में अनेक मतभेदों के होते हुये भी परस्पर मैत्रीय सम्बन्धों के लिये आकांक्षी हैं।

**भारत** अन्तर्राष्ट्रीय जगत में प्राचीन काल से ही एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। मौर्यकाल भारतीय राजनय का स्वर्णकाल था । इस काल में दूतों को भेजने की प्रथा अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का प्रमुख भाग थी । चीन, सीरिया, सिंहलद्वीप ,फारस,मिस्र, मेसीडोन आदि देशों के साथ भारत के व्यापारिक एवं राजनैतिक सम्बन्ध थे। विदेशी आक्रमणों ने हिन्दू गणतन्त्र को छिन्न-भिन्न कर दिया । ब्रिटेन , फ्रांस, डच एवं पुर्तगाल के मध्य संघर्ष के पश्चात् ब्रिटेन ने भारत पर साम्राज्य स्थापित कर लिया तथा भारत ब्रिटेन कभी इकाई के रूप में कार्य करने लगा । अंग्रेज भारतीय जनशक्ति तथा साधनों का उपयोग ब्रिटिश साम्राज्य के विस्तार एवं संरक्षण के लिये करते थे । भारतवासी अंग्रेजों को शासन से मुक्ति प्राप्त करने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील रहे । 1857 के प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम से लेकर 1947 तक भारत के नागरिक स्वतंत्रता आन्दोलनों में भाग लेते रहे, जिसके परिणामस्वरूप 15 अगस्त 1947 को भारत ने ब्रिटिश शासन से स्वतंत्रता प्राप्त की ।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत ने अपनी विदेशनीति निर्धारण करते हुये सदैव इस बात पर बल दिया कि वह अपने पड़ोसी देशों के साथ सदैव मधुर सम्बन्ध स्थापित करने हेतु प्रयत्नशील रहेगा । पं0 जवाहरलाल नेहरू ने भारत की विदेशनीति में पड़ोसी देशों की महत्वपूर्ण स्थिति को स्वीकार करते हुये कहा था -

" पड़ोसी देश हमारे मस्तिष्क में प्रथम स्थान रखते हैं ।"

वे आगे कहते है -

" दूसरा स्थान एशिया के अन्य देशों के लिये जाता हैं, जिनके साथ भारत घनिष्ट रूप से जुड़ा हुआ है ।"[1]

**भारत-पांक सम्बन्धों** का इतिहास परस्पंर संदेह की राजनीति का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस उपमहाद्वीप को ब्रिंटिश शासको ने जिस प्रकार से हिन्दू-मुस्लिम के मध्य भेद-भाव स्थापित हो गयी थी । [2] पाकिस्तान के जन्म के समय से ही दोनों देशों के मध्य कुछ ऐसी समस्यायें उत्पन्न हो गयी थीं जिसके कारण दोनों देश परस्पर वैमनस्य की राजनीति में लिप्त रहे । ये समस्यायें थीं- कश्मीर विवाद, हैदराबाद विवाद, जूनागढ विवाद, ऋण अदायगी का प्रश्न, शरणार्थियों की समस्यां का प्रश्न आदि ।

भारत एवं पाकिस्तान के मध्य 1947 , 1965 तथा 1971 में तीन युद्ध हुये । पाकिस्तान भारत से सदैव अपने को असुरक्षित महसूस करता रहा । असुरक्षा की प्रवृत्ति के कारण पाकिस्तान ने अमेरिका से सैनिक गठबन्धन कर लिया ।[3] इसके साथ ही अमेरिका से अनेक प्रकार की सैनिक सहायता प्राप्त की । 1955 में पाकिस्तान "सेन्टो " का भी सदस्य बन गया । उसने अपने कुछ अड्डे अमेरिका को दे दिये । अप्रैल 1965 में भारत एवं पाकिस्तान के मध्य " कच्छ के रन " को लेकर संघर्ष हो गया । " कच्छ के रन " में उत्पात् के साथ - साथ पाकिस्तान ने कश्मीर में भी घुसपैठ प्रारम्भ कर दी थी । पाकिस्तान की नियमित सेना ने अन्तर्राष्ट्रीय सीमा रेखा को पार करके भारतीय भू-भाग पर आक्रमण कर दिया और पूर्ण रूप से युद्ध प्रारम्भ हो गया । 4सितम्बर 1965 को सुरक्षा परिषद ने एक प्रस्ताव पास करके दोनों देशों से अपील की कि वे युद्ध विराम करें । यह युद्ध 22 सितम्बर 1965 को समाप्त हो गया। 10 जनवरी 1966 को सोवियत प्रधानमंत्री के प्रयासों के परिणामस्वरूप भारत एवं पाकिस्तान के मध्य ताशकन्द समझौते पर हस्ताक्षर हुए ।

---

(1) स्पीच डिलीवर्ड एट दि इण्डियन काउॅन्सिल ऑफ वर्ल्ड एफेयर्स, नई दिल्ली, 22 मार्च 1949.
(2) वी0पी0 दत्त " इण्डियन फॉरेन पालिसी " पृष्ठ 184
(3) वही। पृष्ठ 186.

भारत एवं पाकिस्तान के सम्बन्धों में सर्वाधिक तनाव बांग्लादेश के अभ्युदय के समय हुआ । 2 सितम्बर 1971 को पाकिस्तानी वायुयानों ने भारत के हवाई अड्डों पर भीषण बमबारी कर दी । 4 सितम्बर को भारतीय सेना ने जवाबी हमला किया । 16 सितम्बर 1971 को ढ़ाका में एक सैनिक सम्मेलन हुआ । जनरल नियाजी ने भारत के जनरल जगजीत सिंह अरोरा के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया । बांग्लादेश स्वतन्त्र हो गया तथा भारत ने एक तरफा युद्ध विराम कर दिया । पाकिस्तान के प्रधानमंत्री भुट्टों एवं भारतीय प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के मध्य पत्र व्यवहार हुआ जिसके परिणाम स्वरूप दोनों देशों के मध्य जून 1972 में शिमला समझौता सम्पन्न हुआ तथा दोनों प्रधानमंत्रियों ने एक - दूसरे को उच्च स्तर की सहायता प्रदान करने के लिये सहमत हुये ।[1]

जनतापार्टी के शासनकाल में पाकिस्तान के साथ भारत के व्यापार में वृद्धि हुई । सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढ़ा । यातायात सामान्य रूप से चला ।[2] 1981 के उत्तरार्द्ध में पाकिस्तान के राष्ट्रपति जनरल जिया ने भारत से युद्ध न करने के समझौते की पेशकश की किन्तु जनरल जिया के समय भारत पाक सम्बन्ध कटुतापूर्ण ही रहे । श्रीमती भुट्टों ने अपने शासनकाल के प्रारम्भिक चरण में भारत से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रखने की इच्छा प्रकट की किन्तु कश्मीर समस्या को लेकर पुनः दोनों में तनाव व्याप्त रहा ।

पाकिस्तान के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ ने दोनों देशों के बीच समस्याओं को हल करने की इच्छा प्रकट की लेकिन इस दिशा में कोई सफलता नहीं मिली । आज भी पाकिस्तान भारत को अविश्वास की दृष्टि से ही देखता है । दोनों देशों के मध्य तनाव कम करने के लिये अनेक कार्यक्रम बनाये जाने के बावजूद उनमें सौहार्द की अपेक्षा तनाव ही अधिक दिखाई दे रहा है । वर्तमान समय में कश्मीर

---

(1) फॉरेन अफेयर्स रिकार्डर जून 1972

(2) रिपोर्ट 1977-78 तथा रिपोर्ट 1978-79, भारत सरकार विदेश मंत्रालय,नईदिल्ली

समस्या एवं पाकिस्तान का परमाणु कार्यक्रम दोनो देशों के मध्य कटुता का मुख्य कारण है। भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिंह राव पाकिस्तान के द्वारा भारत में आंतकवादी गतिविधियों को बढ़ावा देने के लिये बहुत क्रोधित है।[1] जिसके कारण भारत-पाक सम्बन्धों में सहयोग एवं सौहार्द की स्थापना निकट भविष्य में दूर दूर तक नज़र नहीं आ रही है।

**भारत एवं बांग्लादेश सम्बन्ध** शेख मुजीबर्रमान के समय से ही मैत्रीपूर्ण रहे है । 16 से 18 फर0 1972 में शेख मुजीबुर्रहमान ने भारत की यात्रा की । इस यात्रा के दौरान दोनों देशों में प्रजातंत्र,समाजवाद,धर्मनिरपेक्षता,गुटनिरपेक्षता के पक्ष में वचनबद्धता प्रकट की तथा एक संयुक्त घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किये जिसमें यह निश्चय किया गया कि दोनो देशों के मध्य व्यापारिक समस्या का समाधान शीघ्र ही किया जायेगा।[2]

श्रीमती गाँधी की मार्च 1972 में बांग्लादेश यात्रा के दौरान दोनों देशों के मध्य एक मैत्रीय संधि हुई।इस संधि पर 19मार्च 1972 को हस्ताक्षर किये गये जो कि शांति धर्मनिरपेक्षता प्रजातन्त्र समाजवाद एवं राष्ट्रवाद के सिद्धांतों पर आधारित हैं।[3] अगस्त 1975 में बांग्लादेश के कुछ सैनिक अधिकारियों द्वारा शेख मुजीव एवं उनके सहयोगियों की हत्या का शासन सत्ता अपने हाथों में ले ली गयी।इसी समय से भारत एवं बांग्लादेश सम्बंधों में विकार उत्पन्न हो गये। बांग्लादेश की नई सरकार का झुकाव अमेरिका एवं चीन की तरफ होने लगा । बांग्लादेश के नये शासकों ने धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत को तिलाँजलि देकर अपने देश में इस्लामी गणतन्त्र की स्थापना की घोषणा की । बांग्लादेश की नयी सरकार निरन्तर भारत पर यह आरोप लगाती है कि भारत बांग्लादेश के विरूद्ध सैनिक कार्यवाही कर रहा है तथा बांग्लादेश ने फरक्का जैसे प्रश्नों पर भारत के विरूद्ध नया प्रचार अभियान चलाया। बांग्लादेश के द्वारा 1976 में फरक्का बांध विवाद को संयुकत राष्ट्र संघ में उठाया गया । अनेक एशियाई अफ्रीकी

---

(1) जनसत्ता"भारत और पाकिस्तान ने आपस की तनाव घटाने की इच्छा दोहराई"3 3 पुरवरी 1992

(2) एशियन इयरबुक 1973 " फार इस्टर्न इफनोमिक रिव्यू"- हांगकांग पृष्ठ-89-90

(3) फॉरैन अफेयर्स रिकार्डर , मार्च 1972 पृ0 63

देशों के प्रयासों के परिणामस्वरूप यह विषय राष्ट्र संघ से वापस ले लिया गया ।[1]

1977 में भारत और बांग्लादेश के बीच वार्तायें चलती रही तथा यह समझा गया कि दोनों देशों के मध्य गंगाजल के बँटवारे पर समझौता हो गया है तथा फरक्का बाँध विवाद समाप्त हो गया है । 1980 में यह स्पष्ट हुआ कि बांग्लादेश के साथ गंगाजल के बँटवारे का जो समझौता हुआ था, इसकी वह गलत व्याख्या कर रहा है तथा फरक्का बाँध की स्थिति को गलत रूप प्रदान कर रहा है । अगस्त 1981 में बांग्लादेश के आठ युद्ध पोतों ने नौसूर द्वीप पर कब्ज़ा करने का असफल प्रयास किया । 1982 में भारत एवं बांग्लादेश के मध्य तीन बीघा विवाद को सुलझाने का प्रयास किया गया । अप्रैल 1984 में भारत द्वारा अपनी पूर्वी सीमा पर काँटेदार तार की बाड़ लगाने के कारण बांग्लादेश ने भारत की सीमा में गोलाबारी तक कर दी, यद्यपि यह गोलाबारी तत्काल बन्द हो गयी तथा भारत में बाड़ लगाने का कार्य बन्द कर दिया ।

भारत के तत्कालिक प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने अपने शासनकाल में बांग्लादेश के साथ सम्बन्धों को मधुर बनाने का प्रयास किया । जून 1985 में श्री राजीव गांधी श्रीलंका के राष्ट्रपति श्री जयवर्धने के साथ बांग्लादेश में आये तूफान का निरीक्षण करने गये तथा भारत ने बांग्लादेश को पुर्नवास हेतु सहायता करने की पेशकश की । 1982 से 1985 तक बांग्लादेश ने इस क्षेत्र में क्षेत्रीय सहयोग हेतु प्रयास किया जिसके परिणामस्वरूप दक्षेस का गठन हुआ ।[2] फरवरी 1990 में बांग्लादेश के विदेशमंत्री श्री इन्द्रकुमार गुजराल ने ढ़ाका की यात्रा की । इस यात्रा के दौरान भारत में दोनों देशों की आपसी समस्यायें- गंगाजल बँटवारा, चकमा शरणार्थी आदि विवादों को सुलझाने का प्रयास किया । 26 मार्च 1992 को भारत एवं बांग्लादेश के बीच " तीन बीघा क्षेत्र " से गुजरने के अधिकार पट्टे पर बांग्लादेश को देने के संदर्भ में सहमति हुई जिसको 26 जून 1992 को लागू कर दिया गया । इस कार्य को पूरा करके भारत ने एक अन्तर्राष्ट्रीय दायित्व की पूर्ति की है ।

---

(1) बी0एल0फड़िया " अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति " पृष्ठ -400
(2) वी0पी0दत्ता " इण्डियाज फारेन पालिसी" पृष्ठ 252

**भारत एवं नेपाल** ऐतिहासिक,भौगोलिक,धार्मिक,सांस्कृतिक एवं रक्त सम्बन्ध की दृष्टि से परस्पर अत्यधिक गहरे रूप से जुड़े हुए है । भारत के लिये नेपाल की स्थिति सुदृढ़ सुरक्षा स्तम्भ के समान है । चीन के अभ्युदय के बाद भारत की सुरक्षा के लिये नेपाल का महत्व और अधिक बढ़ गया । पं0 जवाहर लाल नेहरू ने 7 दिसम्बर 1950 को लोकसभा में कहा था --

" नेपाल में हमारी सहानुभूति रूचि के साथ-साथ हमारी अपनी सुरक्षा का हित भी संलग्न है । हिमालय हमारी सुरक्षा का महत्वपूर्ण स्तम्भ है इसलिये हम इस सुरक्षा के स्तम्भ को खतरे में नहीं पड़ने दे सकते । "[1]

भारत एवं नेपाल सम्बन्ध स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् शान्ति एवं मैत्री संधि - जुलाई 1950 पर आधारित रहे हैं । स्वतंत्र भारत ने सबसे पहले नेपाल के साथ इस प्रकार की संधि की थी । भारत एवं नेपाल के विशेष सम्बन्ध व्यापार एवं पारगमन संधि, जो कि 31 जुलाई 1950 में हुई थी- पर आधारित हैं । इस संधि के अर्न्तगत भारत-नेपाल की अर्थ व्यवस्था को सुदृढ़ करने हेतु हर सम्भव सहयोग देगा । 1960 में नेपाल के व्यापारिक सम्बन्ध 95% भारत के साथ थे तथा 5% अन्य देशों के साथ थे।[2] 1962 के भारत चीन युद्ध के बाद नेपाल में चीनी प्रभाव की निरन्तर वृद्धि होती गयी । इस काल में चीन ने नेपाल के औद्योगिक विकास हेतु पूर्ण रूप से सहयोग दिया तथा काठमाण्डू और तिब्बत को मिलाने वाली सड़क निर्माण का कार्य सम्पन्न किया । 1971 के भारत पाक युद्ध के उपरान्त नेपाल को भारत की क्षमता में विश्वास उत्पन्न हुआ, जिसके परिणामस्वरूप 1972 के बाद भारत - नेपाल सम्बन्धों में निरन्तर सुधार होता गया । 1974 में भारत तथा नेपाल के मध्य सिंचाई , विद्युत -संचार, उद्योग सम्बन्धी समझौते हुए । 1977 में जनता सरकार ने सभी पड़ोसी देशों के साथ विशेषत: नेपाल से सम्बन्ध सुधारने का प्रयास किया । 1978 में नेपाल के साथ भारत की दो संधियाँ व्यापार एवं पारगमन के सम्बन्ध में हुई ।

---

(1) जवाहर लाल नेहरू " इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी-सलेक्टेड स्पीचेज" सितम्बर 1949- अप्रैल - 1961.

(2) वी0पी0 दत्त" इण्डियाज फॉरेन पालिसी" पृष्ठ 257

व्यापार संधि की अवधि मूलतः 23 मार्च 1988 को समाप्त हो गयी । नई सधि की प्रतीक्षा करते हुए भारत ने इसकी अवधि दो बार छः - छः माह के लिए बढ़ाई परन्तु काठमाण्डू द्वारा इस दिशा में समुचित कदम न उठाये जाने के कारण 23 मार्च 1989 को भारत ने इस संधि से अपने को मुक्त करने की घोषणा कर दी । विवाद का मुख्य विषय यह था कि भारत" व्यापार" एवं " पारगमन " की एक संधि चाहता था जबकि नेपाल दोनों संधियाँ अलग-अलग करने का इच्छुक था । नेपाल ने भारत विरोधी नीति का अनुसरण करते हुये नेपाल में बसे भारतीयों के लिये " वर्क परमिट प्रणाली " लागू कर दी जिसके कारण भारत एवं नेपाल सम्बन्धों में अनेक गतिरोध उत्पन्न हो गये । श्री गिरिजा प्रसाद कोइराला के नेतृत्व में नेपाल में लोकतंत्रीय शासन की स्थापना हुई । श्री कोइराला ने अपने शासनकाल के प्रारम्भ से ही भारत के साथ मधुर सम्बन्ध रखने का प्रयास किया जिसके परिणाम स्वरूप 6 दिसम्बर 1991 को भारत एवं नेपाल ने व्यापार एवं पारगमन पर पृथक संधियों समेत पाँच-पाँच अन्य समझौते किये।[1] भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव की नेपाल की तीन दिवसीय यात्रा के दौरान भार-नेपालने विभिन्न क्षेत्रों में आपसी सहयोग बढ़ाने , भारत को नेपाल के उदार शर्तों पर निर्यात में वृद्धि करने और विपुल जल संसाधनों का दोनों देशों के साझे हित में प्रयोग करने पर सहमति व्यक्त की ।[2]

अतः लोकतंत्र की स्थापना के कारण भारत एवं नेपाल के बीच अनेक गतिरोध समाप्त हो गये है तथा दोनों देशों के सम्बन्ध वर्तमान समय में सौहार्दपूर्ण हैं।

**भारत-भूटान सम्बंध** प्रारम्भ से ही रहे हैं । इसके समस्त वैदेशिक सम्बंधों का संचालन अंग्रेजों द्वारा किया जाता था । भूटान की वाह्य आक्रमणों से सुरक्षा तत्कालीन भारत सरकार अपना उत्तरदायित्व समझती थी । स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त 18 अगस्त 1949 को भूटान के महाराजा ने भारत सरकार से एक सन्धि की जिसके अनुसार भूटान ने भारत से अपने सम्बन्ध पूर्व की भाँति रखने का निश्चय किया। इस सन्धि के अनुसार भूटान के वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन भारत सरकार के हाथ में आ गया तथा भूटान भारत का संरक्षित राज्य बन गया । अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के विषय में

---

(1) राजस्थान पत्रिका " व्यापार व पारागमन सहित भारत - नेपाल में पाँच समझौते 7 दिसम्बर 1991 पृष्ठ-3

(2) दैनिक हिन्दुस्तान " भारत - नेपाल कई क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने को सहमत " 22 अक्टूबर 1992 पृष्ठ-1

" भूटान को भारत सरकार द्वारा दिये गये मार्गदर्शन के अनुसार कार्य करने की व्यवस्था है ।"[1]

भारत - चीन युद्ध के पश्चात् भूटान ने अपनी प्रतिरक्षा का भार भी भारत को सौंप दिया । इस युद्ध के पश्चात् भूटान का महत्व और अधिक बढ़ गया क्योंकि चीन भूटान का कुछ भाग अपने मानचित्र में दिखाता रहा । भूटान की तीन सौ मील की सीमा तिब्बत के साथ लगती है और तिब्बत पर 1950 से चीन का अधिपत्य रहा है । इस कारण चीन ने इस क्षेत्र पर अपना दावा पेश किया । इस सीमा का सामारिक महत्व अत्यधिक बढ़ गया ।

भारत सरकार ने भूटान की उन्नति के लिए महत्वपूर्ण योगदान दिया है। भूटान की दूसरी पंचवर्षीय योजना का पूरा खर्च भारत ने उठाया । अनेक भूटानी छात्र भारत अध्ययन हेतु आते रहे हैं । भारतीय इन्जीनियरों ने वहाँ की तकनीकी विकास में अत्यधिक सहयोग दिया है । 1978 में भारत में भूटान को जल, विद्युत परियोजना के सन्दर्भ में 60% अनुदान तथा 40% ऋण के रूप में देने का निश्चय किया था । कुछ समय से भूटान ने कुछ अन्तर्राष्ट्रीय विषयों, जैसे कम्पूचिया समस्या, फाकलैण्ड युद्ध तथा आणविक हथियारों के विषय में भारत से भिन्न रूख अपनाया है तथा सीमा समस्या को सुलझाने के लिए चीन से सन्धि-वार्ता में रूचि दिखाई है तथा स्वावलम्बी बनने हेतु भूटान अपने आर्थिक स्रोतों मे परिवर्तन कर रहा है । पहले भूटान को भारत से आर्थिक सहायता मिलती थी किन्तु अब वह पश्चिमी देशों से आर्थिक मदद प्राप्त करने की कोशिश कर रहा है । भूटान में भारतीयों के प्रवेश पर रोक लगा दी गई है । भूटान सरकार ने भारतीय व्यापारियों को नए व्यापार लाइसैंस जारी करने पर भी रोक लगा दी है जिसके परिणामस्वरूप भूटान में बसे भारतियों की संख्या एक लाख से घटकर पचास हजार रह गई है । इस सम्बन्ध में भूटान नरेश ने एक वक्तव्य में कहा :-

" हमारा कोई भी फैसला भारत विरोधी नहीं है । हम तो अपने लोगों को राष्ट्रीय विकास की सभी धाराओं से जोड़ने का प्रयास कर रहे हैं । हम चाहते हैं कि

---

[1] पी0पी0 करन एण्ड डब्ल्यू0एम0जैकिंग्स " दि हिमालयन किंगड्स" पृष्ठ 44

ज्यादा से ज्यादा भूटान व्यापार और उद्योग में शामिल हो ।"[1]

अतः भारत - भूटान सम्बन्ध पहले के समान मैत्रीपूर्ण नहीं है । वर्तमान समय में इन सम्बन्धों में अनेक गतिरोध उत्पन्न हो गए हैं ।

**भारत-श्रीलंका सम्बंध** की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक, सामरिक, प्रजातीय एवं सांस्कृतिक तत्वों पर आधारित है लेकिन तमिल समस्या ने भारत एवं श्रीलंका सम्बन्धों को सर्वाधिक प्रभावित किया है । भारत एवं श्री लंका ने लगभग समान समय स्वतन्त्रता प्राप्त की थी तथा दोनो की नीतियाँ साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद विरोधी थी । दोनों ने ही राष्ट्रमण्डल की सदस्यता ग्रहण की थी । 1949 में इण्डोनेशिया की स्वतन्त्रता के प्रश्न पर श्रीलंका उन अट्ठारह राज्यों मे से एक था जिसे नेहरू जी ने आमंत्रित किया था ।[2] लेकिन श्रीलंका की नीतियाँ प्रारम्भ से ही ब्रिटिश नीतियों द्वारा संचालित थीं जिसके परिणाम स्वरूप श्री लंका ने अपने नौसैनिक अड्डे एवं हवाई अड्डे ब्रिटेन को उपयोग करने की अनुमति दे दी थी । भारत एवं श्रीलंका सम्बन्धो में प्रारम्भ से ही तमिलों को नागरिकता सम्बन्धी समस्या व्याप्त रही है । सन् 1954 में भारत एवं श्रीलंका के मध्य भारतीय प्रवासियों की नागरिकता के सम्बन्ध में एक समझौता हुआ किन्तु इसमें दोनों देशों को कोई सफलता नही मिली । 1962 के भारत-चीन युद्ध में श्री लंका की नीतियाँ भारतीय हितों के अनुकूल नहीं रहीं । अक्टूबर 1964 में दोनों देशों के मध्य प्रवासी भारतीयों की नागरिकता के सन्दर्भ में एक समझौता हुआ जिसके अनुसार यह निश्चित हुआ कि जिन 9 लाख 75 हजार व्यक्तियों का अस्तित्व विवादग्रस्त है, उनमें से 5 लाख 25 हजार व्यक्तियों को भारत ले लेगा तथा 3 लाख व्यक्तियों को श्रीलंका की नागरिकता प्रदान की जाएगी । भारतीय नगारिकता प्राप्त करने वाले व्यक्तियों का भारत प्रत्यावर्तन 15 वर्षो में होगा ।[3]

भारत ने श्रीलंका को समय समय पर आर्थिक सहायता प्रदान करके उसके विकास में सहयोग दिया है । दोनों देशों ने कच्छतीवू द्वीप की समस्या परस्पर हल करी लेकिन भारत -पाक युद्ध के समय श्री लंका की नीतियाँ पाकिस्तान के प्रति झुकाव की थी । 1977 में भारत एवं श्रीलंका के मध्य एक सांस्कृतिक समझौता हुआ जिसके

---

(1) इण्डिया टुडे, कमलजीत रतन " आधुनिकता की आहट से आंतकित भूटान" 15 सितम्बर 1989 पृष्ठ 8।
(2) कोडीकारा " इण्डोसीलोन रिलेशन्स " पृष्ठ 4।
(3) एम0सी0 गुप्ता " इण्डियन फॉरेन पोलिसि " पृष्ठ 309

अनुसार दोनों देश विभिन्न क्षेत्रों में एक-दूसरे को शैक्षिक एवं सांस्कृतिक आदान-प्रदान करेंगे ।[1]

अस्सी के दशक से श्रीलंका मे सिंहली एवं तमिलों के बीच भीषण दंगे प्रारम्भ हो गए जिसके कारण भारत एवं श्रीलंका सम्बन्धों में निरन्तर कटुता बढ़ती गई । 1983 मे श्रीलंका के प्रधानमन्त्री ने भारत पर आरोप लगाया कि --

" तमिल आतंकवादियो को दक्षिण भारत में प्रशिक्षण दिया जा रहा है । श्रीलंका इसे अब लम्बे समय तक सहन नहीं कर सकता । भारत अब श्रीलंका को और अधिक परेशान नहीं कर सकता ।"[2]

इसी समय भारत एवं श्रीलंका के मध्य त्रिकोमाली के सन्दर्भ में कुछ कटुता उत्पन्न हो गई क्योंकि श्रीलंका ने अमेरिका को त्रिकोमाली में तेल आपूर्ति सुविधा प्रदान करने की स्वीकृति दे दी थी । 19जुलाई 1987 को भारत एवं श्रीलंका के मध्य एक शान्ति समझौता सम्पन्न हुआ जिसके परिणामस्वरूप भारतीय शान्तिसेना श्रीलंका में शान्ति एवं व्यवस्था स्थापित करने के लिए गई । भारतीय शान्ति सेना ने श्रीलंका में व्यवस्था के स्थायित्व के लिए सम्पूर्ण प्रयास किया किन्तु श्रीलंका के सभी समुदाय शान्तिसेना का विरोध करने लगे। श्रीलंका के राष्ट्रपति रणसिंह प्रेमदासा के द्वारा भी यह कहा गया था कि भारत 29 जुलाई 1989 तक अपनी शान्तिसेना हटा ले।

18 सितम्बर 1989 को भारत एवं श्रीलंका के मध्य शान्ति सेना की वापसी के सन्दर्भ में एक समझौता हुआ जिसके परिणामस्वरूप मार्च 1990 तक भारतीय शान्तिसेना पूर्णरूप से वापस आ गई लेकिन श्रीलंका में सिंहली एवं तमिलों के मध्य हिंसा का ताण्डव चलता रहा । भारत अपने को श्रीलंका के विषय में किंकर्तव्यविमूढ़ पा रहा है । भारत के प्रधानमन्त्री श्री राजीवगांधी की लिट्टे द्वारा हत्या से यह विवाद और अधिक बढ़ गया । भारत सरकार ने श्रीलंका के साथ सम्बन्धों को सामान्य बनाने के लिए उसके आन्तरिक विषयों में हस्तक्षेप न करने का निश्चय किया है ।

---

(1) एशियन रिकॉर्डर 1-7 जनवरी 1978 पृष्ठ 14029

(2) दि हिन्दू- 2 मार्च 1983

अक्टूबर 1992 में श्रीलंका के राष्ट्रपति श्री रणसिंह प्रेमदास की भारत यात्रा से दोनों देशों के मध्य तनाव कुछ कम हुआ है । भारत के राष्ट्रपति डा0शंकर दयाल शर्मा ने कहा कि भारत को उम्मीद है कि जातीय समस्या का हल जल्द निकल आयेगा । उनका कहना है कि सत्ता का विकेंद्रीकरण करते समय वह सुनिश्चित किया जाये कि श्रीलंका में सभी लोग सम्मान के साथ नागरिक के रूप में अमन और चैन की ज़िंदगी जी सकें । द्विपक्षीय सम्बन्धों के बारे में डा0 शर्मा ने कहा कि दोनों देशों के सम्बन्धों को सुदृढ़ करना ज़रूरी है । इसके अलावा आर्थिक क्षेत्र में भी सहयोग बढ़ाने की आवश्यकता है ताकि दोनों देशों की पूर्ण क्षमताओं का दोहन हो सके ।[1]

**भारत-मालदीव सम्बंध** के विषय में यह कहा जा सकता है कि दोनों देशों के मध्य प्रारम्भ से ही सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण सम्बन्ध रहे है । साठ के दशक में मालदीव से अनेक विद्यार्थी कोलम्बो योजना के अन्तर्गत अध्ययन हेतु भारत आए । 1970 के दशक में दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों में प्रशासनिक स्तर पर वृद्धि हुई । 1974 में मालदीव की राजधानी माले में भारतीय स्टेट बैंक की एक शाखा खोली गई तथा 1975 में दोनों देशों के मध्य हवाई सेवाऐं शुरू हुई ।[2] भारत प्रथम ऐसा देश था जिसने माले में अपना निवासीय मिशन खोला । 1978 में भारतीय हवाई प्रशासन ने अन्तर्राष्ट्रीय टेण्डर जीतकर हुलूल हवाई पट्टी के रास्ते का विस्तार तथा आधुनिकीकरण की जिम्मेदारी ली ।

मालदीव की सरकार की इच्छानुसार भारत ने इस देश को विविध क्षेत्रों में तकनीकी सहायता प्रदान की । मालदीव के विद्यार्थियों को अनेक प्रकार की छात्रवृत्तियाँ प्रदान की तथा मालदीव के मत्स्य औद्योगिक विकास हेतु सहायता भी प्रदान की । 1983 में मालदीव के राष्ट्रपति श्री गयूम की भारत यात्रा के दौरान दोनों देशों के मध्य एक सांस्कृतिक समझौते पर हस्ताक्षर हुए जिसमे कला, साहित्य, पुरातत्व, शिक्षा, सामाजिक कल्याण, खेलकूद आदि विषयों को सम्मिलित किया गया ।[3]

---

(1) राजस्थान पत्रिका "श्रीलंका के संयुक्त ढांचे में सत्ता के सार्थक विकेन्द्रीकरण पर जोर' 2 अक्टूबर 1992

(2) उमिर्कला फडनीस एण्ड इलादत्त "मालदीव्ज-विण्ड एण्ड चेन्ज इन एन स्टोल स्टेट" पृष्ठ 79

(3) फाइनेंशियल एक्सप्रेस- 8 सितम्बर 1983

भारत एवं मालदीव के सम्बन्ध सदैव मैत्रीपूर्ण रहे हैं। यद्यपि "मिनिकाय" के विषय में 1982 में दोनो देशों के मध्य सूक्ष्म विवाद हुआ था लेकिन वर्तमान राष्ट्रपति गयूम ने "मिनिकाय" को लेकर कोई राजनैतिक दावा नहीं किया है जिससे भारत एवं मालदीव सम्बन्धों में कोई गतिरोध नहीं हुआ है ।

मालदीव के राष्ट्रपति श्री गयूम भारतीय विदेश नीति के कट्टर समर्थक हैं । विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर मालदीव भारत की तटस्थता एवं राष्ट्रीय सम्प्रभुता की नीतियों का पक्षधर है । 3 नवम्बर 1988 की अर्धरात्रि को राष्ट्रपति गयूम की लोकतान्त्रिक सरकार को अपदस्थ करने का भाड़े के सैनिकों का प्रयास भारत द्वारा समय पर की गई कार्यवाही से असफल हो गई।आज परिणाम यह है कि समस्त पड़ोसी राष्ट्रों में मालदीव भारत का एकमात्र प्रबल समर्थक राष्ट्र है । जनवरी 1990 में भारत-मालदीव के मध्य एक समझौता हुआ जिसमे भारत और मालदीव के नागरिक वीजा के बिना एक दूसरे देश में आ-जा सकेंगे । दोनों देश वीजा प्रणाली समाप्त करने पर सहमत हो गये।[1]

भारत ने मालदीव में एक व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना का निर्णय किया है । व्यवसायिक प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना करने का फैंसला " भारत -मालद्वीव संयुक्त आयोग" की बैठक में भारत की ही पहल पर हुआ है ।[2]

इस प्रकार देखा जाता है कि भारत ने अपनी विदेशनीति के निर्धारण के समय जिस तथ्य पर बल दिया था कि वह अपने पड़ोसी देशो के साथ सदैव मधुर सम्बन्ध रखने के लिए प्रयत्नशील रहेगा लेकिन वर्तमान समय में भारत को अपनी इस सद्इच्छा की पूर्ति में सफलता प्राप्त नहीं हुई है । वर्तमान समय में भारत के साथ केवल मालदीव के सम्बन्ध ही मधुरता पूर्ण है । अन्य पड़ोसी देशों के साथ उसके सम्बन्धों में गतिरोध उत्पन्न हो चुके है ।

---

(1) नवभारत टाइम्स"भारत मालदीव वीज़ा प्रणाली खत्म करने पर रजामन्द " 15 जनवरी 1990 पृष्ठ-1

(2) दैनिक हिन्दुस्तान " भारत मालदीव में व्यवसायिक प्रशिक्षण केंद्र खोलेगा " 4 मार्च 1992

**पाकिस्तान** की रचना अगस्त 1947 में दो भू-खण्डों को मिलाकर की गयी ।एक भू-भाग पश्चिमी पाकिस्तान का था जिसमें पश्चिमी पंजाब , सिन्ध , उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रान्त , बलूचिस्तान तथा कुछ देशी रियासतें थीं । दूसरा भाग पूर्वी पाकिस्तान का था, जिसमें पूर्वी बंगाल एवं असम के कुछ मुस्लिम बहुमत वाले ज़िले सम्मिलित थे। इस पूर्वी और पश्चिमी भू-खण्डों के मध्य लगभग 1800 कि0मी0 का फासला था । वास्तव में पाकिस्तान की रचना दो राष्ट्र सिद्धान्त के आधार पर की गयी थी जिसके अनुसार यह माना गया कि भारत में दो राष्ट्र निवास करते हैं - हिन्दू एवं मुसलमान । इसलिए मुसलमानों की अपनी गृहभूमि होनी चाहिए । यद्धपि दोनों भू-खण्डों के निवासी मुसलमान थे लेकिन , भाषा, संस्कृति , परम्परा, सामाजिक आचार-विचार तथा आर्थिक दृष्टि से दोनों में महत्वपूर्ण अन्तर था । इसी कारण 1971 में बांग्लादेश के उदय के उपरान्त पूर्वी पाकिस्तान का अंत हो गया ।

पाकिस्तान की विदेशनीति का आधार भारत विरोध रहा है जिसके कारण उसने भारत के विरूद्ध अपना पक्ष मजबूत करने एवं सैनिक शक्ति को बढ़ाने के लिए पश्चिमी राष्ट्रों से सैनिक गठबन्धन किए । विश्व का सर्वाधिक विशाल इस्लामिक राष्ट्र होने के कारण उसकी यह इच्छा रही है कि वह सम्पूर्ण इस्लामी राष्ट्रों का नेतृत्व करे लेकिन उसे अपने इस प्रयास में सफलता नहीं मिली ।

सर्वप्रथम पाकिस्तान एवं उसके सबसे बड़े पड़ोसी राष्ट्र भारत के साथ उसकें सम्बन्धों का विवेचन करना चाहिए किन्तु चूँकि इसके पूर्व भारत व पाकिस्तान सम्बन्धों पर प्रकाश डाला जा चुका है, इसलिए पाकिस्तान व उसके पड़ोसी देशों के सम्बन्धों का प्रारम्भ पाकिस्तान व बांग्लादेश सम्बन्ध से करेंगे--

**पाकिस्तान-बांग्लादेश सम्बंधों** की पृष्ठभूमि तनाव एवं कटुता पर पड़ी थी । 1971 में पूर्वी पाकिस्तान के अंत एवं बांग्लादेश के उदय के साथ भारतीय महाद्वीप में एक महत्वपूर्ण परिवर्तन आया । बांग्लादेश की स्वतन्त्रता के प्रारम्भिक चरण में शेख मुजीब के शासनकाल में पाकिस्तान एवं बांग्लादेश सम्बन्ध वैमनस्यतापूर्ण रहे क्योंकि शेख मुजीबुर्रहमान एवं पाकिस्तान के राष्ट्राध्यक्ष भुट्टो एक-दूसरे के व्यक्तिगत प्रतिद्वन्दी थे। मुजीब के समय भुट्टो ने स्वतन्त्र एवं सम्प्रभु बांग्लादेश की मान्यता नहीं प्रदान की

किन्तु शेख मुजीब की हत्या के उपरान्त पाकिस्तान ने बांग्लादेश के प्रति भाईचारे एवं इस्लामी धर्म का रूख अपनाया क्योंकि बांग्लादेश के नये शासकों ने धर्मनिरपेक्षता के सिद्धान्त को तिलाँजति देकर अपने देश में इस्लामी गणतन्त्र की स्थापना की थी ।

भारत एवं बांग्लादेश के मध्य फरक्का विवाद ने पाकिस्तान एवं बांग्लादेश की समीपता में वृद्धि की । बांग्लादेश तथा पाकिस्तान में स्थापित सैनिक शासन ने दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों में वृद्धि की । [1]

भुट्टो के समय पाकिस्तान, बांग्लादेश सम्बन्धों में काफी उतार-चढ़ाव आया। शेख मुजीव की हत्या के उपरान्त भुट्टो ने बांग्लादेश के साथ स्थापित सम्बन्धों में रूचि लेना प्रारम्भ कर दिया, विशेषतः इस्लामिक भाई-चारे के संदर्भ में । 1976 में पाकिस्तान एवं बांग्लादेश ने पहला व्यापारिक समझौता किया । ज़ियाउलहक के सैनिक शासन के समय दोनो देशों के मैत्री सम्बन्धों में काफी वृद्धि हुई । बांग्लादेश के राष्ट्रपति ज़ियाउर्रहमान ने पाकिस्तान के सैनिक शासन को पूर्ण सहयोग दिया । इस समय दोनों देशों के सांस्कृतिक , आर्थिक एवं राजनैतिक सम्बन्धों में काफी वृद्धि हुई । केवल बांग्लादेश से बिहारी मुसलमानों के प्रत्यावर्तन की समस्या दोनों देशों के सम्बन्धों में दरार उपस्थित करती थी । पाकिस्तान एवं बांग्लादेश की विदेशनीति का झुकाव इस समय अमेरिका एवं चीन के प्रति रहा ।

जनरल इरशाद के समय पाकिस्तान एवं बांग्लादेश के सम्बन्धों में निरन्तर वृद्धि हुई । इरशाद ने अफगानिस्तान के सम्बन्ध में पाकिस्तानी नीति का समर्थन किया तथा अफगानिस्तान से सोवियत सेना की वापसी के संदर्भ में आपसी सहमति प्रकट की[2]

बांग्लादेश में आये तूफान के समय पाकिस्तान के राष्ट्रपति जियाउलहक ने भावात्मक रूप से एक प्रेस विज्ञप्ति में कहा-

"बांग्लादेश का दुःख पाकिस्तान का दुःख है तथा बांग्लादेश का सुख पाकिस्तान का सुख है । [3]

---

(1) एस0आर0चक्रवर्ती एवं वीरेन्द्र नारायण " बांग्लादेश- ग्लोबल पॉलिटिक्स" पृष्ठ-156
(2) दि मुस्लिम , 18 फरवरी 1983
(3) न्यू नेशन्स 6 जून 1985

बांग्लादेश एवं पाकिस्तान सम्बन्धों में निरन्तर वृद्धि होती रही । अप्रैल,1989 में पाकिस्तान ने 130 वासुसेवाओं द्वारा बांग्लादेश को राहत सामग्री भेजने का निश्चय किया ।

पाकिस्तान के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नवाज़शरीफ ने बिहारी मुस्लिम के प्रत्यावर्तन की समस्याओं को सुलझाने का प्रयास किया । उन्होंने एक प्रेस विज्ञप्ति में यह बताया कि--

" उनकी सरकार पाकिस्तान के साथ इस समस्या को सुलझाना चाहती है क्योंकि बांग्लादेश एवं पाकिस्तान के व्यक्तियों के विचारों में काफी समानता है । दोनों देश सांस्कृतिक एवं भावात्मक रूप से जुड़े हुए है,इसलिए हम लोग स्वतन्त्र एवं संप्रभु भाईचारे की भावना के साथ रह सकते हैं । "[1]

अतः वर्तमान समय में पाकिस्तान एवं बांग्लादेश सम्बन्ध मैत्री एवं विश्वासपूर्ण हैं।

**पाकिस्तान-नेपाल सम्बन्ध** प्रत्यक्ष रूप से कोई विशेष नहीं रहे हैं। शिखर पर दोनों देशों की समीपता के कारण दोनों देशों के मध्य मैत्रीपूर्ण सम्बन्धों के भाव दिखते हैं । नेपाल 1950 की संधि के बाद पूर्णरूप से भारत से जुड़ा रहा है, इसलिए इसके प्रत्यक्ष रूप से पाकिस्तान के साथ कोई सम्बन्ध नहीं रहे है किन्तु अभी के कुछ वर्षो में नेपाल का चीन के प्रति झुकाव होने के कारण भारत-नेपाल सम्बन्धों में अनेक प्रकार के गतिरोध उत्पन्न हुये हैं जिसके परिणामस्वरूप नेपाल का झुकाव चीनी विदेशनीति के प्रति रहा है तथा पाकिस्तान, नेपाल एवं चीन के मध्य भारत विरोध के कारण मित्रता के भाव स्पष्ट हुये हैं । [2] 1962 में पाकिस्तान एवं नेपाल के बीच व्यापारिक समझौता हुआ । [3]

पाकिस्तान एवं नेपाल में प्रत्यक्षरूप से कोई विवाद नहीं रहा क्योंकि दानों देशों के बीच कोई समान सीमा नहीं है । दोनों देश राजनैतिक रूप से अत्यधिक

---

(1) पाकिस्तान सीरीज,11 अक्टूबर 1991

(2) एस0ए0 खालिक " पाकिस्तान पीस एण्डवार" पृष्ठ- 52

(3) एस0आर0चक्रवर्ती एण्ड वीरेन्द्र नारायण " बांग्लादेश-ग्लोबल पॉलिटिक्स" पृष्ठ-184

सम्बन्धित रहे हैं । दोनों देशों के शासनाध्यक्षों ने एक दूसरे देशों की अनेक यात्रायें कीं। पाकिस्तान का दूतावास जो काठमाण्डू में स्थित है, वह अन्य सभी कार्यो को सम्पादित करने के साथ-साथ इस राज्य के मुसलमानों से विशेष सम्बन्ध रखता है । एक छोटी संख्या में नेपाल की सेना के अधिकारी भी पाकिस्तान सैन्य-प्रशिक्षण के लिये गये [1]

वर्तमान समय में नेपाल की लोकतांत्रिक सरकार का झुकाव चीन की अपेक्षा भारत के प्रति अधिक है तथा दोनों देशों ने अपनी आपसी समस्याओं को काफी सीमा तक सुलझाने का प्रयास किया है, जिसके परिणाम स्वरूप स्वाभाविक रूप से पाकिस्तान एवं नेपाल सम्बन्ध शान्त हो गये हैं । अतः पाकिस्तान एवं नेपाल सम्बन्ध पूर्णरूप से तटस्थतापूर्ण हैं । दोनों देशों के मध्य यदि कोई मैत्री भाव नहीं है तो कोई विशेष कटुता भी नहीं है ।

**पाकिस्तान-भूटान सम्बंध** प्रारम्भ से ही तटस्थतापूर्ण रहे हैं क्योंकि 1949 की भारत-भूटान संधि के कारण भूटान अपने समस्त वैदेशिक सम्बन्धों का संचालन भारतीय सहयोग एवं परामर्श से करता रहा है तथा भूटान की अर्थव्यवस्था पूर्णरूप से भारत पर निर्भर रही है । 1962 के भारत चीन युद्ध के पश्चात् चीन की भूटान में रूचि के कारण भारत भूटान सम्बन्ध और अधिक सुदृढ़ हो गये । इसके परिणामस्वरूप स्वाभाविक रूप से पाकिस्तान एवं भूटान सम्बन्ध शान्त एवं तटस्थ रहे हैं ।

कुछ समय से भूटान ने अपने को भारतीय अर्थव्यवस्था से मुक्ति प्राप्त कराने हेतु अन्य पश्चिमी राष्ट्रों का सहयोग प्राप्त करना प्रारम्भ कर दिया है तथा चीन के साथ सीमा-विवाद को सुलझाने के लिये स्वयं रूचि प्रदर्शित की है जिसके परिणामस्वरूप पाकिस्तान एवं भूटान एक-दूसरे के कुछ समीप आ गये । पाकिस्तान की विदेशनीति का झुकाव प्रारम्भ से ही पश्चिमी देशों तथा चीन के प्रति रहा है । प्राचीन समय में भूटान भी चीन एवं पश्चिमी देशों के साथ सम्बन्धों में रूचि प्रदर्शित कर रहा है । इसके कारण भूटान एवं पाकिस्तान सम्बन्धों से स्वाभाविक रूप से मैत्रीभाव प्रदर्शित हो रहा है ।

---

(1) यू0एस0बाजपेई " इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहूड " पृष्ठ 329

**पाकिस्तान-श्रीलंका सम्बंध** प्रारम्भ से ही मैत्रीपूर्ण रहे हैं क्योंकि दोनों की विदेशनीति का झुकाव पश्चिमी देशों के प्रति रहा है । पाकिस्तान एवं श्रीलंका देनों ही ब्रिटिश उपनिवेशवाद के अंग थे । इस कारण दोनों की विदेशनीति साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद विरोधी है । 1954 में दक्षिणी पूर्वी एशिया के प्रधानमंत्रियों के सम्मेलन में भाग लेने के लिये पाकिस्तान के प्रधानमंत्री भी कोलम्बो गये तथा सभी प्रधानमंत्रियों ने उपनिवेशवाद,निःशस्त्रीकरण एवं दक्षिणी-पूर्वी एशिया के आर्थिक सहयोग की समस्या पर विचार किया।[1]

1965 के भारत-पाक युद्ध के समय श्रीलंका ने तटस्थतापूर्ण नीति का अनुसरण किया । श्रीलंका ने दोनों देशों को कश्मीर समस्या को मैत्रीपूर्ण ढंग से सुलझाने की सलाह दी तथा इस बात पर दुःख प्रकट किया कि उनके दो बड़े पड़ोसी जो कि राष्ट्रमंडल के सदस्य हैं, एक-दूसरे के साथ युद्ध में व्यस्त है।[2] 1968 में कच्छ तीवू दीप के संदर्भ में भारत एवं श्रीलंका के मध्य कुछ कटुता उत्पन्न हुई । पाकिस्तान के विधि मंत्री मोहम्मद जफर कच्छतीवू होते हुए कोलम्बो गये तथा उन्होंने यह घोषित किया कि यह टापू वास्तव में श्रीलंका के अधिकार क्षेत्र में है जिसके कारण भारत एवं श्रीलंका में तनाव उत्पन्न हुआ।[3] अतः पाकिस्तान की नीतियाँ श्रीलंका के प्रति मैत्रीपूर्ण थी ।

आर्थिक क्षेत्र में भी दोनों देशों में परस्पर सहयोग रहा है । 1971 के भारत- पाक युद्ध के समय श्रीलंका की प्रधानमंत्री श्रीमती भंडारनायके ने पूर्वी पाकिस्तान से पश्चिमी पाकिस्तान को जाने वाले वायुयानों को कोलम्बो से होकर जाने की अनुमति प्रदान कर दी थी । इस प्रकार श्रीमती भंडारनायके की नीतियाँ पाकिस्तान के प्रति झुकाव

---

(1) कोडीकारा " इण्डो सीलोन रिलेशन्स पृष्ठ-41

(2) वाइनर कोले" एक्रास दि पाक स्ट्रेट " पृष्ठ-147

(3) एशियन रिकार्डर , 18-24 नवम्बर 1968 पृष्ठ 8624

की थीं । पाकिस्तान एवं श्रीलंका सदैव ही अमेरिका से सैनिक सहायता प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील रहे है जिसके परिणामस्वरूप समय-समय पर इन दोनों राष्ट्रों ने अमेरिका से सैनिक गठबन्धन तथा अपने क्षेत्र में अमेरिका को सैनिक सुविधायें प्रदान की।

अतः स्वाभाविक रूप से दोनों देशों के सम्बन्ध मित्रतापूर्ण रहे हैं। 1987 को भारत श्रीलंका समझौते का पाकिस्तान ने विरोध किया तथा भारतीय शाँति सेना की श्रीलंका में उपस्थित का भी समर्थन नहीं किया । श्रीलंका सरकार ने 1989 में पाकिस्तान से अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिये सहयोग माँगा । श्रीलंका के मंत्री श्री ए0आर0मंसूर ने एक व्यक्तव्य में कहा कि--

" उनकी सरकार अपने मित्र-राष्ट्रों , विशेषतः पाकिस्तान से अपनी अर्थव्यवस्था को पहले के समान सुदृढ़ एवं अपने पैरों पर खड़ा होने के लिये सहयोग चाहती है ।"[1]

अतः श्रीलंका एवं पाकिस्तान के सम्बन्ध अधिकाँशतः मैत्रीपूर्ण रहे हैं ।

**पाकिस्तान-मालदीव सम्बन्ध** प्रारम्भ से ही मैत्रीपूर्ण रहे हैं । दक्षिण एशिया के अन्य राष्ट्र भारत एवं श्रीलंका के समान पाकिस्तान ने भी माले में अपने मिशन की स्थापना की । पाकिस्तान एवं मालदीव के सम्बन्धों की स्थापना चालीसवें दशक से प्रारम्भ हो गयी थी , जब अंग्रेज सरकार ने " गनबेस " में कुछ पाकिस्तानियों को नियुक्त करके भेजा था । माले में पाकिस्तान बैंको का कारोबार भी चलाता है । पिछले कुछ वर्षों से पाकिस्तान ने मालदीव को तकनीकी सहयोग प्रदान किया है तथा उच्च श्रेणी के पौधे एवं बीज उपहार में दिए है । 1981 में पाकिस्तान ने मालदीव को दस हजार टन चावल अनुदान में दिये हैं । पाकिस्तान की मालदीव के साथ 1981 में वायु सेवा के सम्बन्ध में एक समझौता हुआ ।

अगस्त 1989 में बेनजीर भुट्टो के आमंत्रण पर मालदीव के विदेशमंत्री

---

(1) दि मुस्लिम , 20 अगस्त 1989

इस्लामाबाद गये तथा दोनों देशों में इस्लामी देशों के भाई-चारे के सम्बन्धों पर संतोष प्रकट किया ।[1] दोनों देशों ने क्षेत्रीय स्थिति के संदर्भ में विचार विमर्श किया ।

अतः पाकिस्तान-मालदीव के सम्बन्ध प्रारम्भ से ही मैत्रीपूर्ण रहे ।

**बांग्लादेश** का अभ्युदय सम्पूर्ण भारतीय उपमहाद्वीप के लिये एक महत्वपूर्ण घटना थी जब पूर्वी बंगाल में पाकिस्तानी शासक के विरूद्ध विद्रोह हुआ तब भारत ने स्वतंत्रता सेनानियों को सहानुभूति दी तथा पाकिस्तान के सैनिक तानाशाही का विरोध किया । पाकिस्तान ने पूर्वी बंगाल में जो नरसंहार किया उससे त्रस्त होकर लाखों की संख्या में शरणार्थी भारत आये । भारत ने इन शरणार्थियों को शरण दी तथा बांग्लादेश की मुक्ति वाहिनी के जवानों को प्रशिक्षण एवं हथियार प्रदान किये तथा स्वतंत्रता प्राप्ति के लिये प्रोत्साहित भी किया । मार्च 1991 में बांग्लादेश में एक अस्थाई सरकार बन गयी । 6दिसम्बर 1971 को भारत ने बांग्लादेश को एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में मान्यता प्रदान कर दी । 16 दिसम्बर को पाकिस्तान की सेना ने भारत एवं बांग्लादेश की मुक्ति वाहिनी के समक्ष समपर्ण कर दिया। 8 जनवरी 1972 को शेख मुजीबुर्रहमान को पाकिस्तानी शासन ने मुक्त कर दिया। 20 जनवरी 1972 को शेख मुजीबुर्रहमान ने गणतन्त्रीय बांग्लादेश के प्रधानमंत्री का पद ग्रहण किया।[2]

स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरान्त बांग्लादेश ने अपने समस्त पड़ोसी देशों के साथ मैत्री एवं सहयोगपूर्ण सम्बन्ध रखने का निश्चय किया ।

**बांग्लादेश-नेपाल सम्बन्धों** के विकास में इनकी भोगोलिक स्थिति ने महत्वपूर्ण योगदान दिया है । दोनों देश भारतीय उपमहाद्वीप के अंग है । तथा एक दूसरे से भारतीय क्षेत्र से केवल 17 मील दूर स्थित है । नेपाल के लिए बांग्लादेश की समीपता बहुत अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि नेपाल चारों तरफ से मैदानी क्षेत्र से जुड़ा हुआ है। केवल भारत उसे समुद्री मार्ग की सुविधा प्रदान करता है । बांग्लादेश भी नेपाल को समुद्री मार्ग प्रदान कर सकता है।[3]

---

(1) दि नेशन्स, 24 अगस्त 1989
(2) वी0पी0दत्त " इण्डियाज फारेन पालिसी " पृष्ठ 234
(3) एस0आर0 चक्रवर्ती एण्ड वीरेन्द्र नारायण " बांग्लादेश ग्लोबल पालिटिक्स " पृष्ठ-183

नेपाल और बांग्लादेश दोनो ही भारत से जुड़े हुए हैं तथा भारत इन दोनों राष्ट्रों से जनसंख्या एवं प्राकृतिक संसाधनो की दृष्टि से अतिविशाल राष्ट्र है । दोनों ही देशों के सम्बन्ध भारत के साथ कुछ क्षेत्रों में समस्याग्रस्त है जिसके कारण इन दोनों देशों के सम्बन्ध भी प्रभावित होते रहते हैं क्योंकि दोनों देश अपने आपसी सम्बन्धों के विकास में भारत के महत्व को नहीं नकार सकते ।

नेपाल एवं बांग्लादेश दोनों की अर्थव्यवस्था विकासशील अवस्था में है तथा दोनों ही विदेशी सहायता पर निर्भर हैं लेकिन फिर भी दोनों एक दूसरे की अर्थव्यवस्था के विकास में सहयोग प्रदान कर सकते हैं । बांग्लादेश नेपाल को व्यापारिक क्षेत्र में सहयोग प्रदान करता है । सांस्कृतिक एवं सामाजिक क्षेत्र में दोनों देशों में एकरूपता के दर्शन होते हैं । बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम में भी नेपाल ने अप्रत्यक्ष सहयोग प्रदान किया । नेपाल ने 1972 में बांग्लादेश को मान्यता प्रदान कर दी तथा दोनों देशों ने परस्पर सम्बन्धों को बढ़ाने में रूचि प्रदर्शित की 1972 में बांग्लादेश के विदेशमन्त्री ने नेपाल की तथा 1973 में नेपाल के विदेशमन्त्री ने बांग्लादेश की यात्रा की ।

बांग्लादेश ने नेपाल को शान्ति क्षेत्र घोषित किये जाने की मांग का समर्थन किया । 1977 में बांग्लादेश के राष्ट्रपति की काठमाण्डू यात्रा के दौरान नेपाल के इस प्रस्ताव का स्वागत किया ।[1] 1980 में नेपाल के राजा बीरेन्द्र विक्रमशाह की ढ़ाका यात्रा के दौरान दोनों देशों ने इस क्षेत्र में शान्ति एवं स्थायित्व बनाये रखने को प्राथमिकता दी तथा गुटनिरपेक्ष नीति के लिए विश्वास प्रकट किया । नेपाल एवं बांग्लादेश के व्यापारिक सम्बन्धों में निरन्तर वृद्धि होती रही । 1978 में दोनों देशो ने आर्थिक सहयोग हेतु एक " संयुक्त आर्थिक आयोग " का गठन किया । 1980 में दोनों देश आपस में टेलीफोन लगाने के लिए सहमत हुए।[2] 1982 में दोनों देशों ने नेपाल में

---

(1) बांग्लादेश एशियन इयरबुक फॉर ईस्टर इकॉनोमिक रिव्यू 1979 पृष्ठ-143

(2) एशियन रिकॉर्डर 24-30 जून 1980 कॉलम 15-25 तक

दोनों देशों ने नेपाल में संयुक्त रूप में जूट-मिल लगाने के लिए समझौता किया । इसके बाद भी दोनो देशों के व्यापारिक सम्बन्धों में निरन्तर वृद्धि होती गई तथा दोनों देशों के सम्बन्ध बिना किसी मतभेद के स्थापित रहे । दोनों देशों ने परस्पर आर्थिक क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण योगदान दिया है । बांग्लादेश के वित्तमन्त्री एम0सैफूर दोनों देशों के संयुक्त आर्थिक आयोग के उद्घाटन सत्र हेतु काठमाण्डू गए तथा इस समय दोनों ने अपने आर्थिक सम्बन्ध की वृद्धि हेतु वचनबद्धता प्रकट की । एम0 सैफूर ने एक वक्तव्य में कहा-

" हम नेपाल को दो समुद्री तटों सहित प्रत्येक प्रकार की आवश्यक सुविधा देने के लिए तैयार हैं तथा नेपाल से अधिकांश मात्रा में सामग्री आयात कर सकते हैं।"[1] इस समय दोनों देशों ने आर्थिक सहयोग हेतु एक दूसरे को सड़क मार्ग से जोड़ने के लिए सहमति प्रकट की ।

इस प्रकार नेपाल व बांग्लादेश के मध्य सदैव मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित रहे हैं ।

**बांग्लादेश - भूटान सम्बन्ध** प्रारम्भ से मैत्रीपूर्ण रहे हैं । भूटान ने बांग्लादेश को कूटनीतिक सहयोग इसके स्वतन्त्रता संग्राम से ही देना प्रारम्भ कर दिया था । भारत के बाद भूटान दूसरा ऐसा देश था जिसने 1971 में बांग्लादेश को औपचारिक रूप से मान्यता प्रदान की क्योंकि भूटान के शासकों का मत था कि मित्र भारत के साथ मित्र बांग्लादेश इसके व्यापार एवं वाणिज्य में सहयोग प्रदान करेगा ।[2] मैदानी क्षेत्र से घिरे हुए भूटान ने सदैव बांग्लादेश एवं अन्य पड़ौसी देशों के साथ मधुर सम्बन्ध रखने का प्रयास किया । 1979 में बांग्लादेश के व्यापारिक दल ने आर्थिक सहयोग में वृद्धि हेतु थिम्पू की यात्रा की । 1980 में दोनों देशों ने एक दूसरे की राजधानी में कूटनीतिक आयोग के गठन का निश्चय किया । 1980 में ही दोनों देशों के मध्य व्यापार में वृद्धि हेतु दस वर्षों के लिए व्यापारिक समझौता हुआ । 1985 में इसी समझौते के सन्दर्भ में दोनों देशों ने विचार विमर्श किया तथा परस्पर आर्थिक सहयोग हेतु वचनबद्धता प्रकट की ।

---

(1) डेली स्टार 11 सितम्बर 1991

(2) आर0पी0 मिश्रा " भूटान-बांग्लादेश रिलेशन्स "

बांग्लादेश की आई बाढ़ के सन्दर्भ में दिसम्बर 1990 में दोनों देशों में संयुक्त रूप से कार्य करने का निर्णय लिया ।[1] बांग्लादेश भूटान की उदार अर्थव्यवस्था से अपने व्यापार में अभूतपूर्व वृद्धि कर सकता है । 1991 में भूटान के राजदूत ने बांग्लादेश से फल, सीमेण्ट , पत्थर संगमरमर आदि आयात करने के सन्दर्भ में हस्ताक्षर किये । अतः बांग्लादेश एवं भूटान के सम्बन्ध प्रारम्भ से ही मैत्रीपूर्ण रहे हैं । आर्थिक क्षेत्र में इनके मध्य महत्वपूर्ण योगदान रहा है ।

**बांग्लादेश -श्रीलंका के सम्बन्ध** प्रारम्भिक चरण में ही मित्रतापूर्ण नहीं रहे किन्तु बाद में धीरे-धीरे इनके सम्बन्धों में निरन्तर विकास होता गया । 1971 में बांग्लादेश के अभ्युदय के साथ श्रीलंका का दृष्टिकोण इसकी भावनाओं के विपरीत था । श्रीलंका ने पश्चिमी पाकिस्तान को बांग्लादेश के मुक्ति संग्राम को दबाने के लिए अपने क्षेत्र में सैनिक सुविधाएं प्रदान की थीं तथा संयुक्त राष्ट्र में श्रीलंका ने बांग्लादेश के पक्ष में मतदान नहीं किया । लेकिन श्रीलंका द्वारा बांग्लादेश को मान्यता प्रदान करने के साथ ही दोनों देशों के सम्बन्धों में निरन्तर वृद्धि हुई । 1977 में श्रीलंका के राष्ट्रपति विलियम गोपाल्वा ने ढ़ाका यात्रा की । इस अवसर पर बांग्लादेश के राष्ट्रपति ने दोनों देशों के पारस्परिक सम्बन्धों के महत्व पर प्रकाश डालते हुए कहा -" **भौगोलिक** रूप से हम पड़ोसी हैं, ऐतिहासिक रूप से हम मित्र हैं तथा वैचारिक रूप से हम दोनों गुटनिरपेक्ष नीति का अनुसरण करते हैं ।"[2]

बांग्लादेश एवं श्रीलंका दोनों का यह विश्वास है कि वे दक्षिण एशियायी क्षेत्र के दो छोटे राष्ट्र हैं इसलिए दोनों को एक दूसरे की स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए सहयोग करना चाहिए । अप्रैल 1979 को श्री लंका ने बांग्लादेश में अपना उच्च आयुक्त नियुक्त किया । दोनों देश गुटनिरपेक्ष नीति का अनुसरण करते हैं तथा हिन्द महासागर को शांतिक्षेत्र घोषित करवाने के लिए सहमत हैं । बांग्लादेश एवं श्रीलंका के मध्य आर्थिक सहयोग उच्चस्तरीय है । एक समझौते के अनुसार बांग्लादेश श्रीलंका को जूट, पेपर, हार्डवुड, मछली आदि का निर्यात तथा श्रीलंका से रबर , टायर्स , ट्यूब्स, नारियल-

---

(1) बांग्लादेश ऑब्जर्वर, 28 दिसम्बर 1990
(2) पी० ओ० टी० बांग्लादेश सिरीज, वाल्यूम-II, पार्ट 57,21 मार्च 1977 पृ० 416

तेल, माइका , आदि आयात करेगा ।[1] यूनाइटेड नेशलिस्ट पार्टी सरकार के समय दोनों देशों के मध्य दूर संचार सेवाएं प्रारम्भ हुई । श्रीलंका की सरकार ने 1986 में बांग्लादेश के कच्चे जूट के सामान से जूटबैग बनाने के कारखाने को खोलने की इच्छा प्रदर्शित की जिसमें उसने बांग्लादेश से तकनीकी सहयोग चाहा ।

बांग्लादेश ने श्रीलंका की तमिल समस्या को सदैव इसका आन्तरिक विषय समझा तथा यह आशा व्यक्त की कि श्रीलंका तमिल समस्या का समाधान श्रीलंका की एकता एवं अखण्डता बनाए रखते हुए करेगा । बांग्लादेश ने 1987 में हुए भारत-श्रीलंका समझौते का स्वागत किया तथा कहा कि ये दोनों ही देशो की आवश्यकता थी ।[2]

अतः **श्रीलंका** एवं बांग्लादेश के सम्बन्धों में निरन्तर वृद्धि होती गई । दोनों देशों के सम्बन्ध वर्तमान समय में मधुर एवं मैत्रीपूर्ण स्थापित हैं ।

**बांग्लादेश-मालदीव सम्बन्ध** प्रारम्भ में अतिनिकटता पूर्ण नहीं थे किन्तु पिछले कुछ वर्षो से दोनों देशों के सम्बंधों में निरन्तर वृद्धि हो रही है । बांग्लादेश ने मालदीव में राष्ट्रीय बैंक की स्थापना हेतु सहयोग दिया है जो कि दोनों देशों की संयुक्त संस्था है ।[3]

अतः बांग्लादेश - मालदीव सम्बन्ध सदैव सामान्य रहे । दोनों देशों के मध्य कभी कोई प्रत्यक्ष विवाद उभर कर सामने नहीं आया ।

**नेपाल** एक हिन्दू राज्य है । सांस्कृतिक दृष्टि से नेपाल भारत का एक अंग है । वर्तमान नेपाल का भी भारत से घनिष्ट सम्बन्ध है । यद्यपि भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है परन्तु यहाँ की अधिकांश जनसंख्या हिन्दू है । भारत की स्वतंत्रता से पूर्व अंग्रेजों ने नेपाल को कई बार अपने अधीन करने की कोशिशें की । अंग्रेजों ने 1816 में उसके ऊपर सुगौली की संधि थोप दी । इस संधि के अनुसार नेपाल को अपने कुछ भू-भाग को भारत में ईस्ट इण्डिया कम्पनी सरकार को देना पड़ा था । काठमांडू

---

(1) पी0ओ0टी0 9 फरवरी 1977, पृष्ठ 200

(2) एस0आर0चक्रवर्ती एक वीरेन्द्र नारयण " बांग्लादेश-ग्लोबल पोलिटिक्स" पृ0-200

(3) यू0ए0 बाजपेयी " इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहुड " पृष्ठ-297

में एक ब्रिटिश रेजीडेंट रहने लगा और नेपाल पूरी तरह से अंग्रेजों के प्रभाव में आ गया परन्तु नेपाल के आन्तरिक मामलों में ब्रिटिश सरकार ने कभी हस्तक्षेप नहीं किया । 1846 में नेपाल का शासन तन्त्र वहां के प्रधानमंत्री राणा परिवार ने हस्तगत कर दिया और राजा नाममात्र का शासक रह गया ।

सन् 1815 से 1947 तक नेपाल की स्थिति एशिया में अंग्रेजों के एक संरक्षक-राज्य के रूप में रही । नेपाल में सन् 1947 के पश्चात् की परिस्थितियों में जहाँ एक ओर कम्युनिस्ट चीन की ओर से बढ़ रही क्रांतिकारी प्रवृत्तियों से देश की रक्षा करने की चिन्ता उत्पन्न हुई, वहाँ दूसरी ओर नेपाल को आत्मनिर्भर और सबल राष्ट्र के रूप में खड़ा करने के लिये पड़ोसी देशों से मित्रता के सम्बन्ध स्थापित करना भी आवश्यक प्रतीत हुआ ।[1]

**नेपाल -भूटान सम्बन्ध** परस्पर ऐतिहासिक रूप से एवं धार्मिक रूप से जुड़े हुये है तथा दोनों देशों के सम्बन्ध अति प्राचीन काल से चलें आ रहे हैं । यद्यपि 1910 में भूटान एवं ब्रिटेन के मध्य सन्धि हो जाने के कारण भूटान एवं नेपाल के प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं रहे हैं । भारत-भूटान संधि 1949 में हुई थी । यह संधि होने के कारण भूटान एवं नेपाल के मध्य कोई कूटनीतिक सम्बन्ध नहीं स्थापित हो सके हैं।[2] 1950 में नेपाल में प्रजातांत्रिक राजतंत्र की स्थापना के उपरान्त नेपाली राजनीतिज्ञों ने भूटान के सन्दर्भ में रूचि प्रदर्शित करना प्रारम्भ कर दी थी । 1978 में भूटान के सचिव ने नेपाल की अनौपचारिक यात्रा अपने देश की वस्तुयें नेपाल को निर्यात करने के संदर्भ में की । 1980 में नेपाल के विदेश सचिव ने भूटान की यात्रा की तथा 1981 में भूटान के विदेशमंत्री ने काठमाण्डू की तीर्थ यात्रा की ।[3] कुछ वर्षों से भूटान को नेपाल एवं अन्य पड़ोसियों के साथ सम्बन्धों के विकास का प्रयास करना प्रारम्भ कर दिया है । दोनों देशों के मध्य राजदूतीय सम्बन्ध विकसित हो गये हैं । नेपाल एवं

---

(1) बसन्त कुमार सराफ " भारत और आधुनिक विश्व " पृष्ठ -103

(2) राम राहुल " रॉयल भूटान " पृष्ठ - 54

(3) वही । पृष्ठ -55

भूटान दक्षिण एशिया के दो ऐसे पड़ोसी राष्ट्र हैं जो चारों ओर से मैदानी क्षेत्र से घिरे हुये हैं तथा दोनों ही देशों में किसी न किसी रूप में राजतन्त्रात्मक शासन प्रणाली विद्यमान है । नेपाल के राजा ने 1987 में भूटान के राजदूत का स्वागत करते हुए एक वक्तव्य में कहा --

"नेपाल एवं भूटान के मध्य अच्छे सम्बन्धों में वृद्धि हो रही है । दोनों ही देशों में अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर समान विचारधारा व्यक्त की है । दोनों देश संप्रभुता, समानता, हस्तक्षेप न करने की नीति तथा शाँति स्थापित करने की नीतियों का समर्थन करते हैं । " ---- " नेपाल एवं भूटान सर्वत्र भूमि से घिरे होने के कारण बहुत कम विकास कर पाये हैं । इसी कारण दोनों देशों में साथ-साथ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक विकास के सम्बन्ध में समान विचार व्यक्त किये हैं । समान विकास की समस्या तथा अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर समान विचारधारा के कारण दोनों देशों के मध्य सम्बन्धों में वृद्धि हो रही है ।"[1]

नेपाल एवं भूटान के मधुर सम्बन्ध होते हुए भी दोनों देशों के मध्य भूटान में बसे नेपालियों की समस्या व्याप्त है । भूटान में इन नेपालियों को नागरिकता प्राप्त होने के बाद भी उनकी स्थिति दूसरे दर्जे के नागरिक की है तथा इनका मूल निवासियों एवं अधिकारी वर्ग द्वारा शोषण किया जाता है एवं उनको नेपाल में केवल दो स्थानों में बसने की स्वतन्त्रता प्राप्त है । नेपाल के राजनीतिज्ञ अनेक बार इस संदर्भ में चिन्ता व्यक्त कर चुके हैं । नेपाल के वर्तमान प्रधानमंत्री ने अपना पद ग्रहण करने से पूर्व एक वक्तव्य में कहा था कि--

" हम इस संदर्भ में अलग एवं चुप नहीं रह सकते । जब हमारे भाइयों को मानव अधिकार से वंचित किया जा रहा है । " [2]

---

(1) राइजिंग नेपाल, 21 अक्टूबर 1987

(2) टेलीग्राम, 20 सितम्बर 1991

नेपाल के अनेक राजनैतिक दलों ने इस समस्या को संयुक्त रूप से सुलझाने का सुझाव दिया है ।

**नेपाल-श्रीलंका सम्बन्धों** के विषय में कहा जा सकता है कि उनके महत्व प्रत्यक्ष रूप से कोई विशेष सम्बन्ध नहीं रहे हैं । दोनों देशों की भौगोलिक स्थिति में अत्यधिक अंतर है । नेपाल जहाँ चारों ओर मैदानी क्षेत्र से जुड़ा हुआ है, वहीं श्रीलंका एक द्वीप है । श्रीलंका की विदशनीति का झुकाव प्रारम्भ से ही पश्चिमी देशों के प्रति रहा जबकि नेपाल 1950 की संधि के अनुसार सदैव भारत के मित्र राष्ट्रों की श्रेणी में रहा है , इसलिए दोनों देशों के मध्य सम्बन्ध अधिकांशतः तटस्थतापूर्ण रहे हैं साम्यवादी चीन के प्रति श्रीलंका की नीतियों का सदैव सुकाव रहा है । नेपाल की नीति ने कभी-कभी चीन के प्रभाव में आकर भारत विरोधी रूख अपनाया है । अतः परोक्ष रूप से कुछ समय विशेष के लिये चीनी प्रभाव के कारण नेपाल एवं श्रीलंका सम्बन्धों में समीपता रही है ।

नेपाल एवं श्रीलंका दोनों ही गुटनिरपेक्ष नीति का अनुसरण करते हैं तथा दोनों ही साम्राज्यवाद एवं उपनिवेशवाद विरोधी हैं, इसलिये अन्तर्राष्ट्रीय जगत में दोनों ही अधिकाँशतः समान विचार प्रकट करते हैं । नेपाल ने श्रीलंका की तमिल समस्या को सदैव उनकी आन्तरिक समस्या समझकर तथा श्रीलंका की एकता तथा अखण्डता का समर्थन किया । जुलाई 1987 में भारत श्रीलंका के समझौते से पूर्व भारत द्वारा श्रीलंका में गिराई जाने वाली राहत सामग्री की गतिविधियों की नेपाल ने श्रीलंका को आन्तरिक विषय के हस्तक्षेप के संदर्भ में आलोचना की जबकि नेपाल सरकार ने भारत-श्रीलंका समझौता 1987 का स्वागत किया , यद्यपि नेपाल के अनेक राजनैतिक दलों एवं बुद्धिजीवियों ने इस समझौते की आलोचना की ।[1]

अतः नेपाल एवं श्रीलंका सम्बन्ध यदि बहुत अधिक मैत्रीपूर्ण नहीं है तो दोनों देशों के मध्य कोई मतभेद भी नहीं है ।

---

(1) समाज, 6 अगस्त 1987.

**नेपाल-मालदीव सम्बन्ध** प्रारम्भ से ही किसी भी प्रकार के नहीं रहे क्योंकि दोनों देशों की भौगोलिक , राजनैतिक , सांस्कृतिक एवं धार्मिक स्थिति में काफी भिन्नता पाई जाती है । नेपाल हिमालय की तलहटी में बसा हुआ चारों ओर से मैदानी क्षेत्र से घिरा हुआ एक हिन्दू राज्य है जबकि मालदीव हिन्द-महासागर के मध्य में छोटे-छोटे द्वीपों की कड़ी से बना हुआ एक मुस्लिम राष्ट्र है । स्वतंन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त मालदीव ने भारत श्रीलंका सहित अपने समस्त पड़ोसी राष्ट्रों के साथ सम्बन्धों के विकास का प्रयास किया क्योंकि उसे अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिये सभी पड़ोसी राष्ट्रों का सहयोग चाहिये था । ऐतिहासिक रूप से मालदीव केवल भारत एवं श्रीलंका से सम्बन्धित रहा है । लेकिन अभी के कुछ वर्षों से मालदीव एवं नेपाल के आर्थिक एवं राजनैतिक सम्बन्धों का विकास हुआ है । अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में दोनों देशों की नीतियाँ समान है ।

दक्षिण एशियाई राष्ट्र होने के कारण दोनों देश एक-दूसरे के सहयोगी राष्ट्र हैं । अतः मालदीव एवं नेपाल के बीच आज भी सम्बन्धों का बहुत अधिक विकास नहीं हो पाया है लेकिन फिर भी दोनों देशों के बीच कोई मतभेद नहीं है । अन्तर्राष्ट्रीय जगत में दोनों देश सहयोगी राष्ट्र के रूप में अपनी भूमिका का निर्वाह करते है तथा आर्थिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में अपने सम्बन्धों के विकास हेतु प्रयत्नशील हैं।

**भूटान** का प्राचीन इतिहास अंधकार के गर्त में छिपा है । सोलहवीं सदी में भारत के कूच बिहार के निवासी भूटान के पूर्वी क्षेत्रों से जाकर बस गये थे । प्रायः इसी समय पश्चिम क्षेत्र में तिब्बत के लामाओं ने आकर बसना प्रारम्भ किया । तिब्बती लामाओं का प्रभाव धीरे-धीरे पूर्व में भी फैलने लगा और इन्होंने यहाँ के भारतीय निवासियों को भी बौद्ध धर्म स्वीकार करने के लिये प्रेरित किया । एक राजनैतिक इकाई के रूप में भूटान का अस्तित्व सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में विकसित हुआ।[1] शासन

---

(1) बसन्त कुमान सराफ " भारत और आधुनिक विश्व " पृष्ठ 122

व्यवस्था पूर्णतया विकेंद्रित थी । यह " द्वैध शासन प्रणाली " भूटान में अनेक शताब्दियों तक चलती रही ।

सन् 1825-26 के अंग्रेज बर्मी युद्ध के बाद वर्तमान आसाम का प्रदेश अंग्रेजों के हाथ में आ गया । चूँकि भूटान और आसाम की कोई सीमायें निर्धारित नहीं की गयी थीं, अतः भूटान के तराई क्षेत्र के स्वामित्व के प्रश्न को लेकर भूटान के शासकों के बीच हुई एक संधि के परिणामस्वरूप , भूटान की दक्षिणी तराई का क्षेत्र आसाम राज्य में मिला दिया गया ।

बीसवीं सदी के प्रारम्भ में " देवराजा " की सत्ता " धर्मराजा " की तुलना में अधिक प्रभावशाली हो गयी । दूर-दूर बसे मठाधीश व जागीरदारों ने केंद्रीय सत्ता से विद्रोह प्रारम्भ कर दिया । ऐसे ही समय टोंसा के एक बड़े जागीरदार " ड्रुक ग्यालपो " ने जो कि सबसे अधिक शक्तिशाली था, शासन सूत्र अपने हाथ में ले लिया । यही राजवंश अबतक वंशानुगत शासन कर रहा है ।

**भूटान-श्रीलंका सम्बन्ध** कोई विशेष रूप से स्पष्ट नहीं दिखाई देते हैं क्योंकि दोनों देश ऐतिहासिक, भौगोलिक एवं राजनैतिक दृष्टि से एक-दूसरे से काफी भिन्न हैं । श्रीलंका भारत के दक्षिणी भौगोलिक सीमाओं के समीप स्थित हिन्द महासागर में बसा हुआ एक द्वीप है जबकि भूटान हिमलाय के पर्वत श्रेणियों के मध्य मैदानी क्षेत्र से घिरा हुआ एक राज्य है । दोनों देशों की अर्थव्यवस्था में भी बहुत भिन्नता है । 1949 की भारत-भूटान संधि के कारण भूटान के अन्तर्राष्ट्रीय जगत में किसी भी राष्ट्र से कोई सम्बन्ध नहीं रहे क्योंकि भूटान की अर्थव्यवस्था पूर्णरूप से भारत पर निर्भर थी तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में वह भारत के अनुरूप कार्य करता रहा । 1971 में भूटान ने संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता प्राप्त की ।[1] इसी समय से भूटान ने अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों का विकास प्रारम्भ किया जिसके परिणामस्वरूप भूटान को भारत के अतिरिक्त अन्य राष्ट्रों से आर्थिक सहायता प्राप्त हुई। भूटान एवं श्रीलंका की

---

(1) मनोरमा कोहली " इण्डिया एण्ड भूटान-स्टेडी इन इंटरनेशनल रिलेशन्स " पृष्ठ-1

विदेशनीति साम्यवाद एवं उपनिवेशवाद विरोधी है । कुछ वर्षों से दोनों देशों के सम्बन्धों में कुछ सीमा तक विकास हुआ है । दक्षिण एशियाई राष्ट्र होने के कारण दोनों देश परस्पर सहयोगी राष्ट्र हैं तथा दोनों के मध्य किसी प्रकार का भी मतभेद नहीं है ।

**भूटान-मालदीव सम्बन्ध** प्रत्यक्ष रूप से दिखाई नहीं देते । दोनों देशों की भौगोलिक स्थिति में बहुत अधिक विभिन्नता है । भूटान हिमालय की पर्वत शिखाओं में मैदानी क्षेत्र से घिरा हुआ बसा है तथा मालदीव हिन्दमहासागर के मध्य में स्थित द्वीपों का एक समूह है , इसलिए इनमें प्रत्यक्ष रूप से कोई सम्बन्ध नही हैं किन्तु मालदीव एवं भूटान दोनों ही अविकसित राष्ट्र है तथा दोनों की अर्थव्यवस्था अपने विकास के लिये बाह्य जगत पर निर्भर है, दोनों ही अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के लिये प्रयासरत हैं अतः इस संदर्भ में परोक्ष रूप से दोनों राष्ट्रों की नीतियाँ समीपता की हैं । दक्षिण एशियाई राष्ट्र होने के कारण दोनों एक दूसरे के सहयोगी राष्ट्र हैं तथा दोनों के मध्य कोई महत्वपूर्ण विभेद नहीं है ।

**श्रीलंका** ऐतिहासिक रूप से अपने अस्तित्वकाल से ही भारत से सम्बन्धित रहा है। महावंशा[1] में वर्णित श्रीलंका के इतिहास के अनुसार श्रीलंका नामक द्वीप का इतिहास भारतीय राजकुमार विजय एवं उनके 700 अनुयायियों द्वारा इस द्वीप में पाँचवी सदी ईसापूर्व में प्रवेश के साथ प्रारम्भ होता है । राजकुमार विजय को अपने राज्य सिंहापुरा से कानून तोड़ने के अपराध में अपने पिता सिंहबाहु द्वारा निकाल दिया गया था । राजकुमार विजय ने बुद्ध परिनिर्वन के दिन इस द्वीप में प्रवेश किया।[2]

भारतीय सम्राट अशोक ने श्रीलंका में बौद्ध धर्म की स्थापना की । सोलहवीं सदी में श्रीलंको में पश्चिमी शक्तियों का प्रवेश हो गया । 1505 में इस द्वीप में पुर्तगालियों के आगमन से यूरोपीय आधिपत्य क्रमशः स्थापित होता गया । 1715 में

---

(1) महावंशा- यह पालि भाषा का एक ग्रंथ है, जिसमें श्रीलंका का प्रचीन इतिहास संकलित है, इसे छठी सदी में महानाम द्वारा लिपिबद्ध किया गया था ।

(2) डी सिल्वा " हिस्ट्री ऑफ श्रीलंका " पृष्ठ-1

अंग्रेजों ने मद्रास से सेना भेजकर श्रीलंका के प्रशासन का संचालन किया । 1815 में श्रीलंका में पूर्णरूप से ब्रिटिश उपनिवेश स्थापित हो गया । इसके उपरान्त श्रीलंका में निरन्तर स्वतंत्रता-आन्दोलन चलते रहे । अंग्रेजों ने श्रीलंका पर 100 वर्ष से भी अधिक शासन किया । 4 फरवरी 1948 को श्रीलंका ने अंग्रेजी शासन से स्वतंत्रता प्राप्त की ।

ऐतिहासिक तथ्यों के अनुसार **मालदीव** में सबसे पहले आर्यों ने प्रवेश किया । मध्यकाल में मालाबार तट से गोपला लुटेरे अक्सर मालदीव पर हमला कर देते थे और यह कन्नौर के राजा की जागीर बन गया । 1798 में श्रीलंका में डच उपनिवेशवादियों को हटाकर ब्रिटिश शासकों ने सत्ता संभाली । मालदीव के सुल्तान ने इनके साथ एक समझौता किया और मालदीव ब्रिटेन का संरक्षित राज्य बन गया किन्तु इसकी आन्तरिक स्वायत्तता एवं स्वतन्त्रता बनी रही । 'गन' नामक दीप में ब्रिटेन ने अपनी वायुसेना का अड्डा भी बनाया । सल्तनतकाल में मालदीव का शासन इस्लामी रीति-रिवाज के अनुसार चलता रहा । 1965 में मालदीव ने औपचारिक रूप से स्वतंत्रता प्राप्त की ।

**श्रीलंका एवं मालदीव सम्बन्ध** सामाजिक एवं सांस्कृतिक रूप से अतिप्राचीन काल से रहे हैं । प्राचीनकाल में मालदीव के लोग अपना प्रमुख भोजन चावल तथा अन्य खाद्य सामग्री श्रीलंका से ही लाते थे और अपनी मछली वहाँ भेजते थे । मालदीव की अर्थव्यवस्था श्रीलंका के व्यापारियों पर निर्भर होने के कारण श्रीलंका के व्यापारी परोक्ष रूप से मालदीव की राजधानी माले को प्रभावित करते रहे हैं । सातवें दशक के आरम्भ तक श्रीलंका मालदीव के प्रमुख व्यापार का भागीदार रहा है। राष्ट्रपति श्री गपूम ने मालदीव के लिये श्रीलंका के महत्व को स्पष्ट करते हुये कहा-

" श्रीलंका मालदीव के लिए विश्व का निकास द्वार है।" [1]

---

(1) उर्मिला फडनीस एण्ड इलादत्त " मालदीव्ज - विण्ड्स ऑफ चेंज इन एन स्टॉल स्टेट" पृष्ठ- 78

श्रीलंका ने मालदीव में 1965 तथा 1979 में अपना मिशन खोला । 1976 में मालदीव भारत एवं श्रीलंका के बीच एक समझौता हुआ । दोनों देशों के सांस्कृतिक एवं व्यापारिक सम्बन्ध काफी घनिष्ट हैं ।[1] 1981 में श्रीलंका ने माले में अपने स्थायी आयोग का गठन किया । मालदीव के अनेक विद्यार्थियों ने श्रीलंका में शिक्षा एवं प्रशिक्षण प्राप्त किया है तथा उच्च शिक्षा हेतु कोलम्बो योजना के अर्न्तगत वे अन्य देशों में गये ।

1981 में दोनों देशों के व्यापारिक समझौते का नवीनीकरण हुआ जिसके अर्न्तगत श्रीलंका ने मालदीव को मछली के लिये अच्छी कीमत चुकाने तथा इसको अधिक मात्रा में खरीदने की स्वीकृति दी । श्रीलंका के बैंकों ने माले में अपनी शाखायें खोली । 1981 में दोनों देशों के मध्य एक सांस्कृतिक समझौता हुआ । 1982 में दोनों देशों में हवाई सेवा समझौते का प्रारम्भ हुआ ।

मालदीव एवं श्रीलंका के बीच यद्यपि आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध अति प्राचीनकाल से चले आ रहे हैं तथा इन सम्बन्धों में निरन्तर विकास हो रहा है किन्तु फिर भी राजनैतिक दृष्टि से दोनों देशों में मतभेद हैं ।

1988 में जब मालदीव पर कुछ बाह्य सैनिकों द्वारा आक्रमण किया गया और श्री गयूम की शासन सत्ता को पलटने का प्रयास किया गया तो विश्व जनमत के समक्ष यह संदेह किया गया कि यह आक्रमण श्रीलंका के मिशनरियों के सहयोग से हुआ है, यद्यपि इस संदर्भ में अभी तक कुछ स्पष्ट प्रमाण नहीं मिल पाये हैं किन्तु फिर भी इस घटना से मालदीव एवं श्रीलंका के सम्बन्धों में काफी तनाव बढ़ा है तथा इनके आपसी सम्बन्ध पहले के समान मधुर नहीं रह गये है । लेकिन फिर भी आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में दोनों देशों के सम्बन्ध पूर्व के समान ही है ।

---

1- वही

दक्षिण एशिया के राष्ट्रों के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों का विवेचन करने उपरान्त यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान समय में अन्य राष्ट्रों के मध्य परस्पर सम्बन्ध अधिक मैत्रीपूर्ण हैं- बनस्पत् भारत के । जबकि भारत की विदेशनीति का निर्धारण करते समय उच्च स्तर में इस तथ्य पर बल दिया गया था कि भारत सदैव पड़ोसी देशों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध स्थापित करेगा । यहाँ तक कि भारत-बांग्लादेश सम्बन्ध भी मधुर नहीं है, यद्यपि इसके अभ्युदय का श्रेय भारत को ही दिया जाता है ।

दक्षिण एशियाई राष्ट्रों की भौगोलिक एवं ऐतिहासिक स्थिति एवं परस्पर सम्बन्धों का भलीभाँति विवेचन करने के उपरान्त यह ज्ञात होता है कि चूँकि इस क्षेत्र के समस्त राष्ट्रों में एकमात्र भारत ही सर्वाधिक विशाल एवं विकसित राष्ट्र है और भारत ही अन्य समस्त राष्ट्रों की सीमाओं को स्पर्श करता है, इसीकारणवश अन्य समस्त राष्ट्रों के मतभेद व विवाद भी सबसे अधिक भारत से ही रहते हैं । अन्य समस्त देश विकासशील अवस्था में हैं । उन्हें सदैव विशाल एवं विकसित देश- भारत से भय बना रहता है कि कहीं भारत अपने हित के लिये पड़ोसी देशों में हस्तक्षेप की नीतियों का पालन न करने लगे ।

अतः यही कारण है कि भारत की पड़ोसी देशों के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध बनाये रखने की सद्इच्छा की आकाँक्षा की पूर्ति संभव नहीं हो रही है ।

## द्वितीय अध्याय

### अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण एशिया के देशों की स्थिति एवं महत्व-

(अ) आर्थिक स्थिति एवं महत्व

(ब) सामरिक स्थिति एवं महत्व

(स) राजनैतिक स्थिति एवं अन्य देशों से सम्बन्ध

## अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण एशिया के देशों की स्थिति एवं महत्व

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में विभिन्न राष्ट्र अपनी नीतियों एवं कार्यों के माध्यम से अपने उन राष्ट्रीय हितों की पूर्ति के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं, जो अन्य राष्ट्रों के राष्ट्रीय हितों से टकराते है । अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में वहीं राष्ट्र प्रभावकारी है जो आर्थिक दृष्टि से सुदृढ हों या जिनके खनिज पदार्थों का गुणात्मक तथा मात्रात्मक स्तर ऊँचा होता है । अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में संसाधनों का विषम वितरण विभिन्न राष्ट्रों को जहाँ एक ओर संशोधन नीतियाँ अपनाने की प्रेरणा देता है वहीं प्राकृतिक संसाधन और कच्चा माल युद्ध करने की योग्यता एवं राजनीतिक स्थिति को प्रभावित करते है ।

दक्षिण एशिया अपने आप में एक अत्यन्त विस्तृत क्षेत्र है| यह क्षेत्र प्राकृतिक साधनों तथा जनशक्ति से भरपूर है । विगत वर्षों के दौरान दक्षिण एशिया के आर्थिक, राजनैतिक एवं सामरिक विकास के फलस्वरूप इस क्षेत्र के देशों के मध्य एक प्रकार के असुरक्षात्मक वातावरण का विकास हुआ है । महाशक्तियों द्वारा इस क्षेत्र में प्रभाव विस्तार की प्रक्रिया और प्रत्यक्ष हस्तक्षेप ने इस स्थिति को और अधिक जटिल बना दिया है । दक्षिण एशिया के प्राकृतिक साधनों की बहुलता ही महाशक्तियों के प्रत्यक्ष हस्तक्षेप का प्रमुख कारण है । दक्षिण एशिया के क्षेत्र में होने वाला कोई भी आर्थिक, राजनैतिक और सामरिक परिवर्तन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करता है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण एशिया के देशों की आर्थिक, राजनैतिक और सामरिक स्थिति अत्यधिक महत्वपूर्ण है-

## (अ) आर्थिक स्थिति

----------

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करने वाले तत्वों में आर्थिक सुदृढ़ता एक महत्वपूर्ण तत्व है । किसी राष्ट्र की आर्थिक स्थिति का सुदृढ़ीकरण होना उस राष्ट्र की उन्नति का प्रतीक होता है । दक्षिण एशिया के देशों की आर्थिक स्थिति विगत कुछ वर्षों से विकासशील अवस्था में है । विश्व के सकल उत्पाद में इस क्षेत्र का भाग केवल 2% और निर्यात में 0.6% है । भारत को छोड़कर इस क्षेत्र के अन्य देशों को खाद्यान्न का आयात करना पड़ रहा है ।

लम्बी दासता के दौरान **भारत** की अर्थव्यवस्था सोचनीय हो गयी ।[1] स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत की आर्थिक उन्नति तभी संभव थी जब अन्तर्राष्ट्रीय शाँति बनी रहे । आर्थिक दृष्टि से भारत का अधिकाँश व्यापार पाश्चात्य देशों के साथ था । भारत अपने विकास के लिये अधिकतम विदेशी सहायता का भी इच्छुक था । पदार्थ, परिश्रम, विज्ञान एवं तकनीकी सम्पन्नता के अभाव में यह अविकसित देश परराष्ट्रों पर निर्भर था ।

भारत एक कृषि प्रधान देश है । भारत में कृषि व्यवसाय का महत्व इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि यहाँ की जनसंख्या का 70% इस व्यवसाय में संलग्न है और 1979-80 में कुल देश की आय का 460% कृषि द्वारा प्राप्त होता है ।[2] कृषि व्यवसाय का अधिक महत्व होते हुये भी भारत खाद्यान्नों के लिये स्वावलम्बी नहीं है । यहाँ प्रतिवर्ष जनसंख्या वृद्धि की दर 2% से ऊपर है । इसके लिये आवश्यक है कि प्रतिवर्ष 5 या 6 लाख टन अनाज अधिक उत्पन्न किया जाये । भारत में कृषि विकास के लिये अनेक कार्यक्रम बनाये गये, जिनमें - सिंचाई का उत्तम प्रबन्ध, उत्तम बीजों की व्यवस्था, खाद्य व उर्वरकों की सुविधा, थोक व्यापार पर नियंत्रण आदि महत्वपूर्ण है ।

---

(1) माईरोन बीनर " दि पॉलिटिक्स ऑफ साउथ एशिया " पृष्ठ 175

(2) डॉ0 चतुर्भुज मैमोरिया, " भारत भूमि " पृष्ठ 104

भारत में अनेक प्रकार की फसलें उत्पन्न की जाती हैं। इसमें खाद्यान्नों के अतिरिक्त ऐसी भी फसलें हैं, जिनसे कच्चा माल प्राप्त होता है । खाद्यान्न की दृष्टि से - गेहूँ , चावल , जौ, ज्वार, बाजरा, मक्का, और दालें आदि हैं । व्यवसायिक और मुद्रादायिनी फसलें - गन्ना, तिलहन, गर्ममसाले और रबर, आदि है । पेय पदार्थ की दृष्टि से चाय, कहवा और तम्बाकू है तथा रेशेदार पौधे- कपास, जूट , और सन आदि हैं । [1] खाद्यान्नों में सर्वोच्च स्थान चावल का प्राप्त है । विश्व का 21% चावल भारत में उत्पन्न किया जाता है ।[2]

भारत देश की विशालता को देखते हुए यहाँ की खनिज सम्पत्ति अधिक नहीं है । लोहा और अभ्रक का उत्पादन की दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थान है जिनका विदेशों में निर्यात भी होता है । विश्व का तीन चौथाई अभ्रक भारत में प्राप्त होता है। अन्य निर्यात किए जाने वाले खनिजों में मैंगनीज , जिप्सम और बॉक्साइट हैं । 1965-66 में खनिजों के निर्यात द्वारा 67 करोड़ रूपये की मुद्रा प्राप्त की गयी । 1977-78 में यह मूल्य 886 करोड़ रूपये था । [3] आयात किये जाने वाले खनिजों में ताँबा, टिन, टंगस्टन इत्यादि को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । खनिज तेल का उत्पादन भारत में इस समय आवश्यकता से कम है जबकि तेल के स्रोत खोज लिए गये हैं। खनिज तेल से न केवल पेट्रोलियम वरन् अन्य कई वस्तुएं भी प्राप्त होती हैं । जैसे- गेसोलीन, मिट्टी का तेल, मोम, मशीन को चिकना करने के पदार्थ आदि ।

भारत के निवासियों का जीवन स्तर मात्र कृषि पर निर्भर रहकर ऊँचा नहीं किया जा सकता , इसलिए यह आवश्यक समझा गया है कि देश में उद्योगों को उन्नत किया जाये । भारत सरकार की औद्योगिक नीति इसी विचार को लेकर अपनायी गयी । गत पाँच वर्षीय योजनाओं में विशाल उद्योगों को स्थापित करने का निरन्तर प्रयत्न

5-----------------------------------------------

(1) डॉ0 चतुर्भुज मैमोरिया, " भारत भूमि " पृष्ठ-107

(2) ---वही --

(3) टाइम्स ऑफ इण्डिया डायरेक्ट्री एण्ड इयरबुक 1979

किया गया और इसमें सफलता भी मिली । संभवतः इसी कारण भारत में बनी औद्योगिक वस्तुओं को विश्व-व्यापार में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त होने लगा है । जनता सरकार द्वारा छठी पंचवर्षीय योजना में कुटीर एवं ग्रामीण उद्योगों को महत्वपूर्ण स्थिति प्रदान की गयी है।[1] देश में उन्नत, विशाल उद्योगों में लोहा इस्पात उद्योग, रेशमी वस्त्र उद्योग, रेयन (कृत्रिम रेशम) उद्योग , जूट उद्योग , रेल के इंजन तथा डिब्बे बनाने का उद्योग, रसायन उद्योग, जलयान निर्माण उद्योग, सीमेंट उद्योग, चीनी उद्योग आदि प्रमुख हैं । खाद्य समस्या को हल करने के लिए मछली-पालन और पशु-पालन की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है ।

प्रगति के पथ पर भारत में वर्तमान समय में वैदेशिक व्यापार का संतुलन प्रतिकूल हैं । भारत में इस समय निर्यात की अपेक्षा अधिक मूल्य की वस्तुएं आयात की जाती हैं । भारत द्वारा निर्यात की जाने वाली वस्तुएं - जूट का माल, चाय, तम्बाकू, तिलहन, सूती-वस्त्र, लाख, मसाले, धातु से निर्मित वस्तुएँ आदि हैं । भारत अधिकांशतः पश्चिमी जर्मनी , सोवियत रूस , संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, बांग्लादेश, बर्मा, श्रीलंका आदि देशों को निर्यात करता है ।[2] आयात की जाने वाली वस्तुएँ-मशीनें, कपास,धातु, लोहा एवं इस्पात से निर्मित वस्तुएँ, खनिज तेल, खाद्यान्न में गेहूँ , जौ, दालें आदि, दवाइयाँ, रसायनिक पदार्थ, कागज आदि हैं । जिन देशों से भारत अधिक आयात करता है, वे है- ब्रिटेन , संयुकत राज्य अमेरिका, जापान, जर्मनी, रूस, बेल्जियम, फ्रांस आदि।[3]

किन्तु भारत की अर्थव्यवस्था वैसी नहीं है जैसी होनी चाहिए । भारतीय अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत अनेक गम्भीर समस्यायें हैं । भारत में 50% लोग समृद्धि से नीचे जीवन निर्वाह कर रहे हैं । लगभग 20 लाख लोग बेरोजगार हैं । ऐसी स्थिति

---

(1) डॉ0 परमानन्द- " पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशिया " पृष्ठ-59
(2) डॉ0 चतुर्भुज मेमोरिया " भारत-भूमि " पृष्ठ - 287-88
(3) --- वहीं ---- पृष्ठ-289-90

में विश्व बैंक से सहायता एवं अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा प्रदान करके भारत की अर्थव्यवस्था में सुधार किया जा सकता है ।[1]

**पाकिस्तान** में अर्थव्यवस्था का सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र कृषि है । भारत के विभाजन के समय राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था का 60% योगदान कृषि का रहा है परन्तु अब यह 50% से भी कम है क्योंकि अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों में क्रमिक और तीव्र वृद्धि हुई है । विशेषतः बड़े पैमाने के उद्योग धन्धों में जो 1960-65 में 15% थी और 1965-70 में 10% की दर से वृद्धि हुई जबकि कृषि के क्षेत्र में केवल 5% की ही वृद्धि हुई ।[2] इसका यह तात्पर्य नहीं है कि कृषि को प्रमुख सफलता नहीं मिली है। पाकिस्तान के क्षेत्रफल का 28% भाग कृषि के लिए उपलब्ध है । यहाँ कृषि उपजों में विशेष रूप से वृद्धि हुई है । पाकिस्तान में गेहूँ, जौ, चना, ज्वार, बाजरा, कपास , चावल आदि का उत्पादन होता है । पाँचवी, पंचवर्षीय योजना के समय गेहूँ के उत्पादन में 40% की वृद्धि हुई जिससे गेहूँ के उपयोग में वृद्धि हुई ।[3] पाकिस्तान में कृषि एवं औद्योगिक विकास का आधार उपयुक्त जल-संभरण तथा जल-संभरण तथा जल-शक्ति संसाधन हैं । पाकिस्तान में सिंचाई का कार्य अति प्राचीनकाल से चला आ रहा है किन्तु आधुनिक नित्यवाही नहरों का विकास सन् 1959 से किया गया । सिंचाई योजनाओं के साथ देश की जलविद्युत परियोजनाएँ भी सम्बन्धित हैं, इस प्रकार बहु-ध्येयी योजनाओं को प्रोत्साहन दिया गया है । पाकिस्तान के निर्माण के समय विद्युत शक्ति का उत्पादन नगण्य था । सन् 1963 में 10 लाख किलोवाट विद्युत उत्पादन की क्षमता प्राप्त कर ली थी ।

---

(1) डा0 परमानन्द, " पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशिया - पृष्ठ 61

(2) एस0ए0 खालिक " पाकिस्तान पीस एण्ड वार " पृष्ठ 114

(3) डॉ0 परमानन्द " पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशिया " पृष्ठ-72

जनशक्ति के साधनों के अतिरिक्त पाकिस्तान में कुछ कोयला, पेट्रोलियम तथा प्राकृतिक गैस भी प्राप्त होती है, यद्यपि इनकी अतिरिक्त मात्रा का अभी तक सही अनुभव नहीं लगाया गया है । खनिज-संसाधनों एवं शक्ति के साधनों का अभाव होने के कारण पाकिस्तान में विशाल निर्माण उद्योगों की स्थापना अधिक नहीं हो सकी । लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा करने के लिए सन् 1959 से एक नई औद्योगिक नीति को प्रयोग में लाया गया, ताकि लघु, मध्यम तथा बड़े सभी प्रकार के उद्योगों को विकसित किया जा सके । सूती, ऊँनी-कपड़ा, चीनी, सीमेंट , कागज तथा रसायन आदि वहाँ के प्रमुख उद्योग हैं । पाकिस्तान की पंचवर्षीय योजनाओं में औद्योगिक विकास के लिए उपयुक्त स्थान दिया गया है । पाँचवी पंचवर्षी योजना 1983 के अन्तर्गत चीनी एवं रसायन उद्योगों के विकास पर बल दिया गया है ।[1]

वर्तमान समय में पाकिस्तान के लगभग सभी प्रमुख नगरों के बाह्य अंचल में विशाल औद्योगिक प्रतिष्ठान हैं, जिनमें सूत्ती-वस्त्र उद्योग प्रथम स्थान पर और जूट उद्योग द्वितीय स्थान पर है । अन्य उद्योग जो विभाजन के समय के पश्चात् विकसित हुए, वे है-चीनी, तेल, कागज, बोर्ड तथा सीमेंट । चीनी व सीमेंट का पर्याप्त उत्पादन होने से इनका निर्यात भी संभव होगा । रसायनिक उवर्रक उद्योग की स्थापना देश की कृषि को विशेष रूप से ध्यान में रखकर की गयी है ।

इस विकास का मानवीय पक्ष है-औद्योगिक श्रमिकों का एक विशाल समूह जो किसी भी विकासशील देश के लिए महत्वपूर्ण होता है , इन कारखानें से अपनी आजीविका चलाता है । कुशल व्यक्तियों का एक वर्ग-फैक्ट्री तथा मिल के प्रबंधकों, लेखाकारों , इंजीनियरों तथा तकनीशियनों का भी जन्म हुआ है, जो 1947 तक प्रकाश में नहीं आये थे ।[2]

---

(1) डॉ0 परमानन्द " दि पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशिया " पृष्ठ-72

(2) एस0ए0खलिक " पाकिस्तान पीस एण्ड वार " पृष्ठ-116

इस तथ्य पर चिन्तन किया गया कि योजना का मूल उद्देश्य विविध प्रान्तों तथा एक ही प्रान्त के विविध क्षेत्रों के बीच प्रति व्यक्ति आय की असमानता को हटाया जाना हो साथ ही पाकिस्तान के स्रोतों, जिसमें अर्जित विदेशी मुद्रा भी सम्मिलित है , को ऐसे ढंग से प्रयोग किया जाये कि लक्ष्य की प्राप्ति अतिशीघ्र हो सके ।

आधुनिक अर्थव्यवस्था की कुछ कमियाँ हैं । जैसे- आर्थिक विपन्नता, मुद्रा-प्रसार, अवमूल्यन और वृहत् बेरोजगारी । इन्हें दूर करने का कार्य विज्ञान ने राजनीतिज्ञों पर छोड़ दिया है और पाकिस्तान में न तो राजनीतिज्ञ थे और न राजनीतिक गतिविधियाँ । अतः देश की अर्थव्यवस्था को कुछ असफरों, जो राजनीतिज्ञ बन गये थे, उन पर छोड़ दिया गया था । यहीं कारण है कि देश की अर्थव्यवस्था का वर्तमान ढाँचा अवरूद्ध , गतिहीन तथा दुर्बल है और इनमें उपनिवेशवाद की बू आती है तथा औद्योगिक और कृषि श्रमिकों एवं देश की विविध सेवाओं के बीच सामाजिक तथा आर्थिक समता लाने के लिए कर प्रणाली के क्षेत्र में अनुकूल क्रांतिकारी परिवर्तन लाने की आवश्यकता है । आवश्यकता इसलिए भी है कि देश को संसाधनों तथा प्रति व्यक्ति आय को पूर्णतः दायरे में रखकर उस पर आधारित एक आजीविका मजदूरी के ढाँचे को उत्पन्न किया जाये ।

देश में उत्पादित वस्तुओं की कीमतों पर नियंत्रण करने के लिए उत्पाद-परिषद तथा देश के औद्योगिक उत्पादन की कीमतों पर नियंत्रण करने के लिए एकाधिकार परिषदों को बनाया जाना चाहिए क्योंकि उससे स्थिर अर्थव्यवस्था , सस्ता भोजन, जीवन की आवश्यकता तथा देश की स्थाई खुशहाली उत्पन्न होगी । राष्ट्रपति भुट्टो के शब्दों में- " देश को विशाल, शक्तिशाली, श्रमिक वर्ग उपहार में मिला है और यदि इस सामग्री का पूर्णरूपेण और प्रभावशाली ढंग से देश के लाभ के लिए प्रयोग किया जावे तो इच्छित परिणामों की उपलब्धि अवश्य होगी । परन्तु यदि इस श्रम सामग्री का दुरूपयोग और शोषण किया गया तो देश ऐसी बद्त्तर स्थिति में पहुँचेगा जहाँ से लौटना संभव नहीं होगा ।[1]

---

(1) एस0ए0 खालिक " पाकिस्तान पीस एण्ड वार "पृष्ठ 12।

पाकिस्तान का व्यापार निकटवर्ती देशों से न होकर पश्चिमी दूरस्थ देशों से है । पाकिस्तान कपड़ा , चमड़ा व खालें, नमक आदि निर्यात करता हैं । यह, ग्रेट-ब्रिटेन , संयुक्त राज्य अमेरिका , जापान, फ्रांस आदि देशों को अधिकांशतः निर्यात करता है । आयात के अन्तर्गत मुख्यतः बना हुआ माल जैसे - मशीने, लोहा-इस्पात, मोटर-गाड़िया ,रासायनिक पदार्थ, उर्वरक, वनस्पति-तेल, विद्युत-उपकरण आदि वस्तुएँ है । पाकिस्तान अधिकांशतः उन्हीं देशों से आयात करता है जिन्हें वह निर्यात करता है ।

**बांग्लादेश** सन् 1971 से अर्थात् अपने आर्विभाव काल से ही आर्थिक, राजनैतिक समस्याओं और संकेतों से ग्रस्त रहा है । 55598 वर्गमील का क्षेत्रवाला बांग्लादेश जो विश्व का आठवाँ बड़ी आबादी वाला देश है, भूटान तथा कम्पूचिया के बाद निर्धनता तथा प्रति व्यक्ति आय में तीसरा स्थान रखता है । [1]

वस्तुस्थिति यह है कि अत्यधिक निर्धनता, खाद्य पदार्थ तथा जनसंख्या का असंतुलन, बेरोजगारी, भुगतान के संतुलन की चिन्तनीय स्थिति, सर्वव्याप्त भ्रष्टाचार, सहायता प्राप्त प्रशासन का कुप्रबन्ध , सार्वजनिक क्षेत्र का क्षीण प्रदर्शन, अनुत्पादक सरकारी खर्च, राजनैतिक नेताओं की असफलता, सैनिक क्रान्तियों तथा विरोधों क्रांतियों ने यहाँ अर्थव्यवस्था का विनाश कर दिया । इसके अतिरिक्त बांग्लादेश में दीर्घकाल से ही उस राजनैतिक स्थिरता का अभाव रहा है जो आर्थिक विकास की पहली शर्त होती है । इसके अतिरिक्त प्रतिवर्ष 2.6% की जनसंख्या में तीव्रवृद्धि तथा आय में वृद्धि की कमी इस देश की निराशाजनक तस्वीर प्रस्तुत करती है ।[2]

देश के क्षेत्रफल का लगभग 58% भाग कृषि के अन्तर्गत है।9% कृषि योग्य अप्राप्य है तथा 20% कृषि के लिए अनुपयुक्त है । कृषि योग्य भूमि के 71% भाग पर चावल, 8% पर जूट , 6% पर दालें, 1% पर गन्ने तथा 1% पर चाय उत्पन्न की जाती है । चावल का वार्षिक उत्पादन लगभग 78 लाख टन है । जूट इस देश की एकमात्र व्यवसायिक फसल है । किसान आधी आय जूट को उत्पन्न करके प्राप्त

---

(1) फाइनेंशियल टाइम्स, लंदन 14 दिसम्बर 1979

(2) एस0आर0चक्रवर्ती, वीरेन्द्र नारायण, बांग्लादेश डोमेस्टिक पॉलिटिकस वाल्यूम टू- पृष्ठ-122

करता है । निर्यात की दृष्टि से भी जूट का महत्व है । अन्य व्यवसायिक फसलों में गन्ने , तम्बाकू और चाय को स्थान प्राप्त है ।

बांग्लादेश में खनिजों का पूर्ण अभाव है । शक्ति के साधनों में तेल, प्राकृतिक गैस और कुछ लिगनाइट कोयला पाया जाता है । शक्ति के साधनों के अभाव में विद्युत उत्पादन में विकास ही एकमात्र समाधान हो सकता है ।

कृषिकृत कच्चे पदार्थो पर निर्भर उद्योगों का ही इस देश में अधिक महत्व है। जूट का उत्पादन सदैव अधिक रहा है । बंगाल के विभाजन के उपरान्त अधिकांश जूट की मिलें पश्चिमी बंगाल अथवा भारत के अधिकार में चली गयी थीं इसलिए नई मिलों को स्थापित करना परमावश्यक था । जूट के कारखाने प्रारम्भ में नारायण गंज में खोले गये, तदुपरान्त ढ़ाका, खुलना और चटगाँव में स्थापित किये गये ।

दूसरा महत्वपूर्ण उद्योग सूती कपड़ा है । कुटीर स्थिति में तैयार की जाने वाली "ढ़ाके की मलमल " विश्वविख्यात रही है । देश में चीनी, चाय आदि की मिलें भी हैं। वनों की उपजों पर निर्भर उद्योगों में लकड़ी , दियासलाई तथा कागज उल्लेखनीय हैं । इसके अतिरिक्त देश में मोजे, बनियाइन, काँच , अल्मूनियम, सीमेंट तथा उर्वरक का कारखाना है ।

जुलाई,1980 में जिया सरकार ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना का इस उद्देश्य से सूत्रपात किया कि मूलभूत आवश्यकताओं की पर्यान्त आपूर्ति करके रहन-सहन के स्तर में सुधार लाया जाये परन्तु 1981 में अंत तक मूल योजना को जो 25595 करोड़ टका की थी, उसे 18000 करोड़ टका तक कम कर दिया गया क्योंकि घरेलू संसाधन तथा विदेशी पूँजी का अभाव था ।[1]

1981-82 के वित्तीय वर्ष के दौरान बांग्लादेश विकास निगम की लक्षित योजनाओं के क्रियान्वयन पर निधियों की अनुलब्धता से बुरा प्रभाव पड़ा । इस

---------------------------------------------------

(1) एस0आर0चक्रवर्ती , वीरेन्द्र नारायण " बांग्लादेश डोमेस्टिक पॉलिटिक्स " वाल्यूम टू पृष्ठ--123

निगम ने 28 योजनाओं को लागू करना चाहा जिनमें से 15 कृषि क्षेत्र तथा शेष सिंचाई क्षेत्र की थी । ये योजनायें वार्षिक विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत थी । इन लक्षित परियोजनाओं में से 30% पूर्ण नहीं हुई क्योंकि सरकार आवश्यक निधि नहीं जुटा सकी।

स्वतन्त्र घरेलू आर्थिक नीति के निर्धारण में बांग्लादेश इसलिए सीमाबद्ध हो गया क्योंकि वह बहुत अधिक बाह्य सहायता पर निर्भर था । 1980 में देश के 86% विकास बजट में 60% निवेश तथा 63% अपनी वस्तुओं का आयात विदेशी सहायता पर निर्भर था । एक सुप्रसिद्ध बांग्लादेशी अर्थशास्त्री के अनुसार-

विदेशी सहायता की निर्भरता में निर्धनता में वृद्धि , धन के स्वामित्व का केंद्रीकरण, आय के वितरण में असमानता तथा अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत प्रति उत्पादक शक्तियों का अनावश्यक प्रसार हुआ ।[1]

दूसरी रिपोर्ट के अनुसार-

बांग्लादेश की निर्धनता की जड़ ऐसी सामाजिक व्यवस्था में छिपी हुई है जिसके अन्तर्गत बहुसंख्यक निर्धनों के खर्चे पर एक छोटा सा धनीवर्ग लाभ उठाता है । देश की निर्धनता संसाधनों की कमी के कारण नहीं है बल्कि उन संसाधनों के असमान वितरण के कारण है[2]।

ग्रामीण विकास में तथा उस दिशा में किए गये प्रयासों में विविध सरकारों के निरन्तर प्रयास व्यर्थ गये क्योंकि उनको या तो पर्याप्त संसाधनों का सहयोग नहीं मिला या प्रभावशाली संस्थात्मक ढाँचे का अभाव रहा । ग्रामीण क्षेत्र जिसमें 90% जनसंख्या निवास करती है, अब भी योजना निर्माण के चरण में है । सरकारी आँकड़े भी

---

(1) रहमान सोमान , " बांग्लादेश एण्ड दि वर्ल्ड इकनॉमिक सिस्टम: दि क्राइसेस ऑफ एक्सटर्नल डिपेंडेंस "डेवलमेंट एण्ड चेंज वाल्यूम 12,(1981) पृष्ठ-327.

(2) रिपोर्ट ऑफ सेंटर फॉर इंटरनेशनल पॉलिसी, वाशिंगटन मई 1978

भी बताते हैं कि औसत बांग्लादेशी निरन्तर ग्रामीण होता जा रहा है । दि बांग्लादेश इकनॉमिक सर्वे 1980-81 यह स्वीकार करता है कि प्रति व्यक्ति आय जो 1969-70 में 770 टका थी, 1979-80 में गिरकर 747 टका रह गयी ।[1]

बाँग्लादेश में आन्तरिक तथा वैदेशिक दोनों प्रकार के व्यापार का महत्व है । कृषिकृत कच्चे मालों एवं खाद्यान्नों के आदान-प्रदान के लिए आन्तरिक व्यापार का महत्व है, जो कि प्रायः जलमार्ग द्वारा किया जाता है । वैदेशिक व्यापार के अन्तर्गत आयात की जानेवाली प्रमुख वस्तुएँ-खाद्य पदार्थ, चीनी, नमक, कोयला ,सीमेंट, कपड़ा ,मशीनें, मोटर गाड़ियां, रेल के इंजन आदि हैं। निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में जूट-जूट का माल, चाय, चमड़ा व खालें, पान, तम्बाकू, आदि का अधिक महत्व है। व्यापार में असंतुलन इस देश की बड़ी समस्या है । बांग्लादेश आयात की जाने वाली वस्तुएँ ऊँचे दर में प्राप्त करता है और निर्यात की जाने वाली वस्तुएँ निम्न दर पर देता है, यद्यपि दो वस्तुओं का वृहत् मात्रा में निर्यात होता है- कच्चा जूट और जूट से निर्मित वस्तुएँ । बांग्लादेश अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में इन वस्तुओं के द्वारा विदेशी मुद्रा अर्जित करता है ।[2] बांग्लादेश का निर्यात वैदेशिक व्यापार सिंगापुर, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, पाकिस्तान, जापान, सोवियत संघ आदि देशों से है ।

**नेपाल** में 1951 में राणा के पतन के बाद ही आर्थिक विकास की वास्तविक तलाश आरम्भ की गयी लेकिन तीन दशकों के बाद भी इसको प्रोत्साहन नहीं मिला । 1978 में प्रति व्यक्ति वार्षिक आय 100 डालर से भी कम थी । इससे नेपाल विश्व के निर्धतम राष्ट्रों में से एक रहा।[3] जनसंख्या का विकास जिस दर से हुआ, प्रति व्यक्ति आय उस दर से नहीं बढ़ी । सकल घरेलू उत्पादन का केवल 9% आधुनिक नेपाली औद्योगिक क्षेत्र में है जिससे रोजगार के अवसर की आशाएं क्षीण हो गयी ।

---

(1) जीओ बीडी , दि बाँग्लादेश इकनॉमिक सर्वे 1980-81 ( जून 1981) पृष्ठ-265
(2) दि बांग्लादेश इकनॉमिक सर्वे 1980-81 पृष्ठ - 130
(3) लियोईरोज एण्ड जॉन टी स्काल्ज़- " नेपाल, प्रोफाइल ऑफ ए हिमालयन किंगडम' पृष्ठ-94

कृषि नेपाली अर्थव्यवस्था का प्रमुख अंग है । सकल घरेलू उत्पादन का 65% , निर्यात की कमाई का 80% तथा श्रमिक शक्ति का 94% कृषि से ही है । नेपाल के कुल क्षेत्रफल का लगभग 14% कृषि के लिए प्रयोग किया जाता है ।[1] खाद्यानों के उत्पादन की ओर नेपाल का ध्यान आकर्षित हुआ है । कुल बोई हुई भूमि के 50% भाग पर चावल , 19% भाग पर मक्का और 15% भाग पर गेहूँ , जौ एवं छोटे अनाज उत्पन्न किये जाते हैं । गत 10 वर्षों में कुछ व्यवसायिक फसलों को भी यहाँ उत्पन्न किया गया है । इनमें गन्ना, जूट, तम्बाकू, तिलहन, और मसालें का स्थान महत्वपूर्ण है ।[2] कृषि की मूलभूत समस्या है- कम उत्पादन क्षमता । इससे सीमित उत्पादनशील भूमि पर जनसंख्या का दबाव पड़ता है । उत्पादन की विधि आदिम है । आपूर्ति तथा विक्रय के समुचित ढाँचे का अभाव है । अनिश्चित वर्षा पर निर्भरता तथा वित्तीय सहायता के लिए सीमित सुविधा एवं नवीन प्रविधियों से अनुकूलन करने का अभाव नेपाली कृषि की समस्यायें है ।[3]

यद्यपि कृषि निर्यात कम हो गया है परन्तु वस्तुओं, मशीनों, यातायात के साधनों तथा ईधन की माँग बढ़ी है क्योंकि विकास के प्रयास निरन्तर बढ़े हैं और इसके साथ ही आयात की दर भी बढ़ी है । अस्तु, नेपाल विकासशील राष्ट्रों की समस्याओं से ग्रस्त है । गतिशील कृषि क्षेत्र से निर्यात की कमी के कारण उपभोक्ता तथा औद्योगिक माँगों का वित्तीय आधार अपर्याप्त रहा है ।

इस देश में खनिजों की खोज भी अधिक नहीं की जा सकी है क्योंकि परिवहन के साधनों का अभाव है । यहाँ प्राप्त होने वाले खनिज, लोहा, ताँबा, अभ्रक, जस्ता, निकल, कोबाल्ट, सीसा, सोना आदि हैं । खनिजों का उपयोग उस समय ही संभव है जब देश में शक्ति के साधन उपलब्ध हों । इस साधन के लिए जलविद्युत उत्पन्न

---

(1) लियो ई रोज एण्ड जॉन टी स्काल्ज " नेपाल , प्रोफाइल आफ ए हिमालय किंगडम" पृष्ठ-95

(2) --- वही ----

(3) --- वही ----

करने की अधिक कोशिश की जा रही है । यद्यपि हाइड्रोइलेक्ट्रिक उर्जा जो नेपाली अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है , के विकास की सम्भावनायें हैं, परन्तु उसके लिए पूँजी निवेश की आवश्यकता है ।

नेपाल के समस्त उद्योग उत्पादन क्षमता के लक्ष्य से 50% नीचे की ओर जा रहे हैं ।[1] यहाँ पर पर्यटन उद्योग तीव्र गति से उन्नति कर रहा है । विश्व के सभी देशों से लाखों पर्यटक यहाँ प्रतिवर्ष आते हैं जिनसे काफी मात्रा में विदेशी पूँजी प्राप्त होती है । 1979 तक नेपाल के पर्यटन पर खर्च 3 करोड़ डालर वार्षिक हो गया था जो 1960 में 60 हजार डालर से भी कम था ।[2]

वास्तव में मैदानी क्षेत्रों से घिरा हुआ होना ही नेपाल की अर्थव्यवस्था के लिए उत्तरदायी कारक है ।[3] भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि बन्दरगाह है ही नहीं जिससे विदेशी व्यापार कठिन और अधिक लागत वाला रहा है और दूसरे भारत के साथ लम्बी सीमा रेखा तथा भारत पर अत्यधिक निर्भरता चाहे वह व्यापार के लिए हो या सामुद्रिक व्यापार के लिऐ हो, इसकी वजह से नेपाल की आर्थिक विकास की सम्भावनाएँ सीमित रही है ।

समस्त नेपाल की 2/3 जनसंख्या जो पहाड़ी तथा उच्च पर्वतीय क्षेत्रों में निवास करती है, की आर्थिक समस्यायें विकराल हैं । नव निर्माण में काठमाण्डू , पोखरा तथा तराई के समृद्ध व्यापारिक केन्द्रों के स्वरूप को बदला है । व्यापारियों से युक्त तथा छोटी-छोटी दुकानों से युक्त कस्बों में वृद्धि हुई है । सड़क यातायात का जाल फैला है तथा तराई और कुछ पहाड़ी क्षेत्रों में ग्रामीण बाजार बढ़े हैं ।

वास्तव में नेपाल की अर्थव्यवस्था पर कृषि क्षेत्र इतना हावी है कि कृषि उत्पादन में वृद्धि किए बिना कोई भी बड़े विकास का प्रयास अधूरा रहेगा । 91%

---

(1) यू0एस0बाजपेई - इण्डिया एण्ड इट्स नेबर हूड पृष्ठ -322

(2) लियोरोज एण्ड जॉन टी स्काल्ज " नेपाल , प्रोफाइल आफ एहिमालय किंगडम" पृष्ठ-94

(3) डॉ0 परमानन्द " पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशिया" पृष्ठ-66

नेपाली कृषि कार्य में संलग्न हैं जो नेपाल सरकार की 61% आय कृषि से होती है ।[1] देश में उपलब्ध कच्चे माल का प्रयोग कर कुटीर तथा बड़े उद्योग कुछ स्थानों पर चालू किये गये हैं । चीनी उद्योग विराट नगर और वीरगंज में, जूट उद्योग जागबनी में उल्लेखनीय हैं ।

नेपाल से निर्यात की जाने वाली वस्तुएँ-लकड़ी , जूट, तिलहन, चमड़ा व खालें तथा इनसे निर्मित, वस्तुएं हैं । आयात की जाने वाली वस्तुओं में कपड़ा , नमक, पेट्रोलियम , मशीनें, दवाइयाँ, रसायनिक पदार्थ आदि को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । इस देश का अधिकांश व्यापार भारत, संयुक्त राज्य अमेरिका , ब्रिटेन और चीन से होता है ।

**भूटान** का केवल पिछले तीन दशकों के छोटे से समय में आर्थिक विकास आरम्भ हुआ और भूटान बाह्य संसार के प्रकाश में आया । पूर्वकाल में एक बहुत बड़ा लाभ जो भूटान को प्राप्त था, वह इसकी बहुत कम जनसंख्या थी । फलस्वरूप यहाँ उपमहाद्वीप के अन्य देशों जैसा जनसंख्या का दबाव नहीं था ।

देश कृषि में स्वावलम्बी था । देश के पूर्णतः पर्वतीय होने के कारण कृषि सम्बन्धी क्षमता का सीमित होना स्पष्ट था । भूटान की वन-सम्पदा में भी कमी थी । वर्तमान तक हुए भू-गर्भीय सर्वेक्षणों ने किसी प्रचुर और उच्च कीमत के खनिज पदार्थों के पाये जाने की रिपोर्ट प्रस्तुत नहीं की है । केवल डोलोमाइट्स, जिप्सम, लाइनस्टोन और कुछ निम्नगुण वाले कोयला भंडार ही यहाँ उपलब्ध है । इसकी एकमात्र आर्थिक क्षमता जलविद्युत उर्जा थी जिसका यदि समुचित विकास किया जाये तो यह भारत की आवश्यकताओं की समुचित मात्रा में पूर्ति कर सकता था और भूटान के लिए प्रचुर मात्रा में धन अर्जित कर सकता था । इस दिशा में निर्माणाधीन चुरवा, हाइड्रल परियोजना एक प्रारम्भ है । बार्ले , आलू - मुख्य उपजें हैं [illegible] खाद्यान्न फसलों में चावल का उत्पादन सबसे अधिक होता था । भूटान से काफी मात्रा में चावल

---

(1) गोरखापत्र , काठमाण्डू 16 जुलाई 1986 पृष्ठ-1

तिब्बत के क्षेत्र में जाता था और यहाँ के लोग तिब्बत के बाजारों से पशु, नमक और कपड़ा लेकर आते थे ।[1]

बाह्य जगत में मुश्किल से ही कोई वस्तु निर्यात कर पाने के कारण और आयात के लिए पूर्णतः निर्भर होने के कारण इसका आर्थिक विकास बहुत ही सीमित है । बाह्य श्रम तथा तकनीकी कुशलता सम्बन्धी निर्भरता इसकी सीमायें हैं । अपने समस्त उत्पादों के विवरण और जनशक्ति के लिए भारत पर इसकी निर्भरता स्पष्ट है। यहाँ तक की चावल का उत्पादन भी श्रमिकों के अभाव के कारण घट गया है और भारत से आयात प्रारम्भ हो गया है ।[2] अपनी इन सीमाओं को जानते हुए भूटान अपनी विकास योजनाओं को बनाने में अब तक सजग रहा है ।

1961 तथा 1981 के मध्य लगभग पूर्णरूप से भारत के अनुदान पर अवलम्बित भूटान ने 4 विकास योजनायें पूरी की हैं । यह केवल 1972 में संभव हो सका कि भारत के अलावा भी अन्य अन्तर्राष्ट्रीय अभिकरणों के माध्यम से अन्तर्राष्ट्रीय सहायता भूटान को प्राप्त होना आरम्भ हुई ।

1981-82 के आँकड़ों के अनुसार भारत ने जबकि 428 मिलियन रूपये दिए, भूटान को लगभग 60 मिलियन रूपये की सहायता अन्य स्थानों से प्राप्त हुई । 1983 में भारत को छोड़कर उसे अन्तर्राष्ट्रीय सहायता का अनुमान 140 मिलियन रूपये था । इसके विरोध में अकेले ही सिविल तथा अन्य खर्चों के लिए भारतीय बजट के 260 मिलियन रूपये का सहयोग था । प्रथम चार योजनाओं पर हुए व्यय को ध्यान में रखते हुए विकास की दर काफी तीव्र और असमान थी ।[3]

पाँचवी योजना के अन्तर्गत 4338 मिलियन रूपये का विशाल लक्ष्य था, जिसमें 1340 मिलियन रूपये की सहायता देने का भारत वचनबद्ध है तथा अन्य स्थानों

---

(1) बसन्त कुमार " भारत और आधुनिक विश्व " पृष्ठ 127

(2) डा0 परमानन्द " दि पोलिटिकल डेपलपमेंट इन साउथ एशिया " पृष्ठ 56

(3) यू0एस0 बाजपेई- इण्डिया एण्ड इट्सनेबर हूड " पृष्ठ -305

में 5211 मिलियन रूपये प्राप्त करना है । भूटान का अपना व्यय का अनुमान 1190 मिलियन रूपये है । इस प्रकार 1335 लाख रूपये का यह अन्तराल बाध्य सहायता से ही पूरा होने की आशा है । भूटान को वित्तीय सहायता देने वाली अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें है- विश्व बैंक, एशिया विकास बैंक, कुवैत विकास निधि, यूनेस्को, यूनीसेफ तथा कुछ अन्य संस्थायें ।[1] द्विपक्षीय सहायता अधिकतर कोलम्बो योजना के देशों से आती है । जेसे - जापान, दक्षिणी कोरिया और अभी हाल में कुछ अरब देशों से जैसे - साऊदी अरब तथा कुवैत । सहायता की यह प्रणाली अधिकतर परियोजनाओं से जुड़ी है ।

भूटान - प्रमुखतः पहाड़ी देश होने के कारण यहाँ यातायात के साधनों की अत्यधिक कमी है । सन् 1962 में कम्युनिस्ट चीन के भारत पर किये गये आक्रमण के बाद भूटान की सुरक्षा के उद्देश्य से यातायात व्यवस्था में सुधार किया जाना आवश्यक माना जाने लगा ।[2] सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण अनेक सड़कों का निर्माण किया गया । मार्ग निर्माण के अलावा औद्योगिक व कृषि की उन्नति की दृष्टि से महत्वपूर्ण कदम उठाये जा रहे हैं ।

भूटान अपने आर्थिक विकास के लिए बाह्य राष्ट्रों पर पूर्णतः निर्भर है । अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने के उद्देश्य से इसे सहायता देती है । उनकी यह सहायता विशेष रूप से योजनाओं और तकनीकी क्षेत्र में प्रदर्शित होती है । [3] भारत भी इस क्षेत्र में योगदान दे रहा है ।

**श्रीलंका** की अर्थव्यवस्था को भारतीय मानवीय तत्वों ने विशेष रूप से प्रभावित किया है । अंग्रेजों के आक्रमण के समय " सीलोन " की आर्थिक स्थिति बहुत खराब हो चुकी थी । कृषि पर आधारित इस देश का आर्थिक ढाँचा चरमरा रहा था । अंग्रेजों का मुख्य उद्देश्य धनोपार्जन एवं वाणिज्य क्षेत्र में वृद्धि था । " सीलोन" की

---

(1) यू0एस0 बाजपेई-"इण्डिया एण्ड इट्सनेबरहूड " पृष्ठ-305
(2) बसन्त कुमार सराफ " भारत और आधुनिक विश्व " पृष्ठ 124
(3) डिटेल स्टेडी-नगेन्द्र सिंह , " भूटान, ए किंग डम इन दि हिमालयाज़" पृष्ठ-163-184

तत्कालीन अर्थव्यवस्था में यह सम्भव नहीं था । उसी समय यूरोपीय बाजार में चाय एवं काफी की मांग बहुत बढ़ गयी थी । सीलोन के मृतप्राय आर्थिक ढाँचे को पुर्नजीवित करने के लिए अंग्रेजों ने इसे स्वर्णिम अवसर समझा । चाय बागानों में काम करने के लिए सीलोन में मजदूर के अभाव के कारण अंग्रेजों ने भारत से मजदूर ले जाना प्रारम्भ कर दिया। 1828 में भारतीय मजदूरों का पहला दल श्रीलंका पहुँचा।[1] धीरे-धीरे ये श्रीलंका की आर्थिक स्थिति पर आधिपत्य स्थापित करने लगे । श्रीलंका वासियों ने इसका विरोध किया । फलस्वरूप भारत ने 1839 में श्रीलंका में जाने वाले सभी मजदूरों पर प्रतिबंध लगा दिया । इस प्रतिबंधे के साथ ही श्रीलंका की आर्थिक स्थिति फिर डगमगाने लगी । अंत में श्रीलंका सरकार ने भारत सरकार से अनुरोध करके यह प्रतिबंध समाप्त करवाया ।

श्रीलंका के क्षेत्रफल की लगभग 30% भूमि कृषि योग्य है । कृषि योग्य भूमि के दो तिहाई भाग पर ही फसलें उत्पन्न की जा रही हैं । कृषि द्वारा सकल उत्पाद में 28% योगदान दिया जाता है ।[2] यहाँ की प्रमुख उपजें चावल, चाय, रबड़, मक्का, नारियल , शकरकन्दी , ज्वार-बाजरा आदि हैं । कृषि योग्य भूमि के एक तिहाई भाग पर चावल उत्पन्न किया जाता है । जनसंख्या अधिक हो जाने के कारण केवल निजी आवश्यकता को पूरा करने के लिए यह देश चावल का आयात करने लगा है । धनोपार्जन के लिए नारियल को अधिक महत्व दिया जाता है । भारत स्वयं द्वितीय स्तर का नारियल उत्पादक देश है फिर भी यह श्रीलंका का इसे नारियल का आयात करता है ।[3]

देश में पशुओं की संख्या पर्याप्त है इसलिए भोजन में दूध और उनसे बनी वस्तुओं का स्थान महत्वपूर्ण है । श्रीलंका की द्वीपीय स्थिति होने के कारण मछली

---

(1) नवभारत टाइम्स-27 दिसम्बर 1988

(2) डॉ० परमानन्द, दि पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशियन " पृष्ठ-73

(3) महेश्वरी " इण्डिया एण्ड श्रीलंका रिलेशन्स" पष्ठ-170

पकड़ने का कार्य उल्लेखनीय है । यह अति प्राचीन व्यवसाय है ।

खनिज सम्पदा के विचार से यह देश धनी नहीं है, यद्यपि आदिकाल से इसको "रत्नद्वीप" या " पूर्व का मोती " कहा जाता है । यहाँ प्राप्त होने वाले मुख्य खनिज ग्रेफाइट, इल्मेनाइट, नमक आदि महत्वपूर्ण हैं । यह देश खनिजों की प्राप्ति के लिए निर्धन होते हुए भी रत्नों के लिए धनी है ।

इस देश में उद्योगों के विकास की ओर अधिक ध्यान नहीं दिया जा सका क्योंकि शक्ति के साधनों की कमी सदैव अनुभव की गयी । राष्ट्रीय आय का केवल 11% उद्योगों से प्राप्त किया जाता है जबकि कृषि व मछली द्वारा 36% प्राप्त होता है ।

देश में अधिकांश उद्योग कुटीर अवस्था में है जो कच्चे माल पर निर्भर हैं। श्रीलंका में बड़े पैमाने पर उद्योग नहीं स्थापित हैं फिर भी कुछ प्रयासों से कपड़ा , चीनी , सीमेंट , प्लाईवुड, चमड़ा आदि उद्योगों को स्थापित किया गया है ।[1]

दक्षिण एशियाई परिवहन के साधनों से श्रीलंका की स्थिति अति उत्तम है । पूर्व को पश्चिम से सम्बद्ध करने वाले सभी जल तथा वायु मार्ग इस देश से होकर गुजरते हैं ।

देश में आर्थिक नियोजन एवं विकास के लिए एक दस वर्षीय योजना सन् 1959 में लागू की गयी थी । देश को खाद्यान्नों के लिए स्वावलम्बी बनाना एवं उद्योगों को विकसित करना आवश्यक माना गया । किन्तु राजनैतिक अशांति एवं विदेशी मुद्रा की कमी के कारण देश वांछित प्रगति नहीं कर सका । श्रीलंका विदेशी आर्थिक सहायता भी प्राप्त करता है किन्तु श्रीलंका के विदेश मंत्री का कहना था कि यदि श्रीलंका में आंतकवादी गतिविधियाँ समाप्त नहीं हुई तो विदेशी राज्य श्रीलंका को अनुदान देना समाप्त करने की सोचने लगेंगे ।[2]

---

(1) डॉ0 परमानन्द " दि पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशिया " पृष्ठ -74.

(2) -वही- पृष्ठ-76

आयात की जानेवाली वस्तुओं में खाद्यान्नों का महत्व आज भी अधिक है, जो कि देश की सरकार के लिए चिन्ता का विषय है । खाद्यान्नों में चावल, गेहूँ का आटा तथा चीनी मुख्य हैं । इनके साथ ही अतिरिक्त बने हुए माल का आयात भी काफी दिया जाता है । मशीने, कपड़ा,खनिज, तेल, मोटर गाड़िया, उर्वरक, दवाइयाँ, रेल के इंजन आदि का स्थान आयात में महत्वपूर्ण है ।

यहाँ से निर्यात की जानेवाली अधिकाँश वस्तुएँ कृषिकृत उपजें हैं, जिनमें चाय, रबड़ , नारियल को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है । 1961 में भारत एवं श्रीलंका के आपसी व्यापार में वृद्धि हुई । दोनों के मध्य एक समझौता हुआ जिसमें निश्चित हुआ कि भारत अधिक मात्रा में नारियल का तेल व कपास श्रीलंका से आयात करेगा ।[1] गरम मसाले, सिनेकोना, हाथी दांत की वस्तुएँ, मूल्यवान रत्न आदि का भी पर्याप्त मात्रा में निर्यात किया जाता है । औद्योगिक वस्तुओं के निर्यात में अब क्रमशः वृद्धि हो रही है, यद्यपि सफलता नहीं मिली है । एक चौथाई से भी अधिक देश का वैदेशिक व्यापार ब्रिटेन से है । ब्रिटेन के पश्चात् संयुक्त राज्य अमेरिका , भारत व चीन का स्थान आता है ।

स्वतन्त्रता प्राप्ति तथा विशेषतः पिछले दशक तक **मालदीव** की अर्थव्यवस्था के ऐतिहासिक अनुभव क्षीण और काफी सीमा तक अपरिवर्तनीय रहे हैं । परन्तु सातवें दशक के आरम्भ में प्रसार का क्षेत्र तीव्रता से विकसित हुआ है । जल-परिवहन तथा पर्यटन एवं नवीन प्राविधिकीय विशेषतः मत्स्य उद्योग आदि ने पारस्परिक गतिविधियों के पूरक के रूप में स्थायित्व पाया है ।फलस्वरूप इनका प्राकृतिक प्रसार हुआ है जो बाह्य संपर्क के अन्तः सम्बन्ध के कारण हुआ । देश का नियोजित आर्थिक विकास तुलना की दृष्टि से नवीन है । वर्तमान में तात्कालिक परिणामों की प्राप्ति हेतु नवीन प्रविधियों को लागू करके विविध क्षेत्रों में प्रसार के लक्ष्य पर ध्यान दिया गया है ।[2]

---

(1) कोडीकारा " इण्डिया एण्ड सीलोन " पृष्ठ 176

(2) उर्मिला फडनीस एण्ड इला दत्त, "मालदीव्ज विण्ड्स ऑफ चेंज इन एन स्टाल स्टेट" पृ053

मालदीव विश्व के उनानिर्धनतम देशों में है जो विकासोन्मुख द्वीप देश कहे जा सकते है । यहाँ की प्रति व्यक्ति वार्षिक आय 1978 में 160 डालर थी । 1982 तक यहाँ डालर प्रचलित थे । इसके बाद रूफिया- आदान प्रदान की मुद्रा बन गयी ।

विकास आयोजकों ने मालदीव में कुशल जनशक्ति का अभाव, बिगड़े हुए स्वास्थ्य की स्थितियाँ, मत्स्य उद्योग का तीव्र परिवर्तनशील ढाँचा , अतीत में कृषि की उपेक्षा तथा आर्थिक विकास में गहन क्षेत्रीय असंतुलन इस द्वीपीय गणराज्य की कमियाँ बताई हैं ।[1] इन सब अवरोधों के बावजूद इस छोटे से द्वीप की अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय अंग तीव्रतापूर्वक परिवर्तित होने वाली परिस्थितियों से अनुकूलन करने की क्षमता है । इसका एक प्रमुख संकेत पिछले दशक में सर्वत्र विकास देखा गया है । पर्यटन तथा मत्स्य उद्योग के ढाँचे का पुर्नगठन करके अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाया गया है ।

बलुई मिट्टी तथा जलस्तर की कमी ने इस द्वीप की अर्थ-व्यवस्था में कृषि को महत्वहीन बनाया है । फलस्वरूप 6900 एकड़ उपलब्ध भूमि पर भी पूर्ण उत्पादन नहीं हुआ है । छोटे पैमाने पर एक सीमित भूमि समूह पर विविध फसलें पैदा की जाती हैं । कुछ महत्वपूर्ण व्यापारिक फसलें, जैसे- तरबूज, मिर्च तथा केला उत्पादित की गयी है । प्रमुखतः यहाँ नरियल, बाजरा का उत्पादन किया जाता है ।[2] उत्पादन पूर्णतः मानव श्रम पर निर्भर है । अधिकतर फसलों का उत्पादन अच्छी मिट्टी के अभाव तथा बीजारोपण और प्रबन्ध के असंतोषजनक साधनों के कारण कम है । इस दीप की अर्थव्यवस्था का निर्णायक कारक मत्स्य उद्योग रहा है । इसके अतिरिक्त अन्य उद्योगों में जहाजरानी, नारियल संसाधन रहे हैं किन्तु बढ़ती हुई आबादी की माँग तथा जागरूकता के साथ ही कृषि क्षेत्र में भी राष्ट्रीय महत्व की बात सोची जाने लगी है ।

---

(1) मालदीव्ज, नेशनल प्लानिंग एजेंसी , रिपब्लिक ऑफ मालदीव्ज; प्रोग्राम्स एण्ड प्रोजेक्शन्स फार 1980

(2) उर्मिला फडनीस एण्ड इला दत्त, " मालदीव्ज , विण्ड्स ऑफ चेंज इन एन स्टाल स्टेट," पृष्ठ -55

यह प्रयास किया जा रहा है कि किसानों की कुशलता , भू-संरक्षण, पुर्नस्थापना, वृक्षारोपण की वैज्ञानिक विधि तथा मिट्टी का सुप्रबन्ध , अच्छी किस्म के बीज, फसलों को कीटाणुओं से बचाना तथा फसलों का विविधता आदि का स्तर ऊँचा उठाया जाये।

युगों से मालदीव की 60% जनसंख्या मत्स्य तथा सम्बन्धित गतिविधियों से सम्बन्धित रही है । जैसे नौका निर्माण तथा मत्स्य पालन आदि । यही आयात का तथा भोजन का प्रमुख साधन है । 1982 तक पिछड़े हुए मत्स्य उद्योग प्रणाली में महान परिवर्तन हुए है । मछली पकड़ने वाले जहाजों तथा एकत्रित करने वाले जहाजों जो विदेशी कम्पनियों के थे, उनके मशीनीकरण में परिवर्तन हुआ है ।[1]

पिछले दशक में पारम्परिक उद्योग के अतिरिक्त नवीन उद्योग पूरक के रूप में उभरे हैं । जल-परिवहन तथा पर्यटन के प्रमुख उद्योग बन गये है । इसके अतिरिक्त सिला हुआ वस्त्र उद्योग भी पनपा है जिसमें लगभग 1000 लोगों को रोजगार मिला है और कुछ विदेशी मुद्रा अर्जित हुई है । आज मालदीव शिपिंग लिमिटेड एक पनपता हुआ उद्योग है जो विश्व के लगभग हर प्रमुख समुद्री व्यापार मार्ग से जुड़ा है । इससे विदेशी मुद्रा अर्जित करने में सहायता मिली है ।

मालदीव की प्राकृतिक सौंदर्य से युक्त भूमि तथा वृक्षों से आच्छादित शान्तिपूर्ण समुद्री किनारे शीत क्षेत्रों के लोगों के पर्यटन के लिए स्वर्ग के समान हैं । उत्तरी यूरोप, इटली, पश्चिमी जर्मनी तथा उत्तरी अमेरिका के पर्यटक आदि इसको एक आकर्षक पर्यटन स्थल मानते हैं। 1982 के अंत तक इस दीप में 44 पर्यटक स्थल थे, जिनमें 31 स्थानीय निवासियों के ,10 विदेशियों के और 3 विदेशी व स्थानीय सहयोग द्वारा थे।[2] 1974 से 1982 के बीच हवाई मार्ग से यात्रा करने वाले लोगों में से 70% पर्यटन के लिए ही आते रहे हैं।

---

(1) स्टेटिस्टिकल इयरबुक ऑफ मालदीव्ज 1983 पृष्ठ - 128

(2) स्टेटिकल इयरबुक, पृष्ठ 89-91

मालदीव के नीति निर्धारकों ने यह अच्छी तरह समझ लिया है कि कोई भी विकासोन्मुख राष्ट्र केवल अपने स्रोतों पर निर्भर रहकर प्रगति नहीं कर सकता । फलस्वरूप मालदीव में अपने विदेशी आर्थिक सम्बन्धों को एक मोड़ दिया है । निर्यात को नई दिशा देना, आयात के लिए नये देशों को चुनना, निर्यात और विनिमय तथा सहायता कार्यक्रमों के लिए देशों को चुनना मालदीव की विदेशी आर्थिक नीति के प्रमुख स्तम्भ रहे हैं जिनका मुख्य लक्ष्य व्यापार तथा सहायता के प्रभावशाली उपयोग के लिए समुचित साधन उत्पन्न करना है । मालदीव से जापान, श्रीलंका को निर्यात किया जाता है । यह देश मछली, शंखमीन ﴾शेलफिश﴿ निर्यात करता है और जापान, ब्रिटेन , श्रीलंका व भारत से आयात करता है ।

1980 तक संयुक्त राष्ट्र संस्थाओं में 24 परियोजनायें इस देश में चलाई हैं जिनका उद्देश्य आंतरिक ढाँचे का विकास, शिला , स्वास्थ्य यातायात आदि तथा मत्स्य और कृषि जैसे प्राकृतिक स्रोतों का बेहतर उपयोग करना है।[1]

इसके अतिरिक्त अनेक पश्चिम एशिया के देश जैसे- लीबिया, कुवैत , सऊदी अरब , ईरान ने इस द्वीप के हवाई अड्डों तथा सैट लाइट स्टेशनों के विकास के लिए अनुदान और ऋण दिये है । ब्रिटेन, सोवियत संघ, चीन ने अनेक समझौतों के तहत अनेक वर्षों से शैक्षणिक तथा तकनीकी प्रशिक्षण हेतु सहायता दी है । जापान, सिंगापुर, अमरीका जेसे अनेक देशों के साथ ही मालदीव ने व्यापारिक अन्तः सम्बन्ध स्थापित किये है ।

अपने पड़ोसियों के साथ व्यापारिक आदान-प्रदान तथा सहायता की वचनबद्धता के अन्तर्गत आर्थिक सम्बन्ध महत्वपूर्ण है । इन देशों में प्रमुखतः मशीनरी यंत्र , तकनीकी जानकारी मिलती रहती है । 1981 तक 4.2 मिलियन विदेशी निवेश रहा है । 1981 तक भारत , पाकिस्तान तथा श्रीलंका के तीन व्यापारिक बैंक माले में

---

﴾1﴿ मालदीव्ज नेशनल प्लानिंग एजेंसी ।

स्थापित थे । जुलाई 1981 में मालदीव मॉनीटरी एथार्टी मालदीव के सेंट्रल बैंक के रूप में कार्य करने लगा । विकास की आवश्यकताओं हेतु इस द्वीप पर ऋण बढ़ते जा रहे है और फलस्वरूप इनके भुगतान की दर भी बढ़ती जा रही है । यह देश की अर्थव्यवस्था के लिए एक अतिरिक्त दबाव होगा ।[1]

---

(1) उर्मिला फडनीस एण्ड इलादत्त, "मालदीव्ज, विण्ड्स ऑप चेंज इन एन एटॉल स्टेट" पृष्ठ- 68

## (ब) सामरिक स्थिति एवं महत्व

दक्षिण एशिया को " शान्ति-क्षेत्र " के स्थान पर " संघर्ष-क्षेत्र " बनाने के लिए उत्तरदायी कारणों में सर्वश्रेष्ठ कारण सामरिक दृष्टिकोण से इस क्षेत्र की महत्ता है । यदि दक्षिण एशिया के देशों की भौगोलिक स्थिति पर ध्यान दिया जाय तो प्रत्येक देश की सीमा पर कोई न कोई महाशक्ति जुड़ी हुई दृष्टिगोचर होती है । महाशक्तियाँ अपने हितों के लिए इस क्षेत्र में सीधे हस्तक्षेप करते नहीं चूकती हैं।

1945 के बाद से होने वाले लगभग 150 संघर्षों में से आश्चर्यजनक रूप से मात्र 8 या 10 घटनाएँ ही औद्योगिक विश्व में घटी हैं , शेष सभी विकासशील क्षेत्रों में हुई । दक्षिण एशियाई क्षेत्र इनमें से अनेक के साझी रहे हैं । दक्षिण एशिया में सत्तर के दशक से सामरिक वातावरण में विशेष रूप से परिवर्तन आया है । पाकिस्तान के विभाजन और बंगलादेश के अभ्युदय के साथ-साथ हिन्दमहासागर में बढ़ती हुई महाशक्तियों की सैनिक स्पर्धा द्वारा बड़ी शक्ति के रूप में उदय होना, भारत द्वारा शांति एवं विकास के कार्यो के लिए 1974 में शांतिपूर्ण परमाणु-परीक्षण , भारत के पड़ोसी देशों में अस्थिरता एवं आतंकवादी गतिविधियाँ, अफ्गानिस्तान में रूस द्वारा हस्तक्षेप, खाड़ी युद्ध आदि कुछ इस प्रकार की महत्वपूर्ण सामयिक एवं सामरिक परिवर्तन हुए हैं जो दक्षिण एशिया में अस्थिरता और असुरक्षा का वातावरण उत्पन्न किये हैं।

**भारत** दक्षिण एशिया का हृदय स्थल है । इसके तीन ओर समुद्र है और उत्तर में हिमालय पर्वत। युग-युग से अजेय के रूप में काम करने वाले हिमालय को लाँघकर उत्तर से चीन द्वारा और पश्चिम से पाकिस्तान द्वारा तीन आक्रमण हुए हैं । समुद्र की ओर से हिन्दमहासागर में महाशक्तियों के संघर्ष, दियागो-गार्सिया में अमेरिकी सैनिक अड्डा और बंगाल की खाड़ी में अमेरिकी जहाज के बड़े की उपस्थिति ने यह स्पष्ट कर दिया कि भारत सामरिक दृष्टि से एक महत्वपूर्ण देश है ।

अपनी लम्बी स्थल और समुद्री सीमा से प्रभावित होकर ही भारत ने ब्रिटेन के साथ मैत्री सम्बन्धों को बनाये रखा था ।

भारत पश्चिमी कला- कौशल प्रधान देशों को पूर्वी खेतिहर देशों से मिलाने के लिए एक श्रृंखला का कार्य करता है । वायुमार्ग की दृष्टि से भारत की स्थिति अति उत्तम कहीं जा सकती है । पश्चिमी देशों से सुदूर पूर्व जाने वाले चीन, जापान, इण्डोनेशिया एवं आस्ट्रेलिया आदि देशों से पश्चिमी यूरोप जाने के लिए वायुयान भारत से होकर निकलते हैं ।[1]

भारतीय विदेशनीति के निर्धारण में भारत की विशिष्ट सामरिक स्थिति को पर्याप्त महत्व दिया जाता है । भारत दक्षिण एशिया, पूर्व एशिया और पश्चिम एशिया को जोड़ने वाले सूत्र जैसा है । पं0 नेहरू प्रायः कहते थे- भारत पूर्व और पश्चिम के मध्य एक प्रकार के सेतु जैसा है और ऐसी स्थिति में यह स्वाभाविक है कि वह विभिन्न विश्व परक मसालों में स्वतः उलझ जाये ।

कश्मीर घाटी के साथ मिली हुई पाकिस्तान की सीमा बहुत ही नाजुक है तथा नियंत्रण रेखा के उस पार अधिकृत कश्मीर के क्षेत्र से सैन्य कार्यवाही की वजह से इस घाटी की सुरक्षा को खतरा हो सकता है ।[2] कुछ समय पूर्व तक यह माना जाता था कि हिमालय के कारण भारत उत्तर दिशा में पूर्णतः सुरक्षित है परन्तु 1962 में चीन के आक्रमण ने इस भ्रम को तोड़ दिया । हिमालय पर ही दो और सीमा राज्य, नेपाल और भूटान स्थित है। बाह्य सुरक्षा की दृष्टि से इन दोनों राष्ट्रों के साथ भारत के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध आवश्यक है। समय-समय पर चीन हिमालय क्षेत्र में स्थित पर्वतीय राष्ट्रों को मिलाकर एक परिसंघ बनाने की भी योजना बनाता रहा है । .

---

(1) चतुर्भुज मेमोरिया " आधुनिक भारत का भूगोल " पृष्ठ-23

(2) दैनिक हिन्दुस्तान- "भारत की सामरिक परिस्थितियाँ"- डा0 हरवीर शर्मा 25 फरवरी- 1992.

भारत और पाकिस्तान के मध्य की सीमा रेखा मनुष्य निर्मित है जिसका निर्माण 1947 में भारत - पाक विभाजन के समय हुआ । 1971 में बांग्लादेश के एक स्वतन्त्र राष्ट्र के रूप में अभ्युदय ने भारतीय सुरक्षा के समक्षा उत्पन्न खतरे को काफी सीमा तक दूर कर दिया । बांग्लादेश इतना कमजोर और राजनीतिक दृष्टि से इतना अस्थिर है कि उससे भारत की सुरक्षा को कोई खतरा नहीं है जब तक कि किसी बड़ी शक्ति का हाथ उसकी पीठ पर न हो । पाकिस्तान के संदर्भ में भी यही बात लागू होती है।

भारत की सामुद्रिक सीमा पर्याप्त दीर्घ है । इसकी तटीय सीमा व्यापार और संसाधनों की दृष्टि से पर्याप्त सम्पन्न है । इन समस्त तत्वों ने भारत को हिन्द महासागर पर पूर्णतया अवलम्बित कर दिया है । भारत के समस्त व्यापार का लगभग 85% हिन्दमहासागर के माध्यम से सम्पन्न होता है । इसलिए यदि हिन्दमहासागर में किसी विपक्षी की तूती बोलने लगती है तो यह भारत के लिए अहितकर होगा, व्यापार और भारत की बाह्य सुरक्षा , दोनों ही ओर से । यहाँ तक कि श्रीलंका में स्थित वायस ऑफ अमेरिका ट्रान्समीटरों के माध्यम से दक्षिण में स्थित भारतीय रक्षा संसाधनों में जासूसी का खतरा है।[1]

भारत की नौसैनिक शक्ति इस लम्बी सीमाओं को जो हिन्दमहासागर के क्षेत्र से लगी हुई हैं, उन पर सुरक्षा का एक बड़ा दायित्व है क्योंकि हिन्दमहासागर में बड़ी शक्तियों द्वारा बढ़ती हुई सैनिक स्पर्धा से भारत की सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो गया है । हिन्दमहासागर भारत को दक्षिणी पूर्वी एशिया , अफ्रीका एवं आस्ट्रेलिया से जोड़ता है । अतः हिन्दमहासागर को भारतीय प्रभुत्व का यथार्थ तत्व माना गया।[2] हिन्दमहासागर में चीन, फ्रांस, ब्रिटेन और विशेष रूप से अमेरिका तथा रूस अपने सैन्य बलों सहित उपस्थित हैं । सन् 1971 में भारत हिन्द महासागरीय समुद्री सीमाओं से

---

(1) राजवीर सिंह " राष्ट्रीय रक्षा एवं सुरक्षा " पृष्ठ 35

(2) के0वी0 विद्या " नवल डिफेंस ऑफ इण्डिया " पृष्ठ 101

अमेरिका द्वारा एक चुनौती भी प्राप्त कर चुका है । भारत की थल सीमायें भी लगभग 15200 कि0मी0 है जो पाकिस्तान , चीन, के साथ लगती हैं । ये दोनों ही देश भारत के साथ शत्रुता एवं वैमनस्यता का भाव रखते हैं । अतः सुरक्ष्क्षा की दृष्टि से भारत की भू-सामरिक स्थिति भारतीय सेनाओं पर एक विशेष उत्तरदायित्व एवं सुरक्षा का भार सौंपती है ।

**पाकिस्तान** भारत की पश्चिमी सीमा पर स्थित है । भारत की पश्चिमी सीमायें गुजरात राज्य से शुरू होकर राजस्थान एवं पंजाब राज्य के सीमांतों से पाकिस्तान के साथ लगती हैं । गुजरात में स्थित रणकच्छ क्षेत्र पाकिस्तान के साथ विवाद का विषय रहा । उत्तरी-पश्चिमी सीमांत भारत के जम्मू -कश्मीर राज्य में स्थित है जो 1947 से भारत -पाकिस्तान के मध्य विवाद की मुख्य जड़ है । पाकिस्तान की इच्छा सम्पूर्ण कश्मीर पर कब्ज़ा करने की है । यह क्षेत्र पिछले कुछ वर्षों से भारत-पाक सैनिक संक्रियाओं का प्रमुख केंद्र रहा है । सियाचीन ग्लेशियर भी इसी क्षेत्र में स्थित हैं । सियाचीन पर भारत का अधिकार है किन्तु पाकिस्तान इस सामरिक महत्व के हिमखण्ड पर अपना अधिकार जमाना चाहता है । पाकिस्तान की उत्तर-पश्चिम सीमा अफगानिस्तान से जुड़ी है जिस पर रूस का हस्तक्षेप है । दक्षिण में अरब - सागर है । इसी आशय से प्रेरित होकर अमेरिका ने इस सामरिक महत्व के क्षेत्र में समरतांत्रिक नीतियों से प्रभावित होकर एवं अरब खाड़ी के देशों में अमेरिकी हितों की रक्षा के लिए पाकिस्तान को एक अगुवा देश के रूप में चुना है । वास्तव में पाकिस्तान के लिए अफगानिस्तान की समस्या वरदान सिद्ध हुई है । वर्षों से चले आ रहे अफगान विद्रोह और 5 वर्ष से अमरीकी समर्थन मिलते रहने से पाकिस्तान में गुणात्मक परिवर्तन आया है ।[1]

---

(1) रविवारीय हिन्दस्तान " पाकिस्तान की सामरिक नीति और उसकी पृष्ठभूमि ", राधा कृष्ण कंचन , 8 फरवरी 1987

1954 में पाकिस्तान अमेरिका के साथ सैनिक संधि में बंध गया । 25 फरवरी 1954 को अमेरिका ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने की घोषणा की । अमेरिका द्वारा सैनिक सहायता प्राप्त करने के कारण निश्चित ही पाकिस्तान का संतुलन अमेरिका की ओर झुक गया । 1959 में उसने अमेरिका और टर्की के साथ पारस्परिक सुरक्षा की संधि कर ली और बगदाद पैक्ट " व सीटो में सम्मिलित हो गया ।[1]

पाकिस्तान सभी मित्र देशों से सैनिक सहायता प्राप्त करके अपनी सैनिक शक्ति बढ़ाने में निरन्तर प्रयत्नशील है । भुट्टो ने शक्ति में आने के बाद कहा था- " " मै शपथ लेता हूँ कि मैं पाकिस्तान को एशिया की सबसे अच्छी लड़ने वाली मशीन बना दूँगा । " अयूब और याह्या खाँ से कहीं अधिक धन भुट्टो ने प्रतिरक्षा पर व्यय किया । अमेरिका, चीन, ब्रिटेन, फ्रांस, स्पेन, तुर्की, ईरान, जार्डन, सउदी अरेबिया आदि से सभी प्रकार के शस्त्र पाकिस्तान प्राप्त करता है । पाकिस्तानी सशस्त्र सेनाओं के कम से कम बीस हजार कर्मचारी सऊदी अरब में सैनिक दृष्टि से महत्वपूर्ण प्रतिष्ठानों में रत हैं । वे सउदी अरब की सशस्त्र सेनाओं के कर्मचारियों को प्रशिक्षित भी करते है और सुरक्षा सेवाओं में सहायता भी दे रहे है । दस हजार अन्य पाकिस्तानी सैन्य अधिकारी खाड़ी के दूसरे देशों में कार्यरत है और संकट की स्थिति में अपने हथियारों सहित स्वदेश लौट आयेंगे । इसी प्रकार आवश्यकता पड़ने पर अफगानिस्तान के मुजाहिदों के रूप में काम कर रहे पाकिस्तानी सैनिक भी स्वदेश आ पहुँचेंगे । तात्पर्य यह है कि पाकिस्तानी तालिका में जो सैनिकों की संख्या दी है उससे कहीं अधिक सैनिक पाकिस्तान को उपलब्ध हैं।

1965 और 1971 की अपेक्षा इस बार पाकिस्तानी सेना उपयुक्त स्थान पर जमा हो जाने के कारण और उसकी सैनिक सुरक्षा के आधार पर इस समय की स्थिति पाकिस्तान के पक्ष में कुछ झुकी हुई है ।[2] पाकिस्तान की परमाणु नीति और उसकी

---

(1) डी0सी0चतुर्वेदी " अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध " पृष्ठ 149

(2) रविवारीय हिन्दुस्तान " पाकिस्तान की सामरिक नीति और उसकी पृष्ठभूमि " राधा कृष्ण कंचन , 8 फरवरी 1987

योजनाओं का आंकलन किया जाये तो कहा जा सकता है कि उसके परमाणु कार्यक्रम की आधारशिला ही परमाणु बम से रखी गयी थी । यदि अमेरिका सरकार की सहायता न प्राप्त होती तो यह हो ही नहीं सकता था कि पाकिस्तान परमाणु बम बना सकने में समर्थ हो जाता और भारतीय उपमहाद्वीप के लिये खतरा बनता । पाकिस्तान की जल-थल-वायु सेनायें भी अत्यन्त शक्तिशाली हैं ।

पाकिस्तान के सामरिक महत्व के कारण अमेरिका ने पश्चिमी एशिया और ईरान आदि में अपना स्थायित्व कायम किया । अमेरिका के लिए पाकिस्तान का मुख्य आकर्षण इसकी खाड़ी में महत्वपूर्ण स्थिति है । यही कारण है कि अमेरिका ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए विशेष स्तर पर पाकिस्तान की सहायता की । 1965 और 1971 के युद्ध में गम्भीर होकर उसने पाकिस्तान की मदद की । पाकिस्तान व अमेरिका दोनों देशों का एक दूसरे के लिए अत्यधिक महत्व है ।[1]

पाकिस्तान ने 1986 और 87 के बजट में सेना के लिए जो भारी धनराशि लगाई है उससे यह सिद्ध होता है कि पाकिस्तान सैनिक शक्ति को निरन्तर बढ़ाता जा रहा है । खेद की बात है कि वह महाशक्तियों के हाथों में खिलौना बन गया है और उनके हाथों खेला जा रहा है ।

**बांग्लादेश** 16 दिसम्बर 1971 से पूर्व पाकिस्तान के एक खण्ड के रूप में पूर्वी पाकिस्तान के नाम से विख्यात था । इसकी स्वतन्त्र केरोन में भारत का महत्वपूर्ण योगदान रहा । यह देश तीन दिशाओं से भारतीय राज्यों ( प0 बंगाल, बिहार, मेघालय, त्रिपुरा तथा मिजोरम ) द्वारा घिरा हुआ है, भारत की सुरक्षा की दृष्टि से इसका अत्यधिक सामरिक महत्व है । यद्यपि यह आकार में छोटा सा देश है और इसकी सैन्य स्थिति भी कोई विशेष महत्व नहीं रखती किन्तु फिर भी महाशक्तियाँ यहाँ अपने अड्डे स्थापित करके सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को प्रभावित कर सकती हैं।

---

(1) यू0एस0 बाजपेई" इण्डिया एण्ड इट्सनेबरहूड " पृष्ठ-210

योजनाओं का आंकलन किया जाये तो कहा जा सकता है कि उसके परमाणु कार्यक्रम की आधारशिला ही परमाणु बम से रखी गयी थी । यदि अमेरिका सरकार की सहायता न प्राप्त होती तो यह हो ही नहीं सकता था कि पाकिस्तान परमाणु बम बना सकने में समर्थ हो जाता और भारतीय उपमहाद्वीप के लिये खतरा बनता । पाकिस्तान की जल-थल-वायु सेनायें भी अत्यन्त शक्तिशाली हैं ।

पाकिस्तान के सामरिक महत्व के कारण अमेरिका ने पश्चिमी एशिया और ईरान आदि में अपना स्थायित्व कायम किया । अमेरिका के लिए पाकिस्तान का मुख्य आकर्षण इसकी खाड़ी में महत्वपूर्ण स्थिति है । यही कारण है कि अमेरिका ने अपनी स्वार्थपूर्ति के लिए विशेष स्तर पर पाकिस्तान की सहायता की । 1965 और 1971 के युद्ध में गम्भीर होकर उसने पाकिस्तान की मदद की । पाकिस्तान व अमेरिका दोनों देशों का एक दूसरे के लिए अत्यधिक महत्व है ।[1]

पाकिस्तान ने 1986 और 87 के बजट में सेना के लिए जो भारी धनराशि लगाई है उससे यह सिद्ध होता है कि पाकिस्तान सैनिक शक्ति को निरन्तर बढ़ाता जा रहा है । खेद की बात है कि वह महाशक्तियों के हाथों में खिलौना बन गया है और उनके हाथों खेला जा रहा है ।

**बांग्लादेश** 16 दिसम्बर 1971 से पूर्व पाकिस्तान के एक खण्ड के रूप में पूर्वी पाकिस्तान के नाम से विख्यात था । इसकी स्वतन्त्र केरोन में भारत का महत्वपूर्ण योगदान रहा । यह देश तीन दिशाओं से भारतीय राज्यों ( प0 बंगाल, बिहार, मेघालय, त्रिपुरा तथा मिजोरम ) द्वारा घिरा हुआ है, भारत की सुरक्षा की दृष्टि से इसका अत्यधिक सामरिक महत्व है । यद्यपि यह आकार में छोटा सा देश है और इसकी सैन्य स्थिति भी कोई विशेष महत्व नहीं रखती किन्तु फिर भी महाशक्तियाँ यहाँ अपने अड्डे स्थापित करके सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को प्रभावित कर सकती हैं।

---

(1) यू0एस0 बाजपेई" इण्डिया एण्ड इट्सनेबरहूड " पृष्ठ-210

बांग्लादेश के स्वतंत्रता आन्दोलन के समय समस्त पश्चिमी शक्तियाँ इसके विरोध में थीं । अमेरिका ने अपने संधि संगठन सदस्य मित्र पाकिस्तान की निष्ठा से समर्थन दिया था । उसका कहना था कि बांग्लादेश की समस्या पाकिस्तान का आन्तरिक मामला है । भारत को पाकिस्तान के आन्तरिक मामले में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए । उस समय चीन भारत का कटु आलोचक था और श्रीलंका सरकार का रूख भी भारत विरोधी था । कुवैत, जार्डन, सऊदी अरेबिया, लीबिया आदि अरब राज्यों द्वारा पाकिस्तान को समर्थन दिया गया और भारत की निन्दा की गयी ।

वर्तमान समय में बांग्लादेश के सम्बन्ध अमेरिका, चाइना, इस्लामिक राष्ट्र एवं पाकिस्तान से अधिक मधुर हो गये ।[1] ऐसी स्थिति में भारत के लिए विशेषरूप से बांग्लादेश का सामरिक महत्व है ।.

दक्षिण एशिया से सम्बन्ध होने के नाते बांग्लादेश के लिए यह स्वाभाविक है कि हिन्दमहासागर में उसकी रूचि हो । वह चाहता है कि वह क्षेत्र महाशक्तियों की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा से मुक्त रहे । बांग्लादेश गुटबन्दी के विरूद्ध है परन्तु पश्चिमी शक्तियाँ इसे अपनी स्वार्थसिद्धि के साधन के लिए अड्डे के रूप में प्रयोग करने की इच्छुक हैं ।उन्होंने इसीकारण पाकिस्तान को सहायता देकर अरब सागर में अपने अड्डे कायम किये । ये देश ऐसा करके बांग्लादेश को ब्लैकमेल भी करना चाहते हैं । यथार्थ में यह उन्हीं के षड़यन्त्रों का परिणाम था कि 1974 में शेखमुजीब की हत्या हुई और इसके बाद सत्ता उन लोगों के हाथ में आई जिनका सम्बन्ध जमायत - ए-इस्लामी के साथ था ।

---

(1) यू0एस0बाजपेई- " इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहूड " पृष्ठ-294.

(2) एस0आर0 चक्रवर्ती, वीरेंद्र नारायण, बांग्लदेश ग्लोबल पॉलिटिक्स वाल्यूम-111 पृ0-121.

बांग्लादेश प्रारम्भ से ही मुस्लिम राष्ट्रों विशेषकर अरब के साथ अपने दृढ़ सहृदय भाव रखता था । इरशाद ने इस्लाम को राष्ट्र की नीति का आधार बनाया ।

उन्होने कहा-

हम इस्लाम को इसके उचित स्थान अपने संविधान में स्थान देते हैं । इस्लाम अन्तिम रूप से सहनशीलता और स्थायित्व का धर्म है ।[1]

इस प्रकार आज का बांग्लादेश इस्लामिक राष्ट्रों एवं पश्चिमी राष्ट्रों के प्रभाव में है । ऐसी स्थिति में बांगलादेश की सामरिक स्थिति विशेषकर भारत के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण सिद्ध होती है ।

हिमालय पर्वत श्रेणियों से घिरा **नेपाल** एक छोटा सा पर्वतीय देश है । नेपाल भारत के उत्तर में है । इस देश की पूर्वी, पश्चिमी और दक्षिणी सीमा भारत के प्रदेशों से मिलती है। इसके पूर्व में सिक्किम और पं० बंगाल, पश्चिम और दक्षिण में उत्तर प्रदेश तथा बिहार राज्य हैं । 5 अक्टूबर 1961 को चीन से हुई सीमा सम्बन्धी संधि के अनुसार नेपाल और चीन की सीमा पर्वत श्रेणी के समानान्तर दक्षिण पूर्व को चोऊ, पुमोली, चोमोलुग्मा (एवरेस्ट पर्वत का चीनी नाम), नेपाली नाम सॉगर (मठ) ल्होत्से पर्वत शिखरों से होकर गुजरती हैं । वैसे तो नेपाल एक छोटा सा देश है किन्तु नेपाल के उत्तर में चीन की उपस्थिति होने के कारण भारत और चीन के मध्य एक अभय प्रतिरोधी राज्य बन गया है और सामरिक दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण राष्ट्र हो गया है ।

चीन की स्थिति इस समय तीसरी महाशक्ति के रूप में प्रसिद्ध है । विदित है कि चीन द्वारा तिब्बत पर अधिकार होने के पश्चात् भारत और चीन सम्बन्धों में कटुता आई । नेपाल की उत्तरी सीमा चूंकि चीन से मिलती है इसलिए भारत की सुरक्षा की दृष्टि से नेपाल की सामरिक स्थिति अत्यधिक महत्वपूर्ण है ।

---

(1) बांग्लादेश आब्जर्वर, 30 दिसम्बर 1982

(2) एस0डी0 मुनि, " एन एसर्टिव मोनार्की, पृष्ठ-13।

प्रारम्भ में भारत के साथ नेपाल के आर्थिक, राजनैतिक एवं सैनिक सम्बन्ध रहे हैं क्योंकि भारत एवं नेपाल की सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में एकरूपता है ।[1] किन्तु कुछ समय से नेपाल और चीन के सम्बन्ध अधिक निकटता पूर्ण बन गये हैं । चीन विस्तारवादी नीति का प्रतिपालन करता है और यही कारण है कि वह किसी भी समय नेपाल के रास्ते से सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को अपने प्रभाव में ले सकता है ।

उत्तर में भारत की सुरक्षा बहुत कुछ नेपाल की सुरक्षा पर निर्भर करती है । अनेक बार भारतीय हितों की उपेक्षा करते हुए नेपाल ने चीन के साथ समझौते किए । अनेक बार नेपाल में चीन की गतिविधियाँ भारत विरोधी और ध्वंसात्मक रही है । नेपाल द्वारा काठमाण्डू-ल्हासा सड़क बनाने के सम्बन्ध में चीन के साथ समझौता स्पष्टतः भारत विरोधी कदम था । 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण किया तो नेपाल ने तटस्थ दृष्टिकोण अपनाया । चीन भारत के निकट पड़ोसी देश नेपाल, भूटान, बांग्लादेश , बर्मा आदि को भारत विरोधी रूख अपनाने के लिए तरह-तरह के प्रलोभन देकर बाध्य करता है जिससे कि भारत की सुरक्षात्मक समस्याओं में वृद्धि होती है । इन छोटे राष्ट्रों की जिम्मेदारी भारत पर है । यदि ये छोटे देश अपने क्षेत्र में किसी बाह्य शक्ति को आमंत्रित करते हैं तो भारत इसका खुलकर विरोध करेगा क्यों कि भारत नहीं चाहता कि इसके सुरक्षात्मक पैरोमीटर में कोई बाहरी शक्ति हस्तक्षेप करें।

चीन सेनाओं की दृष्टि से श्रेष्ठता रखता है । वह एक परमाणु सम्पन्न देश भी है । चीन के पास मध्यम दूरी और लम्बी दूरी तक प्रहार करने वाले अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु प्रक्षेपास्त्र हैं । नेपाल के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्ध रखते हुए वह महाशक्ति किसी भी समय भारत पर आक्रमण कर सकती है और भारत पर अधिकार

-----------------------------------------------

(1) एस0डी0मुनि " एन एसर्टिव मोनार्की, पृष्ठ 131

स्थापित करते ही यह सम्पूर्ण दक्षिण एशिया पर अपना साम्राज्य स्थापित कर लेगी।

एशिया महाद्वीप के दो बड़े राष्ट्र भारत और चीन के मध्य स्थित होने के कारण नेपाल की सामरिक स्थिति बहुत अधिक महत्वपूर्ण है । यह नेपाल पर निर्भर है कि अपने दोनों सशक्त पड़ोसियों में से यह किसी एक के विरूद्ध एक को चुने ।[1]

इस प्रकार नेपाल अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण ही सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्व पूर्ण राष्ट्र है । नेपाल का यह आग्रह है कि नेपाल को शान्ति-क्षेत्र घोषित किया जाये जबकि भारत का यह दृष्टिकोण है कि नेपाल ही क्यों सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को शान्ति क्षेत्र घोषित किया जाये ।

**भूटान** भारत की उत्तरपूर्वीय सीमा पर स्थित प्रायः सम्पूर्ण पहाड़ी देश है । इसके उत्तर तथा उत्तर पश्चिम में तिब्बत का प्रदेश है जो अब कम्युनिस्ट चीन के अधिकार में आ गया है । पश्चिम में थोड़ी दूर तक सिक्किम की सीमा है तथा शेष दक्षिण व पूर्व में अन्य भारतीय प्रदेशों की सीमायें है । भूटान पूर्वी हिमालय के समीप सुदृढ़ स्थिर रूप से खड़ा है ।[2] इस प्रकार भूटान अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण ही सामरिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है । तिब्बत पर अधिकार करने के बाद विस्तारवादी चीन की कुदृष्टि इस देश पर लगी हुई है । वह इन छोटे-छोटे राष्ट्रों पर अधिकार करके अपनी स्थिति सदृढ़ करना चाहता है ।

दो दिग्गजों चीन एवं भारत के मध्य में दबे हुए भूटान के देशों के साथ सम्बन्ध इसकी नीति निर्धारण में प्रमुख कारक होंगे । ऐतिहासिक तथा अन्य कारणों से भारत अच्छे या बुरे दोनों रूपों में प्रभावकारी तत्व रहा है लेकिन चीन की उपेक्षा भी

---

(1) एस0डी0मुनि0 " एन एसर्टिव मोनार्की" पृष्ठ-132

(2) राम राहुल " रॉयल भूटान " पृष्ठ-65

नहीं की जा सकती जबकि भूटान नेपाल के समान दूरी के संतुलन का खेल नहीं चाह सकता । चीन और भूटान के सम्बन्धों ने अत्यन्त महत्वपूर्ण रूप धारण किया है । तिब्बत के बाद चीन का भूटान की सीमा पर धावा, सोच समझकर अनेक नियोजित अतिक्रमण तथा राजनैतिक और आर्थिक दबाव भी ध्यान आकर्षित करने वाले तत्व हैं।

भूटान सहायता के लिए चीन , रूस तथा अमेरिका जैसी महाशक्तियों के सामने हाथ न पसारने में सजग है । वह अपने सीमित दायरे में ही बँधा हुआ है ।

भारतीय स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद अपने पुराने सम्बन्धों को सुस्पष्ट करने के उद्देश्य से सन् 1947 में भूटान के राजा और भारत सरकार के मध्य एक संधि की गयी । इस संधि के अन्तर्गत भूटान की सुरक्षा का उत्तरदायित्व पूर्ववत् भारत -सरकार को प्राप्त है । अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के बारे में भूटान को भारत सरकार द्वारा दिए गये मार्गदर्शन के अनुसार कार्य करने की व्यवस्था है ।[1] कुछ भूटानी नेता अपने को इस दबाव से मुक्त करना चाहते हैं । अपनी उत्तरी सीमा पर छाये लाल संकट की विभीषिका को देखते हुए " अपनी नैय्या स्वतः खेने " की नीति इन भूटानी नेताओं को संकट में डाल सकती है ।

आज की परिस्थितियों में भूटान अपने परम्परागत मित्र और सभी दृष्टियों से सहधर्मी पड़ोसी भारत की भरपूर सहायता के आधार पर ही अपने को साम्यवादी चीन के विस्तारवाद से बचा सकता है । भूटान की सुरक्षा भारत के सहयोग पर निर्भर है ।

अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण भूटान जैसे छोटे से देश की भी दक्षिण एशिया में सामरिक स्थित महत्वपूर्ण है ।

**श्रीलंका** हिन्दमहासागर में भारतीय दक्षिणी भौगोलिक सीमाओं के समीप स्थित है , इसलिए सामरिक दृष्टि से न केवल भारत के लिए अपितु सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के लिए यह देश बहुत महत्वपूर्ण है ।

---

(1) पी0पी0 करन एण्ड डब्लू0एम0 जैकिंग्स , " दि हिमालयन किंगडम " पृष्ठ-44

सर्वप्रथम यूरोपीय समुद्री शक्ति के हिन्दमहासागर में आगमन से श्रीलंका के क्षेत्र के महत्व का ज्ञान हुआ । पुर्तगालियों ने महासागरीय सामरिक शक्ति के आधार पर गोवा, मलाका एवं ओरभुज पर अधिकार स्थापित किया । हिन्दमहासागर पर ब्रिटेन का आधिपत्य त्रिकोमाली,सिंगापुर एवं एडन पर आधिपत्य के साथ हुआ था ।[1]

प्राचीन इतिहास से यह विदित है कि श्रीलंका पर नियंत्रण रखने वाली सामरिक शक्ति न केवल दक्षिण एशिया के किसी देश पर अपना आधिपत्य स्थापित कर सकती है बल्कि हिन्दमहासागर पर भी अपना नियंत्रण स्थापित कर सकती है ।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान जापानियों द्वारा सिंगापुर जीतने से यह तत्व और भी प्रामाणिक हो गया था । अप्रैल 1942 में जापानियों द्वारा श्रीलंका के कोलम्बो एवं त्रिकोमाली बन्दरगाहों में बमबारी ने भयानक स्थिति उत्पन्न कर दी थी ।[2] चूँकि भारत श्रीलंका का निकटतम पड़ोसी है, इसलिए भारत की लम्बी असुरक्षित समुद्री सीमाओं के कारण जापानियों का सिंगापुर पर अधिकार से भारत के लिए बहुत गम्भीर स्थिति उत्पन्न हुई । भारत ने सदैव इस तथ्य को ध्यान में रखा । स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी भारत हिन्दमहासागर को ही भारतीय सुरक्षा का माध्यम मानता है । श्रीलंका की हिन्दमहासागर में महत्वपूर्ण सामरिक स्थिति होने से तथा इसके दो महत्वपूर्ण बन्दरगाह त्रिकोमाली एवं कोलम्बो के कारण श्रीलंका भारतीय सुरक्षा का महत्वपूर्ण मौलिक तत्व है।

एक भारतीय लेखक ने 1954 में लिखा था " सीलोन प्राकृतिक रूप से हिन्दमहासागर का केन्द्र है और इसलिए इसकी सुरक्षा और इसकी भौगोलिक स्थिति महत्वपूर्ण है । पूर्व एवं पश्चिम में इसके प्रकाशमयी विस्तार से इसकी केन्द्रीय स्थिति समझी जा सकती है । "

---

(1) कोडीकारा " इण्डो सीलोन रिलेशन्स " पृष्ठ-24

(2) ललित कुमार " इण्डिया एण्ड श्रीलंका " पृष्ठ-1

कोलम्बो हिन्दमहासागर में वायु-मार्ग का भी केन्द्र बिन्दु है और भारत के माध्यम से यह अन्तर्गत द्वितीय वायु सेना से सम्बन्ध रखता है ।[1] अतः समुद्री यातायात की दृष्टि से श्रीलंका को महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है ।

इस प्रकार श्रीलंका हिन्दमहासागर का आधार स्तम्भ है । इसकी समुद्री एवं वायुमार्गीय स्थिति दोनों ही महत्वपूर्ण हैं । सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के कारण आज प्रत्येक महाशक्ति श्रीलंका से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने की इच्छुक है संयुक्त राज्य अमेरिका डियागोगार्सिया में सैनिक अड्डा स्थापित करने के बाद वह अपनी सम्पूर्ण दृष्टि त्रिकोमाली पर लगाये हुए है तथा त्रिकोमाली पर तेल आपूर्ति सुविधा प्राप्त करने के लिए प्रयासरत है । 1980 में श्रीलंका ने अमेरिका को तेल आपूर्ति सुविधा प्रदान करने के लिए टेण्डर दे दिए थे, किन्तु कुछ कारणों से यह प्रस्ताव गिर गया था।[2]

त्रिकोमाली से भारत के सामरिक एवं कूटनीतिक हितो का सीधा सम्बन्ध है, क्योंकि भारत के पूर्वी क्षेत्र में कोई भी प्राकृतिक बन्दरगाह नहीं है । अतः सामरिक दृष्टि से भारत एवं श्रीलंका दोनों ही एक दूसरे के लिए महत्वपूर्ण स्थिति रखते हैं । भारत एवं श्रीलंका के बीच आकार सम्बन्धी विशेष भिन्नता होने पर भी ये देश सामरिक दृष्टि से परस्पर निर्भर हैं । श्रीलंका को हिन्दमहासागर में महत्वपूर्ण स्थिति के कारण इसका समुद्री मार्ग प्राचीन काल से लेकर आज तक अपना महत्व बनाये हुए है, विशेष रूप से भारत की प्रतिरक्षा के संबंध में । समुद्री मार्ग के साथ-साथ इसका वायुमार्ग भी भारतीय प्रतिरक्षा के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है ।

भारत की अधिकांश सीमा रेखा समुद्री है जो पूरी तरह से खुली एवं असुरक्षित है, यहाँ वायुमार्ग द्वारा बमबारी की जा सकती है । श्रीलंका अपने महत्वपूर्ण बन्दरगाह त्रिकोमाली एवं कोलम्बो सहित भारतीय भूमि के निकट है और यही कारण है कि यह भारतीय नीति को सदैव प्रभावित करता रहा है ।[3]

---

(1) रामाराव, " इण्डिया एण्ड श्रीलंका" पृष्ठ-8
(2) दिनमान टाइम्स, 15-24 मार्च 1990, पृष्ठ-10
(3) ललित कुमार, " इण्डिया एण्ड श्रीलंका " पृष्ठ-1

श्रीलंका में सैनिक तैयारी, महाशक्तियों को, आमंत्रण तथा नौसैनिक विश्राम स्थल की त्रिकोमाली में व्यवस्था, पकिस्तान , चीन जैसे भारतीय शत्रु देशों से मित्रता, समुद्री सीमा के लघु अन्तराल को पार करके भारतीय क्षेत्र में जासूसी, शरणार्थियों के बहाने विदेशी जासूसों को भारत में जाने का चक्र, वायस ऑफ अमेरिका केट्रांसमीटरों के माध्यम से दक्षिण में स्थित भारतीय रक्षा संस्थानों में जासूसी का खतरा आदि कुछ ऐसे तथ्य हैं जिनको भारतीय सुरक्षा की दृष्टि से विश्लेषित किया जा सकता है । इसी प्रकार चीन, दक्षिण कोरिया, इजराइल ब्रिटेन और फ्रांस से हथियारों की खरीद, सैनिक साज-सामान की आपूर्ति इस तथ्य का संकेत देती है कि क्षेत्रफल में छोटा दिखने वाला श्रीलंका अपने सहायकों के बल पर भारत से लोहा लेने का प्रयास कर रहा है । वह स्थिति भारत के लिए संकट की स्थिति होगी क्योंकि भारत पश्चिम उत्तर और पूर्व में युद्ध की संभावनाओं से निरन्तर टकरा रहा है । यदि कहीं दक्षिण से भी उसे इस प्रकार की चुनौती मिलती है तो वह एक जटिल समस्या हो जायेगी ।

इस प्रकार श्रीलंका सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होने के कारण हिन्दमहासागर के तटवर्ती राष्ट्रों के लिये कभी भरी ख़तरनाक सिद्ध हो सकता है ।

**मालदीव** भारतीय तट के करीब 500 कि0मी0 दूर हिन्दमहासागर में स्थित द्वीपों का समूह है । यह अत्यन्त छोटा सा देश है । राजधानी माले की एक छोर से दूसरे छोर तक की पैदल यात्रा एक घंटे में की जा सकती है । छोटा होते हुए भी इस देश का सामरिक महत्व उसे नगण्य नहीं होने देता । मालदीव के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध इसकी भौगोलिक स्थिति के आधार पर चार तत्वों पर निर्भर है जिनमें एक तत्व इसकी सामरिक स्थिति भी है ।[1]

मालदीव चारों ओर से हिन्दमहासागर से घिरा है । हिन्दमहासागर वर्तमान में महाशक्तियों का शक्ति स्थल बना है । महाशक्तियाँ हिन्दमहासागर पर अपना आधिपत्य स्थापित करना चाहती है । हिन्दमहासागर में स्थित होने का कारण ही यह छोटा सा देश की अपनी सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थिति रखता है।

---

{1} उर्मिला फडनीस एण्ड इलादत्त, "मालदीव्स विण्ड्स ऑफ चेंज इन0एन0एटॉल स्टेट," पृ0-70

इस देश ने गुटनिरपेक्षता की नीति अपनाई है । अब्दुल गयूम ने हवाना में गुटनिरपेक्षआन्दोलन में समस्त देशों को सम्बोधित करते हुए कहा कि-

" हमारा देश एक छोटा सा राष्ट्र है। हम संख्या में बहुत कम हो सकते हैं । हम समृद्धि , तकनीकि तथा अन्य चीजों में काफी पीछे हो सकते हैं लेकिन हमारा गणतंत्र मालदीव स्वतंत्रता पूर्वक बोलने के साहस में कभी पीछे नहीं रह सकता ।[1]

यह हिन्दमहासागर में महाशक्तियों के शक्ति संघर्ष का भी विरोध करता है । हिन्दमहासागर में विदेशी अड्डों की स्थापना का वह कटु विरोधी है । मालदीव के पास अपनी सैनिक शक्ति नहीं है और यह अत्यन्त शांतिप्रिय देश है । करीब दो लाख की जनसंख्या के बीच कानून व्यवस्था बनाये रखने के लिए यहाँ राष्ट्रीय सुरक्षा सेना है, जिसमें लगभग 1200 जवान हैं। अब इन्हें चाहें देश की सेना समझा जाये या पुलिस । चूंकि वहाँ के निवासी अत्यधिक शांतिप्रिय है इसलिये यहाँ कभी भी पुलिस या सेना की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

हाल ही में 3 नवम्बर 1988 में मालदीव पर हुए हमले ने यह सिद्ध कर दिया कि इस पर विरोधी शक्तियाँ अपना अधिकार स्थापित करना चाहती है और इसे नौसैनिक अड्डे के रूप में इस्तेमाल करना चाहती हैं । हिन्द महासागर में महाशक्तियों की सैन्य-स्पर्द्धा से इस क्षेत्र में शान्ति और स्थायित्व के लिए खतरा पैदा होगा । यह कहना सर्वथा उचित है कि मालदीव के हिन्द महासागर में भौगोलिक स्थिति से इसका आर्थिक एवं सामरिक महत्व जुड़ा हुआ ।[2]

स्पष्ट: दृष्टिगोचर होता है कि दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्रों की सामरिक स्थिति अत्यधिक महत्वपूर्ण है। चूंकि समस्त राष्ट्रों की समी भारत को स्पर्श

---

(1) उर्मिला फडनीस ,इला दत्त- " मालदीव्ज विण्ड्स ऑफ चैज इन एन एटॉल स्टेट,पृ0-82

(2) यू0एस0 बाजपेई, " इण्डिया एण्ड इट्स नेबर हूड " पृष्ठ - 277

करती है इसलिए भारत की सुरक्षा की दृष्टि से अन्य समस्त राष्ट्रों की सामरिक स्थिति की महत्ता में वृद्धि हो जाती है । दक्षिण एशिया का प्रत्येक राष्ट्र किसी न किसी महाशक्ति के प्रभाव में है । ऐसी स्थिति में इन राष्ट्रों का सामरिक महत्व अत्याधिक है।

### (ख) राजनैतिक स्थिति एवं अन्य देशों से सम्बन्ध :-

दक्षिण एशियाई क्षेत्र के सदस्य देशों में लगभग एक अरब लोग रहते हैं। इस दृष्टि से यह विश्व का सबसे अधिक जनसंख्या वाला क्षेत्र है । मालदीव को छोड़कर क्षेत्र के शेष सदस्य - भारत , बांग्लादेश, पाकिस्तान, नेपाल, भूटान और श्रीलंका भारतीय उपमहाद्वीप के हिस्से हैं । ये समस्त देश इतिहास, भूगोल ,धर्म और संस्कृति के जरिये एक - दूसरे से जुड़े है । विभाजन से पूर्व भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश एक ही प्रशासन और अर्थव्यवस्था के अभिन्न अंग थे। किन्तु स्वतन्त्रता के पश्चात् ये देश एक दूसरे से दूर हो गये । इसका मुख्य कारण इन देशों की राजनैतिक अस्थिरता है । इस क्षेत्र के देशों की राजनैतिक स्थिति और उनमें होने वाले परिवर्तन का प्रभाव सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के क्षेत्र पर पड़ता है जो अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को भी प्रभावित करता है और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों पर आधारित है ।

**भारत** में लोकतन्त्रीय राजनीतिक व्यवस्था के अन्तर्गत एक प्राचीन और बड़े विविधतापूर्ण समाज का आधुनिकीकरण किया जा रहा है । भारतीय राजव्यवस्था पर अंग्रेजी शासन का प्रभाव सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है । अंग्रेजी शासन में महत्वपूर्ण राजनीतिक और विकास सम्बन्धी निर्णय सरकारी ढंग से किये जाते थे । यही परिपाटी भारतीय नेताओं ने भी अपनायी । स्वाधीनता के बाद की नूतन राजव्यवस्था में समस्त परिवर्तन और नीतियों का भार सरकारी सेवाओं पर डाल दिया गया । समस्त आर्थिक एवं राजनैतिक गतिविधियों का संचालन सरकारी अधिकारियों द्वारा किया जाता है ।

भारत का लिखित संविधान देश की जनता और समस्त विविधतापूर्ण संस्कृति वाले लोगो को जोड़ता है । संविधान व्यस्क मताधिकार की व्यवस्था करके जनता को शासन कार्यो में सक्रिय भागीदार बनाता है । शासन के स्वरूप में महत्वपूर्ण

परिवर्तन करने का अधिकार इस देश की जनता में ही निहित माना गया है । देश में संसदीय व्यवस्था को अपनाया गया है । यद्यपि ब्रिटिश नमूने की संसदीय शासन प्रणाली को अपनायी गयी है, परन्तु अमरीका के न्यायिक पुनर्विचार के सिद्धान्त को एक सीमा तक स्वीकार किया गया है।[1] भारत में समाजवादी व्यवस्था की स्थापना की गयी है । लोकतांत्रिक समाजवाद का उद्देश्य एक जातिविहीन ,वर्गविहीन समाज की स्थापना है जो लोकतन्त्रीय विचारधारा पर आधारित हो और जिसमें वैयक्तिक गरिमा व सामाजिक न्याय दोनों ही स्थितियों को प्राप्त किया जा सके । भारत की राजनीतिक व्यवस्था धर्म-निरपेक्ष के सिद्धान्त पर आधारित है । स्मिथ के अनुसार - " धर्मनिरपेक्षः एक ऐसा राज्य है जो व्यक्तिगत व सामूहिक रूप में धर्म स्वतन्त्रता की सुरक्षा करता है,व्यक्ति को किसी धार्मिक भेद-भाव के बिना एक नागरिक के रूप में देखता है । संवैधानिक दृष्टि से किसी धर्म विशेषसे असंयुक्त रहता है । वह किसी धर्म के प्रचार में सहायक या बाधक नहीं होता ।'[2]

भारत में सरकार के चारों ओर ही समस्त राजनीति घूमती है । रजनी कोठारी के अनुसार - " विरोध का अर्थ सरकार का विरोध है । चाहे वह दल के भीतर हो या बाहर । चाहे सरकारी दल - कांग्रेस हो या अन्य पार्टी ।"[3] सन् 1967 तक जितने भी आन्दोलन हुए वे सत्तारूढ़ दल के विरोध में थे । केरल में जब साम्यवादी सरकार आई तो उसके विरोध में आन्दोलन हुआ । तमिलनाडु में डी0एम0के0 सरकार आई तो उसके विरूद्ध केई आन्दोलन हुए ।

भारत में बहुदलीय पद्धति है । भारत का सबसे पुराना दल कांग्रेस है । स्वतंत्रता के संगठन के रूप में इसमें सभी विविध हितों ,वर्गों के लोग शामिल हो गये

---

(1) डी0डी0 बसु,"कमेंट्री आन दि कान्स्टीट्यूशन ऑफ इण्डिया"वाल्यूम -6 पृष्ठ-3।

(2) डी0ई0स्मिथ " इण्डिया एज ए सेकुलर स्टेट" पृष्ठ-4.

(3) रजनी कोठारी " भारत में राजनीति ( अनुवाद ) पृष्ठ 217

तथा एक ही ढाता संगठन के रूप में बिना किसी राजनीतिक विघटन के कार्य किया।[1]

किन्तु वर्तमान राजनैतिक स्थिति में गुटबन्दी सर्वत्र दिखाई देती है। कांग्रेस दल को ही सदैव अपने संगठन के भीतर गुटबन्दी को सहन करना पड़ा है । भारत में नई व्यवस्था का निर्माण हो रहा है । पुरातन व्यवस्था, जिसमें हर जाति या समूह के कार्य, अधिकार या मान-मर्यादा निश्चित थी , नष्ट हो गयी है और उसके स्थान पर हजारों , लाखों समूहों व समुदायों को सरकार, चुनाव ,राजनीतिक दल और शासन के अधिकारी वर्ग में सम्मिलित होने का अवसर मिला है ।

भारत की राजनैतिक स्थिति पर दृष्टिपात करने के पश्चात् अन्य देशों के साथ इसके सम्बन्धों का विवेचन करना आवश्यक है —

**संयुक्त राज्य अमेरिका** वर्तमान विश्व के राजनीतिक एवं भौगोलिक मानचित्र पर अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान है । इसकी भौगोलिक स्थिति, उन्नत आर्थिक व्यवस्था तकनीकी स्तर की उच्चता , सैनिक शक्ति, विदेशों को सहायता तथा साम्यवादी विस्तार के विरूद्ध मोर्चा आदि अनेक ऐसे तथ्य है , जिनके कारण आज विश्व की प्रत्येक राजनीतिक एवं आर्थिक घटना से इसका सम्बन्ध है । दक्षिण एशिया के देशों के साथ सम्बन्धों में इसकी भूमिका स्वाभाविक है-

**भारतीय एवं संयुक्त राज्य अमेरिका-** के सम्बन्ध पिछले तीस वर्षों से उतार-चढ़ाव के रहे हैं । कभी-कभी ये मित्रतापूर्ण , कभी समस्यात्मक , कभी संघर्षात्मक एवं विदेश नीति एवं हितों के अनुसार तुरन्त अच्छे दृष्टिकोण में परिवर्तित हुए है ।[2] अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय महत्व के प्रसंगों पर मतभेद ही अधिक उजागर हुए है । स्वेज नहर और कांगो विवाद के अतिरिक्त समान दृष्टिकोण एवं सहयोग का सर्वथा अभाव देखा गया है । भारत -अमरीकी सम्बन्धों को दो मौलिक परन्तु विरोधी प्रेरणा स्रोतों की गत्यात्मक अन्तर्क्रिया के संदर्भ में समझना चाहिए । एक ओर तो भारत

---

(1) एन0डी0पालर , " दि इण्डियन पोलिटिकल सिस्टम " पृष्ठ-187

(2) वी0पी0 दत्त, " इण्डियाज फॉरेन पॉलिसी" पृष्ठ-72

को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में सशक्त अभिकर्ता के रूप में आने की सतत् आंकाक्षा है जबकि उसके लायक सामर्थ्य उसमें है नहीं, दूसरी ओर अमेरिका का अपनी सुरक्षा के लिये दूसरे राष्ट्रों का उपयोग करने का लक्ष्य है ।

1945 से 1955 के मध्य अमरीका प्रबल महाशक्ति था । इस काल के पूर्वार्द्ध में भारत अपने घरेलू मसलों में बुरी तरह उलझा हुआ था । उसे अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में ज्यादा हिस्सा लेने का अवसर नहीं था । इस समय भारत अमेरिका की ओर शंकालु होने के साथ-साथ अनुकूल भी था । शंकालु इसलिए था कि भारत अमेरिका को दक्षिण एशिया में ब्रिटेन की साम्राज्यवादी " फूट डालो और शासन करो " की नीति का उत्तराधिकारी समझता था । भारत को अमरीका द्वारा अपनायी गयी इस नीति के प्रमाण काश्मीर तथा अन्य स्थायी मामलों में प्रत्यक्ष देखने को मिल गये थे । नेहरू को अमरीकी साम्यवाद विरोध में उसकी विस्तारवादी नीति की गंध आती थी । भारत अमेरिका के प्रति अनुकूल इसलिए था कि उसे चीन और रूस के इरादों की ईमानदारी और सच्चाई पर संदेह था। जून 1951 से अप्रैल 1971 तक अमेरिका ने भारत को 742.2 करोड़ 23 लाख रूपये की आर्थिक सहायता की ।[1]

भारत गुटनिरपेक्ष नीति का समर्थक था। अमरीका को भारत की यह भूमिका रुचिकर नहीं लगती थी । भारत की गुटनिरपेक्षता की नीति को अमेरिका ने सदैव संदेह की दृष्टि से देखा । अमेरिकी विदेशमंत्री फास्टरलेस का मत था " जो देश स्पष्ट रूप से हमारे साथ नहीं हैं तो हमारा विरोधी है।[2] अमेरिका को भारत एक जबरदस्त विरोधी के रूप में नज़र आने लगा क्योंकि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में भारत अमेरिका से टक्कर लेने लगा था । उपराष्ट्रपति निक्सन ने पाकिस्तान को सैनिक सहायता देने के लिए इसी बुनियाद पर ज़ोरदार सिफारिश की थी कि उससे जवाहर लाल नेहरू के भारत के सुदृढ़ तटस्थतावाद का मुकाबला हो सकेगा ।" 1965 के भारत -पाक युद्ध के समय अमरीका ने तटस्थता की नीति अपनाई ।[3] किन्तु 1971 के

---

(1) यू0एस0इकनामिक असिस्टेंस टू इण्डिया, बाई यू एस इन्फारमेशन सर्विस ,नई दिल्ली।
(2) डॉ0 एम0जी0राय, भारत और विश्व राजनीति " पृष्ठ 232
(3) एशियन रिकार्डर 1-7 अक्टूबर 1965 पृष्ठ- 6700

भारत - पाकिस्तान युद्ध में भारत को इस युद्ध के लिये जिम्मेदार ठहराया ।[1]

1972 के बाद भारत-अमेरिका सम्बन्ध सुधारने के प्रयत्न आरम्भ हुए । 1977 में अमरीकी अखबारों में जनता पार्टी की जीत का स्वागत किया गया । 1982 में राष्ट्रपति रोनाल्ड रीगन के आमंत्रण पर श्रीमती इन्दिरागाँधी ने अमेरिका की यात्रा की राजीव गांधी के काल में भी अमेरिकी व्यवहार से ऐसा लगा कि उसके मन में भारत की नई सरकार को पटाने की मानसिकता है । वर्तमान समय में भी भारत अमेरिकी सम्बन्ध निकटतापूर्ण नहीं है।

**सोवियत संघ** वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में विशिष्ट स्थान रखता है। सोवियत संघ की नीति सदैव से साम्यवादी प्रसार की रही है । समाजवादी देश होने के कारण सोवियत संघ के लिए यह आपवश्यक है कि वह साम्राज्यवाद का विरोध करे तथा औपनिवेशिक जनता के स्वाधीनता संघर्षों कमो अपना समर्थन प्रदान करे । विश्व के प्रत्येक राजनीतिक घटना के साथ प्रत्यक्ष था प्रत्यक्ष रूप से सोवियत संघ का सम्बन्ध है ।

**भारत एवं सोवियत संघ** के बीच भी सदैव से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध रहे हैं । इन देशों के मैत्री एवं सक्रिय सहयोग के मुख्य अभियंता पं0 जवाहर लाल नेहरू थे । उनका कहना था " सोवियत संघ तथा अमेरिका के दृष्टिकोण में जो अन्तर है, उसे हम या एशिया का कोई राष्ट्रवादी नहीं भूल सकता है । स्पश्ट हो गया है कि कौन सा देश उपनिवेशवाद का विरोधी है और कौन सा देश उसका समर्थक है । भारत अपनी विदेशनीति बनाते समय इस दृष्टिकोण कमा ध्यान रखेगा।"[2] 1951 के पश्चात् भारत के

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स, 6 दिसम्बर 1971 नई दिल्ली.

(2) बी0प्रसाद " दि ऑरिजिन ऑफ इण्डियन फारेन पॉलिसी पृष्ठ-241

के प्रति रूस के रवैये में परिवर्तन प्रारम्भ हुआ जिसका आभास हमें रूस की नयी कूटनीतिक गतिविधियों से मिलता है । रूस के इस परिवर्तित रूख के लिए विश्व की कतिपय समस्याओं पर भारत द्वारा अपनाया गया उन्मुक्त दृष्टिकोण बड़ा सहायक हुआ । सोवियत सरकार ने विदेशनीति सम्बन्धी दो महत्वपूर्ण मामलों कश्मीर और गोआ पर भारत को पूरा समर्थन दिया । भारत के मामलों में रूस ने चीन के हस्तक्षेप की निन्दा की [1] और कश्मीर के बारे भारत का समर्थन किया[2] कलकत्ता में एक भाषण में सोवियत नेता बुल्गारिन ने कहा कि " गोआ अवश्य स्वतन्त्र होगा और भारत के महान गणराज्य में मिल जायेगा ।" [3] भिलाई में सोवियत सहायता से एक कारखाना खुला जो दोनों की मित्रता का प्रतीक है । इस समय तक भारत को प्राप्त होने वाली लगभग सारी विदेशी सहायता पश्चिमी देशों से आती थी । पश्चिम पर भारत की निर्भरता को घटाने के लिए एक अभूतपवूर्व सोवियत अभियान शुरू हुआ । इस अभियान का परिणाम यह हुआ कि दोनों देशों के मध्य वाणिज्य के परिणाम में बड़ी वृद्धि हुई ।

9 अगस्त 1971 को भारत तथा सोवियत संघ के मध्य एक बीस वर्षीय सन्धि पर हस्ताक्षर हुए । यह संधि तात्कालिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीतिक घटनाचक्र का परिणाम थी । बांग्लादेश में हो रहे नर-संहार के कारण भारत में शरणार्थियों की बाढ़ आ गयी । इस कारण भारत पर आर्थिक बोझ बढ़ गया और भारतीय सुरक्षा को भी खतरा उत्पन्न हो गया । भारत को डराने धमकाने के लिए अमरीका द्वारा अपना सातवाँ जहाजी बेड़ा हिन्द महासागर में भेजा गया । ऐसी विषम परिस्थितियों में भारत को एक शक्तिशाली मित्र की आवश्यकता थी जो कठिन स्थितियों में उसकी सहायता

---

(1) दि मदरलैंड, 17 मई 1974 पृष्ठ-6

(2) दि मदरलैंड, 19 मई 1974 पृष्ठ-8

(3) दि हिन्द । दिसम्बर 1955

कर सके । के0पी0एस0 मेनन के शब्दों में " क्या वह आश्चर्य की बात है कि ऐसी परिस्थितियों में भारत एक पुराने और पूर्व-परीक्षित मित्र सोवियत संघ की ओर आमुख न होता ।" सोवियत संघ ने अमरीका के 14 युद्धपोतों के विरोध में 16 युद्धपोत हिन्दमहासागर में उतार दिए।[1]

भारत - रूस व्यापार में निरन्तर वृद्धि हुई । भारत सोवियत व्यापार को 1985 तक 3000 करोड़ रू0 तक बढ़ानें की योजना तथा जनवरी 1979 में सम्पन्न पारस्परिक शान्तिपूर्ण परमाणु सहयोग के समझौते से यह स्पष्ट हो जाता है कि जनता सरकार भारत, सोवियत सम्बन्धों को उस मुकाम से कहीं आगे बढा ले गयी जहाँ इन्दिरा सरकार ने छोड़ा था । 1986-90 के लिए भी व्यापार के बारे में वार्तालाप हुई । विगत वर्षों से रूस-भारतीय माल का प्रमुख आपातकर्ता देश बन गया है । घरेलू और विदेशी समाचार पत्रों में छपे भाषणों और साक्षात्कारों के माध्यम से श्री राजीव गांधी ने स्पष्ट कर दिया कि भारत सोवियत संघ के साथ मित्रतापूर्ण सम्बन्धों के प्रयास बनाये रखेगा।[2]

संक्षेप में रूस के साथ भारत के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण रहे है । हर आवश्यकता के अवसर पर रूस ने भारत का साथ दिया है और औद्योगिक विकास के संदर्भ में भी भारत की सहायता की है ।

1949 की साम्यवादी क्रांति के बाद विश्व राजनीति में एक शक्ति के रूप में **चीन** का उदय हुआ । आज परमाणिक शक्ति के क्षेत्र में चीन पश्चिमी देशों के समान स्थान रखता है । चीन की बढ़ती हुई शक्ति के परिपेक्ष्य में वर्षो पूर्व जॉन हे ने कहाँ था " विश्व की शांति चीन पर निर्भर है । जो कोई चीन को समझ सकेगा उसी के हाथ में आगामी पाँच वर्षो तक विश्व राजनीति की कुंजी होगी ।"[3] वर्तमान समय में चीन की कूटनीति रूस एवं अमेरिका को ही नहीं अपितु विश्व के अन्य दूर एवं पड़ोसी सभी देशों को प्रभावित करती है ।

---

(1) राजवीर सिंह " भारतीय रक्षा एवं सुरक्षा " पृष्ठ-139

(2) बी0पी0दत्त " इण्डियाज फॉरैन पालिसी " पृष्ठ-178

(3) बी0एल0 फड़िया " अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पृष्ठ-46।

**भारत एवं चीन** के मध्य अत्यन्त प्राचीनकाल से सांस्कृतिक सम्बन्ध चले आ रहे थे । 1950 तक दोनों देशों के मध्य किसी प्रकार का मतभेद नहीं था । इसके बाद तिब्बत की समस्या खड़ी हुई । अगस्त 1950 में चीन की सरकार ने घोषणा की कि " तिब्बत पर शीघ्र ही आक्रमण किया जायेगा ।" श्री चाऊ एन लाई का कहना था कि " तिब्बत की मुक्ति एक पवित्र कर्तव्य है, परन्तु उनकी सरकार इस उद्देश्य की प्राप्ति पत्र-व्यवहार के द्वारा करना चाहती है, सैनिक कार्यवाही के द्वारा नहीं ।[1] किन्तु अक्टूबर 1950 को चीन द्वारा तिब्बत पर बड़े पैमाने पर किये आक्रमण पर भारत ने आश्चर्य प्रकट किया ।

1959 में दलाई लामा ने 8 व्यक्तियों के दल के साथ भारत में राजनीतिक शरण ली । चीन की सरकार ने इसे शत्रुतापूर्ण कार्य बताया। इसी समय से भारत और चीन के सम्बन्ध बिगड़ने प्रारम्भ हो गये । जवाहर लाल नेहरू ने कहा- " चीन से अच्छे सम्बन्ध रखने का यह अर्थ नहीं है कि मैं या हमारी सरकार अथवा संसद चीन के किसी आदेश का पालन करें ।"[2]

भारत चीन सीमा को लेकर भी कुछ विवाद प्रारम्भ हो गये । 17 जुलाई 1954 को चीन ने एक पत्र द्वारा भारत पर आरोप लगाया कि भारतीय सेना ने बूजे नामक चीनी स्थान पर अवैध अधिकार कर लिया है । 1962 में भारत पर चीन ने बड़े पैमाने पर आक्रमण कर दिया । भारत के तत्कालीन रक्षा मंत्री श्री कृष्ण मेनन ने 20 अक्टूबर 1962 को नई दिल्ली में एक सार्वजनिक सभा में घोषणा की कि " हम चीनी आक्रमण के विरूद्ध लड़ाई जारी रखेंगे और आत्म-समर्पण के आधार पर उनके साथ कोई बातचीत नहीं करेंगे । "[3] 21 नबम्वर 1962 को चीन ने एकाएक अपनी ओर से एक पक्षीय युद्ध विराम की घोषणा कर दी और युद्ध समाप्त हो गया।

---

(1) पन्निकर , इन टू चाइनाज, मैमोरी ऑफ ए डिप्लोमैट, पृष्ठ 102

(2) नेहरूज स्टेटमेंट इन दि लोक सभा, 30 मार्च 1959 एज रिपोर्टेड इन हिज बुक "इण्डियन फारेन पॉलिसी" पृष्ठ-315

(3) हिन्दुस्तान नई दिल्ली, 21 अक्टूबर 1962 पृष्ठ-1

1965 के भारत-पाक युद्ध में चीन ने पाकिस्तान को खुलकर समर्थन दिया तथा भारतीय पक्ष की कटु आलोचना की । 1971 में बांग्लादेश के अभ्युदय के संदर्भ में भारत-पाक युद्ध में चीन का शत्रुतापूर्ण हाथ था । 11अप्रैल 1971 को चीन प्रतिक्रिया को व्यक्त करते हुए " पीपुल्स डेली" ने लिखा," कुछ समय से पाकिस्तान के बार-बार सख़्त विरोध की उपेक्षा करते हुए भारत सरकार ने पाकिस्तान के आन्तरिक मामलों में अधिकतम हस्तक्षेप किया है । [1]

1970 के दशक के आरम्भिक वर्षों में एक समय ऐसा आया जब चीन और भारत दोनों देशों को लगा कि तनाव में शिथिलता लायी जानी चाहिये । 1975 में टेबिल टेनिस की प्रतियोगिता कलकत्ता में हुई जिसमें चीनी खिलाड़ियों के एक दल ने भाग लिया । 1978 में वांग-चिन-नान के नेतृत्व में एक उच्चस्तरीय चीनी प्रतिनिधिमण्डल भारत आया । 12फरवरी, 1979 में प्रारम्भ होने वाली चीनी यात्रा को श्री बाजपेई ने " द्रोही मिशन " की संज्ञा दी ।

सीमा विवाद के हल पर 24 अक्टूबर, 1983 को भारत और चीन के वरिष्ठ अधिकारियों के मध्य नई दिल्ली में वार्ता का चौथा दौर सम्पन्न हुआ । 1984 को पाँचवा दौर बीजिंग में सम्पन्न हुआ । 1985 में भारत व चीन के मध्य छठे दौर की वार्ता नई दिल्ली में सम्पन्न हुई । पूर्वी क्षेत्र में सीमा निर्धारण के प्रश्न पर कुछ प्रगति हुई और पश्चिमी क्षेत्र में ऐसा कुछ नहीं हुआ ।

पिछले कुछ वर्षों में भारत -चीन व्यापार बढ़ने के साथ-साथ आर्थिक, शैक्षणिक, वैज्ञानिक आदि कुछ क्षेत्रों में दोनों देशों के प्रतिनिधि मण्डलों का आदान-प्रदान हुआ है । 1985 को भारत व चीन के बीच एक व्यापारिक समझौते पर हस्ताक्षर किये गये । 1985 में चीनी सैनिकों ने अरूणाचल प्रदेश के पश्चिमी सियांग जिले के कुछ नये क्षेत्रों में घुसपैठ की । 1988 में राजीव गाँधी की चीन की यात्रा और दिसम्बर91

---

(1) टाइम्प ऑफ इण्डिया, 13 अप्रैल 1971

में चीनी प्रधानमंत्री ली फेंग की भारत यात्रा के दौरान भी सीमा - विवाद को हल करने की दिशा में कोई खास प्रगति नहीं हो सकी सिवाय इसके कि दोनों राष्ट्र बार-बार शांतिपूर्ण तरीके से सीमा-विवाद को हल करने की सहमति व्यक्त करते रहे हैं ।

**पाकिस्तान** के संस्थापक कायदे आजम मुहम्मद अली जिन्ना के समय से ही देश पर, सैनिक अधिकारियों और अभिजात्य परिवारों के नौकरशाहों का शासन रहा है । फरवरी 1981 में पाकिस्तान की कई पार्टियों ने मिलकर लोकतंत्र की फिर से स्थापना के लिए " मूवमेंट फॉर दि रेस्टोरेशन ऑफ डेमोक्रेसी " की स्थापना की । इसमें शामिल पार्टियों के नाम तहरीक -ए- इस्तिकलाल, पाकिस्तान की पीपुल्स पार्टी , पाकिस्तान डेमोक्रेटिक पार्टी , पाकिस्तान नेशनल पार्टी , सिंधी अवामी तहरीक, कौमी महाज ए-आजादी , पाकिस्तान मुस्लिम लीग (रफैरूद्दीन ग्रुप ) जमाऊत ए- उलेमा -ए इस्लाम, मजदूर किसान पार्टी आल पाकिस्तान जम्मूं, कश्मीर मुस्लिम कांफ्रेस आदि प्रमुख है । इसके अतिरिक्त कुछ अन्य भी पार्टियाँ है मुस्लिम लीग और नेशनल प्रोग्रेसिव पार्टी आदि । पाकिस्तान में लोकतंत्र की बहाली आन्दोलन लगातार तेज होता गया और 1986 अगस्त में पाकिस्तान पीपुल्स पार्टी की नेता श्रीमती बेनजीर भुट्टो ने जनरल जिया को हटाये जाने की माँग को लेकर एक जोरदार अभियान शुरू किया । राष्ट्रपति जिया-उल-हक द्वारा पंजाब असेम्बली के वार्षिक समारोह में दिए गये वक्तव्य ने "पकिस्तान में ' सरकार के गठन ' के प्रश्न पर नये सिरे से बहस छेड़ दी। एक बार फिर से यह साबित हो गया कि जनरल जिया प्रतिनिधि शासन प्रणाली में परेशानी महसूस करते है ।[1]

11 वर्षों तक जनरल जिया के सैनिक शासन द्वारा कुचली गयी पाकिस्तानी जनता ने 16 नवम्बर को मौका पाते ही लोकतंत्र की वापसी और राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने के उद्देश्य से एक तिहाई जिया समर्थकों का सफाया करते हुये फौजी तनाशाही के विरूद्ध अपनी राय प्रकट की । साथ ही पाकिस्तान पीपुल्स

---

(1) दैनिक जागरण , 27 फरवरी 1988

पार्टी को अकेली सबसे बड़ी विजय पार्टी बनाकर इस बात का ऐलान कर दिया कि पाकिस्तान की जनता " इस्लामीकरण " के पक्ष में नहीं है । अपने देश के लिए एक महिला को अपना नेता बनाकर जनता के यह सिद्ध किया कि उसको उन फतवों से कुछ लेना-देना नहीं, जिसमें यह बताया गया कि इस्लामी देश की बागडोर महिला के हाथों में नहीं सौपी जानी चाहिए ।

किन्तु पाकिस्तान में लोकतंत्र कायम करने का तीसरा प्रयास उस समय अचानक समाप्त हो गया जब राष्ट्रपति गुलाम इसहाक खान ने 6 अगस्त 1990 को बेनजीर भुट्टो सरकार को बर्खास्त कर दिया ।[1] राष्ट्रपति ने बीस माह पूर्व सत्ता में आई बेनजीर सरकार की बर्खास्तगी को जायज ठहराते हुए उस पर संघीय अधिकारों के दुरूपयोग, तानाशाही और भ्रष्टाचार का आरोप लगाया है । उन्होंने कहा कि जनता का प्रशासन से विश्वास उठ गया है ।[2]

6 नवम्बर 1990 को पाकिस्तानी संसद के निचले सदन ने इस्लामी जम्हूदी इत्तेहाद के अध्यक्ष नवाज शरीफ को देश का नया प्रधानमंत्री चुन लिया गया। पाकिस्तान के संबंध में लोकतंत्र के स्थायित्व को लेकर शंकाएँ उठाने वाले पर्यवेक्षक इस बात पर ध्यान दिलाते है कि वहाँ सेना अभी तक शासन में हस्तक्षेप करती रहती है और राष्ट्रपति गुलाम इसहाक खान के साथ उनका गहरा राजनैतिक मेल-जोल है ।[2]

**पाकिस्तान ने संयुक्त राज्य अमेरिका** के साथ प्रारम्भ से ही अपने सम्बन्धों को सुदृढ बनाया क्योंकि एक तो पाकिस्तान सैनिक दृष्टि से अपने आपको सबल बनाना चाहता था और दूसरे, वह अपनी अर्थव्यवस्था को तहस-नहस होने से बचाना चाहता था । पाकिस्तान ने पश्चिमी देशों के साथ सैनिक गठबन्धन में बँध जाने का निर्णय लिया, इसका वास्तविक कारण "साम्यवाद का विरोध नहीं " था बल्कि -पश्चिमी देशों

---

(1) दैनिक हिन्दुस्तान " पाकिस्तानी प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो बर्खास्त " 7 अगस्त 1990 पृ-

(2) - वही -

(3) दैनिक हिन्दुस्तान दक्षिण एशिया में लोकतंत्र का भविष्य , सुरेन्द्र मोहन 5 मार्च 1992

विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका के सैनिक गठबन्धनों में बंधकर पाकिस्तान भारत को आंतकित करना चाहता था एवं भारत के विरूद्ध पश्चिमी राष्ट्रों का समर्थन प्राप्त करना चाहता था ।[1] 1955 में उसने अमेरिका और टर्की के साथ पारस्परिक सुरक्षा की संधि कर ली तथा वह बगदाद पैक्ट " सेन्टो " और " सीटों " में सम्मिलित हो गया।[2] पाकिस्तान को अपनी इस नीति के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका से सैनिक एवं आर्थिक सहायता मिलना प्रारम्भ हो गयी ।

1950 के बाद एवं 1960 से पूर्व पाकिस्तान ने अपनी रूचियों के अनुकूल अपने नेतृत्व को राष्ट्रीय सुरक्षा एवं अन्तर्राष्ट्रीय समुदायों के अपने मित्रों की ओर मोड़ा जिससे वह अपने बड़े भाई भारत एवं उसकी सैन्य शक्ति के भय से बचे ।[3] पाकिस्तान ने पश्चिमी एशिया में " आइजनहावर सिद्धान्त " का स्वागत किया । उसने अमेरिका को अपनी भूमि पर सैनिक अड्डे स्थापित करने की अनुमति प्रदान की । 1957 में सैनिक संधियों का औचित्य बताते हुए तात्कालिक पकिस्तानी प्रधानमंत्री सुहरावर्दी ने कहा " वे पाकिस्तान के लिये आवश्यक है क्योंकि उस पर भारत के आक्रमण का संकट सदा बना हुआ है । जिस देश पर आक्रमण की संभावना हो वह सैनिक संधियों से पृथक रहने की नीति का अनुसरण नहीं कर सकता ।"

12 जनवरी 1961 को करॉची में तत्कालीन अमेरिकी उपराष्ट्रपति जॉनसन की पाकिस्तान यात्रा के अवसर पर करॉची में पाकिस्तान एवं अमेरिका के मध्य प्रमाण पत्रों के आदान-प्रदान द्वारा एक संधि की पुष्टि की गयी । अमेरिका को प्रसन्न रखने के लिए पाकिस्तान ने खुलकर सोवियत विरोधी नीति का अनुसरण किया ।

1971 के भारत पाकिसतान युद्ध के समय अमेरिका ने पाकिस्तान को शास्त्र प्रदान किए । अमेरिकन विदेश मंत्रालय के एक प्रवक्ता राबर्ट मेक्लोस्की ने कहा-

---

(1) डॉ दीनानाथ वर्मा, " अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध, पृष्ठ - 342

(2) एस0ए0 खालिक, " पाकिस्तान पीस एण्ड वार " पृष्ठ -77

(3) -वही - पृष्ठ 78

" चूँकि पाकिस्तान की सरकार इन हथियारों का प्रयोग अपने देश की अखण्डता की रक्षा के लिए कर रही है, इसलिए इस हेतु अमेरिका की सरकार इनके प्रयोग की पाकिस्तान की सरकार को मनाही नहीं कर सकती है ।"[1] अप्रैल 1977 में भी भारत सरकार ने अमेरिकी सरकार से इस बात पर चिन्ता प्रकट की कि वह पाकिस्तान को हथियार दे रही है ।

वर्तमान समय में भी पाकिस्तान व अमेरिका सम्बन्ध अत्यधिक निकटतापूर्ण हैं । अमेरिका अपनी विस्तारवादी नीति के कारण पाकिसतान से निकटवर्ती सम्बन्ध बनाये हुए है और पाकिसतान भी अपनी सैन्य शक्ति में वृद्धि करने की इच्छा से संयुक्त राज्य अमेरिका से निरंतर आर्थिक सहायता एवं हथियार प्राप्त करता रहता हैं।

**पाकिस्तान के प्रारम्भ में सोवियत संघ से सम्बंध** भी सामान्य थे । पाकिस्तान ने तटस्थता की नीति अपनाई थी क्योंकि वह समस्त देशों से आर्थिक एवं सैनिक सहायता प्राप्त करने का इच्छुक था किन्तु सोवियत संघ के साथ उसके सम्बन्ध अधिक दिनों तक मधुर न रह सके । इसका मुख्य कारण पाकिस्तान का पशिचमी देशों के प्रगति झुकाव था । कश्मीर के मसले पर श्री खुश्चेव ने कहा, " कश्मीर के लोग साम्राज्यवादी शक्तियों के हाथ में खिलौना नहीं बनना चाहते हैं परन्तु कुछ शक्तियाँ कश्मीर के मामले पर पाकिस्तान के समर्थन का बहाना लेकर यही कर रही है।xxx कश्मीर का प्रश्न भारतीय गणराज्य का प्रश्न है और इसका कश्मीर के लोगों ने पहले ही निर्णय कर दिया है ।"[2]

1960 के पश्चात् रूस और पाकिस्तान के सम्बन्धों में एक मोड़ आया और इनकें मध्य मधुर सम्बन्धों में वृद्धि हुई ।[3] 1965 के भारत-पाक युद्ध में रूस ने भारत और पाकिस्तान के बीच मध्यस्थता करने और युद्ध से उत्पन्न हुई समस्याओं को

---

(1) दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 4 अप्रैल 1971

(2) कुलदीप नय्यर " डेस्टेंट नेबर्स" पृष्ठ-82

(3) एस0 ए0 खालिक " पाकिस्तान पीस एण्ड वार "पृष्ठ 78

निपटाने का निश्चय किया ताकि वह दोनों देशों की सद्भावना प्राप्त कर सके । इसलिए उसने 1966 में ताशकन्द में पाकिस्तान और भारत के प्रतिनिधियों का एक शिखर सम्मेलन बुलाया ।[1] किन्तु लगातार अमेरिका से पाकिस्तान को शस्त्र आपूर्ति की देखकर अक्टूबर 1970 में रूस ने पाकिस्तान को शस्त्र देना बन्द कर दिया । विश्व में विशेषतया उपमहाद्वीप में अमेरिका और चीन के बढ़ते हुए प्रभाव को देखकर रूस ने भारत से संधि करना,उपयुक्त समझा । 1971 के भारत-पाक युद्ध में पाकिस्तान को दोषी ठहराया । तात्कालिक , सोवियत प्रधानमंत्री कोसीगिन ने कहा-

"पाकिस्तान ने अपने देश में प्रजातन्त्रीय शक्तियों का हनन किया है । उन्होंने वर्तमान संघर्ष को शान्तिपूर्ण ढंग से हल करने की अपील की ।"[2]

सोवियत संघ को अल्प समय में ही यह विश्वास हो गया था कि पाकिस्तान उसका विश्वस्त मित्र नहीं बन सकता, इसलिए वह शीघ्र ही पाकिस्तान से विमुख हो गया किन्तु पाकिस्तान सोवियत संघ को भी अपने पक्ष में करने का प्रयास करता रहा । संयुक्त राष्ट्र सुरक्षा परिषद में सोवियत संघ के विरोध के कारण पाकिस्तान की कश्मीर सम्बन्धी मनोकामना पूर्ण नहीं हो पायी । अतः पाकिस्तान अपनी नीति को परिवर्तित करके सोवियत संघ को पक्ष में करने के लिऐ प्रयास करता रहा किन्तु अमेरिका से पाकिस्तान की घनिष्ट मित्रता के कारण ऐसा संभव नहीं हो पाया । इसके अतिरिक्त चीन और पाकिस्तान के बढ़ते सम्बन्धों को भी सोवियत संघ शंका की दृष्टि से देखता रहा ।

प्रारम्भ में **पाकिस्तान और चीन सम्बन्ध** मधुरता लिए हुए नहीं थे । 1949 से जब चीन एक धर्मनिरपेक्ष राज्य के रूप में विश्व के समक्ष आया तो पाकिस्तानी नेताओं ने उसे संदेह की दृष्टि से देखा । इसके अतिरिक्त पाकिस्तान भारत को अपना दुश्मन मानता था और चीन और भारत सम्बन्ध अत्यन्त मधुर थे । अमेरिका

---

(1) आर0सी0 अग्रवाल , " भारत की विदेशनीति " पृष्ठ- 139

(2) नवभारत टाइम्स, 6 दिसम्बर 1971 पृष्ठ-1

ने जब चीन विरोधी सैनिक संगठनों का निर्माण किया तो पाकिस्तान उसमें शामिल हो गया किन्तु पाकिस्तान चीन के महत्व को भी समझता था । जब चीन भारत का सीमा विवाद को लेकर 1962 का युद्ध हुआ और अमेरिका और ब्रिटेन ने जिस भाव से भारत की सहायता की उसमे पाकिस्तान को चीन पर निर्भर करने में और भी मदद की । पाकिस्तान चीन के सम्बन्ध दिन प्रतिदिन गहरे होते गये । दोनों के मध्य व्यापार समझौते हुए । एक सीमा समझौता भी हुआ जिसमें पाकिस्तान ने कश्मीर की भूमि का एक हिस्सा चीन को देकर मित्रता दृढ़ कर ली। 1965 और 1971 के भारत पाकिस्तान युद्ध में चीन ने पाकिस्तान को पूरा समर्थन दिया 1971 के युद्ध में ची पेंग फी का कहना था - " कुछ समय से भारत सरकार ने बहुत भद्दे ढंग से पाकिस्तान के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप किया है । चीनी सरकार और जनता को उपमहाद्वीप में वर्तमान तनाव पर भारी चिन्ता है । हमारी यह धारणा है कि प्रत्येक देश के आन्तरिक मामले उसकी अपनी जनता द्वारा ही सुलझाये जाने चाहिए । पूर्वी पाकिस्तान का प्रश्न पाकिस्तान का आँन्तरिक मामला है और उसके लिए उसका उचित हल पाकिस्तान के लोगों द्वारा स्वयं निकालना चाहिए, और कोई अन्य देश किसी देश के मामलों में हस्तक्षेप करे , यह पूर्णतया निषिद्ध है ।"[1] भारत के द्वारा पराजित होने पर नये राष्ट्रपति श्री भुट्टो ने फरवरी 1972 में दोनों के लिए चीन की यात्रा की । चीनी नेताओं ने उन्हें आर्थिक व सैनिक सहायता देते रहने का आश्वासन दिया । 1972 के भारत-पाकिस्तान शिमला समझौता के बाद भी पाकिस्तान पर चीन का प्रभाव पूर्ववत् कायम रहा । अगस्त, 1972 में संयुक्त राष्ट्र संघ की समिति में बांग्लादेश के प्रार्थना पत्र पर जब विचार शुरू हुआ तों अंत में जब सुरक्षा परिषद में इस प्रार्थना पत्र पर मतदान हुआ तो चीन ने वीटो का प्रयोग करके बांग्लादेश के प्रवेश को तत्काल के लिए रोक दिया । यह दोनो देशों के मध्य बढ़ती हुई मित्रता का द्योतक है ।

---

(1) पीकिंग रिव्यू, 12 नवम्बर 1971

वर्तमान समय में चीन के साथ पाकिस्तान के घनिष्ठ सम्बन्ध हैं। पाकिस्तान भारत को हानि पहुँचाने वाले और कठिनाई में डालने वाले प्रत्येक देश और प्रत्येक संगठन से गठबन्धन करने को तत्पर है ।

**बांग्लादेश** जो 1947 से पूर्व पूर्वी पाकिस्तान था, 1971 में अस्तित्व में आया । 1972 में एक घोषणा के जरिये " राष्ट्रवाद ", " समाजवाद " " जनतंत्र " और " धर्मनिरपेक्षता " पर आधारित प्रणाली की घोषणा हुई जिसमें 1973, 1974 , 1975, 1977 , 1979 और 1981 में संशोधन किया गया ।

1975 में देश के प्रथम राष्ट्रपति जो बाद में प्रधानमंत्री पद पर थे, की हत्या की गयी । तत्पश्चात् सैनिक विद्रोहों का सिलसिला प्रारम्भ हुआ और जियाउर्रहमान सत्ता में आये । नवम्बर, 1979 तक देश में आपातस्थिति और मार्शल लॉ लागू रहा । मई, 1981 में एक चुनाव के जरिये कार्यकारी राष्ट्रपति अब्दुल सत्तार राष्ट्रपति बने । 24 मार्च, 1982 को एक सैनिक विद्रोह हुआ और मुख्य मार्शल लॉ प्रशासक के रूप में लेफ्टीनेंट जनरल इरशाद ने देश की बागडोर संभाली । अक्टूबर में वह प्रधानमंत्री बने और दिसम्बर 1983 में राष्ट्रपति । अक्टूबर, 1986 में देश में आमचुनाव हुए और जनरल इरशाद की जातीय पार्टी को जबरदस्त बहुमत मिला । देश- विदेश के लगभग समस्त अखबारों में चुनाव में की गयी धाँधली का पर्दाफ़ाश किया गया ।

तत्पश्चात् 27 फरवरी 1991 को बांग्लादेश में 300 सीटों की संसद के लिए प्रथम बार स्वतंत्र चुनाव हुआ । चुनाव परिणामों में किसी भी दल को निर्णायक सफलता नहीं मिली । श्रीमती बेगम खालिदा जिया की नेशलिस्ट पार्टी सबसे बड़े दल के रूप में उभर कर आई । वर्तमान समय में बांग्लादेश में वे ही प्रधानमंत्री पद पर आसीन हैं।

बांग्लादेश में अनेकों दल है, जिसमें प्रमुख हैं- आवामी लीग, डेमोक्रेटिक लीग, बांग्लादेश मुस्लिम लीग, बांग्लादेश कम्युनिस्ट पार्टी, नेशनल आवामी पार्टी, पीपुल्स लीग, साम्यवादी दल, यूनाइटेड पीपुल्स पार्टी, बांग्लादेश डेमोक्रेटिक मूवमेंट , बांग्लादेश जातीय लीग , गण आजादी लीग, जातीय जनता पार्टी और जातीय समाजतांत्रिक दल ।

**बांग्लादेश एवं संयुक्त राज्य अमेरिका** के सम्बन्ध वर्तमान समय में अति मधुर है । बांग्लादेश उपमहाद्वीप में शांति को स्थापित रखने का समर्थक है । दुर्भाग्य से संयुक्त राज्य अमेरिका व चीन की दिलचस्पी इस क्षेत्र में किसी न किसी बहाने अशांन्ति को बनाये रखने में है । विदेश मंत्री अब्दुल समद आजाद ने एक वक्तव्य में यह बात स्पष्ट की थी कि पाकिस्तान की भाँति बांग्लादेश पश्चिम एशिया के देशों की ओर प्रेरणा के लिए नहीं देख सकता ।

बांग्लादेश ने जहाँ एक ओर सोवियत संघ के साथ मैत्री बनाये रखा, वहाँ उसने पश्चिमी देशों के साथ भी अपने सम्बन्धों को सामान्य बनाने का प्रयत्न किया है । बांग्लादेश के लिए ऐसी मित्रता कायम रखना इसलिए भी आवश्यक था क्योंकि अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए उसे समस्त देशों से आर्थिक, सहायता की आवश्यकता थी । 1971 में अमेरिका राष्ट्रपति के विशेष सलाहकार जार्ज कॉनोली ने ढ़ाका की यात्रा की और उस अवसर पर उन्होंने बांग्लादेश को अमेरिकी आर्थिक सहायता का संकेत दिया था ।

अमेरिका जिस प्रकार पाकिस्तान को अड्डे के रूप में प्रयोग कर रहा है, उसी तरह स्वार्थसिद्धि के लिए वह बांग्लादेश की भी अपने प्रभाव में लेना चाहता है। विशेषरूप से बांग्लादेश पर अमेरिका का प्रभाव 1975 में पड़ा और अधिक मात्रा में सहायता देने के कारण यह प्रभाव बढ़ता गया । बांग्लादेश को अमेरिकी सहायता 1984 में 164.6 करोड़ डालर तथा 1985 में 180.1 करोड़ डालर मिली[1] वर्तमान समय

---

(1) यू0एस0बाजपेई, " इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहूड " पृष्ठ-295

में बाँग्लादेश व अमेरिका के सम्बन्ध अति निकटतापूर्ण बन गये हैं।

यथार्थ में बांग्लादेश की यह आकांक्षा थी कि **सोवियत संघ व बांग्लादेश सम्बन्ध** सौहार्दपूर्ण हों । सोवियत संघ ने बांग्लादेश के मुक्ति संघर्ष का समर्थन दिया था और बाद में उसे राजनयिक मान्यता प्रदान करने वाले देशों में भी वह प्रथम था। मार्च, 1972 में शेख मुजीबुर्रहमान ने सोवियत संघ की यात्रा की थी और इस यात्रा के दौरान उन्होंने जो बातचीत सोवियत नेताओं के साथ की उससे यह स्पष्ट था कि लगभग सभी अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्नों पर दोनों देशों के नेताओं के मध्य मतैक्य पाया जाता था।[1]
किन्तु पिछले कुछ वर्षों से अमेरिका, चाइना और साऊदी अरब से बढ़ते सम्बन्धों के कारण बांग्लादेश व रूस के सम्बंध शिथिलतापूर्ण चल रहे थे किन्तु फिर भी बांग्लादेश को आर्थिक एवं तकनीकी सहायता भी सोवियत संघ से प्राप्त थी ।[2]

शेख मुजीब ने भारत और सोवियत संघ के साथ मैत्री को बांग्लादेश की विदेशनीति का आधार घोषित किया था किन्तु उनके उत्तराधिकारियों ने अपनी विदेशनीति में इन महत्वपूर्ण पहलुओं को भी तिलांजलि दे दी है । जनरल इरशाद पश्चिमी शक्तियों की सेवा में रत रहे । पश्चिमी देशों की विशेषतः संयुक्त राज्य अमेरिका की विदेशनीति को कार्यान्वित करने के उद्देश्य से उन्होंने सोवियत संघ पर बांग्लादेश में सरकार विरोधी आन्दोलनों को अनुप्राणित करने का आरोप 1983 में लगाया था, जबकि यह सर्वविदित है कि इन आन्दोलनों के मूल में उनका स्वयं का तानाशाही शासन था । स्पष्ट है कि बांग्लादेश व सोवियत संघ के सम्बन्ध उतने निकटवर्ती नहीं रहे जितनी आशा की जाती रही । प्रारम्भ में इनके प्रगाढ़ मैत्री के सम्बन्ध थे किन्तु अमेरिका की ओर झुकाव के कारण बांग्लादेश सोवियत संघ से दूरी बरतने लगा।

---

(1) डी0सी0चतुर्वेदी अन्तर्राष्ट्री सम्बन्ध पृष्ठ- 162

(2) यू0एस0 बाजपेई " इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहूड पृष्ठ -295

**बांग्लादेश एवं चीन सम्बन्ध** प्रारम्भ में मतभेदों से पूर्ण थे । बांग्लादेश के अभ्युदय के साथ ही चीन ने खुले रूप से पाकिस्तान की नीतियों का समर्थन किया था । उसने पाकिस्तान का पर्याप्त मात्रा में युद्ध के लिए शस्त्र भी प्रदान किये थे । चाऊ एन लाई ने अपने संदेश में राष्ट्रपति याहृया खाँ को लिखा था कि " चीनी सरकार की यह धारणा है कि पाकिस्तान में जो हो रहा है वह पूर्ण रूप से पाकिस्तान का आन्तरिक मामला है । ---- महामहिम, आप विश्वास रखिये यदि भारतीय विस्तारवादी पाकिस्तान के विरूद्ध आक्रमण शुरू करेंगे, तो चीनी सरकार तथा जनता पाकिस्तान की सरकार तथा जनता की राष्ट्रीय स्वतंत्रता तथा प्रभुसत्ता को सुरक्षित रखने के न्यायोचित संघर्ष को अपना दृढ समर्थन देगी । "[1]

बांग्लादेश में हुए भीषण नरसंहार को देखकर मौलाना भाषानी ने चीन के नेता माओत्से-तुंग को लिखा कि " समाजवाद का सिद्धान्त अत्याचार के विरूद्ध लड़ाई पर आधारित है । यदि चीन सरकार ने पाकिस्तान की सैनिक तानाशाही के घोर अत्याचारों के विरूद्ध आवाज नहीं उठाई , तो संसार यह सोचेगा कि आप अत्याचारों से पीड़ित लोगों के मित्र नहीं हो । "[2]

मौलाना भाषानी की इस अपील का चीन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा । उसने पाकिस्तान का समर्थन जारी रखा ।

इस प्रकार प्रारम्भ में चीन व बांग्लादेश सम्बन्ध तनावपूर्ण रहे किन्तु भारत और सोवियत संघ सम्बन्धों को ध्यान में रखकर अगस्त 1975 में बांगलादेश और चीन के सम्बन्धों में वृद्धि हुई । चीन ने बांग्लादेश को सर्वाधिक हथियार प्रदान किया तथा बड़ी संख्या में बांग्लादेश के सैनिकों ने चीन से प्रशिक्षण प्राप्त किया।[3]

---

(1) आर0सी0 अग्रवाल " भारत की विदेशनीति " पृष्ठ-170

(2) हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली, 23 अप्रैल 1971 - पृष्ठ -6

(3) यू0एस0 बाजपेई " इण्डिया एण्ड इट्स नेबर हूड " पृष्ठ-296

वर्तमान समय में चीन व बांग्लादेश सम्बन्ध मधुरतापूर्ण है ।

**नेपाल** में भी शक्ति को सुरक्षित बनाये रखना और उसको कायम रखना सत्ताधारी शाह वंश का प्रमुख लक्ष्य आज भी उतना ही प्रभावी है जितना कि 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में था । उस समय इस वंश के महान शासक पृथ्वी नारायण शाह ने अपने शासन को एक छोटे से गोरखा इलाके से विस्तार करके आधुनिक नेपाल तक वृद्धि की । इस सत्ता को कायम रखने के तौर तरीके बदलती हुई चुनौतियों के साथ महत्वपूर्ण परिवर्तनों से होकर गुजरे । भारत ने ब्रिटिश सत्ता का अभ्युदय और उसके सुदृढ़ीकरण, जिसने नेपाल में रखा लोगों को एक निर्भर योग्य मित्र पाया, ने राजतंत्र का राजनैतिक विनाश करने का प्रयास किया नेपाल राजतंत्र को इस गृहण से छुटकारा 1950-51 में हुआ ।[1]

इस मुक्ति में भारत ने और कांग्रेस के नेतृत्व वाली प्रजातांत्रिक शक्तियों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । 1950-51 के परिवर्तन ने राजा की सत्ता तथा प्रस्थिति की पूर्णरूपेण पुर्नस्थापना की, इसने प्रजातांत्रिक शक्तियों और आकांक्षाओं को उत्पन्न करने में महान योगदान दिया ।[2]

राजा त्रिभुवन जो इस पुर्नस्थापना के प्रतीक थे, उन्होंने तुरन्त लोकप्रिय वैधानिकता की अवधारणा को वंशानुगत राजतंत्र के एक जीवन्त अंग के रूप में स्वीकार किया । उनके उत्तराधिकारी राजा महेन्द्र ने कुछ वर्षो तक इस अवधारणा को बनाये रखा और यहाँ तक कि 1961 में प्रथम संसदीय सरकार का गठन किया लेकिन वे प्रतिनिधि मंडल वाली संस्थाओं और चुने हुए शासक अभिजात्य के प्रति सदैव उदासीन प्रतीत हुए । 1960 में उन्होंने लोकप्रिय सरकार को भंग कर दिया उसके प्रधानमंत्री बी0पी0 कोइराला और उनके साक्षियों को बन्दी बना लिया और ससंदीय लोकतंत्र की

---

(1) यू0एस0 बाजपेई " इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहूड " पृष्ठ - 310

(2) -वही- ।

संवैधानिक व्यवस्था को निलम्बित कर दिया और अपना प्रत्यक्ष शासन थोप दिया ।[1]

200 वर्षों पुरानी राजशाही के खिलाफ निर्णायक आन्दोलन पिछली 18 फरवरी, 1990 को शुरू हुआ था । इस आन्दोलन का परिणाम था कि 8 अप्रैल, 1990 को समझौते के माध्यम से आन्दोलन को समाप्त कर लोकतंत्र की संसदीय व्यवस्था स्वीकार की गयी तथा देश को नया संविधान दिया गया, जिसके तहत 12 मई, 1991 को बहुदलीय व्यवस्था पर आधारित लोकतांत्रिक चुनाव सम्पन्न हुआ । इस प्रकार नेपाल में एक विधिवत् निर्वाचित सरकार ने भ्रष्ट पार्टी विहीन पंचायती व्यवस्था को समाप्त कर लोकतंत्र की भव्य इमारत की शुरूवात की । वर्तमान समय में बी0पी0 कोईराला के छोटे भाई गिरिजा प्रसाद कोईराला प्रधान मंत्री पद पर आसीन है।

**नेपाल एवं संयुक्त राज्य अमेरिका** के सम्बन्ध मधुर रहे हैं । विश्व स्तर पर नेपाल ने सामन्वयतः पश्चिमी परख विदेशनीति अपनाई है । कम्पूचिया तथा अफगानिस्तान जैसे मामलों पर राष्ट्रपति रीगन के द्वारा दिसम्बर 1983 में राजा वीरेंद्र की अमरीकी यात्रा के दौरान नेपाल की धारणा का स्वागत किया । ग्रेनाडा तथा लेबनान में अमरीका के हस्तक्षेप के मामले में नेपाल ने मन्द स्वर में आलोचना की थी । हिन्दचीन को शांति क्षेत्र के रूप में सुरक्षित रखने के विषय में नेपाल का समर्थन मात्र औपचारिक है ।

भारत , चीन तथा कुवैत को छोड़कर नेपाल की सभी द्विपक्षीय आर्थिक सहायता अमरीका तथा उसके पश्चिमी राष्ट्रों से प्राप्त होती है । अमरीका ने उच्च सहायता देने वाले देशों में भारत को पीछे छोड़ दिया तथा इसके अतिरिक्त अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, अन्तर्राष्ट्रीय विकास संघ तथा विश्व बैंक से उदारवादी सहायता की है।[2] पश्चिमी सहायता की बहुत बड़ी धनराशि सामाजिक तथा पंचायती सेवाओं, सामुदायिक सर्वेक्षण तथा भूमि सुधार जैसे तात्कालिक राजनैतिक क्षेत्रों को दी गयी हैं। इन क्षेत्रों में

---

(1) यू0एस0बाजपेई, इण्डिया एण्ड इट्स नेबरहूड" पृष्ठ ।

(2) एस0डी0मुनि, " नेपाल " पृष्ठ 330

संलग्न होने के माध्यम से अमरीका के प्रभाव के द्वारा राजा को अपने प्रभाव को मजबूत बनाने तथा पंचायत प्रणाली को सुस्थिर बनाये रखने में सहायता दी है । अमरीका ने नेपाल की उच्चतम नीतियों को निर्धारित करने में काफी प्रभाव डाला है। एक ऐसा प्रभाव जिसने अमरीका तथा पश्चिमी कम्पनियों की व्यापारिक हितों की वृद्धि के लिए निरन्तर प्रयोग किया जा सकता है ।

**नेपाल एवं सोवियत संघ सम्बन्ध** सामान्य रहे है । छठवें दशक के दौरान उसके सम्बन्ध काफी निकटता के थे । जब राजा प्रजातांत्रिक शक्तियों से जूझ रहे थे तथा अपने घरेलू राजनैतिक मामलों में साम्यवादियों को प्रश्रय दे रहे थे, उस समय सोवियत संघ सम्पूर्ण नेपाली सहायता का 5% प्रदान करता था । 1977 तथा 1979 के मध्य नेपाल तथा सोवियत संघ के आपसी सम्बन्धों में अल्पावधि के लिए एक गर्मजोशी उस समय प्रकट हुई जब राजा को भारत तथा अमरीका के दबाव के कारण नेपाली कांग्रेस के साथ सामंजस्य बनाये रखने को कहा गया ।[1] जनमत संग्रह के संकट के पूर्वकाल से ही , जिसमें सोवियत प्रभाव का बहुत संदेह किया जाता था, यह सम्बन्ध ठंडे पड़ गये है । तभी से सोवियत सहायता की कोई वचनबद्धता नहीं हुई है फिर भी सोवियत संघ ने काठमाण्डू में एक विशाल मिशन स्थापित किया था । स्पष्टतः इस कारण से कि चीनी तथा अमरीकी उपस्थिति का सामना किया जा सके ।

राजा घरेलू राजनीति में रूसी प्रभाव के प्रति पूर्ण सजग है, यद्यपि यह प्रभाव महत्वहीन प्रतीत होता है ।

**नेपाल एवं चीन के सम्बन्ध** प्राचीनकाल से ही अति निकटतापूर्ण रहे है। नेपाल अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में एक स्वतन्त्र पहचान बनाना चाहता था । क्षेत्रीय स्तर पर नेपाल ने क्षेत्रीय विरोधाभासों का चोरी-चोरी शोषण किया है तथा नेपाल को अधिक क्षेत्रीय स्वायत्तता और मोल-तोल का अवसर मिले, इस नीति की शुरूवात करते हुये राजा महेन्द्र के द्वारा जुलाई 1955 में चीन के साथ कूटनीतिक सम्बन्धों की स्थापना के

---

(1) एस0डी0 मुनि " नेपाल " पृष्ठ-33।

साथ हुई । 1960 में चीन के साथ मित्रता संधि के हस्ताक्षर के साथ ही नेपाल ने सीमा समझौता किया । काठमांडू को तिब्बत की सीमा के कोडारी कस्बे को जोड़ने वाली सड़क के निर्माण पर हस्ताक्षर किये । यह नेपाल की प्रथम उत्तर दक्षिण सड़क थी और यह संधि प्राकृतिक हिमालयी सीमा को लेकर एक गम्भीर बात के रूप में देखी जा सकती थी।

यह ध्यानाकर्षण तथ्य है कि इस अवधि के दौरान राजा साम्यवादियों के समर्थन को प्राप्त करने में घरेलू रूप से लगे थे । उदारवादी आर्थिक सहायता के साथ-साथ चीन ने नेपाल के राजा की घरेलू नीतियों के प्रति राजनैतिक समर्थन देकर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की । छठवें दशक के अंत तक चीन नेपाल को आर्थिक सहायता, अनुदान देने वालें तीसरे देश के रूप में उंभरा जिसके अर्न्तगत चीन ने सम्पूर्ण सहायता का 8% या 9.% प्रदान किया । तराई के इलाके को विशेषतः ध्यान में रखते हुए चीन ने उन क्षेत्रों में सहायता देने पर प्राथमिकता दी जिनमें भारत अधिक सक्रिय था। अभी तक उसकी यह प्रतिक्रिया जारी है । मार्च, 1984 में अपनी नेपाली यात्रा के दौरान चीन के राष्ट्राध्यक्ष ने बागलुंग तथा पोखरा को जोड़ने वाली उत्तर दक्षिण सड़क के लिए चीनी सहायता की पेशकश की । 60के दशक के दौरान अधिकारी वर्ग के सम्बन्धों के अतिरिक्त चीन ने अपने जन-जन के सम्बन्धों को बढ़ाने की कोशिशे की थीं ताकि राजशाही में साम्यवादी समूहों को समर्थन दिया जा सके । यद्यपि इस क्षेत्र में कमी आई फिर भी साम्यवादी संगठनों से जुड़ाव पूरी तरह से नष्ट नहीं हुआ । वर्तमान समय में पुनः चीन का प्रभुत्व देखा जा सकता है जिसकी वजह से भारत-नेपाल सम्बन्धों में एक बहुत बड़ी दरार आ गयी ।

---

भारत - नेपाल सम्बन्धों में सुधार के पश्चात् अब नेपाल चीन सम्बन्ध उतने अधिक निकट प्रतीत नहीं होते, जितने पूर्व में थे । प्रधानमंत्री गिरिजा प्रसाद कोइराला ने स्पष्ट कहा कि उनके देश को अब भविष्य में अपनी सुरक्षा के लिए चीन पर निर्भर रहने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी ।[1]

भूटान ने एक राष्ट्र के रूप में अपना निजी व्यक्तित्व स्थापित करने के लिए 3 शताब्दियों से आन्तरिक तथा बाह्य समस्या का सामना किया । भूटान में सदैव नृपतंत्र रहा है । पिछले अनेक वर्षो से वाँगचुक ने शासन-कार्य में जन सहयोग प्राप्त करने के उद्देश्य से एक राष्ट्रीय सलाहकार सभा का गठन किया है । इस सभा को शोंगडू " कहा जाता है ।[2] इसमें करीब 25% सदस्य राजा द्वारा नियुक्त सरकारी अधिकारी रहते है । इसके अतिरिक्त इसमें राजा की निजी परिषद् के सदस्यों और लामाई मठों के धर्मगुरूओं का समावेश किया गया है । सभा के करीब आधे सदस्यों दूर दूर फैले ग्रामों व ग्राम-समूहों के प्रतिनिधि होते हैं । इन्हें वहाँ के स्थानिक निवासी चुनकर भेजते हैं । इस प्रकार " शोंगडू" के परामर्श पर राजा अपनी निजी परिषद के द्वारा शासन करता है ।[3] सातवें दशक के उत्तरार्द्ध में भूटान में प्रशासनिक तथा राजनैतिक कुछ महत्वपूर्ण परिवर्तन देखने को मिले । मंत्रियों को नियुक्त करने और हटाने की शक्तियाँ राष्ट्रीय सभा को दी गयीं । यहाँ तक कि कुछ परिस्थितियों में यह सभा राजा को भी हटा सकती थी । शाही सलाहकारी परिषद जो प्रमुखों की एक संस्था है, को प्रशासन की कार्यप्रणाली देखने का अधिकार दिया गया और राजा को सलाह देने का भी अधिकार उसे दिया गया तथा लोक-सेवाओं को पुर्नगठित किया गया ।

भूटान की राजव्यवस्था वंशानुगत राजतंत्र पर आधारित है । निरंकुशता पर अंकुश रखने के लिए ऐसी व्यवस्था की गयी कि सम्राट हर तीन वर्ष बाद विश्वास मत प्राप्त करता था । जबसे जिग्में वांगचुक सम्राट बने तब से इस प्रथा को समाप्त कर दिया गया ।[4]

---

(1) जनसत्ता, नई दिल्ली "नेपाल की सुरक्षा अब नेपाल की सुरक्षा अब चीन पर निर्भर नहीं 7 दिसम्बर 1991 पृष्ठ-1

(2) बसन्त कुमार सराफ "भारत एवं आधुनिक विश्व" पृष्ठ-123

(3) --- वही --- पृष्ठ- 123

(4) पब्लिक एशिया, 1-15 जून 1990 पृष्ठ-47

भूटान के शासन का संचालन सम्राट के प्रत्यक्ष नियंत्रण में होता है । कोई ऑपचारिक मंत्रिमंडलीय ढाँचा अस्तित्व में नहीं है । बावजूद इसके सम्राट चार मंत्रियों की नियुक्ति करता है जो प्रमुख नीति निर्माण करने वाली निकाय समन्वय समिति के सदस्य होते हैं। इस 12 सदस्यीय समिति में उच्च स्तर के मंत्रिमंडलीय अधिकारी के साथ-साथ राजकीय परिषद के प्रतिनिधि तथा आर्थिक मामलों के दो भारतीय सलाहकार होते हैं । आर्थिक एवं प्रशासनिक समस्याओं को जाँच रिपोर्ट सीधे सम्राट को जाती है । वह इसे मानने या अस्वीकार करने के लिए स्वतंत्र है । लेकिन विभिन्न विभागों के नीतिगत मामलों की स्वीकृति के लिए शोंगडू (राष्ट्रीय सभा) के समक्ष वर्ष में कम से कम एक बार उपस्थित होना पड़ता है ।[1] भूटान की राज व्यवस्था के अन्तर्गत वहाँ किसी राजनैतिक दल का अस्तित्व नहीं है ।

पूर्वी यूरोप , सोवियत संघ , दक्षिणी अफ्रीका एवं नेपाल के बाद लोकतंत्र की लहर अब भूटान पहुँच गयी है । जिसमें वांगचुक द्वारा नियंत्रण एवं सावधानी बरतने की कोशिशों के बावजूद लोकतंत्र की माँग पूरे देश में फैल रही है । हॉलाकि आन्दोलन अभी राष्ट्रीय स्तर का संगठित नहीं हो सका है लेकिन छुटपुट विरोध एवं प्रदर्शन से राजतंत्र पर दबाव बढ़ता जा रहा है ।

**भूटान एवं संयुक्त राज्य अमेरिका** में कोई प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित नहीं हैं। भूटान दक्षिण एशिया का एक ऐसा देश है जहाँ यह माना जाता है कि वहाँ पूर्ण रूप से शान्ति है। कोई वैसी राजनीतिक उथल - पुथल नहीं है, जैसी श्रीलंका, बांग्लादेश, पाकिस्तान एवं नेपाल या भारत में है लेकिन यह सच नहीं है । भूटान 1952 से न कभी शान्त था और न ही राजनीतिक उथल पुथल से अछूता । वहाँ के अशान्त वातावरण को बार-बार भारत की मध्यस्थता से शान्त कर दिया जा रहा है ।[2]

---

(1) पब्लिक एशिया, 1-15 जून 1990 पृष्ठ -47

(2) इतवारी पत्रिका " भूटान में लोकतंत्र की आहट " डा0 आर0सी0 मिश्रा 13 अक्टूबर 1991 पृष्ठ-1

1961 के पश्चात् से भूटान ने अपनी विदेश नीति में परिवर्तन करना प्रारम्भ कर दिया । प्रारम्भ में भूटान अपने दायरे में सीमित रहता था । बाह्य देशों से किसी प्रकार का सम्बन्ध स्थापित नहीं करता था किन्तु धीरे-धीरे अन्तर्राष्ट्रीय जगत में अपनी पहचान बनाने के लिए एवं अपनी आर्थिक स्थिति को मजबूत करने के लिए भूटान ने बाह्य देशों से सहायता लेना प्रारम्भ कर दिया है ।

**भूटान एवं सोवियत संघ के सम्बन्ध** भी भूटान एवं अमेरिका के सम्बन्धों के समान स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं पड़े किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से सोवियत संघ एवं भूटान सम्बन्धित रहे हैं । भूटान के दक्षिण भाग में सर्वाधिक नेपाली बसे हुए हैं । नेपालियों की भूटान राष्ट्र के प्रति निष्ठा पर आज तक संदेह है । भूटान में नागरिकता प्राप्त करने से पूर्व नेपाली लोगों को शिक्षा भी भारत के खुले वातावरण से मिली है इसलिए ऐसा विश्वास किया जाता है कि वे या तो जनतांत्रिक मूल्यों को मानने वाले है या उनका झुकाव साम्यवाद की ओर है, वह भी मार्क्स साम्यवाद । भारत खुले रूप से सोवियत संघ का समर्थन करता रहा है और उसका गहरा मित्र रहा है । चूँकि यह सोचा जाता रहा कि नेपालियों को शिक्षा भारत से प्राप्त हुई है और भारत सोवियत संघ का मित्र है , इसलिए अप्रत्यक्ष रूप से इन निवासियों पर सोवियत संघ का प्रभाव होना निश्चित है ।

भूटान का सोवियत संघ से प्रत्यक्ष सम्बन्ध तो नहीं दृष्टिगोचर होते किन्तु फिर भी अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ बनाने के लिए भूटान समस्त बड़े राष्ट्रों पर निर्भर है । यह निश्चित रूप से स्पष्ट है कि वह महाशक्तियों से गहरे रूप से सम्बन्धित नहीं है । वह मात्र अपने विकास हेतु इन राष्ट्रों पर निर्भर है ।

-----------------------------------------------

**भूटान एवं चीन सम्बन्ध** निकट पड़ोसी होने के नाते प्रारम्भ से ही रहे । भूटान के पड़ोसी तिब्बत पर शक्तिशाली कम्युनिस्ट चीन की लाल छाया पड़ने पर इस देश का अस्तित्व ही संकट में पड़ गया और पड़ोसियों से सम्बन्धों के निर्धारण में बदलाव आया ।[1] चीन इन हिमालय राज्यों में भी अपनी साम्यवादी विचारधारा का प्रचार कर रहा है । यद्यपि भूटान की आत्मसंतुष्ट और धर्म श्रद्धालु प्रजा के बीच भौतिकता प्रधान साम्यवादी विचारधारा के प्रसार की संभावनायें बहुत कम हैं, तथापि कुछ भूटानी नेता राजनैतिक स्वार्थवश चीनी प्रसार के शिकार बनते जा रहे हैं । इस प्रचार के प्रभाव में आकर कुछ नेताओं ने भूटान पर स्वाभाविक रूप से छाये भारतीय प्रभाव की निंदा करना प्रारम्भ कर दिया तथा भारत द्वारा दी जा रही आर्थिक व अन्य सहायताओं को वे " " दबाव " के रूप में मानने लगे है । अतः ये नेता भूटान की राजनीति को भारत के " दबाव " से मुक्त करना चाहते हैं ।

भूटान को कभी अपने उत्तर पश्चिमी और उत्तरीय सीमा पर तिब्बत से आक्रमण की आशंका नहीं थी किन्तु तिब्बत के नये शासक कम्युनिस्ट चीन की हिंसात्मक और विस्तारवादी नीति पूर्णतया प्रकाश में आ गयी है । उसने भूटान के उत्तर पूर्व के करीब 300 वर्गमील के क्षेत्र और पुरानी राजधानी पुनारवा के उत्तर के काफी इलाके पर अपना दावा पेश किया ।[2] भूटान और तिब्बत की सीमायें 1895 के पामीरसीमा कमीशन की रिपोर्ट के आधार पर सुस्पष्ट चली आ रही है । 1914 के शिमला कन्वेशन में भी चीन ने इस सम्बन्ध में कोई विवाद उत्पन्न नहीं किया था, किन्तु अब इन हिमालयी राज्यों को हड़पने के अपने षड़यन्त्र के अनुरूप उसने यह झूठा दावा किया है । प्रथम कूटनीतिक चालों व भूटान में चीनी जासूसों का जाल बिछाकर उसने भूटान को अपने प्रभाव में लाने की कोशिश की । उसमें सफलता न मिलने पर

---

(1) यू0एस0 बाजपेई, " इण्डिया एण्ड इट्सनेबरहूड " पृष्ठ-300

(2) बसन्त कुमार सराफ " भारत और आधुनिक विश्व" पृष्ठ 127

सन् 1962 से उसने बर्बर आक्रामक नीति अपनाई ।

चीन ने भूटान को आर्थिक सहायता प्रदान करने का प्रस्ताव रखा । उसने भूटानियों को यह विश्वास दिलाया कि वह अपने देश से गैर भूटानियों को भी निष्कासित करने का प्रयास नहीं करेगा और वह भूटानियों की " स्वतन्त्रता " में सहायक सिद्ध होगा ।[1]

भूटान की महत्वपूर्ण सामरिक स्थिति भूटान के बाह्य संबंधों में एक नवीन अध्याय का आरम्भ करेगी । यह जानकर कि भारत चीन- भूटान सम्बन्धों के बारे में संदेह कर सकता है, भूटान का एक अभिजात्य शासक वर्ग अपने कार्य में सजग है । भूटान में एक शक्तिशाली गुट है जो नेपाल की भाँति भारत तथा चीन से संतुलित सम्बन्ध रखना चाहता है और अधिकतम लाभ उठाने का इच्छुक है । फिर भी भूटान नरेश ने अब तक भारत के साथ अपने सम्बन्धों को अधिक महत्व दिया ।

अभी हाल ही में भूटान ने स्कैन्डिवेनियन राष्ट्रों के साथ अपने सम्बन्धों का विस्तार किया है, सम्भवतः आर्थिक सहायता के लिए ।[2] अपनी विदेशनीति तथा गम्भीर अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में कदम निर्धारित करने में भूटान अभी तक बहुत सचेत रहा है । आगामी वर्षों में भूटान के लिये यह सजगता बनाये रखना कठिन होगा क्योंकि आर्थिक तथा राजनीतिक दबावों के कारण भूटान का खुलापन बढ़ रहा है ।

**श्रीलंका** का 433 वर्षों के पुर्तगाली, डच और ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के बाद 4 फरवरी 1948 को आजादी मिली।[3] ब्रिटिश सम्राट के अधीन द्विसदनीय संसद और मंत्रिमंडलीय सरकार से युक्त " डोमीनियन " की स्थिति को तिलांजलि देकर 1972 में गणराज्य की स्थापना हुई । श्रीलंका में एकात्मक शासन है जिसमें कार्यकारी सत्ता

---

(1) राम राहुल, " रॉयल भूटान " पृष्ठ-59

(2) बी0एस0दास " भूटान " पृष्ठ-306

(3) यू0 एस0 बाजपेई " इण्डिया एण्ड इट्सनेबरहूड " पृष्ठ -237

निर्वाचित राष्ट्रपति में और विधायी सत्ता समानुपातिक प्रतिनिधित्व पर आधारित एक सदनीय संसद में निहित है । 1982 में संविधान में एक संशोधन कर राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया कि अपने 6 वर्ष के कार्यकाल के समाप्त होने से पूर्व यानि 4 वर्ष के बाद राष्ट्रपति का चुनाव घोषित कर सकता है ।

श्रीलंका के प्रमुख राजनीतिक दल - सीलोन वर्कर्स कांग्रेस, कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ श्रीलंका , जनता विमुक्त पेरामुना, ऑल सीलोन तमिल कांग्रेस, लंका सम-समाज पार्टी , डेमोक्रेटिक वर्कर्स कांग्रेस, यूनाइटेड नेशनल पार्टी, श्रीलंका फ्रीडम पार्टी, श्रीलंका पीपुल्स पार्टी, तमिल यूनाइटेड लिबरेशन फ्रंट आदि हैं ।

इसके साथ ही तमिल लिबरेशन फ्रंट के साथ अपनी माँग के लिए सशस्त्र संघर्ष का रास्ता अपनाने वाले प्रमुख संगठन पाँच हैं । ये संगठन तमिल ईलम (राष्ट्र) की माँग करते हैं। इनके नाम है- लिब्रेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम , तमिल ईलम, लिबरेशन ऑर्गेनाइजेशन, ईलम पीपुल्स रिवोल्यूशनरी लिबरेशन फ्रंट, ईलम रिवोल्यूशनरी ऑर्गेनाइजर्स और पीपुल्स आर्गेनाइजेशन ऑफ तमिल ईलम ।

1948 और 1949 में बने नागरिकता कानून ने लगभग 10 लाख तमिलों की नागरिकता समाप्त कर दी , जो पिछले 100 वर्ष से श्रीलंका में रह रहे थे । 1956 में सत्ताधारी श्रीलंका फ्रीडम पार्टी के नेता और तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री भण्डारनायके ने एक कानून के जरिये प्रशासन की भाषा अंग्रेजी के स्थान पर सिंहली कर दी । 1964 में भारत व श्रीलंका के मध्य हुए एक समझौते के तहत लगभग पाँच लाख तमिलों को भारत भेज दिया गया । यह भी तय हुआ कि 15 वर्ष के दौरान 3 लाख राज्यहीन तमिलों को श्रीलंका में नागरिकता दे दी जायेगी । शेष डेढ़ लाख तमिलों के बारे में तय हुआ कि दोनों देश कुछ वर्षों बाद इन्हें आधा - आधार के हिसाब से अपने यहाँ ले लेंगे । 1970 से राष्ट्रपति जयवर्द्धने इस मसले पर उदासीनता का रूख अपना रहे हैं । इतना ही नहीं, श्रीलंका में वोट की राजनीति ने तमिलों के खिलाफ सिंहलियों को

मनमानी करने की छूट दे दी, जिससे तमिलो को लगातार आंतक का रास्ता अपनाने को मजबूर किया और देश को भयावह गृहयुद्ध के कगार पर ला खड़ा किया ।

**श्रीलंका एवं संयुक्त राज्य अमेरिका** के सम्बन्ध प्राचीन काल से अति मधुर है । यद्यपि श्रीलंका ने गुटनिरपेक्षता के सिद्धान्त को अपनाया था किन्तु फिर भी स्वाधीनता के आरम्भिक दिनों में श्रीलंका की विदेशनीति का झुकाव पश्चिमी देशों विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका की ओर था । सेनानायके के समय में अमेरिकी प्राविधिक सहायता कार्यक्रम के अन्तर्गत वह पश्चिमी सहायता प्राप्त करने वाला प्रथम देश बना। . साम्यवाद एवं पश्चिमी प्रजातंत्र में सेनानायक की रूचि प्रजातंत्र की ओर थी । उनके मंत्रिमंडल ने एक सदस्य के अनुसार—

" आज विश्व की दो महाशक्तियाँ है- अमेरिका एवं रूस हमें इनमें से एक का अनुसरण करना होगा । इस विषय में कोई मध्यम मार्ग नहीं है । हमने निश्चय किया है कि हम संयुक्त राज्य अमेरिका एवं उसके प्रजातंत्रीय सिद्धान्तों का अनुसरण करेंगे । [1]

1950 में श्रीलंका ने अमेरिका को कोरिया मार्ग के लिए बन्दरगाह उपयोग करने की सुविधा प्रदान कर दी थी ।[2] 1953 में जब कोटलेवाला प्रधानमंत्री बने तो पश्चिमी देशों के साथ श्रीलंका के सम्बन्धों में और भी अधिक प्रगाढ़ता आई । 1954 में कोटलेवाला ने अमेरिका को हनोई जाने वाले वायुमार्ग से जाने की सुविधा दे दी ।[3] श्रीलंका ने इस समय साम्यवाद विरोधी कार्य करने प्रारम्भ कर दिए ।

यद्यपि श्रीलंका का झुकाव अमेरिका के साथ था किन्तु श्रीलंका ने अपनी विदेशनीति के सम्बन्ध में कोई निर्देशन अमेरिका से नहीं लिया । इस समय श्रीलंका की विदेशनीति राष्ट्रमंडल एवं ब्रिटेन द्वारा संचालित थी । 1956 के आम चुनावों में भंडारनायके वहाँ के प्रधानमंत्री बने । इनके प्रधानमंत्रित्व काल में श्रीलंका के बाह्य

---

(1) एच0ऑफ आर0 1950 श्रीलंका का संसद डिवेट-वाल्यूम -8 कालम 293
(2) कोडीकारा, " फॉरेन पालिसी ऑफ श्रीलंका " पृष्ठ- 86
(3) --- वही----- पृष्ठ 76

राष्ट्र संबंधों में एक मोड़ आया जिसके परिणामस्वरूप उसनें यथार्थ में गुटनिरपेंक्षता के सिद्धान्त को अपनाया । अन्य गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों की भांति इस काल में श्रीलंका ने साम्राज्यबाद के विरोध के मार्ग का अनुसरण किया । 1960 में श्रीमती भंडार नायके के शासन काल में घरेलू और विदेशनीति के क्षेत्र में अनेक क्रांतिकारी कदम उठाये गये । उदा0-इस काल में " ऐस्सो " और कालटेक्स नामक तेल कम्पनियों का राष्ट्रीयकरण किया गया ।[1] श्रीलंका के इस कदम से संयुक्त राज्य अमेरिका की सरकार को नाराजगी हुई । फलस्वरूप उसने श्रीलंका की सरकार को आर्थिक सहायता देना बंद कर दिया । 1969 में अमेरिका एवं चीन के मैत्री सम्बन्धों के स्थापित होने के साथ ही श्रीलंका की नीतियों का झुकाव पुनः स्वाभाविक रूप से अमेरिका की ओर हो गया । इसी कारण 1971 के युद्ध में श्रीलंका ने पाकिस्तान का समर्थन किया ।

अमेरिका को श्रीलंका जैसा सामरिक उपनिवेश प्राप्त हो गया है । श्रीलंका में बनने वाले सैनिक अड्डे अमेरिका चौकी के रूप में इस सारे क्षेत्र को तनावग्रस्त क्षेत्र में बदल रहे हैं । 1983 में ही श्रीलंका ने त्रिकोमाली में स्थित अमेरिका के नौसैनिक अड्डे को तेल-आपूर्ति प्रदान कर दी ।

अमेरिकी झुकाव के कारण ही श्रीलंका ने अमेरिका द्वारा हिन्दमहासागर में स्थापित डियागोगार्सिया में हवाई अड्डा स्थापित करने के बाद भी अमेरिका का खुलकर विरोध नहीं किया । श्रीलंका ने यद्यपि हिन्दमहासागर को शान्ति क्षेत्र घोषित करने की मांग का पूर्ण समर्थन किया है लेकिन श्रीलंका के अमेरिका के प्रति झुकाव के कारण इस द्वीप के द्वारा कभी भी भारत के समान उच्च स्तर में हिन्दमहासागर में महाशक्ति की उपस्थिति के विषय में आलोचना नहीं की गयी ।[2]

---

(1) दिनेश चतुर्वेदी " अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध " पृष्ठ-166

(2) पी0के0 मिश्रा, " साउथ एशिया इन इन्टरनेशनली पालिटिक्स " पृष्ठ-29

स्वतन्त्रता प्राप्ति के प्रारम्भिक वर्षों में **श्रीलंका एवं सोवियत संघ सम्बन्ध** विरोधों से पूर्ण थे । श्रीलंका की नीतियाँ पूर्णरूप से साम्यवाद विरोधी थीं । 1955 के बांडुग सम्मेलन में श्रीलंका के प्रधानमंत्री श्री कोटले वाला की भूमिका पश्चिमी देशों के प्रवक्ता के समान थी । श्री कोटलेवाला का मत था कि पश्चिमी साम्राज्यवाद के रूसी विस्तारवाद की निन्दा भी आवश्यक है क्योंकि यूरोपीय साम्राज्यवाद, एशिया एवं अफ्रीका के साम्राज्यवाद में कोई अन्तर नहीं है । कोटलेवाला का मत पूर्णरूपसे साम्यवाद विरोधी था ।[1] 1955 में ही बांडुग सम्मेलन से लौटने के बाद श्री कोटलेवाला ने एक वक्तव्य में कहा कि श्री लंका सीटो की सदस्यता गृहण कर सकता है, जबकि कोटलेवाला के अपने दल के सदस्य सीटों की सदस्यता से सहमत नहीं थे ।[2]

स्टालिन काल के पश्चात् सोवियत रूस ने गुटनिरपेक्षता के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण बदल दिया था । इसलिए सोवियत संघ ने गुटनिरपेक्ष देशों में समुचित मात्रा में आर्थिक सहायता प्रदान करना प्रारम्भ कर दिया, ताकि ये देश साम्राज्यवादियों के दबाव से मुक्त रहें । परिणामस्वरूप जनवरी 1954 से 1963 तक संयुक्त राज्य अमेरिका एवं रूस के मध्य अल्पविकसित राष्ट्रों को आर्थिक सहायता देने की प्रतियोगिता प्रारम्भ हो गयी ।

जब अमेरिका ने श्रीलंका को आर्थिक सहायता देना बंद कर दिया तो सोवियत संघ बिना किसी शर्त के श्रीलंका को आर्थिक सहायता प्रदान करता रहा । हिन्दमहासागर में अमेरिका ने नौसैनिक अड्डा बनाया तो सोवियत संघ ने श्रीलंका में सैनिक अड्डे एवं बन्दरगाहों की सुविधा प्राप्ति हेतु रूचि प्रदर्शित की । सोवियत संघ का हिन्द महासागर में उपस्थिति, का तर्क यह है कि हिन्द महासागर में फैली अणुशक्ति संचालित मिसाइलें पनडुब्बियों एवं सैनिक अड्डों से सोवियत संघ की राष्ट्रीय

---

(1) " भारत एवं विश्व राजनीति " " भारत श्रीलंका सम्बन्ध " पृष्ठ-217

(2) कोडीकारा " फारेन पालिसी ऑफ श्रीलंका " पृष्ठ-92

सुरक्षा को खतरा उत्पन्न हो गया है ।

प्रारम्भ से ही श्रीलंका एवं चीन के संबंध ब्रिटिश एवं अमेरिका से मधुर संबन्ध्‍ा होने के कारण अच्छे नहीं थे । 1951 में श्रीलंका एवं चीन के मध्य आर्थिक सम्बन्धों का सूत्रपात हुआ । 1952 में श्रीलंका एवं चीन के मध्य पाँच वर्षो के लिए रबड़ एवं चावल सम्बन्धी समझौते पर हस्ताक्षर हुए जिसके अनुसार श्रीलंका ने 50,000 टन रबड़ के बदले में 2,70,000 टन चावल लेने का समझौता किया ।[1] इसी समय से श्रीलंका व चीन संबंधों में निरन्तर वृद्धि होती गयी । 1956 में श्रीलंका एवं चीन ने एक संयुक्त विज्ञप्ति में हस्ताक्षर किये, जिसके अनुसार श्रीलंका एवं चीन कूटनीतिक सम्बन्धों के साथ-साथ आर्थिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों में भी वृद्धि करेंगे ।[2] चीन ने श्रीलंका को भारी सहायता एवं ऋण प्रदान किया, जिसके कारण श्रीलंका एवं चीन के सम्वन्धों में निरन्तर वृद्धि होती गयी ।[2] भारत-चीन सीमा विवाद के प्रश्न पर श्रीलंका की नीतियाँ भारतीय भावनाओं के विपरीत थीं । श्रीलंका ने निष्पक्ष का अवलम्बन न करके अप्रत्यक्ष रूप से चीन का समर्थन किया, यद्यपि प्रत्यक्ष रूप से श्रीलंका की प्रधानमंत्री श्रीमती भंडारनायके ने भारत-चीन सीमा विवाद का समाधान करने का प्रयत्न किया था ।

1965 और 1971 के भारत-पाक युद्ध में भी चीन को प्रसन्न करने की दृष्टि से श्रीमती भंडारनायके ने पाकिस्तान के प्रति पक्षपात का रूख अपनाया था । इसी कारण श्रीमती भंडारनायके ने कोलम्बो से होकर पूर्वी पाकिस्तान से पश्चिमी पाकिस्तान को हवाई जहाज आने जाने की अनुमति प्रदान कर दी थी ।[3]

श्रीलंका को चीन द्वारा भारी मात्रा में आर्थिक सहायता प्रदान की गयी । 1971 में चीन ने श्रीलंका को गश्ती - नौकायें उपहार स्वरूप दीं । 1972 में श्रीमती भंडारनायके की चीन यात्रा के दौरान दोनों देशों के मध्य व्यापार एवं तकनीकि से सम्बन्धित समझौता हुआ । चीन ने 1 करोड़ 8 लाख डालर का 40 हजार टन चावल

---

(1) रमाकान्त , " चाइना एण्ड साउथ एशिया " पृष्ठ-155
(2) -- वही--
(3) --- वही---
(4) कोडीकारा, " फारेन पॉलिसी आफ श्रीलंका " पृष्ठ-139

श्रीलंका को उपहार स्वरूप प्रदान करने का वचन दिया । 1975 के एक प्रलेख के अनुसार चीन श्रीलंका का सबसे बड़ा व्यापारिक सहयोगी बन गया था ।

यद्यपि 1971 में जब महासभा में हिन्द महासागर को शांति क्षेत्र बनाने के सम्बन्ध में विचार विमर्श हुआ, तब सिद्धान्त रूप में चीन ने भी इसका समर्थन किया, लेकिन वास्तव में चीन हिन्द महासागर में अपना प्रभुत्व स्थापित करने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहा है । .

1984 के अंत में श्रीलंका एवं चीन के मध्य पाँच शघाइ टाइप पेट्रोल स्टाफ्ट के सम्बन्ध में एक समझौता हुआ । इसके अतिरिक्त चीन ने श्रीलंका की वायु सेना को प्रशिक्षण देने का प्रस्ताव रखा है ।[1] श्रीलंका का लगभग 50% हथियार एवं गोलाबारूद चीन से आता है ।

**मालदीव** 1887 में ही ब्रिटेन के अधिकार में था । सल्तनत काल में काफी समय तक मालदीव का शासन इस्लामी रीति-रिवाज के अनुसार चलता रहा । वहाँ कोई लिखित संविधान नहीं था पर 1990 के दशक में एक लिखित संविधान की माँग पैदा हुई । ब्रिटेन की मदद से 1932 में एक लिखित संविधान तैयार हुआ और चुनाव प्रणाली प्रारम्भ हुई । 1953 में शासन पुनः सल्तनत के रूप में आ गया । 1960 के दशक में ब्रिटेन के सैनिक अड्डों तथा देश के अंदर सरकार विरोधी पृथकतावादी तत्वों को ब्रिटेन द्वारा मिल रहे सहयोग के विरोध में अनेक जन प्रदर्शन हुए और ब्रिटेन को इन अड्डों से सम्बन्धित 1950 के समझौते में संशोधन करना पड़ा । 1968 तक इसने सल्तनत अधिनियम का अनुसरण किया एवं 1968 में पुनः गणराज्य बन गया । इस समय संविधान में अनेक संशोधनद हुए जिनके अनुसार राष्ट्रपति को मुख्य कार्यपालिका बना दिया गया ।[2]

---

(1) रमाकान्त " चाइना एण्ड श्रीलंका रिलेशन्स " पृष्ठ-155

(2) उर्मिला फडनीस एण्ड इलादत्त, मालदीव्ज, विण्ड्स ऑफ चेंज इन एन एटाल स्टेट, पृष्ठ-37

कार्यकारी अधिकार राष्ट्रपति के हाथों में है, जो मन्त्रिमण्डल का भी प्रधान है । देश के विधान मण्डल को 'मजलिस' कहते हैं । इब्राहिम नासिर, जो 1954 से ही देश के प्रधानमन्त्री थे , 1968 में राष्ट्रपति बने । 1978 में नासिर को हटाकर मैमून अब्दुल गयूम को राष्ट्रपति बनाया गया और सितम्बर, 1983 में इस पद पर वह पुनः निर्वाचित हुये ।

मालदीव अपनी विदेश नीति में दो बातों पर मुख्य रूप से ध्यान देता है- हिन्द महासागर के लिये एक तनावमुक्त सुरक्षा प्रणाली सुनिश्चित करना, और देश के आर्थिक विकास के लिये अन्य देशों से सहयोग जुटाना 1964 तक संरक्षित स्थिति होने के कारण मालदीव के वाह्य सम्बन्ध: ब्रिटेन के बताये हुये मार्ग पर रहे । फलस्वरूप स्वतन्त्रता की प्राप्ति के बाद भी मालदीव विदेशी सम्बन्धों के इस क्षेत्र का विस्तार करने में आगे नहीं बढ़ सका । 1970 के पश्चात् मालदीव के द्वारा विश्व के अन्य देशों से अन्त: सम्बन्ध स्थापित करने की प्रक्रिया में अभूतपूर्व प्रसार हुआ । मालदीव के अत्याधिक निकटता के सम्बन्ध केवल ब्रिटेन से ही रहे ।

**मालदीव एवं अमेरिका के सम्बन्ध** प्रारम्भ से ही मधुर है । मालदीव के एक महत्वपूर्ण व्यापारिक हिस्सेदार होने के अतिरिक्त अमेरिका ने मालदीव का एक ऐसे राष्ट्र के रूप में अनुमोदन किया जहाँ व्यक्तिगत कम्पनियाँ पूँजी निवेश कर सकती हैं । विविध इस्लामी देशों, पश्चिम जर्मनी तथा जापान की भाँति इग्लेंण्ड ने भी मालदीव की विविध परियोजनाओं के लिये अनुदान राशि देना जारी रखा है।[1]

**मालदीव एवं सोवियत संघ** के सम्बन्ध भी प्रारम्भ से ही रहे है । अप्रैल, 1980 में मालदीव ने सोवियत संघ के साथ एक वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक समझौते पर हस्ताक्षर किये । 1981 में चीन के साथ तकनीकी सहायता के समझौते पर हस्ताक्षर किये । 1982 में एक अन्य सन्धि के तहत चीन के द्वारा माले में कम लागत की एक

---

(1) उर्मिला फनीस एण्ड इला दत्त मालदीव्ज ,"विण्ड्स आफ चेंज इन एन एटाल स्टेट" पृष्ठ-37

आवासीय योजना के निर्माण हेतु एक बड़ी अनुदान राशि प्रदान करने का वचन दिया गया ।[1]

सोवियत सहायता के अन्तर्गत रूस के एक वैज्ञानिक अनुसंधान जहाज ने उत्तरी तथा दक्षिणी क्षेत्रों में 1983 में सामुहिक वनस्पति तथा जैविकीय परीक्षण का वैज्ञानिक सर्वेक्षण करने की शुरूआत की ।[2]

**मालदीव एवं ब्रिटेन के सम्बन्ध** अति प्राचीन काल से अति निकटता पूर्ण हैं । यह कहना गलत न होगा कि ब्रिटेन के सरंक्षण में रहने के कारण ही मालदीव के वाह्य देशों से सम्बन्धों में अधिक विकास नहीं हो सका । 1887 के समझौते के अन्तर्गत मालदीव से ब्रिटेन ने अपने सम्बन्ध स्थापित किये और इसके अन्तर्गत मालदीव को एक सुरक्षित देश का दर्जा प्रदान किया गया । 1965 तक, जब मालदीव राजनैतिक रूप से स्वतन्त्र हुआ उसके वाह्य सम्बन्धों में कोई प्रभावशाली प्रसार नहीं हुआ । द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ब्रिटेन ने मालदीव के दक्षिणी द्वीपों में अपने हवाई अड्डे स्थापित किये ताकि जापानी खतरों का मुकाबला किया जा सके । ब्रिटेन मस्तिष्क में मालदीव के महत्त्व की सभावनायें तो आयीं किन्तु भारत में अत्याधिक व्यस्तता के कारण ब्रिटेन में तब तक इस पर ध्यान नहीं दिया, जब तक जापानी खतरा सामने नही आया । 1952 में ब्रिटिश वायु सेना मन्त्रालय ने मालदीव में आधुनिक हवाई अड्डा स्थापित करने की व्यवहारिकता का सर्वेक्षण किया ।[3]

1957 के अत्तरार्ध में ब्रिटेन ने यहाँ अपना नवीन हवाई आधार बनाया इसके साथ ही मालदीव में ब्रिटेन का प्रभुत्व समाप्त होने की प्रक्रिया आरम्भ हुयी। इस सम्बन्ध में अनेक बार आपसी वार्तालाप इस विवाद के कारण टूटा कि ब्रिटेन

---

(1) उर्मिला फडनिस एवं इलादत्त, "मालदीव्ज, विण्ड्स ऑफ चेन्ज इन एन एटाल्स स्टेट" पृष्ठ-76

(2) ----वहीं---- 77

(3) लेफ्टी जन0 एच0जी0मार्टिने " गन रिपेयर्स दि लाइफ लाइन " डेली टैलीग्राफ, 9 जनवरी, 1954 कश्चियन साइन्स मॉनीटर 4 जनवरी, 1957

मालदीव को एक स्वतन्त्र राष्ट्र माने । अन्ततोगत्वा, 1965 जुलाई में मालदीव के जनमत तथा क्षेत्रीय और अन्य देशों के समर्थन से उत्पन्न आन्तरिक और वाह्य कारणों से ब्रिटेन को मालदीव को स्वतन्त्र मानने के लिये बाध्य होना पड़ा ।[1]

1980 में मालदीव को संयुक्त राष्ट्र की हिन्दमहासागर शान्ति क्षेत्र घोषणा समिति द्वारा एक संयुक्त राष्ट्र शान्ति निरीक्षण आयोग की तदर्थ समिति के लिये चुना गया । 1981 में यहाँ के स्वास्थ्य मन्त्री को विश्व स्वास्थ्य संगठन के राज्यपालों की त्रिसदस्यीय परिषद के लिये चुना गया । इसी वर्ष इस देश का प्रतिनिधि बगदाद में इस्लामी विदेश मन्त्री अधिवेशन का उपाध्यक्ष बना ।[2]

1981 में राष्ट्राध्यक्ष की ब्रिटेन की यात्रा के तत्काल बाद मालदीव ने राष्ट्र मण्डल की विशेष सदस्यता की मांग की जो जुलाई 1982 में पूरी हुयी । पिछले कुछ वर्षों से अपनी सीमाओं के बावजूद मालदीव ने लगभग प्रत्येक उस अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्रीय सभा का प्रतिनिधित्व किया है जिसमें उपस्थित होने की आशा इससे नहीं की जाती थी अधिवेशनों, कूटनीति तथा अन्य मार्गों के माध्यम से मालदीव ने अपने आपको दलगत ब्लॉक मे दो महाशक्तियों के चंगुल से सफलतापूर्वक दूर रखा है तथा एक बड़ी तदाद में अन्य देशों से मित्रवत सम्बन्ध कायम रखे है ।

दक्षिण एशिया के देशों की आर्थिक , सामरिक एवं राजनैतिक स्थिति एवं अन्य देशों के साथ उनके सम्बन्धों का विवेचन करने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में इस क्षेत्र के देशों का अतयाधिक महत्व है ।

इस क्षेत्र के देशों की अर्थव्यवस्था विकासशील होने के कारण अधिकतर देश अपने विकास के लिये महाशक्तियों पर निर्भर है । इसका लाभ उठाकर विभिन्न

---

(1) " एशिया रिकार्डर, अप्रैल 18-24, 1959 , पृष्ठ 2615-16

(2) मालदीव्ज न्यूज बुलेटिन नम्ववर 31, 15 नवम्बर 1981

शक्तियाँ इस क्षेत्र के भिन्न-भिन्न देशों को भिन्न-भिन्न प्रकार की सहायता देकर उनकी विदेश नीति और उससे सम्बन्धित गतिविधियों को अपने हितों के अनुरूप बनाने का प्रयास करती है । इस क्षेत्र के देशों का सामरिक महत्ता के कारण तीनों महाशक्तियाँ (अमेरिका , रूस , चीन) अपने महात्वपूर्ण हितों की रक्षा के लिये इन देशों में हस्तक्षेप करने के लिनये तत्पर रहती है । इस क्षेत्र के देशों की राजनैतिक स्थिति में स्थायित्व न होने के कारण यहाँ उत्पन्न होने वाला कोई भी राजनैतिक परिवर्तन अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करता है ।

अतः यह स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण एशिया के ये देश अपनी अहम् भूमिका का निर्वाह करते है और अपनी आर्थिक सामरिक एवं राजनैतिक स्थिति से अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को प्रभावित करते है ।

## तृतीय अध्याय

### दक्षिण- एशिया में क्षेत्रीय सहयोग एवं संघर्ष-

(अ) दक्षिण - एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की आवश्यकता

(ब) क्षेत्रीय आकांक्षायें, मतभेद व विवाद

(स) क्षेत्रीय संघर्ष में महाशक्तियों की भूमिका

(द) अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, क्षेत्रीय संगठन एवं दक्षिण एशिया

## दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग एवं संघर्ष

" क्षेत्रीय सहयोग " शब्द उस प्रक्रिया का संकेत करता है जिसमें किसी क्षेत्र विशेष के राष्ट्रीय कार्यकर्ता पारस्परिक क्रिया द्वारा या आपसी आदान-प्रदान के द्वारा आपसी सहयोग की ओर अग्रसर हों तथा किसी समस्या का समाधान सहयोग के आधार पर करें, जिससे आर्थिक , राजनैतिक सुरक्षा एवं अन्य क्षेत्रों में उनकें द्वारा किये गये कार्यों का लाभ उनके लिये व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप से अधिकतम हो ।

विगत वर्षों के दौरान दक्षिण एशिया के क्षेत्र में जहाँ एक ओर आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक एवं सैनिक विकास की प्रक्रिया में वृद्धि हुई वहीं दूसरी ओर इस क्षेत्र के देशों के मध्य एक प्रकार के असुरक्षात्मक वातावरण में भी वृद्धि हो रही है । अधिकांशतः दक्षिण एशियाई देशों ने उस असुरक्षात्मक वातावरण के विरूद्ध आवाज उठानी प्रारम्भ कर दी है , जो उनकें आपसी हितों के बीच संघर्ष उत्पन्न कर रहे थे । इन संघर्षों पर दृष्टिपात करने पर ऐसा प्रतीत होता है कि ये दक्षिण एशियाई देश अपनी आर्थिक प्रगति एवं विकास की प्रक्रिया को बनाये रखने में स्वयं को असमर्थ महसूस कर रहे है । इसका महत्वपूर्ण कारण यहाँ की राजनैतिक अस्थिरता है । आर्थिक विकास एवं आधुनिकीकरण के द्वारा जीवनस्तर को ऊँचा उठाने तथा राष्ट्रीय शक्ति को सुदृढ़ बनाने की प्रतिस्पर्धा के कारण ये देश बाध्य सहायता पर निर्भर रहते हैं। बाध्य शक्तियों ने इन देशों को सहायता प्रदान करके अपने हितों की रक्षा हेतु इस क्षेत्र को शान्ति, स्थायित्व और क्षेत्रीय सहयोग का क्षेत्र बनाने के बजाय तनाव एवं संघर्ष का क्षेत्र बना दिया है ।

### (अ) दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की आवश्यकता

शान्ति एवं सुरक्षा सदैव मानव मूल्यों के पोषक तत्व रहे हैं तथा भविष्य में भी रहेगें । समस्या कितनी भी कठिन अथवा जटिल क्यों न हो, उसका समाधान शान्ति एवं सहयोग में ही निहित होता है, युद्ध में नहीं । महाशक्ति हो अथवा लघुशक्ति, निर्धन देश हो अथवा सम्पन्न देश, विकसित देश हो अथवा विकासशील देश-सभी शान्ति, सहयोग एवं सुरक्षा के आकांक्षी होते है । वर्तमान परमाणु युग में युद्ध की विभीषिका के भीषण परिणाम अन्तर्राष्ट्रीय जगत में समस्त राष्ट्रों को मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने के लिये प्रेरित करते है ।

प्रत्येक राष्ट्र अन्य दूसरे राष्ट्रों से अपनी भू-सामरिक स्थिति, आर्थिक एवं राजनैतिक हित तथा सांस्कृतिक एवं भावात्मक एकरूपता के आधार पर सम्बन्धों का निर्धारण करता है । दक्षिण एशिया के समस्त देश भी ऐतिहासिक, भौगोलिक, आर्थिक, सामरिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक आधार पर ही एक-दूसरे से सम्बन्धों का निर्वाह करते हुयें सहयोग के आकांक्षी है ।

दक्षिण एशिया विश्व में सीमाबद्ध क्षेत्रों में एकमात्र सुस्पष्ट क्षेत्र है, जिसका अस्तित्व भौगोलिक एवं राजनैतिक शब्दों में भलीभाँति परिभाषित किया जा चुका है।[1] दक्षिण एशिया के इन सात देशों में लगभग एक अरब लोग निवास करते हैं । इस दृष्टि से यह विश्व का सर्वाधिक जनसंख्या वाला क्षेत्र है । यह क्षेत्र भौतिक एवं प्राकृतिक सम्पदा से धनी है । यद्यपि यह क्षेत्र अविकास समृद्धि एवं असन्तुलित जनसंख्या वृद्धि की दीर्घ स्थायी समस्याओं से घिरा हुआ है फिर भी यहाँ मात्र सामाजिक एवं आर्थिक विकास के लिये ही कहा जाता है ।[2]

---

(1) बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया, प्रॉब्लम्स एण्ड प्रॉसपेक्ट्स" पृष्ठ-6।

(2) ---वही ---

प्राकृतिक साधनों से पूर्ण होते हुये भी यह क्षेत्र गरीबी, अशिक्षा एवं कुपोषण की समस्या से भी पीड़ित है । भारत को छोड़कर लगभग समस्त देश अपनी विकासशील अवस्था में है । विश्व के सकल राष्ट्रीय उत्पाद में इस क्षेत्र का भाग केवल 2% और निर्यात में 0.6% है ।

दक्षिण एशिया के समस्त देशों के आर्थिक सामरिक एवं राजनैतिक हित लगभग समान है । अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये ये देश परराष्ट्रों पर निर्भर हैं । अतः इनमें पारस्परिक क्षेत्रीय सहयोग की महती आवश्यकता है । समस्त देश परस्पर सहयोग स्थापित करके इस क्षेत्र की जनता के जीवन स्तर को ऊचाँ उठा सकने में समर्थ हैं । परस्पर मैत्री एवं सौहार्द्र की भावना सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को सुदृढ़ स्थिति प्रदान कर सकती है एवं प्रगति के मार्ग पर अग्रसर कर सकती है ।

दक्षिण एशिया एक भौगोलिक इकाई है । अब वह समय है जब इस क्षेत्र के राष्ट्रों की भौगोलिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं राजनैतिक अस्थिरता को गम्भीरता पूर्वक लेना आवश्यक है ।[1] अतः इन देशों में ऐतिहासिक , भौगोलिक , आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक सहयोग की परम आवश्यकता है ।

दक्षिण एशिया के देश **ऐतिहासिक** रूप से परस्पर जुड़े हुये हैं । भारत, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश के विभाजन का इतिहास इसका प्रमाण है । प्रारम्भ में भारत, पाकिस्तान एवं बांग्लादेश एक ही थे। सन् 1947 में भारत पाकिस्तान विभाजित हुये । सन् 1971 में बांग्लादेश पाकिस्तान से विभाजित हो गया । इसके पूर्व वह पूर्वी पाकिस्तान के नाम से जाना जाता था । इसी कारण इन देशों को इतिहास भी लगभग एक ही है । भारत-श्रीलंका भी ऐतिहासिक रूप से सम्बद्ध है । भारत में सम्राट अशोक ने अपने पुत्र-पुत्री को बौद्ध धर्म के प्रचार के लिये श्रीलंका भेजा था। इसके पूर्व भी

---

(2) डा0 परमानन्द, " पोलिटिकल डेवलपमेंट इन साउथ एशिया " पृष्ठ-1

श्रीलंका की स्थापना के समय कहा गया कि भारत के राजा विजय ने अपने पुत्र को देश से निकाल दिया था । उनके उसी पुत्र ने श्रीलंका नामक देश की स्थापना की।[1] भारत एवं नेपाल भी ऐतिहासिक दृष्टि से जुड़े हुये हैं । ऐसी मान्यता है कि भारत के मर्यादा पुरूषोत्तम राम की पत्नी सीता नेपाल देश के जनकपुर की ही थी । नेपाल एक हिन्दू राष्ट्र के नाम से जाना जाता है । भारत एवं नेपाल की प्रजा एक ही तीर्थ स्थानों को भक्ति पूर्वक एक दृष्टि से देखती है । भूटान भी ऐतिहासिक रूप से भारत से सम्बन्धित है । सोलहवीं सदी में भारत के कूच बिहार के निवासी भूटान के पर्वतीय क्षेत्रों में जाकर बस गये थे । प्रायः इसी बीच पश्चिमी क्षेत्रों में तिब्बत के लामाओं ने आकर बसना आरम्भ कर दिया । तिब्बती लामाओं का प्रभाव धीरे-धीरे पूर्व में भी फैलने लगा । उन्होंने यहाँ के भारतीय निवासियों को भी बौद्ध धर्म स्वीकार करने के लिये प्रेरित किया ।[2]

इस प्रकार ऐतिहासिक दृष्टि से समस्त देश जुड़े हुये है और इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को मज़बूत करने एवं इनके मध्य स्नेह की भावना को बलवती करने के लिये इनमें परस्पर सहयोग की महती आवश्यकता है ।

**भौगोलिक** स्थिति से भी दक्षिण एशिया के समस्त देश समान दिखाई देते है । भारत पाकिस्तान एवं बांग्लादेश प्रारम्भ में एक ही राष्ट्र था । ये देश विभाजन के पश्चात् पृथक-पृथक हुये । भारत आकार की दृष्टि से भले ही इन देशों से विशाल हो किन्तु जलवायु , वनस्पति तथा मिट्टी के स्वभाव में समानता पाई जाती है । नेपाल एवं भूटान की सीमा भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों को स्पर्श करती है । अतः यह कहना भी ग़लत न होगा कि इन दोनों राष्ट्रों की जलवायु , वनस्पति एवं मिट्टी भारत के उत्तरपूर्वी राज्यों-अरूणाचल, नागालैण्ड,मिजोरम, मेघालय आदि राष्ट्रों के समान ही है।

---

(1) डी0सिल्वा " हिस्ट्री ऑफ श्रीलंका " पृष्ठ-1

(2) बसन्त कुमार सराफ " भारत और आधुनिक विश्व"पृष्ठ-122

भू-वैज्ञानिक रचना के प्रमाण सिद्ध करते है कि श्रीलंका भारत के दक्षिण प्रायद्वीप का एक अंग रहा है । गोडवाना स्थल के खण्डित होने तथा वहन के फलस्वरूप आज श्रीलंका पाक-जल संयोजक ﴾एक जलस्रोत ﴿ द्वारा भारत से विभाजित हो गया है। श्रीलंका की भौगोलिक संरचना काफी कुछ दक्षिण भारत के समान है । तमिलनाडु एवं उड़ीसा के समान खण्डेलाइट शैलों के क्रम इस द्वीप में रीढ़ के समान स्थित है ।[1] भू-वैज्ञानिक संरचना से ही नहीं वरन् जलवायु , मिट्टी , वनस्पति के स्वभाव में भी दक्षिण भारत एवं श्रीलंका के क्षेत्र में समानता पाई जाती है । मालद्वीव यद्यपि इन राष्ट्रों से भौगोलिक रूप से भिन्न है क्योंकि वह छोटे-छोटे द्वीपों से मिलकर बना है , किन्तु हिन्दमहासागर में स्थित होने के कारण वह श्रीलंका की जलवायु से समानता लिये हुये है ।

दक्षिण एशिया के समस्त देश कृषि पर आधारित हैं । मालद्वीव छोटे-छोटे द्वीपों में विभक्त होने के कारण और आकार में अत्यधिक छोटा होने के कारण इसका मुख्य आधार कृषि नहीं है । यहाँ का मुख्य व्यवस्था मछलियों का व्यापार है । खाद्यान्न एवं खनिजों की दृष्टि से भी समस्त देशों में समानता दृष्टिगोचर होती है चावल अधिकांशतः देशों में उत्पन्न किया जाता है । अतः दक्षिण एशियाई देशों में भौगोलिक स्थिति में समानता होने की दृष्टि से समस्त देशों में सहयोग नितान्त आवश्यक है ।

**आर्थिक** दृष्टि से दक्षिण एशिया के समस्त देशों के हितों को ध्यान में रखते हुये इस सम्पूर्ण क्षेत्र की अर्थव्यवस्था पर सूक्ष्मतापूर्वक दृष्टिपात करना होगा। दक्षिण एशिया के सातों देशों की आय का स्तर निम्न है । 1983 में विश्व बैंक ने

---

﴾1﴿ डा0 पी0एस0 चौहान " एशिया का प्रादेशिक भूगोल " पृष्ठ-19

प्रति व्यक्ति आय अमेरिका डालर 450 निश्चित की और उस समय इस क्षेत्र के विभिन्न देशों में प्रतिव्यक्ति आय इस प्रकार थी- बांग्लादेश 140, पाकिस्तान 350, भारत 260, नेपाल 150, भूटान 80, श्रीलंका 300 । इन सातों देशों में तीन देश- बांग्लादेश , नेपाल एवं भूटान बहुत कम विकसित थे ।[1] दक्षिण एशिया के क्षेत्र में जनसंख्या अत्यधिक है और उत्पादन अपेक्षाकृत अत्यधिक कम । समस्त देश विकासशील अवस्था में है । समस्त देशों को खाद्यान्न का आयात करना पड़ता है । ये देश आयात एवं निर्यात के लिये बाह्य देशों पर निर्भर हैं ।

यदि इस क्षेत्र के समस्त देश परस्पर ही अपने माल का आदान- प्रदान करें तो क्षेत्रीय सहयोग की दिशा में वृद्धि होगी एवं इसके साथ ही अर्धविकसित देशों के हितों में भी वृद्धि होगी । ये देश परस्पर अपने माल का आदान-प्रदान कर सकते हैं । इन्हें पर राष्ट्रों की कृपा दृष्टि पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा और फिर दूसरे राष्ट्र इस क्षेत्र में हस्तक्षेप भी नहीं कर सकेंगें । परस्पर आदान-प्रदान से इन देशों की आवश्यकताओं की पूर्ति भी सुविधापूर्वक तरीके से हो जायेगी उदाहरणार्थ — यदि पाकिस्तान में चावल की अधिक पैदावार है तो वह चावल श्रीलंका को निर्यात करके वहाँ से चाय का आयात कर सकता है । इस प्रकार इन दोनों देशों में निकटता बढ़ेगी , उनके मध्य परस्पर प्रेम-भाव में वृद्धि होगी एवं उनके आर्थिक हितों की पूर्ति भी होगी इसके अतिरिक्त ये देश जुड़कर एक साझा बाजार का निर्माण करके बाह्य विश्व में खड़े हो सकते है और अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण एशिया के महत्व को स्पष्ट कर सकते है ।

कुछ समय पूर्व में ही दक्षिण एशिया के देशों में आर्थिक क्षेत्र में सहयोग प्रारम्भ हुआ। समय के साथ इसमें वृद्धि होगी । यह दक्षिण एशिया की शान्ति एवं स्थायित्व में योगदान देगा एवं एशिया के शेष क्षेत्रों में भी ।[2]

---

(1) बी0 एम0 भाटिया " फूड सिक्योरिटी इन साउथ एशिया " न्यू देहली , इण्डिया क्वाटरली, वाल्यूम 40, जुलाई-दिसम्बर 1984 पृष्ठ- 301-313

(2) बीजिंग रिव्यू, नं0 46,16 नवम्बर 1981, पृष्ठ 12

दक्षिण एशिया के समस्त देश सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थिति में हैं । इसके समस्त देश किसी न किसी महाशक्ति के नियन्त्रण में रहकर अपने अस्तित्व को बनाये हुये हैं । भारत सोवियत रूस की नीतियों का अनुसरण करता रहा तो पाकिस्तान अमेरिका की । नेपाल चीन की शह पर चल रहा है तो श्रीलंका भी अमेरिका व चीन के साथ जुड़ा हुआ है । इस प्रकार समस्त देश सैन्यशक्ति में वृद्धि करने के लिये और विश्व में अपनी स्थिति सुदृढ़ रखने के लिये महाशक्तियों से जुड़े हुये हैं । महाशक्तियाँ इन छोटे-छोटे देशों के माध्यम से सम्पूर्ण दक्षिण एशिया को प्रभावित कर रहीं है । सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के लिये ये कभी भी ख़तरनाक सिद्ध हो सकती है ।

दक्षिण एशिया के देशों की भौगोलिक समीपता इन देशों को अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु परस्पर मैत्रीपूर्ण सहयोग रखने के लिये बाध्य करती हैं । इस क्षेत्र के समस्त देशों की सीमाओं पर किसी न किसी महाशक्ति का निवास है । जैसे-पाकिस्तान , नेपाल एवं भूटान के ऊपर चीन स्थित है तो श्रीलंका एवं मालद्वीव हिन्द महासागर में स्थित होने के कारण अमेरिकी अड्डों के अति समीप है । भारत पर तो समस्त महाशक्तियाँ गिद्ध दृष्टि लगाये हुये हैं । ऐसी स्थिति में इस क्षेत्र की सुरक्षा परस्पर मैत्री पर ही निर्भर है । 1949 में के0वी0 विद्या ने श्रीलंका एवं बर्मा की भारत पर सामरिक निर्भरता को स्पष्ट करते हुये लिखा था कि —

" बर्मा एवं सीलोन को भारत के साथ अपनी सुरक्षा का निर्धारण करना चाहिये । वे ऐसा करें अथवा न करें, ये उनकी अपनी सुरक्षा के लिये अति महत्वपूर्ण है ।[1]

यदि दक्षिण एशिया के समस्त देश मिलकर सामरिक क्षेत्र में अपने क्षेत्रीय सहयोग परे बल दें तो सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के सिर पर मँडराता खतरा टल सकता है। समस्त देश मिलकर किसी भी महाशक्ति का मुकाबला करने में समर्थ होंगे । प्रत्येक

---

{1} के0वी0 विद्या " दि नवल डिफेंस ऑफ इण्डिया ;" पृष्ठ 130

देश की सीमा आपस में जुड़ी हुई है । बड़े देश किसी भी देश के माध्यम से दूसरे देश पर सुविधानुसार आकमण कर सकते हैं । और इस प्रकार सम्पूर्ण दक्षिण एशिया पर अपना अधिपत्य स्थापित कर सकते हैं । वर्तमान समय में सभी महाशक्तियों की दृष्टि दक्षिण एशिया पर टिकी हुई है । वे किसी न किसी प्रकार इस पर अपना स्वामित्व स्थापित करना चाहती हैं किन्तु यदि दक्षिण एशिया के समस्त देश सहयोग करें तो ये अपने हित के साथ-साथ सम्पूर्ण दक्षिण एशिया का हित कर सकते हैं क्योंकि फिर यह कार्य बहुत मुश्किल होगा कि सम्पूर्ण क्षेत्र की शक्तियों का एक साथ, एक समय में मुकाबला किया जा सकें ।

कुछ समय पूर्व मालदीव पर हुये सैनिक आक्रमण ने और उसमें निभाई गई भारत की सहयोगी भूमिका ने यह सिद्ध कर दिया कि सामरिक दृष्टि से क्षेत्रीय सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है । बाद में यहाँ की क्षेत्रीय सामरिक महत्ता दक्षिण एशिया के सिद्धान्तों के प्रपत्र में भी दिखाई पड़ी ।[1]

**राजनैतिक** दृष्टि से भी इन देशों में समानता ही दिखाई देती है । दक्षिण एशिया के लगभग समस्त देशों में अब लोकतन्त्रात्मक शासन व्यवस्था अपनायी जा चुकी है । यद्यपि इस व्यवस्था में बहुत अधिक समानता नहीं है क्योंकि प्रत्येक देश की अपनी अलग-अलग राजनैतिक स्थिति है । फिर भी लगभग समस्त देशों को साम्राज्यवादी विचारधारा से कोई लगाव नहीं है । प्रत्येक देश अपनी प्रभुसत्ता के सम्मान का आकांक्षी है और अपने आन्तरिक विवादों में किसी राष्ट्र के हस्तक्षेप की कामना नहीं करता है ।

दक्षिण एशिया के समस्त देश राष्ट्रसंघ के सदस्य हैं और इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को भी प्रभावित करते हैं । ऐसी सुदृढ़ स्थिति में यदि समस्त देश

---

(1) विमलप्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया, प्रॉब्लम्स एण्ड प्रासपेक्ट्स ," पृष्ठ- 40

एक साथ मिलकर बाह्य राजनीति में किसी बात का समर्थन व विरोध करें, तो उनकी आवाज अवश्य ही बुलंद होगी और उसका एक विशेष महत्व होगा । साथ ही इससे दक्षिण एशिया की एकता स्थापित करने में अत्यधिक सहयोग प्राप्त होगा । उदाहरणार्थ, हिन्दमहासागर में शान्ति स्थापित करने के लिये भारत निरन्तर प्रयत्नशील है । यदि इस विषय पर दक्षिण एशिया के समस्त देश एक साथ आवाज उठायें तो अवश्य ही इसका प्रभाव महाशक्तियों पर पड़ेगा । वे एकजुट हुये दक्षिण एशिया के देशों का मुकाबला नहीं कर सकेंगी और इस प्रकार परिणाम अवश्य ही सफलता लिये हुये होंगे ।

**सांस्कृतिक एवं धार्मिक** दृष्टि से भी इस क्षेत्र के देश परस्पर जुड़े हुये हैं। दक्षिण एशिया में तीन इस्लाम धर्म को मानने वाले राष्ट्र हैं - पाकिस्तान, बांग्लादेश एवं मालदीव । भारत एक धर्मनिरपेक्ष राष्ट्र है क्योंकि यहाँ समस्त धर्मावलम्बी निवास करते हैं । अतः यहाँ चारों धर्मों को समान रूप से प्रधानता दी गयी है । अतः यहाँ चारों धर्मों को समान रूप से प्रधानता दी गयी है । उदाहरणार्थ भारत में मुस्लिम धर्म के अनुयायी बहुसंख्या में हैं किन्तु उनमें किसी भी आधार पर कोई मतभेद नहीं है । ऐसी स्थिति में भारत का सांस्कृतिक एवं धार्मिक रूप से अन्य देशों से जुड़ना एक सामान्य बात है । धार्मिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भारत-नेपाल की मित्रता स्थायी आधार पर विद्यमान है । दोनों देशों की हिन्दू व बौद्ध धर्मावलम्बी प्रजा एक-दूसरे में स्थित अनेक तीर्थों व अन्यान्य सांस्कृतिक केन्द्रों को आज भी अपनी श्रृद्धा व भक्ति के केन्द्र स्थल मानती है । नेपाल के राजा भी कट्टर धर्मावलम्बी हैं । पिछले वर्षों में अनेक बार उन्होंने भारत की यात्रा की । हर बार उन्होंने भारत -नेपाल के मध्य अनेकानेक शताब्दियों से चले आ रहे अच्छे सम्बन्धों को बनाये रखने की कामना की ।[1]

---

(1) बसन्त कुमार सराफ " भारत एवं आधुनिक विश्व " पृष्ठ - 104

भूटान एवं श्रीलंका भी बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं और इस तरह एक -दूसरे से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं । भारत-श्रीलंका सांस्कृतिक दृष्टि से एक दूसरे से सम्बद्ध है । भारत एवं श्रीलंका दोनों ही समुद्री स्थल को पवित्र मानते हैं।[1]

श्रीलंका में बौद्ध धर्म सम्मानित किया गया है । बौद्ध धर्म भारतीय होने के कारण हिन्दू धर्म का समदर्शी है । स्वामी विवेकानन्द ने हिन्दू धर्म के संदर्भ में कहा था-"जो कहीं भी है, वह यहाँ है । जो कहीं भी नहीं है, वह यहाँ नहीं है । " अतः बौद्ध धर्म व हिन्दू धर्म में काफी समानता है ।[2] भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं० जवाहर लाल नेहरू द्वारा गृहण किये गये पंचशील सिद्धान्त बौद्ध धर्म पर आधारित है । श्रीलंका में दूसरा प्रधान धर्म हिन्दू धर्म है । श्रीलंका के तमिल एवं भारतीय तमिल दोनों ही हिन्दू धर्म के अनुयायी हैं । मूर लोग मुस्लिम धर्म के अनुयायी हैं तथा कुछ तमिल एवं कुछ सिंहली व्यक्तियों ने इसाई धर्म को गृहण किया है । इस प्रकार धार्मिक समीपता भारत एवं श्रीलंका सम्बन्धों का आधार है ।

ऊपरी सतह पर भले ही समय-समय पर राजनीतिक मतभेदों के रूप में बुलबुले उठते दिखते हों, तथापि समस्त देशों की असंख्य जनता के अंतराल में वही स्थायी आध्यात्मिक परम्पराओं के सूत्र विद्यमान हैं जो अति प्राचीन काल से चले आ रहे हैं ।[3] संस्कृति के माध्यम से परस्पर सहयोग एवं एकता को स्थापित करके बाहरी जगत में दक्षिण एशिया की संस्कृति को प्रकाशित किया जा सकता है । विभिन्नताओं में एकता की भावना को प्रदर्शित करके यह क्षेत्र अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपना स्थान सुशोभित कर सकता है ।

अतः स्पष्ट है कि दक्षिण एशिया में सहयोग की प्रबल आवश्यकता है । परस्पर शांति , मित्रता एवं सहयोग के आधार पर ही ये समस्त देश अपने हितों के

---

(1) वाइनट कोले " एक्रास दि पाक स्ट्रेट " पृष्ठ 153

(2) पी० रामास्वामी " न्यू देल्ली एण्ड श्रीलंका " पृष्ठ 133

(3) बसन्त कुमार सराफ " भारत एवं आधुनिक विश्व "

साथ-साथ सम्बन्धित देशों के हितों को भी सुरक्षित रखेंगे । फलस्वरूप सम्पूर्ण दक्षिण एशिया में भाई-चारे की भावना बढ़ने के साथ-साथ अनेक समस्याओं का हल ढूँढ़ने में सहायता मिलेगी । सर्वाधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह होगा कि दक्षिण एशिया में परस्पर क्षेत्रीय सहयोग की सथापना होने के पश्चात् इस क्षेत्र की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपनी विशेष पहचान होगी ।

वर्तमान समय में दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय संघर्षो के कारण महाशक्तियों की दृष्टि उस पर जमी हुई है । जहाँ एक ओर दक्षिण एशिया में आर्थिक, सैनिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विकास की प्रक्रिया में वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर उनके मध्य एक प्रकार के असुरक्षात्मक वातावरण का विकास भी हो रहा है । दक्षिण एशियाई देश अपनी आर्थिक प्रगति एवं विकास की प्रक्रिया को बनाये रखने में असमर्थता प्रकट कर रहे हैं । आर्थिक विकास एवं आधुनिकीकरण के द्वारा जीवन स्तर को ऊँचा उठाने तथा राष्ट्रीय शक्ति को सुदृढ़ बनाने की प्रतिस्पर्धा के कारण प्राप्त बाह्य सहायता ने दक्षिण एशिया को तनाव एवं संघर्ष का क्षेत्र बना दिया है ।

वर्तमान समय में यह क्षेत्र अनेक संकटों से ग्रस्त है । अमेरिका, रूस, चीन, फ्रांस, ब्रिटेन जैसी महाशक्तियाँ हिन्द महासागर में अपनी नौ सैनिक संक्रियाओं से क्षेत्र में तनाव को बढ़ा रहीं हैं । किसी न किसी प्रकार से सम्पूर्ण क्षेत्र युद्धों , छापामार कार्यवाहियों , छुटपुट संघर्षो, तनावों, आंतकवाद की समस्याओं से घिरा हुआ है ।

इस असुरक्षात्मक वातावरण को समाप्त करने के लिये दक्षिण एशियाई राष्ट्रों में सहयोग स्थापित करने की नितान्त आवश्यकता है । वर्तमान समय में क्षेत्रीय संघर्षो के कारण जिन महाशक्तियों की कुदृष्टि इस पर जमी हुई है, इस क्षेत्र के देशों में क्षेत्रीय सहयोग की स्थापना होने के पश्चात् उन महाशक्तियों का विचार इस क्षेत्र के प्रति जितना सहज बना हुआ है , उसमें परिवर्तन अवश्य होगा । 1983 में सहयोग के लिये पहली विदेशमंत्री स्तर की बैठक में जारी हस्ताक्षरित घोषणापत्र में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था- " आर्थिक विकास के माध्यम से सहयोग होगा जो कि बाह्य दबावों को रोकने में सहायक होगा ।"

## (ब) क्षेत्रीय आकांक्षायें एवं मतभेद व विवाद

" आकांक्षा " शब्द विस्तृत रूप से उस अर्थ की अनुभूति कराता है, जिसमें व्यक्ति , देश अथवा राष्ट्र का सम्पूर्ण विकास समाहित हो ।

प्रत्येक व्यक्ति अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये हुये अपनी समृद्धि हेतु बहुप्रयत्न करता है और अपना स्थान विशेष बनाना चाहता है । यदि उसके इस विकास के मार्ग में कोई अवरोध आते हैं तो वे कुंठा अथवा विद्रोह के भाव उत्पन्न करते हैं और वह अपना विकास आकांक्षाओं के अनुकूल नहीं कर पाता है । यही बात राष्ट्र पर लागू होती है ।

दक्षिण एशिया के राष्ट्रों की आकांक्षाओं से तात्पर्य उक्त भाव से ही है । अतः प्रत्येक राष्ट्र की भी अपनी यही आकांक्षा होती है कि वे इसी भावना को समाहित करते हुये परस्पर संप्रभुता , स्वतंत्र अस्तित्व की लालसा , आर्थिक, राजनैतिक, सामरिक, सांस्कृतिक रूप से परस्पर सुरक्षा एवं सहयोग की आकांक्षा रखते हैं क्योंकि इस आकांक्षा से दूर होकर उनकी प्रगति संभव ही नहीं है ।

**संप्रभुता** की आकांक्षा राज्य का अनिवार्य तत्व है । इसके बिना राज्य के अस्तित्व की कामना ही नहीं की जा सकती । अतः इसकी पूर्णरूप से सुरक्षा समस्त राष्ट्रों की सबसे बड़ी आंकाक्षा है । वे इस बात की इच्छा रखते हैं कि प्रत्येक देश उनकी प्रभुता का सम्मान करे । भारत को छोड़कर समस्त देश आकार एवं संसाधनों की दृष्टि से अत्यंत छोटे हैं । दक्षिण एशिया के समस्त देशों की सीमा भारत से जुड़ी हुई है । चूँकि इस क्षेत्र के समस्त देशों में भारत ही सर्वशक्तिमान है । अतः समस्त पड़ोसी देश भारत की ओर संदेह की दृष्टि से देखते हैं और उसकी ओर से अपनी सुरक्षा के प्रति आशंकित रहते हैं । समस्त देश अपनी पूर्णरूपेण सुरक्षा की आकांक्षा करते हैं । जैसे ही किसी सदस्य देश से भारत का कोई विवाद होता है, यह जताया जाता है कि जैसे भारत के हित अन्य सभी सदस्य देशों के विरूद्ध पड़ते हों।[1]

---

(1) दिनमान " दक्षिण एशिया में भारत " 15 जून 1989

**स्वतन्त्र-अस्तित्व** की आकांक्षा दक्षिण एशियायी राष्ट्रों की क्षेत्रीय शांति , स्थिरता तथा खुशहाली के लिये आपसी मतभेदों को दूर करके आपसी सहयोग बढ़ाने तथा पारस्परिक सम्बन्धों को नया आयाम देना चाहता है । जहाँ एक ओर बाह्य जगत में वह एक इकाई के रूप में एकत्रित होकर अपनी आवाज उठाने का आकांक्षी है वहीं उसकी प्रबल इच्छा है कि उसके आन्तरिक मामलों में कोई भी देश हस्तक्षेप न करे । प्रत्येक देश अपनी घरेलू समस्याओं को अपने ढंग से सुलझाने का आकांक्षी है । प्रत्येक राष्ट्र की यह भावना होती है कि अन्य राष्ट्र उसकी मदद करें । इसके अतिरिक्त वह किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं पसन्द करता । यही कारण है कि 1985 में जब दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन का निर्माण हुआ तो संगठन को द्विपक्षीय या बहुराष्ट्रीय विवादों से अलग रहने तथा सबको समान अधिकार देने के उद्देश्य से कई धारायें विशेष रूप से जोड़ी गयीं ।[1]

**आर्थिक रूप से पूर्णरूपेण आत्मनिर्भरता** दक्षिण एशियाई राष्ट्रों की प्रबल इच्छा है । यह तभी संभव है जबकि आर्थिक क्षेत्र में वे परस्पर सहयोग स्थापित कर सकें । इसके लिये आवश्यक है कि वे परस्पर प्रतिस्पर्धा की भावना को समाप्त करें । चूँकि दक्षिण एशिया में प्राकृतिक सम्पदा का अभाव है अतः वे अन्य बाह्य राष्ट्रों पर निर्भर हैं । उनमें पारस्परिक व्यापार न के बराबर है । परस्पर प्रतिस्पर्धा को समाप्त करके और आर्थिक क्षेत्र में परस्पर सहयोग स्थापित करके ही समस्त राष्ट्रों का समान हित हो सकेगा । हमें इस तथ्य पर अत्याधिक विचार कर लेना चाहिए तभी हम परस्पर दूरी समाप्त करके इस क्षेत्र को ऊँचा उठा सकते हैं और परस्पर बाजार में वृद्धि करके राष्ट्र का कल्याण कर सकते हैं । दक्षिण एशिया के प्रत्येक उस देश का हित इसी में है जो आर्थिक समस्याओं से जूझ रहे होंगे ।[2]

---

(1) प्रगति मंजूषा, श्रीधर द्विवेदी " सार्क पर बिखराव का झूलता संकट " पृष्ठ 74

(2) बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया प्राब्लम्स एण्ड प्रोसपेक्ट्स" पृष्ठ-177

सम्पूर्ण क्षेत्र के देश राजनैतिक दृष्टि से भी पूरी तरह **स्वतंत्रता** के आकांक्षी हैं । कोई भी राष्ट्र नहीं चाहता कि अन्य पड़ोसी राष्ट्र उस पर राजनैतिक रूप से कोई दबाव डाले । पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका, सभी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपनी-अपनी पहचान बनाने की आकांक्षा रखते हैं । पं0 बंगाल के बंगालियों से अलग अपनी पहचान के लिये बांग्लादेश प्रयत्नशील है तो दक्षिण भारत के तमिलों से श्रीलंका को प्रभावित न होने देने के लिये प्रयत्नशील है-वहाँ की सिंहली जनता । पाकिस्तान भारत से हर तरीके से जुड़े होने के बाद भी हर क्षेत्र में अलग पहचान के लिये प्रयासरत है ।[1]

**सामरिक सुरक्षा-** की आकांक्षा की पूर्ति हेतु समस्त दक्षिण एशियाई राष्ट्रों का परस्पर सहयोग आवश्यक है क्योंकि दक्षिण एशियाई राष्ट्रों में पृथक कोई भी राष्ट्र बाह्य शक्ति से मुकाबला करने की स्थिति में नहीं है । अतः इन्हें परस्पर सहयोग एवं मित्रता बनाये रखने की आकांक्षा है ताकि ये एक जुट होकर अवसर आने पर बाह्य आक्रमणों से रक्षा कर सकें । इसके साथ ही समस्त देश चाहते हैं कि हिन्दमहासागर में कोई महाशक्ति का प्रवेश न हो जिससे सम्पूर्ण दक्षिण एशिया की सुरक्षा हो सके । साथ ही कोई भी देश किसी महाशक्ति को आमंत्रित न करें।

हिन्दमहासागर भारत को दक्षिणी-पूर्वी एशिया, अफ्रीका एवं आस्ट्रेलिया से जोड़ता है । अतः हिन्दमहासागर पर भारतीय सुरक्षा अत्यधिक निर्भर करती है । स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद हिन्द महासागर को भारतीय प्रभुत्व का यथार्थ तत्व माना गया।[2] हिन्दमहासागर में श्रीलंका को केन्द्रीय स्थिति प्राप्त है तथा अपने महत्वपूर्ण बन्दरगाह त्रिकोमाली एवं कोलम्बो सहित श्रीलंका भारतीय सुरक्षा का महत्वपूर्ण तत्व है श्रीलंका में किसी विदेशी शक्ति का आमंत्रण अथवा कोलम्बो एवं त्रिकोमाली पर किसी महाशक्ति का आधिपत्य भारत के लिये सामरिक समस्या उत्पन्न कर देगा । आज विश्व की समस्त महाशक्तियाँ त्रिकोमाली में सैन्य सुविधायें प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील हैं।

---

(1) नवभारत टाइम्स-लखनऊ, गिरीश मिश्र " दक्षेस कुहासे में बढ़ता मैत्री काफिला", 10 जनवरी 1986, पृष्ठ-5

(2) के0बी0 विद्या " दि नवल डिफेंस ऑफ इण्डिया" पृष्ठ- 101

अतः दक्षिण एशियाई देशों की सामरिक सुरक्षा की आकांक्षा सम्पूर्ण क्षेत्र के लिये वरदान सिद्ध होगी ।

चूँकि दक्षिण एशिया के समस्त देश विकासोन्मुख है एवं सामाजिक, सांस्कृतिक रूप से परस्पर जुड़े हुये, इसलिये समस्त देश **सामाजिक, सांस्कृतिक** रूप से परस्पर सहयोग के आकांक्षी हैं । परस्पर सहयोग के अभाव में वे यथाशीघ्र प्रगति कर नहीं सकते । क्षेत्रीय सहयोग के द्वारा वहाँ के लोगों का जीवन-स्तर ऊँचा होगा क्योंकि दक्षिण एशिया में सभी देश भारत से छोटे हैं इसलिये यह मान लिया गया है कि उनके हित भारत से ऊपर होने चाहिये क्योंकि यदि भारत बड़ा होने के कारण उदार और विशाल हृदय होता है तो यह तो उससे अपेक्षित ही है ।[1] आपसी सहयोग और एकता के लिये संस्कृति से जुड़ना महत्वपूर्ण पहलू है । अतः इस आकांक्षा हेतु दक्षिण एशियाई राष्ट्रो में परस्पर भाई-चारे की भावना एवं छोटे-बड़े की भावना का विकास होगा, तभी इस क्षेत्र की उन्नति संभव है । कुछ छोटे देश ऐसे भी हैं जहाँ शिक्षा और नागरिकों के पूर्ण विकास के लिये कम अवसर उपलब्ध है । अतः ऐसे अवसरों के लिये भी परस्पर सहयोग की आकांक्षा है ।

प्रत्येक राष्ट्र इस बात की आकांक्षा करते हैं कि उनकी सर्वत्र उन्नति में सभी राष्ट्रों का सहयोग मिले । समस्त राष्ट्रों की प्रगति परस्पर विश्वास पर आधारित है । दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय आकांक्षाओं में आने वाली कुण्ठा का एक बहुत बड़ा कारण परस्पर अविश्वास की भावना की अधिकता है । यदि उनका आपस में संदेह बना रहेगा तो प्रगति के मार्ग में बाधाएं उपस्थित होंगी । उनमें परस्पर अविश्वास की भावना उनकी समस्याओं में वृद्धि करेंगी । दक्षिण एशिया के समस्त देश भारत के लिए सन्देह की मानसिकता से ग्रस्त हैं । चूँकि परस्पर सहयोग के बिना उनका काम ही नहीं चलेगा, इसलिए सहयोग के मामले में उनका रूझान " न्यूनतम सम्भव " वाला है । किन्तु इस प्रकार सन्देहों के साये में घिरा दक्षिण एशिया सम्पूर्ण क्षेत्र के लिए खतरा उत्पन्न कर लेगा । अतः इस क्षेत्र की सबसे प्रबल आकांक्षा परस्पर विश्वास की है ।

---

(1) दिनमान" दक्षिण एशिया में " 15 जून 1989

श्री जी0जी0 स्वेल ने कहा कि -

इस क्षेत्र में शान्ति का माहौल बनाने के लिए ज़रूरी है कि सदस्य देशों के बीच परस्पर विश्वास की भावना जगे । उन्होंने कहा कि भारत को इस दिशा में पहल करनी चाहिए ।[1]

दक्षिण एशिया अनेक समस्याओं से ग्रस्त है। अतः इस क्षेत्र के लिए यह आकांक्षा है कि प्रत्येक देश एक-दूसरे की समस्याओं को गम्भीरता-पूर्वक समझें और उसका हल ढूँढने का प्रयास करें।

सामाजिक , आर्थिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में दक्षिण एशिया के क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ाना चाहिए । इसके लिए सबसे बड़ी आवश्यकता एक-दूसरे के सहयोग की है । इस क्षेत्र की सार्वभौमिक उन्नति तभी सम्भव है जब प्रत्येक क्षेत्र में अपने-अपने सामर्थ्य के अनुसार प्रत्येक देश के द्वारा सहयोग प्रदान किया जाय । किसी भी उन्नति के सन्दर्भ में केवल उस क्षेत्र की भावना से ही सहयोग नहीं किया जाये, बल्कि इस भावना से सहयोग किया जाये कि वह समस्त दक्षिण एशिया के लिए महत्वपूर्ण हो । इसके अतिरिक्त क्षेत्रीय आकांक्षाओं में एक तथ्य और जुड़ा हुआ है कि समान उद्देश्य एवं समान लक्ष्य वाले अन्तर्राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय संगठनों के साथ सहयोग दिया जाय । अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर जब समान उद्देश्यों व समान हित के मामले पर विचार किया जाये तो उसके लिए दृढ़तापूर्वक इन राष्ट्रों द्वारा परस्पर सहयोग किया जाय।

अन्ततः दक्षिण एशिया की क्षेत्रीय आकांक्षायें क्षेत्रीय लाभों से जुड़ी हुई हैं। ऐसा विदित है कि यदि क्षेत्र के देशों में आपसी सहयोग और मित्रता की भावना सुदृढ़ होगी तो वे आपस में बैठकर अपनी समस्याओं का निवारण कर लेंगे । यदि देश आपसी हितों के आधार पर अनुभवों व तकनीक का आदान-प्रदान करें और परस्पर देशों में उत्पादकता बढ़ाने के लिए साजसामान व सेवा का लेनदेन होता रहे तो ये देश सामूहिक निर्भरता प्राप्त कर सकेगें और महाशक्तियों के चंगुल से बच सकेंगे ।

---

(1) नवभारत टाइम्स " सहयोग बढ़ाने के लिये भारत का नेतृत्व" 21 नवम्बर 1986

जहाँ दक्षिण एशियायी राष्ट्रों ने क्षेत्रीय सहयोग की आकांक्षा की थी, वहीं दूसरी ओर यह देखा जाता है कि उनमें क्षेत्रीय सहयोग के स्थान पर क्षेत्रीय **मतभेद** बढ़ गए हैं । चूँकि समस्त देशों में भारत ही सबसे विशाल एवं शक्तिसम्पन्न देश है और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि एक मात्र भारत ही ऐसा देश है जिसकी सीमा अन्य देशों की सीमाओं को स्पर्श करती है तो निश्चित है कि समस्त देशों के मतभेद भी भारत के साथ ही होंगे । ये मतभेद इन राष्ट्रों के मध्य सहयोग स्थापित करने में सबसे बड़ी बाधा है ।

यह आवश्यक प्रतीत होता है कि भारत के साथ समस्त देशों के मतभेदों पर दृष्टिपात किया जाय । ये मतभेद कब , कैसे और किस प्रकार के हैं, इसका अध्ययन आवश्यक है । इन्हीं मतभेदों ने बाद में बिवादों का रूप धारण कर लिया ।

दक्षिण एशिया के पड़ोसी देशों में सबसे अधिक मतभेद **भारत एवं पाकिस्तान** के बीच देखे जाते हैं।

15 अगस्त 1947 को ब्रिटिश सरकार ने भारत का बँटवारा करके पूर्व और पश्चिम में पाकिस्तान की स्थापना कर दी । किन्तु मुस्लिम लीग के प्रधान श्री मोहम्मद अली जिन्ना को वैसा पाकिस्तान प्राप्त नहीं हुआ जैसा वे चाहते थे । सारा पंजाब पाकिस्तान में नहीं आया और हिन्दू बहुमत वाले पूर्वी पंजाब को पृथक करके भारत में मिला दिया गया । इसी तरह असम के केवल एक जिले सिलहट को ही पूर्वी पाकिस्तान में मिलाया गया और शेष असम भारत के ही साथ रहा । बंगाल का भी बंटवारा किया गया । पूर्वी - बंगाल जिसमें मुसलमानों का बहुमत था उसे तथा सिलहठ जिले को अलग करके पूर्वी पाकिस्तान की स्थापना की गई । पश्चिमी बंगाल, जिसमें हिन्दुओं का बहुमत था, भारत के ही साथ रहा । इस प्रकार पाकिस्तान का जन्म ही घृणा और हिंसा के वातावरण में हुआ । [1]

---

(1) आर0सी0अग्रवाल " भारत की विदेश नीति " पृष्ठ-90

इस तनावपूर्ण असामान्य स्थिति का कारण केवल ऐतिहासिक वैमनस्य ही नहीं बल्कि पाकिस्तानी शासकों द्वारा भारत विरोधी प्रचार, पाकिस्तानी आवाम के समक्ष हौवा खड़ा करना है कि भारत पाकिस्तान का घोर शत्रु है ।[1] दोनों देशों के मध्य मतभेदों का कारण पाकिस्तान के मन में भय, शंका, घृणा, जातीय वैमनस्य, प्रतिस्पर्धा और शत्रुतापूर्ण दृष्टिकोण रहा है ।

बांग्लादेश को स्वतंत्र करवाने में भारत ने सराहनीय भूमिका का निर्वाह किया किन्तु कुछ समय बाद ही **भारत एवं बांग्लादेश** के बीच मतभेदों ने जन्म ले लिया। प्रारम्भ में दोनों देशों ने स्थायी सहअस्तित्व , एक दूसरे के मामलों में हस्तक्षेप न करने और एक दूसरे की अखण्डता तथा प्रभुसत्ता का मान-सम्मान करने में अपनी आस्था प्रकट की । दोनों देशों ने संस्कृति , कला, विज्ञान , तकनीकी क्षेत्र, बाढ़-नियन्त्रण, बिजली उत्पादन इत्यादि में एक दूसरे को सहयोग देने का वचन दिया । किन्तु फिर भी समय के साथ-साथ दोनों देशों के मध्य मतभेद उत्पन्न हो गये ।

स्वतन्त्रता के पश्चात बांग्लादेश में आतंकवादियों ने अपना प्रभाव स्थापित कर लिया और भारत के राजदूत पर भी हमला किया । इस कार्य से दोनों देशों के बीच मतभेद उत्पन्न हो गया । सीमा विवाद ने इन देशों के बीच अनेक समस्याएं उत्पन्न की। पूर्वी भारत की बड़ी नदियाँ बांग्लादेश से होकर समुद्र की ओर जाती हैं, जो गर्मी में अधिक समस्या उत्पन्न करती थी और सर्दी में भी संकट उत्पन्न करती थी ।[2] गंगा में पानी की मात्रा बढ़ाने के लिए भारत की योजना यह है कि ब्रह्मपुत्र नदी से गंगा तक एक नहर बनाई जाये । लेकिन बांग्लादेश की इच्छा उत्तर प्रदेश और बिहार में गंगा पर बाँध बनाकर पानी रोकने की है जो गर्मी के मौसम में गंगा में डाला जाय और गर्मी में गंगा में पानी की आपूर्ति बढ़ाई जाये । बांग्लादेश इस समझौते को लम्बी अवधि के लिए बढ़ाना चाहता था लेकिन भारत ने यह माँग स्वीकार नहीं की ।

---

(1) राजबीर सिंह " राष्ट्रीय रक्षा एवं सुरक्षा " पृष्ठ 176

(2) एस0आर0 चक्रवर्ती एण्ड वीरेन्द्र नारायण " बांग्लादेश ग्लोबल पॉलिटिक्स वाल्यूम- 3 पृष्ठ-25

इसके अतिरिक्त मतभेद का कारण अल्पसंख्यक बंगला नागरिक रहे । दूसरों के आन्तरिक मामलों में दखल न देना भारत की विदेश नीति का अंग रहा है । परन्तु मानवीय स्तर पर यह प्रश्न समय-समय पर चिन्ता और मतभेद को जन्म देता रहा था ।

भारत के प्रति ऋणी होते हुए भी बांग्लादेश के नेताओं ने भारत विरोधी प्रचार अभियान प्रारम्भ कर दिया । इन व्यक्तियों का मत था कि भारत बांग्लादेश की आर्थिक, राजनैतिक कमजोरियों के कारण उसका उसका शोषण कर रहा है । सीमा व्यापार के बहाने भारत से अवैध रूप से सामान लाया जाता है और इससे भारत को लाभ है तथा बांग्लादेश को भारी नुकसान । अतः इस सम्बन्ध में भी मतभेद बने रहे । इन्हीं सब मतभेदों का परिणाम यह है कि वर्तमान समय में भी भारत व बांग्लादेश के सम्बन्ध कटुतापूर्ण हो गए । सहयोग के स्थान पर तनावों ने जन्म ले लिया ।

**भारत - नेपाल** के मध्य मतभेद का मुख्य कारण यह रहा कि नेपाल की भौगोलिक स्थिति ऐसी है कि उसमें भारत की रूचि होना स्वाभाविक है । भारत की सुरक्षा के लिए आवश्यक है कि चीन का प्रभाव नेपाल में न बढ़ने पाए । नेपाल लोकतन्त्र की स्थापना हेतु हुए आन्दोलन में ग्रेट-ब्रिटेन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका से भी सहायता का इच्छुक था । इसलिए भारत सरकार का चिन्तित होना स्वाभाविक था । श्री जवाहर लाल नेहरू ने कहा था :-

" अब पिछले पन्द्रह दिनों से नेपाल में ये परिवर्तन आ गए हैं । नेपाल की आन्तरिक दशा में हमारी रूचि इस कारण और अधिक गहरी एवं व्यक्तिगत हो गई है क्योंकि हमारी सीमा पर तिब्बत एवं चीन में नवीन परिवर्तन हो रहे हैं । नेपाल से सहानुभूति के अतिरिक्त हमें अपने देश की सुरक्षा में रूचि है ।"[1]

---

(1) जवाहरलाल नेहरू " इण्डिया एण्ड फॉरेन पॉलिसी " पृष्ठ 436

1951 में सामन्तशाही शासन का अन्त होने पर एवं नेपाली कांग्रेस के सत्तारूढ़ होने पर कांग्रेस के नेताओं ने नेपाल की निर्धन एवं दुःखी जनता का ध्यान उसकी समस्याओं से हटाने के लिए भारत-विरोधी अभियान चलाया । 1953-54 में भारत-विरोधी भावनाएं नेपाल में बढ़ती गई एवं दोनों देशों में मतभेद बढ़ा । 1960 में राजा महेन्द्र के द्वारा कोईराला मन्त्रीमण्डल भंग किये जाने पर कुछ नेता भारत भाग आए और उन्होंने नेपाल-विरोधी गतिविधियों को भारत-भूमि से चलाना प्रारम्भ कर दिया । इससे दोनों देशों में मतभेद बढ़े । राजा महेन्द्र ने नेपाल के संविधान को स्थगित करके सारी शक्तियाँ हस्तगत कर लीं । पं0 नेहरू ने महाराजा के इस काम को लोकतन्त्र के विरूद्ध बताया । इससे भारत एवं नेपाल के मध्य मतभेद उत्पन्न हुए । 1962 में भारत -चीन युद्ध में नेपाल की तटस्थता ने दोनों देशों के मतभेदों में और भी वृद्धि की ।

**भारत एवं भूटान** के मध्य कोई विशेष मतभेद का कारण नहीं दिखाई देता । एक बार 22 मार्च, 1954 को भूटान के दक्षिण भाग सारभाग {जहाँ सर्वाधिक नेपाली बसे हुए हैं} में सत्याग्रह करने का अभियान प्रारम्भ किया, तब दल के नेताओं ने भारतीय नेताओं से समर्थन प्राप्त करने का भरसक प्रयास किया था लेकिन उस संकटकाल में इस दल को भारत से कोई सहायता प्राप्त नहीं हो सकी ।[1] इस गतिविधि ने भूटान को क्षुब्ध अवश्य किया । पिछले कुछ समय पूर्व भूटान के राजा जिग्में सिग्में वांगचुक की श्री कमलजीत रतन के साथ हुए साक्षात्कार में यह पूँछे जाने पर कि " भूटान में भारत विरोधी भावनाएं क्यों जोर पकड़ रहीं है ?" उन्होंने उत्तर दिया कि "भूटान में भारत विरोधी भावनाएं कतई नहीं हैं । जब हमने कुछ गैर कानूनी गतिविधियों पर रोक लगाने का फैसला किया तब भारत के कुछ अखबारों ने इस तरह का प्रचार किया।[2]

---

{1} इतवारी पत्रिका " भूटान में लोकतन्त्र की आहट" 13 अक्टूबर 1991 पृष्ठ-1

{2} इण्डिया टुडे " भूटान , आधुनिकता की आहट से आतंकित" 15 सितम्बर 1989 पृष्ठ-79

अतः स्पष्ट है कि भारत एवं भूटान में कोई विशेष मतभेद का कारण नहीं रहा ।

**भारत-श्रीलंका** के मतभेदों का मुख्य कारण श्रीलंका का पश्चिमी गुट की ओर झुकाव था । स्वतन्त्रता के पश्चात् त्रिंकोमाली नौसैनिक अड्डा और कटुनायके का हवाई अड्डा ब्रिटिश नियन्त्रण में रहने देने का निश्चय करते हुए श्री लंका के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जॉन कोटलेवाला ने इस निर्णय को उचित ठहराते हुए कहा-

" श्रीलंका के प्रति भारतीय साम्राज्यवादियों की महत्वाकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए ऐसा करना सर्वथा ठीक है ।"[1]

उपनिवेशवाद को लेकर दोनों देशों के प्रधानमन्त्रियों में काफी मतभेद रहा। भारत एवं श्रीलंका के बीच मतभेद का एक अन्य कारण पाक-जल डमरू में स्थित एक छोटे से द्वीप कच्छतीबू के स्वामित्व के बारे में था । सिंहली भाषा को राजभाषा घोषित किये जाने पर तमिलों द्वारा उपद्रव किये जाने से श्रीलंका सरकार को यह सन्देह था कि इन उपद्रवों के पीछे भारत का हाथ है । इसके अतिरिक्त मतभेद का एक कारण श्री लंका मे कई पीढ़ियों से रह-रहे भारत मूल वंशियों को नागरिकता न प्रदान करने को लेकर है ।

**भारत एवं मालदीव** के बीच किसी प्रकार का मतभेद नहीं है । आकार एवं साधनों में अति संकुचित होने के कारण मालदीव की सुरक्षा की जिम्मेदारी भारत पर है । मालदीव में हुए आकस्मिक आक्रमण ने इस तथ्य को और भी स्पष्ट कर दिया ।

इस प्रकार देखा जा सकता है कि इन देशों ने सहयोग स्थापित करने के लिए जो आकांक्षा की थी उनको पूर्ण करने में उनके मध्य अनेक मतभेदों ने जन्म ले लिया और इन्हीं मतभेदों ने धीरे-धीरे विवाद का रूप ग्रहण कर लिया।

---

(1) एम0एस0राजन " इण्डिया इन वर्ल्ड अफेयर्स " पृष्ठ 385

दक्षिण एशिया के मध्य हुये **विवादों** को दो भागों में विभजित किया जा सकता है -

(1) सामान्य विवाद

(2) विशिष्ट विवाद

**सामान्य विवादों** की श्रृंखला में क्रमशः भारत के साथ पाकिस्तान, बांग्लादेश , नेपाल , भूटान, श्रीलंका एवं मालदीव के विवादों का विवेचन किया जायेगा-

पाकिस्तान की नींव साम्प्रदायिक द्वेष , घृणा और हिंसा पर आधारित है । अपने निर्माण की इस पृष्ठभूमि के आधार पर पाकिस्तान ने प्रारम्भ से ही भारत के प्रति शत्रुतापूर्ण रवैया अपनाया । भारत -पाकिस्तान में प्रारम्भ से ही गहरे विवाद रहे, जिनके स्पष्ट प्रमाण उनके मध्य होने वाले तीन युद्धों से मिलता है ।

आज भी **भारत - पाकिस्तान** के मध्य **सियाचीन विवाद** प्रमुख रहा है सियाचीन ग्लेशियर कश्मीर के लद्दाख प्रान्त में कराकोरम दर्रे की ओर जाने वाले मार्ग पर स्थित है । अतः इस क्षेत्र को पर्वतीय डिवीजन की ट्रेनिंग के लिये प्रयुक्त कर सकते हैं । चीन और पाकिस्तान की सीमा को जोड़ने वाला खुंजरेव दर्रा, चीन अधिकृत भारत का अक्साई चिन भाग, आघिल पहाड़ी क्षेत्र जिसे पाकिस्तान ने 1963 में चीन को दिया था और रूस द्वारा संरक्षित वारवन गलियारा, जो कि अफगानिस्तान के सिरे पर पड़ता है, सियाचीन के पास पड़ते हैं । पाकिस्तान इस तरह केवल अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहा हैं, चीन के लिये स्थिति सुदृढ़ कर रहा है ।

भारत - पाकिस्तान के बीच सियाचीन के बारे में समझौता हो गया है और 1972 के पूर्व की स्थिति पर वापसी के लिये भी सहमति हो चुकी है । जनरल जिया ने कहा था कि-

" ------ सियाचीन हिमनद से सम्बन्धित संकटपूर्ण स्थिति को सुलझा लिया गया है और इसका पूरा श्रेय भारतीय नेतृत्व को जाता है । "
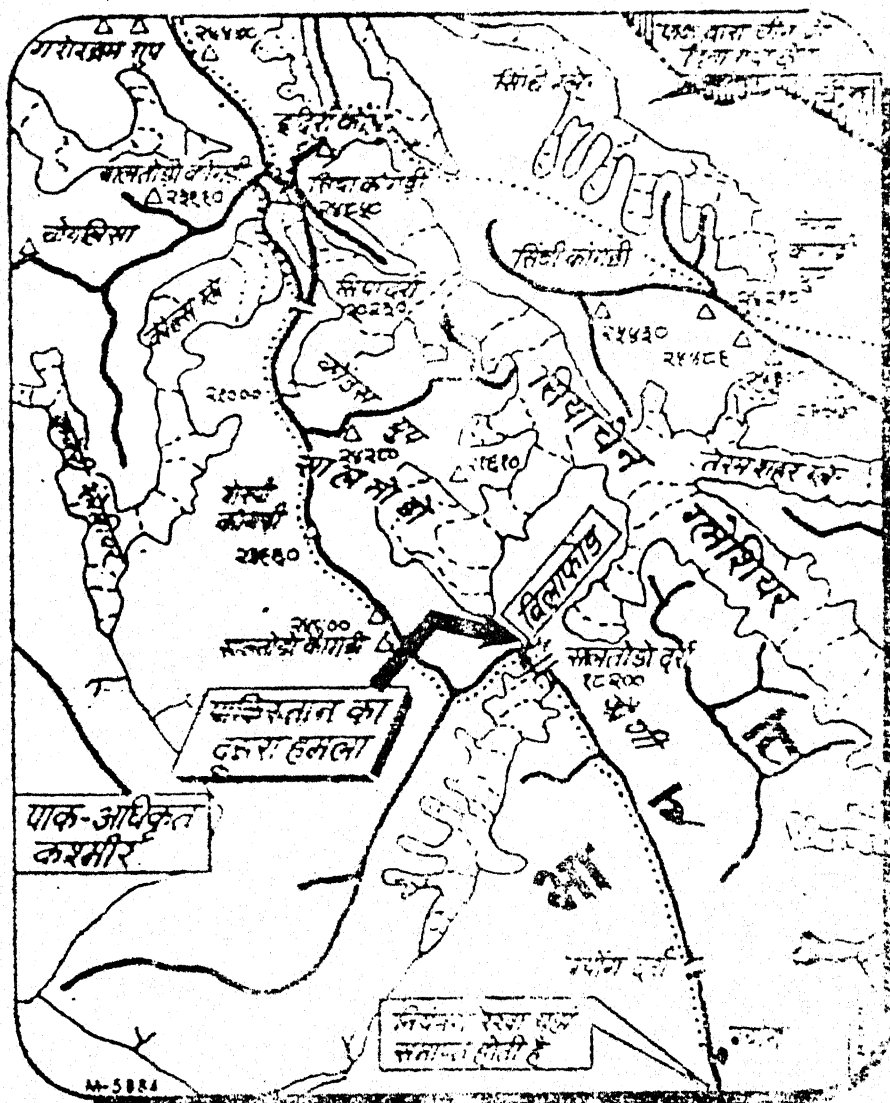
सोवियत रूस द्वारा **अफगानिस्तान में हस्तक्षेप** करने से भी भारत व पाक के मध्य विवाद हुआ । 1919 में रूस अफगानिस्तान को रूसी प्रभाव क्षेत्र बना चुका था। भारत पाक अफगान के मध्यस्थ डूरंड सीमा रेखा क्षेत्र से पाकिस्तान स्थित अफगान शरणार्थी विद्रोहियों, मुजाहिदीनों वामपंथी अफगानिस्तान सरकार और रूसी सैनिकों के मध्य त्रिकोणिक युद्ध चला । पाकिस्तान ने यहाँ पर भारत द्वारा अपनायी गयी नीतियों का खुलकर विरोध किया क्योंकि भारत के रूस के साथ मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध है ।[1]

भारत -पाकिस्तान के मध्य प्रमुख मतभेद पाकिस्तान द्वारा **परमाणु- बम बनाने** को लेकर है । भारत सरकार द्वारा एकत्रित विभिन्न सूचनाओं से यह स्पष्ट हो चुका है कि पाकिस्तान अनाभिकीय परीक्षण करके परमाणु बम बनाने बम बनाने में संलग्न है जो भारतीय सुरक्षा व्यवस्था "के लिये खतरे का प्रतीक है । पाकिस्तान द्वारा नौसैनिक मेगावाट का जो परमाणु रियेक्टर लगाया जा रहा है, इससे यह साफ संकेत मिलते हैं कि पाकिस्तान परमाणु शास्त्रों की होड़ भी शुरू करने वाला है । [2]

एक अन्य विवाद दोनों देशों का एक- दूसरे पर अपने- अपने **आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप** करने का भी है । पाकिस्तान भारत में कुछ आंतरिक दंगे भड़काने एवं उग्रवादियों को समर्थन देने का भी कार्य करता है । अतः भारत का चिन्तित होना स्वाभाविक है । पाकिस्तान भी भारत पर कुछ इसी प्रकार के आरोप लगाता है । पाकिस्तान भारत पर सिंध प्रदेश में होने वाले दंगों का आरोप लगाता है । उसका कहना है कि भारत पाकिस्तान में चलने वाले स्वतन्त्रता बहाली आन्दोलन के नेताओं को विभिन्न रूप से सहायता दे रहा है[3]। इस क्षेत्र में शांति तभी स्थापित होगी जब तक दोनों ही पक्ष अपनी-अपनी प्रतिक्रियावादी नीतियों का परित्याग नहीं करते ।

---

(1) राजवीरसिंह " राष्ट्रीय रक्षा एवं सुरक्षा " पृष्ठ 184

(2) दैनिक जागरण " पाक परमाणु बम " संपादकीय " 12 नवम्बर 1987

(2) राजबीर सिंह " राष्ट्रीय रक्षा एवं सुरक्षा " पृष्ठ 185
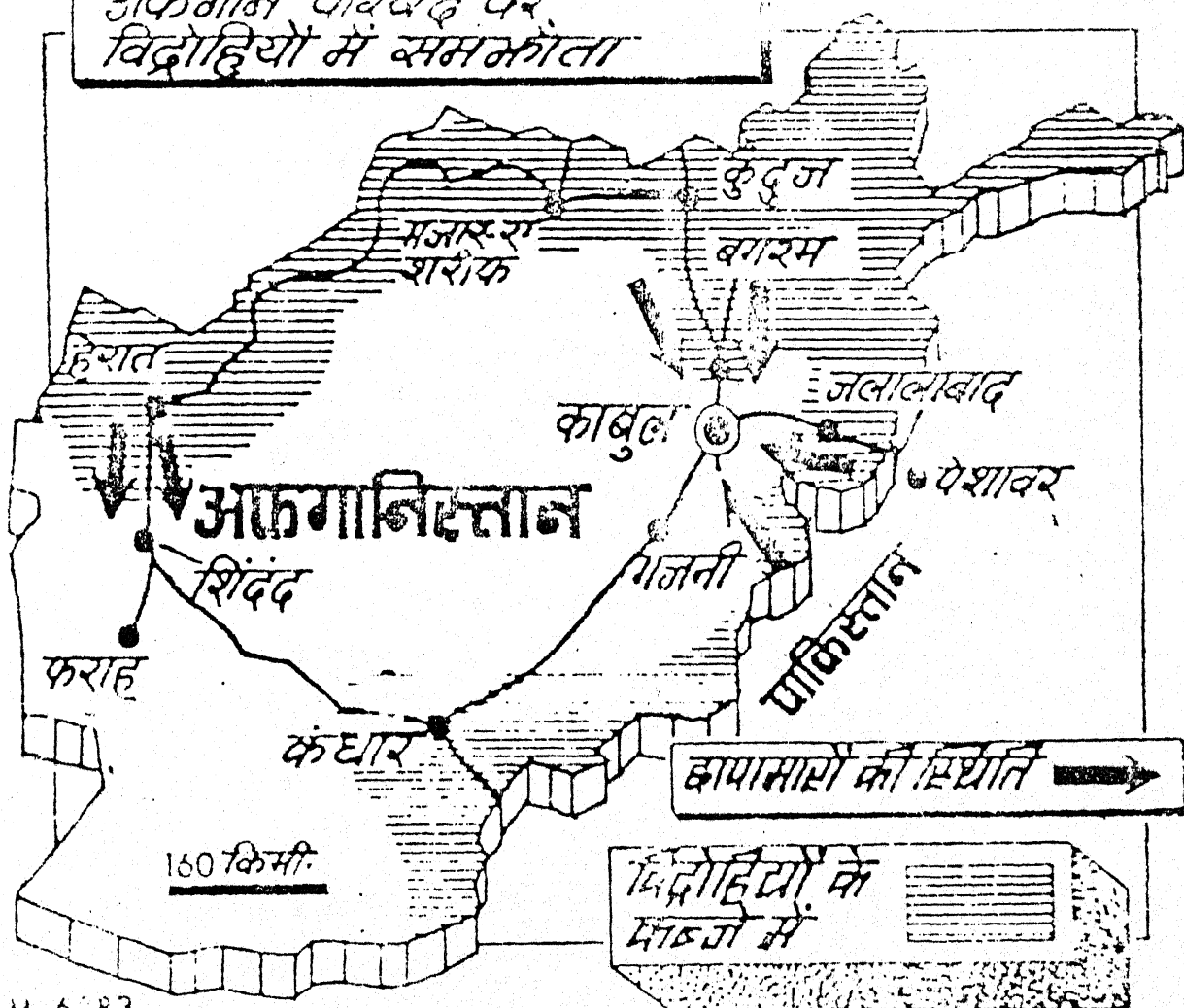
अफगान परिषद पर
विद्रोहियों में समझौता
कुंदुज
मजार-ए-शरीफ
बगराम
हिरात
जलालाबाद
काबुल
पेशावर
अफगानिस्तान
शिंदंद
गजनी
फराह
पाकिस्तान
कंधार
छापामारों की स्थिति
160 किमी.
विद्रोहियों के कब्जे में
M-6183

**भारत एवं बांग्लादेश** के मध्य विवाद का एक कारण **शरणार्थियों की समस्या** हैं । बांग्लादेश से भारत के उत्तरी -पूर्वी राज्यों में लगातार प्रवेश करने वाले शरणार्थियों ने असम राज्य में अतिविस्फोटक स्थिति पैदा कर दी थी । यह भारत की आन्तरिक सुरक्षा के लिये लगातार ख़तरनाक बनी रही । भारत-सरकार ने बांग्लादेश से पलायन को रोकने के लिये भारत-बांग्लादेश सीमा पर कटीलेतार लगाने की योजना बनाई है । जब भारत सरकार ने इस योजना को कार्यरूप देना चाहा तो बांग्लादेश ने इसका विरोध किया । इसके कारण भारत व बांग्लादेश सम्बन्धों में काफी दरार आई ।

भारत -बांग्लादेश के मध्य **तीन बीघा गलियारा** विवाद सम्बन्धों में रोड़ा बना हुआ था । फुटबाल के मैदान के आकार का (178 कि0मी0 × 85 कि0मी0) भूमि का यह टुकड़ा वर्षों पूर्व भारत द्वारा अनंतकाल के लिये बांग्लादेश को पट्टे पर देने में सहमत हो गया था । दोनों देशों के बीच 1982 में यह स्पष्ट कर दिया गया था कि अनंतकाल के लिये दिये जाने वाले इस पट्टे का उद्देश्य बांग्लादेश की गलियारे से जुड़ी दो बस्तियों पर प्रभुसत्ता बनाये रखने में सुविधा प्रदान करना था पर अन्तिम रूप से गलियारे पर भारत की ही प्रभुसत्ता बनी रहनी थी । इस स्पष्टीकरण के बावजूद 1983 में कलकत्ता उच्च न्यायालय में इस समझौते के कार्यान्वयन को चुनौती दी गयी ।[1] भारत एवं बांग्लादेश के बीच तीन बीघा क्षेत्र से गुजरने का अधिकार बांग्लादेश को देने वाले पट्टे की शर्तों पर सहमति हो गयी । इस पर 26 जून 1992 से अमल करना प्रारम्भ कर दिया गया है ।

भारत बांग्लादेश के मध्य विवाद का एक कारण **नागा मिजो विद्रोहियों** को लेकर है । बांग्लादेश इन विद्रोहियों को अपने यहाँ शरण देता रहा है । इस सम्बन्ध में भी भारत से उसका विवाद चल रहा है ।

---

(1) पब्लिक एशिया " तीन बीघे के कारण तीन तेरह हुये रिश्ते" जून 1989

पश्चिम बंगाल

जलढाका नदी

पश्चिम बंगाल

भारत

तीस्ता नदी

हल्दीबाड़ी

तीन बीघा मार्ग
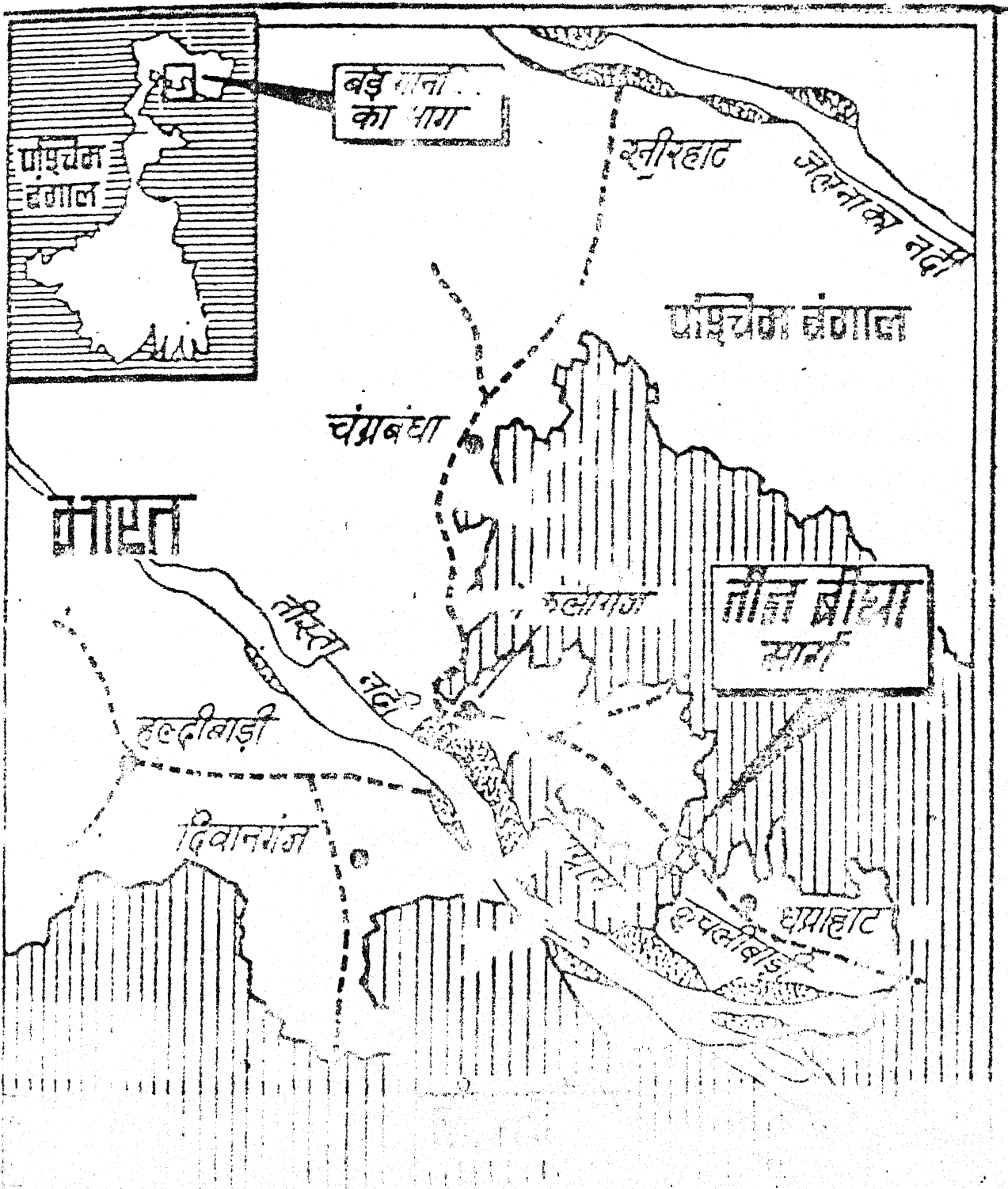
**भारत -नेपाल** के मध्य विवाद का मुख्य कारण **चीन से हथियारों की खरीद** को लेकर है । सन् 1987 के प्रारम्भ में भारत को ज्ञान हुआ कि नेपाल ने चीन से बड़े पैमाने पर सामाजिक महत्व के हथियार मंगाये हैं । इन हथियारों का आना 1986 में ही प्रारम्भ हो गया था किन्तु 1986 में जब भारत ने इस बारे में जानकारी प्राप्त करनी चाही, तब नेपाल ने पहले तो इससे स्पष्ट रूप से इंकार कर दिया पर बाद में उसने हथियारों के आयात की बात मान ली । इस प्रकार इन हथियारों के आयात पर भारत से उसका विवाद रहा । इस विवाद के सुलझने के आसार उस समय दिखायी दिये जब नेपाल के प्रधानमंत्री श्री गिरिजा प्रसाद कोइराला ने भारत के प्रधानमंत्री श्री नरसिंहराव के साथ साझी प्रेस कांफ्रेस में यह कहा- चीन से हथियारों की खरीद या उसकी मदद से नेपाल में भारत की सीमा से लगे क्षेत्रों में सड़कों का बनाया जाना अब बीते युग की बात है । उन्होंने जोर देकर कहा कि अब ये बातें दुहराई नहीं जायेंगी।[1]

कुछ समय पूर्व भारत-नेपाल का सबसे बड़ा विवाद **भारत - नेपाल व्यापार संधि** को लेकर हुआ था । भारत-नेपाल व्यापार संधि की मियाद 23 मार्च 1988 को समाप्त हो गयी थी । भारत ने इसे दो बार 6-6 माह के लिये बढ़ाया । भारत ने लिखित रूप से नेपाल को सूचना दी कि परस्पर बातचीत के साथ इस संधि पर विचार किया जावे किन्तु नेपाल ने कोई बातचीत नहीं शुरू की । वह व्यापार और पारगमन की अलग-अलग संधियों के पक्ष में अड़ा रहा । इस विवाद से ग्रस्त होकर भारत-नेपाल सम्बन्ध तेज़ी से बिगड़ गये । नेपाल चीन की शह पर चलकर इस संधि को पुर्नजीवित नहीं कर रहा था ।

---

(1) जनसत्ता " नेपाल की सुरक्षा अबचीन पर निर्भर नहीं " 7 दिसम्बर 1991 पृष्ठ-1

6 दिसम्बर 1991 को पुनः भारत व नेपाल ने व्यापार और पारागमन पर पृथक संधियों समेत पांच समझौते पर हस्ताक्षर किये और इसके साथ ही द्विपक्षीय सम्बन्धों की एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ ।[1]

**भारत एवं भूटान** के मध्य कोई विवाद नही है फिर भी कुछ समय से भूटान में भारत -विरोधी भावनायें जोर पकड़ रही हैं और उनके मध्य सम्बन्ध उतने मधुर नहीं हैं- जैसे पूर्व में थे । भूटान में कुछ उद्यमियों ने तकरीबन 20-20 बजार रू0 में कुछ डिश ऐंटेना लगा लिये थे और लोगों को 1000 से 2000 रू0 में कनेक्शन दे दिये । यह कार्य गैर कानूनी था, इसलिये वहाँ के राजा ने 29 डिश ऐंटेना हटवा दिये । उनका कहना था कि हम अपने उपग्रह के लिये तकरीबन 60 लाख डॉलर खर्च कर रहे हैं । यदि हमारे लोग भारतीय अथवा बांग्लादेश टी0वी0 के कार्यक्रमों को देखने के आदी हो गये थे तो भूटान के कार्यक्रमों को पसन्द नहीं करेंगे जो शुरू में उतने अच्छे नहीं होगे । एक बार हमारे टी0वी0 कार्यक्रम शुरू हो जावें तो वे पड़ोसी देशों के कार्यक्रम देख सकते हैं। फिर बांग्लादेश टी0वी0 पर तमाम विदेशी फिल्में दिखायी जाती हैं । हम नहीं चाहते कि हमारा युवा वर्ग पशिचमी सभ्यता को आधुनिकता समझ बैठे ।[2]

**भारत-श्रीलंका में हुये विवादों में प्रमुख** विवाद **व्यापारिक-संतुलन की समस्या** है । व्यापार संतुलन सदैव भारत के ही पक्ष में रहा है, क्योंकि भारत श्रीलंका को भारी मात्रा में वस्तुयें प्रदान करने में सक्षम है जबकि श्रीलंका भारत को उतनी मात्रा में वस्तुयें प्रदान नहीं कर सकता ।[3] भारत श्रीलंका के समान चाय का वृद्ध उत्पादक देश है, इसलिये भारत को श्रीलंका से चाय के आयात की आवश्यकता नहीं होती । भारत का श्रीलंका से आयात का क्षेत्र , रबड़ , कॉपर, नारियल, तेल आदि तक सीमित है जबकि श्रीलंका को भारत से सूती कपड़ा , सीमेंट प्याज, मछली, मिर्चा, बीड़ी की

---

(1) राजस्थान पत्रिका " व्यापार व पारागमन सहित भारत नेपाल में पांच समझौते, " 7 दिसम्बर 1991 पृष्ठ 3

(2) इण्डिया 5 डे भूटान आधुनिकता की आहट से आंतकित " 15 सितम्बर 1989 पृष्ठ-79

(3) माहेश्वरी " इण्डिया- श्रीलंका इकोनामिक रिलेशन्स" पृष्ठ-170.

पत्तियाँ, दवायें, मशीन एवं औजार आयात करने पड़ते हैं।[1]

भारत श्रीलंका के मध्य **समुद्री सीमा निर्धारण** सम्बन्धी विवाद भी सदैव रहा । श्रीलंका भारत की दक्षिणी भौगोलिक सीमाओं के अति समीप स्थित है तथा यह भारत से केवल 35 कि0मी0 के छोटे से समुद्री मार्ग पाक-जलडमरू संयोजक द्वारा विभाजित है । मार्च 1956 में भारत के राष्ट्रपति की घोषणा के अनुसार अति प्राचीन तीन मील की समुद्री सीमा को बढ़ाकर छः मील किया तथा 1957 में भारत ने सौ मील के समुद्री मार्ग में अपने मछली पकड़ने के अधिपत्य का दावा किया ।[2]

दोनों देशों ने आपस में समझौतावादिता की नीति अपनाकर इस सदस्यता का समाधान करने में सफलता प्राप्त की है ।

कुछ समय पूर्व **शांति सेना की वापसी** को लेकर दोनों देशों के मध्य विवाद उत्पन्न हुआ । तमिलों पर हो रहे अत्याचार के कारण श्री लंका सरकार ने मदद मांगने पर भारत ने वहाँ शांति स्थापित करने के लिये अपनी सेना भेजी । कुछ समय बाद श्री लंका सरकार का कहना था कि भारत अपनी सेना वापस बुला ले किन्तु तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने उनकी यह बात मानने से इंकार कर दिया । उनका कहना था कि जब तक पूर्ण रूप से शांति स्थापित नहीं हो जाती, वो सेना को वापस नहीं बुलायेंगे । इसी बात को लेकेर दोनों देशों के मध्य विवाद उत्पन्न हुआ । अंत में दोनों देशों के बीच एक समझौता हुआ जिसके तहत 30 मार्च 1990 को समस्त शांति सेना की वापसी की बात तय की गयी । इसके बावजूद श्रीलंका के राष्ट्रपति प्रेमदासा भारत का विरोध करते रहे ।

**भारत -श्रीलंका के मध्य** हुये **विवादों में एक विवाद** हिन्दमहासागर में **नौसैनिक अड्डे की स्वीकृति** को लेकर भी हुआ । हिन्दमहासागर में त्रिकोमली पर अमेरिकी नौसैनिक अड्डा बनाने की स्वीकृति श्रीलंका ने प्रदान की जिसने दोनों देशों के बीच गहरा विवाद किया । हिन्दमहासागर में अमेरिका द्वारा अड्डा स्थापित किये जाने पर भारत की सुरक्षा को ख़तरा उत्पन्न हो गया है । इस तथ्य ने दोनों देशों के मध्य

---

(1) माहेश्वरी " इण्डिया श्रीलंका इकोनामिक रिलेशन्स " पृष्ठ -170

(2) कोडीकारा " फॉरेन पॉलिसी ऑफ श्रीलंका पृष्ठ-31

विवाद की स्थिति उत्पन्न कर दी है ।

भारत - श्रीलंका के मध्य एक विवाद **गुटनिरपेक्षता की समस्या** को लेकर भी है । भारत एवं श्रीलंका दोनों ने ही अपनी विदेशनीति का आधार स्तम्भ गुटनिरपेक्षता की नीति को बनाया है लेकिन फिर भी महाशक्तियों की नीतियों से प्रभावित होने के कारण इनके मध्य गुटनिरपेक्षता की समस्या उत्पन्न हो जाती है । श्री लंका का झुकाव प्रारम्भ से ही पश्चिमी देशों के प्रति रहा है जिसके कारण इस द्वीप ने अपने क्षेत्र में ब्रिटेन व अमेरिका को समय-समय पर सैनिक सुविधायें दीं । भारत की भी सोवियत रूस के प्रति झुकाव की नीति के कारण इसकी गुटनिरपेक्षता की नीति को आलोचनाओं का सामान करना पड़ा है ।

**भारत एवं मालदीव** के मध्य चूँकि किसी प्रकार के मतभेद ही नहीं उत्पन्न होने पाये, इसलिये उनके बीच किसी प्रकार का कोई विवाद कभी उत्पन्न नहीं हुआ ।

**पाकिस्तान एवं बांग्लादेश** के सम्बंध पिछले कुछ वर्षों से मैत्रीपूर्ण चले आ रहे हैं किन्तु फिर भी दोनों देशों के बीच बांग्लादेश में बसे पाकिस्तान के **बिहारी मुस्लिमों** का विवाद 1971 से ही चला आ रहा है । पाकिस्तान ने अपने देश के इन बिहारी मुसलमानों के बांग्लादेश से प्रत्यावर्तन के संदर्भ में कभी भी विशेष रूचि प्रदर्शित नहीं की । 60,000 बिहारी मुस्लिमों में से केवल 1 लाख 70 हजार व्यक्तियों का 1984 तक पाकिस्तान प्रत्यावर्तन हुआ है । वर्तमान समय में 4 लाख 30 हजार बिहारी मुस्लिम बांग्लादेश में हैं जो पूर्णरूप से बांग्लादेश तथा रेडक्रास की सहायता पर निर्भर हैं। वास्तव में वे बिहारी मुस्लिम कुशल श्रमिक हैं जो कि शीघ्रता से अपने घर वापस जाने के इच्छुक हैं किन्तु पाकिस्तान की सरकार ने इस समस्या के समाधान हेतु कोई कार्यवाही नहीं की तथा यह तक दिया कि सउदी अरब के संगठन रिबेता-ए-आलम -अल-इस्लाम" ने बांग्लादेश से बिहारी मुस्लिमों के प्रत्यावर्तन एवं पाकिस्तान में उनके पुर्नवास की जिम्मेदारी ली है जबकि वास्तव में इस समस्या का समाधान पाकिस्तान सरकार को ही करना चाहिए ।

अगस्त 1992 में बांग्लादेश की प्रधानमंत्री बेगम खालिदा जिया पाकिस्तान यात्रा पर गयीं तथा उन्होंने पाकिस्तान सरकार से इन बिहारी मुस्लिमों की पाकिस्तान प्रत्यावर्तन के लिये अनुरोध किया । वर्तमान समय में यद्यपि पाकिस्तान एवं बांग्लादेश के सम्बन्ध काफी मधुर हैं तथा दोनों ही देश अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में समान मत प्रस्तुत करते हैं किन्तु फिर भी इन दोनों देशों के मध्य बिहारी मुस्लिमों का सामान्य सा विवाद काफी समय में चला आ रहा है तथा निकट भविष्य में इस विवाद के समाधान की संभावनाएं भी नज़र नहीं आ रही है ।

**नेपाल एवं भूटान** दक्षिण एशिया के पड़ोसी राष्ट्र हैं तथा दोनों के बीच प्रारम्भ से मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध चले आ रहे हैं लेकिन फिर भी दोनों देशों में मधुर सम्बन्धों के मध्य भूटान में बसे नेपाली मूल के लोगों के कारण सामान्य सा विवाद देखने को मिलता है । भूटान के दक्षिण भाग में नेपाली मूल के लोग बसे हैं । इनका व्यवसाय कृषि और शारीरिक श्रम है । नेपाली लोग अधिक परिश्रमी होने के कारण भूटान की नागरिकता प्राप्त करने में सफल होते हैं । भूटान के प्रशासन के यद्यपि अपने स्वार्थ की पूर्ति के लिये नेपालियों का भूटान में प्रवेश होने दिया एवं नागरिकता भी प्रदान की लेकिन उन्हें सम्माननीय स्थान नहीं प्रदान किया गया । नेपालियों को भूटान में केवल दो स्थानों पर बसने की स्वतन्त्रता है तथा उन्हें भूटान में भूमि खरीदने का अधिकार प्राप्त नहीं है । भूटान के प्रशासन में भी नेपालियों को कहीं भी प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है ।

वर्तमान समय में भूटान में नेपाली मूल के 45% व्यक्ति निवास करते हैं जोकि भूटान की राजनैतिक व्यवस्था के लिये एक चुनौती हैं । नेपाली मूल के इन लोगों ने भूटान में अपने अधिकारों की प्राप्ति हेतु अनेक आन्दोलन किये तथा भूटान में लोकतांत्रिक व्यवस्था की माँग की । भारत सरकार से भी उन्होंने सहयोग माँगा लेकिन भारत सरकार ने इस समस्या के समाधान के संदर्भ में कोई सक्रिय कदम नहीं उठाया ।

वर्तमान समय में जब नेपाल में जनतांत्रिक आन्दोलन की सफलता की आकांक्षा की जा रही है । यद्यपि नेपाल एवं भूटान की सरकार के बीच कभी भी प्रत्यक्ष रूप से यह विवाद स्पष्ट रूप से उभर कर नहीं आया लेकिन अप्रत्यक्ष रूप से इस समस्या ने दोनों देशों के बीच दूरियाँ उत्पन्न कर दी ।

**मालदीव एवं श्रीलंका** के बीच यद्यपि कोई विशिष्ट विवाद नहीं है फिर भी दोनों देशों के सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण नहीं कहे जा सकते । 1988 में मालदीव पर कुछ बाह्य सैनिकों द्वारा आक्रमण किया गया था तो विश्व जनमत के समक्ष यह संदेह प्रकट किया गया कि यह आक्रमण श्रीलंका के मिशनरियों के सहयोग से हुआ है लेकिन अभी तक इस बात की कहीं भी कोई स्पष्ट रूप से पुष्टि नहीं हो पायी है । वास्तविकता कुछ भी हो लेकिन इस घटना के उपरान्त मालदीव एवं श्रीलंका के सम्बन्धों में कुछ तनाव उभर कर आया है तथा दोनों देश निकटतम पड़ोसी होते हुए भी इस सामान्य विवाद के कारण दूर के पड़ोसी हो गये हैं ।

**विशिष्ट विवादों** की श्रेणी में अधिकांशतः विवाद भारत एवं उसके पड़ौसी देशों के साथ ही है क्योंकि भारत दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्रों में सर्वाधिक विकसित एवं वृहद राष्ट्र है । दक्षिण एशिया के अन्य समस्त राष्ट्र भारत की अपेक्षा भोगोलिक रूप से अत्यन्त छोटे तथा आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से अल्प विकसित हैं। दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्रों की भोगोलिक सीमा किसी न किसी रूप में भारत की भोगोलिक सीमाओं से स्पर्श करती है एवं भारत की आर्थिक एवं राजनैतिक समृद्धि के प्रति असुरक्षा की भावना के कारण भी दक्षिण एशिया के इन देशों के साथ भारत के विशिष्ट विवाद समय-समय पर सामने उजागर हुए हैं जबकि भारत के अतिरिक्त दक्षिण एशिया के अन्त राष्ट्रों के मध्य आज तक कोई भी विशिष्ट विवाद स्पष्ट नहीं हुआ है ।

**कश्मीर-विवाद** भारत एवं पाकिस्तान के मध्य एक गम्भीरतम विवाद है । जम्मूकश्मीर भारत के उत्तर में हिमालय की चोटियों में स्थित एक अतिसुन्दर और रम्य रियासत थी । 15 अगस्त 1947 को सत्ता हस्तान्तरण के समय ही देशी रियासतों को अपनी इच्छानुसार भारत अथवा पाकिस्तान के साथ भोगोलिक स्थिति को देखते हुए सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार दिया गया । कश्मीर के शासक यह नहीं तय कर पाए कि वह किस देश के साथ सम्बन्ध स्थापित करें । अतः अन्तिम निर्णय लेने के पहले उन्होंने भारत एवं पाकिस्तान के साथ यथा-स्थिति समझौता करने की प्रार्थना की। पाकिस्तान ने इसे स्वीकार भी किया । महाराजा ने अपनी रियासत को स्वतन्त्र ही रहने दिया । यदि वह अपनी रियासत को पाकिस्तान मे मिला देते तो जम्मू तथा लद्दाख की गैर मुस्लिम जनता (हिन्दू तथा बौद्ध) और राष्ट्रीय सम्मेलन के मुस्लिम अनुयायी उनके इस कदम से रूष्ट हो जाते । यदि वह भारत में अपनी रियासत मिला देते तो गिलगित तथा पाकिस्तान के साथ लगने वाले प्रदेशों की मुस्लिम जनता उनसे रूष्ट हो जाती । इसके अतिरिक्त उस समय उनकी रियासत के सड़को से यातायात के साधन पाकिस्तान के साथ थे और वनों के साधन विशेष कर भवनों के निर्माण में काम आने वाली लकड़ी उन नदियो के द्वारा एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जायी जाती थी जो कि पाकिस्तान मे बह कर जाती थी ।[1] इसलिए उनके लिए निर्णय करना आसान नहीं था ।

किन्तु कुछ ही समय बाद पाकिस्तान ने कश्मीर की आर्थिक नाकेबन्दी करके उस पर दबाव डाला कि वह पाकिस्तान के साथ विलय कर ले । अनेक बार कश्मीर पर पाकिस्तान द्वारा आक्रमण किया गया । इसलिए भारत सरकार ने पाकिस्तान की सरकार से यह आग्रह किया कि वह आक्रमणकारियों को पाकिस्तान की भूमि को एक आधार के रूप में प्रयोग न करने दें । आक्रमणकारियों को किसी प्रकार की सैनिक मदद न दें और अन्य सब प्रकार की ऐसी सहायता आक्रमणकारियों की बन्द करे जिससे

---

(1) वी0पी0 मेनन " दि स्टोरी ऑफ दि इन्टीग्रेशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स " पृष्ठ 394-95

पाकिस्तान तथा भारत में लम्बा संघर्ष चलने की सम्भावना हो ।[1] पाकिस्तान के नेताओं ने इस बात पर रोष प्रकट किया कि उनके विरूद्ध इस प्रकार के आरोप लगाए गए ।[2]

26 अक्टूबर 1947 को जम्मूकश्मीर का भारत में विलय स्वीकार कर लिया गया । भारतीय सेना ने पाकिस्तान की बढ़ी हुई सेना को रोका तथा श्रीनगर की रक्षा की । तभी से भारत एवं पाकिस्तान के मध्य कश्मीर एक विवाद बनकर रह गया जिसका वर्तमान समय तक कोई भी हल नहीं निकाला जा सका है ।

इस विवाद के लिए भारत एवं पाकिस्तान में पत्रकार, राजनेता और बुद्धिजीवी अपने-अपने अन्दाज़े लगा रहे हैं कि क्या कश्मीर के प्रश्न पर पाकिस्तान से समझौता हो सकता है । अधिकृत कश्मीर के पूर्व प्रधानमंत्री सरदार राठौर का कहना है कि -

अमेरिका के एक वरिष्ठ राजनयिक ने उनसे मुलाकात मे कहा था कि कश्मीर के मसले का यही हल हो सकता है कि इसे एक अलग देश का दर्जा दे दिया जाये ।[3] वास्तव में राठौर को इसलिए हटा दिया गया था क्योंकि उन पर प्रधानमंत्री श्री नवाज़ शरीफ को सन्देह था कि वह अधिकृत कश्मीर को पाकिस्तान से अलग कर देंगे । दैनिक 'जंग' के अनुसार अक्टूबर के अन्तिम सप्ताह करांची में कश्मीरियों के एक गुट ने प्रदर्शन करके नारे लगाए कि " कश्मीर पाकिस्तान में शामिल नहीं होगा । हम आजाद होकर रहेंगे । " पाकिस्तान सरकार को यही खतरा भी है इसलिए उसने गिलगित और बलस्तिान को अधिकृत कश्मीर में शामिल नहीं किया बल्कि उनपर सीधा कब्ज़ा कर रखा है ।[4]

---

(1) वी0पी0 मेनन " दि स्टोरी ऑफ दि इन्टीरोशन ऑफ इण्डियन स्टेट्स" पृष्ठ 410

(2) जवाहरलाल नेहरू " इण्डियाज फॅरैन पोलिसी " पृष्ठ -452

(3) दैनिक हिन्दुस्तान " कश्मीर पर भारत-पाक समझौते के प्रयास " जमनादास अख्तर 13 नवम्बर 1991

(4) ---- वही ----
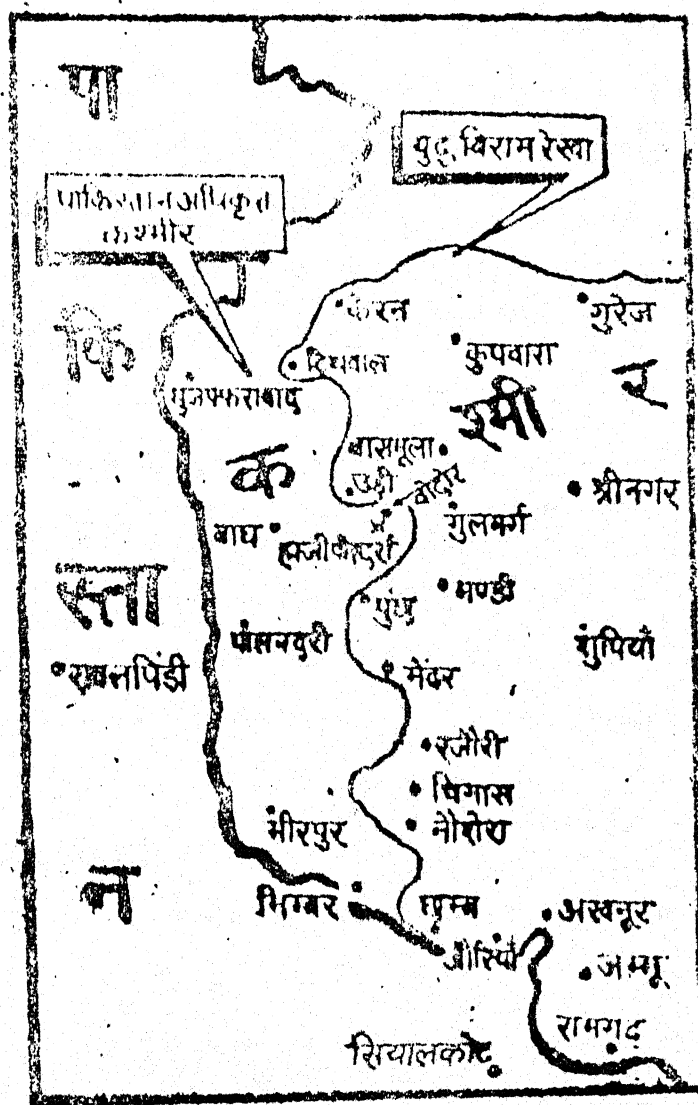
पाकिस्तान के प्रधानमन्त्री श्री नवाज़ शरीफ जानते है कि कश्मीर घाटी पाकिस्तान का हिस्सा नहीं बनेगी इसलिए उन्होंने इस बार वूलर झील के निर्माण के बारे में बातचीत करना स्वीकार कर लिया । वर्तमान समय तक कश्मीर समस्या एक विवाद का रूप धारण किये हुए है जिसका समाधान सम्भव नहीं दिखाई दे रहा है ।

विशिष्ट विवादों की श्रृंखला में भारत तथा पाकिस्तान के मध्य **आंतकवादियों की समस्या** को लेकर भी विवाद चल रहा है । पाकिस्तान ने पंजाब समस्या के सन्दर्भ में आंतकवादियों को सैनिक प्रशिक्षण दिये । इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं कि पाकिस्तान में लगभग बारह आतंकवादी प्रशिक्षण केन्द्र चल रहे हैं । इनमें से चार तो भारत-पाक सीमा के बिल्कुल निकट हैं । ये प्रशिक्षण केन्द्र लाहौर, कसूर, स्यालकोट के निकट स्थित हैं एवं इनका संचालन वहाँ की स्पेशल टास्क फोर्स के एक सेवानिवृत्त जनरल की देखरेख में हो रहा है ।[1] सितम्बर 1984 में कुछ सिक्ख उग्रवादियों द्वारा अपहरित बोइंग 737 विमान को भारत को बिना किसी शर्त के लौटाकर और व्यापार एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में कुछ सम्बन्ध स्थापित कर कठोरता में सरलता का परिचय दिया था । लेकिन पंजाब में होने वाली घटनाओं जो पाकिस्तान द्वारा समर्थित हैं, ने पाकिस्तान के इरादों को स्पष्ट कर दिया है और जिससे तनाव की एक कड़ी और जुड़ गई ।[2]

जम्मू कश्मीर में भी पाकिस्तान द्वारा समर्थित उग्रवादी गतिविधियाँ बढ़ी हुई हैं । कुछ समय पूर्व साम्प्रदायिक दंगों तथा हिंसा के बढ़ते क्रम को देखते हुए वहाँ पर राज्यपाल शासन की घोषणा की गई । राज्य की संवैधानिक स्थिति ख़तरे में थी । अब भी वहाँ पर स्थिति शान्त नही है ।

---

(1) राजवीर सिंह " राष्ट्रय रक्षा एवं सुरक्षा " पृष्ठ 184

(2) राजवीर सिंह " राष्ट्रीय रक्षा एवं सुरक्षा " पृष्ठ -185

इसके अतिरिक्त पाकिस्तान द्वारा ही उकसायी गई भारत के पूर्वोत्तर क्षेत्र (त्रिपुरा , मिजोरम आदि ) में आंतकवादी गतिविधियाँ काफी आगे बढ़ चुकी हैं । पाकिस्तान ने आंतकवादियों को सैनिक व आर्थिक सहायता प्रदान की । भारत सरकार का कहना है कि पाकिस्तान आंतकवादियों को शरण भी दे रहा है । ऐसी गतिविधियाँ का मुख्य उद्देश्य भारत में ऐसी स्थिति उत्पन्न करना है, जिससे यहाँ पर अराजकता फैले और देश टुकड़े टुकड़े में विभाजित हो जाय ।

भारत एवं बांग्लादेश के मध्य विशिष्ट विवादों में **फरक्का जल-विवाद** था। फरक्का बाँध का इतिहास यह है कि 1853 में एक अंग्रेज इंजीनियर ने यह समझाया था कि कलकत्ता बन्दरगाह को बचाने के लिये मिट्टी के जमाव को रोकने के लिये मुर्शिदाबाद के पास फरक्का नामक स्थान पर एक बैराज (लघु बाँध ) बनाया जाना आवश्यक है । 98 वर्ष बाद 1951 में भारत ने इस बाँध को बनाने का निश्चय किया । गंगा नदी, जिस पर बाँध बनाया जाना था, आगे चलकर हुगली और पद्मा दो भागों में बँट जाती थी । पद्मा बांग्लादेश में बहती है, तभी से यह विवाद चल रहा है बांग्लादेश के निर्माण के बाद यह आशा हो गयी थी कि इस समस्या का शान्तिपूर्ण हल निकल आयेगा । कईबार इस सम्बन्ध में दोनों देशों में सौहार्दपूर्ण वातावरण में चर्चा हुई। 1, मार्च 1972 में यह तय हुआ कि दोनों देश " संयुक्त नदी आयोग " की स्थापना करेंगे और यह आयोग ही फरक्का विवाद को सुलझायेगा । अंततः 18 अप्रैल 1975 को फरक्का के सम्बन्ध में एक अल्पकालिक समझौता हुआ । 21 अप्रेल 1975 को भारत ने इसी समझौते के अर्न्तगत गंगा का पानी सहयोगी नहर में डाल दिया परन्तु इस बीच बांग्लादेश में क्रान्ति हो गई और नई सरकार की स्थापना के बाद उसने कहना शुरू कर दिया कि गंगा का पानी नहर में जोड़ने से बांग्लादेश की अर्थव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा था । 16 अप्रैल 1977 को भारत में नई सरकार के गठन के बाद नई दिल्ली में पुनः इस सम्बन्ध में वार्ता शुरू हुई । इस वार्ता के कुछ मतभेद दूर हुए किन्तु आज भी पूर्ण रूप से यह विवाद हल नहीं हो सका ।

फरक्का बाँध कलकत्ता बन्दरगाह की रक्षा के लिए बनाया गया था । भारत उपमहाद्वीप के लिए यह अनिवार्य है । इस क्षेत्र की सारी समृद्धि इस पर निर्भर है । अतः इसे बचाना भारत का राष्ट्रीय कर्तव्य है । अन्तर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार भारत को गंगा का पानी उचित मात्रा में इस्तेमाल करने का अधिकार है क्योंकि गंगा की मात्रा का 90% भूभाग भारत में है और इसका सम्पूर्ण जल ग्रहण क्षेत्र भी इसी देश में स्थित है । भारत के प्रतिनिधियों ने लगातार इस बात का आश्वासन दिया है कि बांग्लादेश की वास्तविक आवश्यकताओं को हानि नहीं पहुँचने दी जाएगी ।

भारत एवं श्रीलंका के मध्य उत्पन्न हुए विवादों में **तमिल समस्या** का विवाद विशिष्ट रूप से उल्लेखनीय है । ब्रिटिश शासनकाल में ही अंग्रेजों ने चाय और रबर के बागानों में काम करने के लिए सस्ते मजदूरों को भर्ती कर श्रीलंका ले गए थे। ये मजदूर समय के साथ वहीं बस गए तथा इनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि होती रही । बढ़ती प्रवासियों की संख्या श्रीलंका सरकार के लिए चिन्ता का विषय बन गई । जब तक अंग्रेजों का शासन था तब तक कोई समस्या नहीं थी क्योंकि इन प्रवासी व्यक्तियों को श्रीलंका निवासियों की भाँति सभी अधिकार प्राप्त थे । समस्या उस समय उत्पन्न हुई जब श्रीलंका सरकार ने लंका नागरिकता अधिनियम 1949 पास किये इन अधिनियमों द्वारा प्रवासी भारतीयों को मताधिकारों से वंचित कर दिया गया । श्रीलंका के प्रधानमंत्री डी०एस० सेनानायके ने स्पष्ट किया कि-

" वे व्यक्ति जिनको सीलोन की नागरिकता प्राप्त नहीं है वे भारतीय नागरिक के रूप में इस द्वीप में अब भी रह सकते हैं"[1]

नागरिकता की समाप्ति पर भारतीय श्रमिक जो श्रीलंका के चाय बागानों में रहते थे उनके जीवन स्तर में काफी गिरावट आई किन्तु उनकी सामाजिक एवं भावात्मक समस्याओं पर कोई ध्यान नहीं दिया गया । भारतीय तमिलों पर ही श्रीलंका की अर्थव्यवस्था निर्भर है फिर भी श्रीलंका का बहुसंख्यक सिंहली समुदाय इनको इस

---

(1) रामास्वामी " न्यू देहली एण्ड श्रीलंका " पृष्ठ 47

| ELECTORATES | DISTRICTS |
|---|---|
| 1. KAYTS | JAFFNA |
| 2. VADDUKODDAI | |
| 3. KANKESANTURAI | |
| 4. MANIPAY | |
| 5. KOPAY | |
| 6. UDUPPIDY | |
| 7. POINT PEDRO | |
| 8. CHAVAKACHCHERI | |
| 9. NALLUR | |
| 10. JAFFNA | |
| 11. KILINOCHCHI | |
| 12. MANNAR | MANNAR |
| 13. MULLAITIVU | MULLAITIVU |
| 14. VAVUNIYA | VAVUNIYA |
| 15. SERUWILA | TRINCOMALEE |
| 16. TRINCOMALEE | |
| 17. MUTTUR | |
| 18. KALKUDA | BATTICALOA |
| 19. *BATTICALOA | |
| 20. PADDIRUPPU | |
| 21. AMPARA | AMPARA |
| 22. SAMMANTHURAI | |
| 23. KALMUNAI | |
| 24. *POTTUVIL | |

* TWO MEMBER SEAT

LEGEND

PROVINCIAL BOUNDARY

DISTRICT BOUNDARY

ELECTORATE BOUNDARY

U.N.P.

T.U.L.F.

The shaded portion of this map of Sri Lanka shows that part of the island which Sri Lankan Tamils regard as the Tamil areas which should form an independent state—"Tamil Eelam"
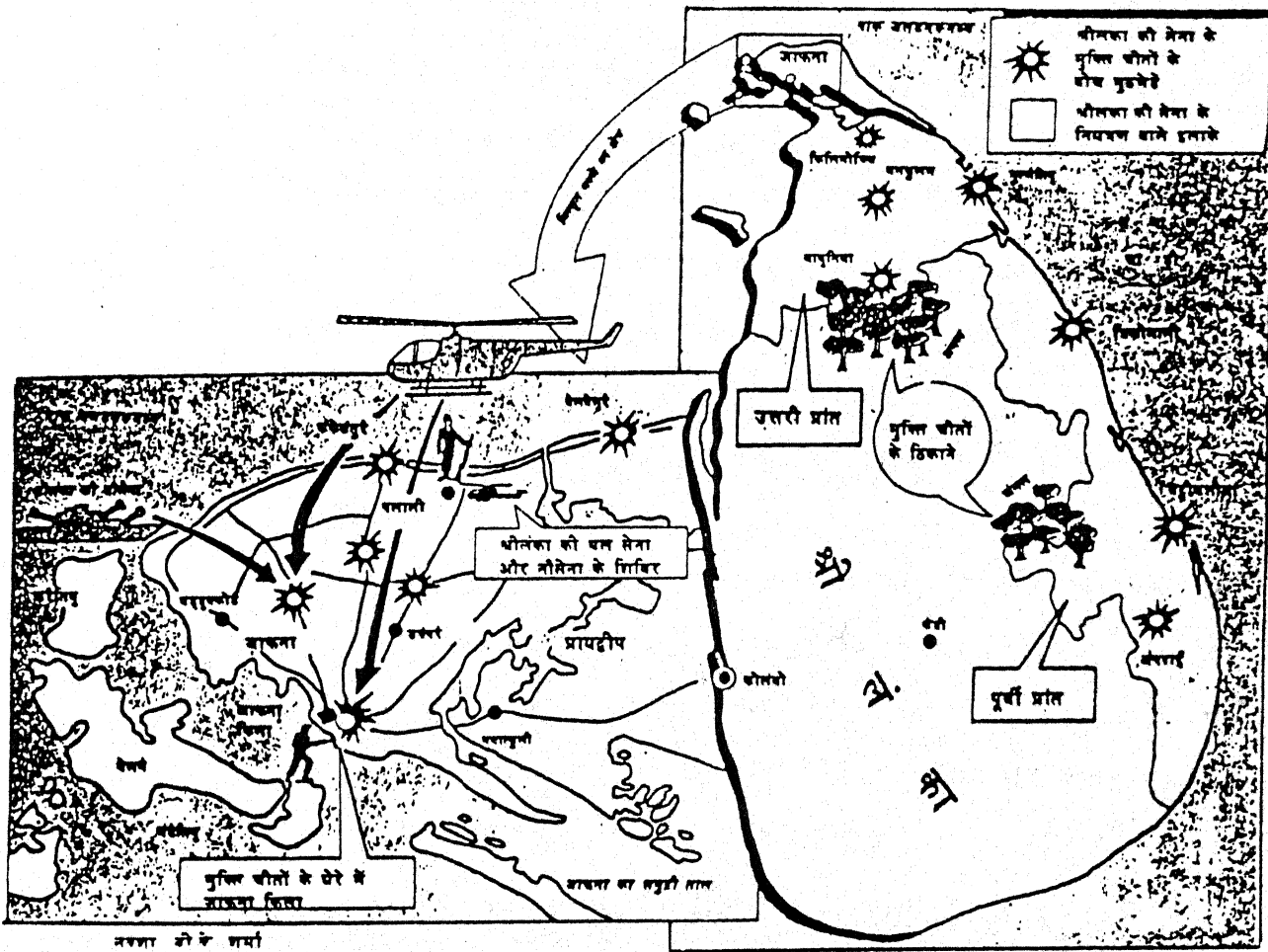
वर्तमान समय में श्रीलंका के उत्तरी-पूर्वी प्रान्त में चल रहे युद्ध की स्थिति

( साभार इण्डिया टुडे जुलाई 1990 )

इस द्वीप से बाहर निकालना चाहता है । प्रत्येक सिंहली का यह विचार है कि श्रीलंका उनका देश है इसलिए तमिलों को इस देश में कोई अधिकार नहीं मांगना चाहिए।

श्रीलंका सरकार ने तमिल बाहुल्य क्षेत्र में सिंहली किसानों के पुनर्वास की योजना स्थापित की जिससे तमिलों का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया । श्रीलंका सरकार तमिलों को बाहर निकालने के लिए हर तरीके अपना रही थी। परिणामस्वरूप श्रीलंका में पहलीबार भीषण दंगे हुए ।

प्रवासी भारतीयों की समस्याओं में समाधान के सम्बन्ध में अनेक वार्ताएं चलीं किन्तु इस समस्या से उत्पन्न विवाद दोनों देशों में समान रूप से बने रहे । भारत एवं श्रीलंका की सरकार प्रारम्भ से ही इस समस्या के समाधान के लिए प्रयत्नशील रही लेकिन दोनों ही देशों के असफल प्रयासों के कारण समस्या आज भी अपने विकृत रूप में विद्यमान है ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि दक्षिण एशिया के समस्त देश जहाँ अनेक क्षेत्रों में परस्पर सहयोग और विश्वास की आकांक्षा करते हैं वहीं दूसरी ओर उनके मध्य विभिन्न प्रकार के मतभेद और उन मतभेदों से अनेक तरह के विवाद उत्पन्न हुए, जिनकी आधारशिला अविश्वास पर आधारित है । इन मतभेदों और विवादों ने दक्षिण एशिया को तनावग्रस्त स्थिति में डाल दिया है ।

## (ग) क्षेत्रीय संघर्ष में महाशक्तियों की भूमिका

जब-जब राष्ट्रों में अन्तरिम विवाद हुये हैं , अन्य बाह्य देशों ने उसमें अपने-अपने अनुसार राय प्रकट की है और प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से हस्तक्षेप किया है ।

दक्षिण एशियाई राष्ट्रों की आकाक्षांओं की पूर्ति किस हिद तक हुई ? उन आकाँक्षाओं की पूर्ति करने हेतु उनके मध्य क्या-क्या मतभेद हुये ? और उन मतभेदों से उनमें क्या-क्या विवाद उत्पन्न हुये ? यह स्पष्ट होने के पश्चात् यह ज्ञात करना आवश्यक प्रतीत होता है कि इन विवादों में महाशक्तियों की क्या भूमिका रही ?

द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् महाशक्तियों का उदय हुआ । विश्व का नेतृत्व ग्रेट-ब्रिटेन के हाथ से निकलकर संयुक्त राज्य अमेरिका के हाथ में चला गया तथा साम्यवादी रूस में भी नेतृत्व की भावना जागृत हुई । संयुक्त राज्य अमेरिका ने विश्व राजनीति में सक्रिय रूप से भाग लेना प्रारम्भ किया । साम्यवादी प्रभाव के कारण विश्व में दो गुटों का प्रर्दुभाव हुआ । गैर साम्यवादी गुट का नेतृत्व संयुक्त राज्य अमेरिका के हाथ में आया और साम्यवादी गुट का नेतृत्व सोवियत रूस के 1949 में साम्यवादी क्रान्ति के पश्चात् एक शक्तिशाली एवं सुसंगठित चीन का अभ्युदय हुआ । चीन को विश्व की तीसरी महाशक्ति के रूप में स्वीकार किया गया ।

परस्पर प्रतियोगी होने के कारण महाशक्तियाँ सम्पूर्ण विश्व राजनीति को प्रभावित करती हैं । इस प्रकार दक्षिण एशिया का क्षेत्र भी इनकी पकड़ सें अछूता नहीं रह सका । महाशक्तियों द्वारा दक्षिण एशिया में प्रभाव विस्तार की प्रक्रिया और दक्षिण एशियाई देशों में परस्पर संघर्ष की स्थिति में प्रत्यक्ष हस्तक्षेप की भूमिका ने इस क्षेत्र की स्थिति को और भी अधिक जटिल बना दिया है। महाशक्तियों ने दक्षिण एशिया को शाँति, स्थायित्व और परस्पर सहयोग क्षेत्र बनाने के बजाये तनाव और संघर्ष का क्षेत्र बना दिया है ।

संयुक्त राज्य अमेरिका ने इस क्षेत्र में साम्यवादी प्रसार को रोकने तथा अपनी साम्राज्यवादी नीति को पूर्ण करने के लिये श्रीलंका एवं पाकिस्तान को अधिक से

अधिक मात्रा में अनेक प्रकार की सैनिक सहायता प्रदान करके अपने हितों के अनुकूल बनाने का प्रयास किया है । सोवियत संघ ने भी चीन एवं अमेरिका के बढ़ते हुये प्रभाव को कम करने के लिये भारत को अधिक से अधिक शक्तिशाली बनाने में योगदान दिया है । साम्यवादी चीन एशिया में नेतृत्व की भावना के कारण भारत के प्रभाव को कम करने के लिये भारत के पड़ोसी पाकिस्तान, श्रीलंका, नेपाल एवं भूटान आदि को भड़काता रहता है ; जिसका स्वाभाविक रूप से दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के पारस्परिक सम्बन्धों पर प्रभाव पड़ता है तथा यह क्षेत्र तनावरहित नहीं रह पाता । तनावपूर्ण स्थिति को बनाये रखने के लिये महाशक्तियाँ विभिन्न देशों के मध्य हुये विवादों में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करती हैं--

**दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के पारस्परिक विवादों में अमेरिका की भूमिका-** संयुक्त राज्य अमेरिका वर्तमान विश्व के राजनैतिक एवं भौगोलिक मानचित्र पर अत्याधिक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । इसकी भौगोलिक स्थिति, उन्नत आर्थिक व्यवस्था , सैनिक शक्ति , विदेशों को सहायता तथा साम्यवादी विस्तार के विरूद्ध मार्चा आदि अनेक ऐसे तत्व हैं , जिसके कारण आज विश्व की प्रत्येक राजनैतिक एवं आर्थिक घटना से इसका सम्बन्ध है । दक्षिण एशियायी क्षेत्र में भी संयुक्त राज्य अमेरिका की प्रभावी भूमिका स्वाभाविक है ।

द्वितीय विश्व युद्ध के उपरान्त अमेरिकी विदेशनीति की आधारभूत विशेषता साम्यवाद का अवरोध एवं अपनी साम्राज्यवादी नीति का विस्तार रही है । अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु संयुक्त राज्य अमेरिका ने स्वतंत्रता, न्याय, लोकतंत्र, विश्वशांति एवं सुरक्षा के नारों के सहारे एशियाई देशों को आर्थिक एवं सैनिक सहायता देना प्रारम्भ कर दिया था । दक्षिण एशिया के नवोदित राष्ट्र अमरीका की नीतियों से अछूते नहीं रह पाये क्योंकि लगभग समस्त दक्षिण एशियायी राष्ट्रों ने उसी समय

स्वतंत्रता प्राप्त की थी तथा ये समस्त राष्ट्र आर्थिक , राजनैतिक एवं सैनिक दृष्टि से काफी पिछड़े हुये थे । अपनी आर्थिक एवं राजनैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इन समस्त राष्ट्रों को संयुक्त राज्य अमेरिका से अनेक प्रकार की सहायता लेनी पड़ती थी तथा अमेरिका इन देशों के पिछड़ेपन का लाभ उठाते हुये इन्हें अपने हाथों की कठपुतली बनाये हुये था । अपनी साम्राज्यवादी एवं साम्यवाद विरोधीनीति पर चलते हुये अमेरिका ने इस क्षेत्र में " सीटों " एवं सेंटों " जैसे संधि संगठन निर्मित किये । पाकिस्तान ने इन संगठनों की सदस्यता भी गृहण की जिसके कारण सम्पूर्ण दक्षिण एशियायी क्षेत्र तनावग्रस्त होता गया ।

अमेरिका की ये गतिविधियाँ उसके वृत्ताकरण की नीति की ही अंग हैं । अपनी वृत्ताकरण की नीति द्वारा अमेरिका इस प्रयास में रहता है कि ये देश तटस्थता की नीति त्याग दें, साम्यवाद को अस्वीकार कर दें और अमेरिका का प्रभाव स्वीकार करें । सैनिक और आर्थिक सहायता के नाम पर अमेरिका न केवल इन देशों की दुर्बलता से लाभ उठाने का प्रयास करता रहा है वरन् उसका यह भी प्रयास रहा है कि ये देश सहायता के भार से इतना अधिक लद जायें कि अमेरिका के प्रभाव के वृत्त से बाहर निकलने के लिये इनके पास कोई मार्ग ही न बचे ।

भारत-पाक संघर्ष के दौरान अमेरिका ने " नाटो " एवं " सीटों " के माध्यम से इन देशों के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करने का प्रयास किया । भारत के विरूद्ध पाकिस्तान को युद्धों में भरपूर आर्थिक एवं सैनिक सहायता दी और बंगाल की खाड़ी में अपने जहाज के साथ बेड़े को भेजने से भी नहीं हिचकिचाया । इसी प्रकार डियागोगार्सिया में सैनिक अड्डे की स्थापना भी उसकी इसी नीति का एक उदाहरण है । डियागोगार्सिया द्वीप पर अमरीका ने अपना नियंत्रण स्थापित कर लिया और वहाँ अणु-आयुधों से सुसज्जित अमरीकी नौ-सैनिक बेड़ा रखा जा रहा है । अमेरिका आज भी इस अड्डे के विकास के लिये प्रयत्नशील है । अमरीका की डियागोगार्सिया में जैसे-

जैसे पकड़ बढ़ती जा रही है, भारत की चिन्ता भी बढ़ रही है क्योंकि डियगोंगार्सिया भारत के दक्षिणी तट से केवल 1000 मील दूर है तथा हिन्दमहासागर में बसे अन्य द्वीप भी यहाँ से नियंत्रित किये जा सकते हैं ।

हिन्दमहासागर के सामरिक एवं आर्थिक महत्व के कारण अमेरिका ने सदैव श्रीलंका एवं मालदीव को अनेक प्रकार की सहायता प्रदान करके सैनिक अड्डे स्थापित करने चाहे, जिसमें समय-समय पर अमेरिका को सफलता भी प्राप्त हुई । हिन्दमहासागर में किसी विदेशी शक्ति की उपस्थिति सम्पूर्ण दक्षिण एशियायी क्षेत्र के लिये चुनौती है, इसलिये दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्र हिन्दमहासागर को " शान्ति क्षेत्र " घोषित करने की माँग कर रहे हैं किन्तु अमरीका अपने आर्थिक एवं सामरिक हितों के कारण तथा अपनी साम्राज्यवादी नीति पर चलते हुये सदैव ही इस माँग को अस्वीकार करता है । परिणाम स्वरूप सम्पूर्ण क्षेत्र तनावग्रस्त है ।

दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के मध्य तनाव एवं अशांति उत्पन्न करने में संयुक्त राज्य अमेरिका ने निम्न प्रकार से अपनी भूमिका का निर्वाह किया है -

1965 में **कश्मीर- विवाद** को लेकर भारत व पाकिस्तान के मध्य हुये युद्ध में संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपनी प्रभावशाली भूमिका निभाई । यद्यपि जून 1951 से अप्रैल 1971 तक अमेरिका ने भारत को 7422 करोड़ 23 लाख रूपये की आर्थिक सहायता दी थी ।[1] किन्तु इस युद्ध में उसने खुलकर भारत का विरोध और पाकिस्तान का समर्थन किया । 5 अगस्त 1965 को पाकिस्तानियों ने कश्मीर में घुसकर जब उत्पात मचाना प्रारम्भ किया और अमेरिका को इसकी सूचना मिली तो अमेरिकी समाचार-पत्रों ने कहा कि भारत के विरूद्ध कश्मीर - निवासियों ने विद्रोह कर दिया है । तत्कालीन परिस्थितियों को देखकर यह विचार किया गया कि अमेरिकी सरकार को घटना का वास्तविक ब्योरा प्राप्त हुआ होगा । अमेरिका ने प्रबल दुश्मन चीन के साथ पाकिस्तान के बढ़ते हुये सम्बन्धों को देखकर कश्मीर के सम्बन्ध में अमेरिका का

---

(1) यू0एस0इकनॉमिक असिस्टेंट टू इण्डिया , जून 1951 अप्रैल 1971, बाई यू0 एस0 इनफॉरमेशन सर्विस , न्यू देहली ।

दृष्टिकोण परिवर्तित होगा किन्तु यह आशा निराधार सिद्ध हुई और अमेरिका ने वही रूख अपनाया जो कश्मीर के प्रश्न पर अब तक उसका रहा ।

पाकिस्तान ने 1965 में जब भारत पर आक्रमण किया तो संयुक्त राज्य अमेरिका ने भारी मात्रा में पाकिस्तान की सैनिक सहायता की जो अमेरिकी शक्ति को प्रतिबिम्बित करती थी ।[1] पाकिस्तान ने भारत के विरूद्ध अमेरिका में बने पाकिस्तान को मदद के रूप में दिये गये पैटन टैंक, हवाई बम- बर्षक तथा अन्य अमेरिकी शस्त्रास्त्रों को युद्ध में झोंक दिया ।

ऐसा विश्वास किया जाता था कि अमेरिका इसका विरोध करेगा किन्तु भारत द्वारा ध्यानाकर्षित करने के उपरान्त भी अमेरिका प्रशासन ने इस तथ्य की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया और पाकिस्तान को अमेरिकी शस्त्रास्त्रों को रोकने में अपनी असमर्थता प्रकट की ।

3 दिसम्बर 1971 को **बांग्लादेश की समस्या** को लेकर भारत व पाकिस्तान के मध्य पुनः युद्ध हो गया । अमेरिकी विदेश विभाग से इस विषय पर एक लम्बा वक्तव्य जारी किया गया जिसमें युद्ध छिड़ने के लिए भारत को दोषी ठहराया गया। युद्ध के पूर्व ही अमेरिकी विदेश सचिव श्री विलियम रोजर्स ने स्पष्ट कर दिया था कि

" यदि चीन और पाकिस्तान ने मिलकर भारत पर आक्रमण किया, तो अमरीका भारत की सहायता नहीं करेगा ।[2] 6दिसम्बर 1971 को अमरीकी प्रशासन ने यह घोषणा की कि 876 लाख डालर की आर्थिक सहायता के सम्बन्ध में भारत के साथ जो समझौता हुआ था, वह रद्द किया जाता है । इसके अतिरिक्त भारत को हथियारों की खरीद के बचे हुये सभी लाइसेन्सों को रद्द कर दिया गया । इसके विपरीत अमरीका पश्चिमी पाकिस्तान को निरन्तर आर्थिक व सैनिक सहायता देता रहा। जब भारत ने इसका विरोध किया तो उसने कहा कि पूर्वी बंगाल की घटनाओं से पहले भी इस

---

(1) ए0जी0नूरानी " इण्डिया दि सुपर पावर्स एण्ड दि नेबर्स" पृष्ठ 46.

(2) कुलदीप नैय्यर " डिस्टेंट नेबर्स " पृष्ठ - 163.

से पहले भी इस सहायता के लिये अमेरिका पाकिस्तान को वचन दे चुका था ।

अतः स्पष्ट है कि भारत व पाकिस्तान सम्बन्धों की दरार को सुदृढ़ करने में संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । इसका मुख्य कारण यह था कि भारत के साथ सोवियत संघ मदद कर रहा था । साम्यवाद का विरोध अमेरिकी नीति की आधारभूत विशेषता रही है । दक्षिण एशिया में साम्यवाद के प्रसार को रोकने के लिए तथा अपना प्रभुत्व कायम रखने के लिए अमेरिका ने पाकिस्तान को अपना मोहरा बनाया । भारी मात्रा में पाकिस्तान को सैनिक सहायता देकर भारत के प्रतिद्वन्दी के रूप में तैयार करने के लिए अमेरिका प्रयत्नशील है।

**श्रीलंका एवं भारत सम्बन्धों** में भी संयुक्त राज्य अमेरिका ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । श्रीलंका की हिन्द महासागर में महत्वपूर्ण सामरिक स्थिति है इसलिए अमेरिका की नीति श्रीलंका के प्रति प्रारम्भ से ही रूचिपूर्ण रही है । अमेरिका प्रारम्भ से ही श्रीलंका को भी सैनिक एवं आर्थिक सहायता देकर हिन्द महासागर में श्रीलंका जैसे सामरिक उपनिवेश को प्राप्त कर लेने के लिए प्रयत्नशील रहा है ।

अमेरिका के प्रति झुकाव के कारण श्रीलंका व भारत के बीच मतभेद स्थापित हुये । 1950 में श्रीलंका ने कोरिया मार्ग के लिये बन्दरगाह उपयोग करने की सुविधा प्रदान कर दी[1] तथा 1954 में प्रधान मंत्री कोटलेवाला ने अमरीका की सेना के जहाजों को फ्रांस से हवाई जाने के लिये कटुनायके का हवाई अड्डा प्रयोग करने की सुविधा प्रदान कर दी थी ।[2] भारत ने स्वाभाविक रूप से श्रीलंका की नीतियों का विरोध किया जिससे दोनों देशों में मतभेद उत्पन्न हो गया । अमेरिका द्वारा हिन्दमहासागर में डियागोगार्सिया आदि अड्डे के निर्माण की योजना भारत, श्रीलंका एवं तटीय राष्ट्रों की सुरक्षा के लिये खतरनाक है । भारत एवं श्रीलंका के समस्त जल-मार्ग हिन्दमहासागर से होकर गुज़रते हैं । हिन्दमहासागर में अमेरिका सैन्य शक्ति की उपस्थित का मुख्य कारण तेल तथा अन्य कच्चे माल के स्रोतों पर नियंत्रण प्राप्त करना

---

(1) कोडीकारा " फॉरेन पालिसी ऑफ श्रीलंका " पृष्ठ 86

(2) --- वही --- पृष्ठ-76

तथा महत्वपूर्ण मार्गो एवं समुद्री मार्गो पर नियंत्रण स्थापित करना है । अपने इसी उद्देशय की पूर्ति के लिये अमेरिका हिन्दमहासागर के तटीय राष्ट्रों को सैनिक एवं आर्थिक सहायता देकर आपस में विवाद उत्पन्न करने की नीति का अनुसरण करता है । श्रीलंका के द्वारा कभी-कभी भारत के समान उच्च स्वर में हिन्द महासागर में महाशक्तियों की उपस्थित के विषय में आलोचना की गयी है ।[1]

**तमिल समस्या** के विषय में भी श्रीलंका ने विदेशी शक्तियों विशेष रूप से संयुक्त राज्य अमेरिका की सहायता प्राप्त करके इस समस्या को अन्तर्राष्ट्रीय समस्या का स्थान प्रदान किया है । तमिल समस्या के विभिन्न चरणों में श्रीलंका सरकार ने आर्थिक सैनिक एवं नैतिक समर्थन माँगा । सैनिक सहायता के कारण ही भारत एवं श्रीलंका के मध्य मतभेद अधिक बढ़े ।

अमेरिका दक्षिण एशिया के केन्द्र में स्थित भारत और उसके निकटवर्ती छोटे राष्ट्रों पर अपना अधिकार करने के लिये भारत के उत्तर में स्थित पाकिस्तान और दक्षिण में स्थित श्रीलंका पर अपना आधिपत्य स्थापित करने के लिये प्रयत्नशील है । भारत -पाकिस्तान और भारत -श्रीलंका के मध्य उत्पन्न मतभेदों, विवादों और संघर्षो के लिये अमेरिका ही सही मायने में उत्तरदायी महाशक्ति है ।

दक्षिण एशिया में भारतीय क्षेत्र में तनावपूर्ण वातावरण उत्पन्न करने के लिये संयुक्त राज्य अमेरिका इसलिये भी प्रयासरत था कि—

" अगर भारत में जनतंत्र सफल होता है , तो सारा दक्षिणी एशिया सुदृढ़ हो जायेगा, यदि असफल होता है, तो एशिया की आशायें अंधकारमय हो जावेंगी।"[2]

---

(1) पी0के0 मिश्रा " साउथ एशिया इन इंटरनेशनली पॉलिटिक्स" पृष्ठ-29

(2) अमेरिका राज्य विभाग की एक रिपोर्ट, मई 1953 के अनुसार।

**दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के पारस्परिक विवादों में सोवियत संघ की भूमिका-**

सोवियत संघ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में विशिष्ट स्थान रखता रहा है । सोवियत संघ की नीति सदैव से साम्यवादी प्रसार एवं पूँजीवाद के उन्मूलन की रही है । द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् सोवियत संघ ने एक ओर साम्यवादी क्रान्ति के प्रसार हेतु उग्रनीति अपनायी तथा दूसरी ओर पश्चिमी प्रभावों से बचने के लिये " लौह आवरण" की नीति का आश्रय लिया ।

सोवियत संघ की यूरेशिया महाद्वीप में महत्वपूर्ण स्थिति, अत्याधिक आर्थिक संसाधन, उच्च तकनीकी स्तर आदि अनेक तथ्यों ने इसको शक्तिशाली स्वरूप प्रदान किया था । विश्व की प्रत्येक राजनैतिक घटना के साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से सोवियत संघ का सम्बन्ध रहा है । इसी कारण दक्षिणी एशियायी क्षेत्र में भी सोवियत संघ ने प्रभावी भूमिका का निर्वाह किया है । समाजवादी देश होने के कारण सोवियत संघ के लिये यह आवश्यक था कि वह साम्राज्यवाद का विरोध करे तथा औपनिवेशिक जनता के स्वाधीनता संघर्षों को अपना समर्थन प्रदान करे । इसी कारण प्रारम्भ से ही सोवियत सघ ने एशिया एवं अफ्रीका के पराधीन राष्ट्रों के स्वतन्त्रता आन्दोलन का समर्थन किया एवं साम्राज्यवाद की निन्दा की ।

दक्षिण एशियायी क्षेत्र को अमरीकी साम्राज्यवाद से बचाने के लिये सोवियत संघ ने इस क्षेत्र को अधिकाधिक सहायता प्रदान की तथा इस क्षेत्र के देशों में चल रहे स्वतंत्रता आन्दोलन का खुलकर समर्थन किया । अपनी " लौह आवरण " की नीति पर चलते हुये सोवियत संघ ने भारत को अधिकाधिक मात्रा में सहायता प्रदान की तथा भारत को शक्तिशाली बनने में पूर्ण योगदान दिया । परिणामस्वरूप दक्षिण एशिया के अन्य छोटे राष्ट्र भारत के प्रति असुरक्षा की भावना से संशकित रहने लगे तथा उनका झुकाव पश्चिमी शक्तियों के प्रति होता गया जिसके कारण दक्षिण एशियायी देशों के बीच विद्वेष एवं वैमनस्य का बीजारोपण हो गया ।

सोवियत संघ ने दक्षिण एशिया के देशों के मध्य हुये विवादों में निम्न प्रकार से अपनी भूमिका का निर्वाह किया -

सर्वप्रथम 1962 के अक्टूबर - नबम्बर में जब **चीन और भारत के मध्य युद्ध** हुआ तो सोवियत संघ के लिए एक बड़ी कठिन परिस्थिति उत्पन्न हो गई । युद्ध में एक ओर तो सोवियत संघ का भाई चीन था तो दूसरी ओर मित्र भारत ।---------------- एक ओर तो उसने अपने भाई चीन पर दबाव डालकर उसकी आक्रमणकारी प्रवृत्ति पर अंकुश लगाने पर बाध्य किया और दूसरी ओर अपने वचन के अनुसार भारत को सहायता भी दी जिसमें सैनिक सहायता भी सम्मिलित थी । रूस की सरकार ने चीन को चेतावनी दी कि रूस भारत की ओर अपने सब सैनिक तथा व्यापारिक वचन बद्वताएं पूरी करने का इरादा रखता हैं । [1]

सन् 1965 से सोवियत महाशक्ति इस उप महाद्वीप में पूर्ण रूप से सक्रीय हो गई और 1965 - 67 के समय उत्पन्न समस्याओं में चीनी साम्यवाद के साथ विभिन्नता को लेकर एक वृहद पैमाने पर सोवियत संघ ने अर्थपूर्ण सक्रिय भूमिका अदा की । [2]

**कश्मीर के प्रश्न** पर सोवियत संघ ने भारत की प्रतिष्ठा की रक्षा अनेकों बार की । जब - जब अमेरिकी गुट ने भारत को परेशान करने का प्रयास किया तब-तब सोवियत संघ ने सुरक्षा परिषद में वीटो का प्रयोग करके भारत की सहायता की।

विश्व की महाशक्तियों में सोवियत संघ ऐसा देश रहा हैं जिसने कश्मीर की स्थितियों को उचित ढंग से समझा । खुश्चैव ने प्रारम्भ से ही घोषित किया कि कश्मीर को वह भारत का अभिन्न अंग मानता हैं । कश्मीर की समस्या की जटिलता का कारण सोवियत दृष्टि में साम्राज्यवादी देशों की नीति हैं जो एशिया के दो पड़ोसी राष्ट्रों को लड़ाकर अपना हित सुरक्षित करते हैं । इस विचार को सोवियत नेता अनेक बार व्यक्त भी कर चुके हैं । कश्मीर के प्रश्न पर सोवियत संघ का विचार रहा हैं कि

---

1- हिन्दुस्तान टाइम्स, न्यू देहली 4 फरवरी 1963 पृष्ट ।

2- वी0पी0 दत्त " इण्डियाज़ फॉरेन पॉलिसी ' पृष्ठ 133

भारत और पाकिस्तान अच्छे पडौसी की तरह प्रत्यक्ष रूप से वार्ता करके इस प्रश्न को तय कर लें । कश्मीर के प्रश्न पर सुरक्षा परिषद में जितनी वैठक हुई और उनमें जो भी प्रस्ताव स्वीकृत हुए उनके सम्बन्ध में सोवियत संघ ने इन्हीं विचारों से प्रभावित होकर अपने दृष्टिकोण का निर्धारण किया ।

**1965 में भारत पाकिस्तान के युद्ध में** सोवियत संघ ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई । । सितम्बर 1965 को पाकिस्तानी सेना द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय सीमा रेखा का उल्लघंन करके भारतीय क्षेत्र में प्रवेश में स्थिति को अनियन्त्रित कर दिया । इसके प्रतिरोध में भारत को भी प्रत्यक्ष रूप से पाकिस्तान के विरूद्व युद्ध में आना पड़ा। भारत की इस कार्यवाही को जहाँ पश्चिमी राज्यों ने आक्रामक नीति कहकर सम्बोधित किया वहाँ सोवियत संघ ने भारतीय स्थिति को समझने का प्रयास किया एवं आत्मरक्षा के लिए की गई इस मानवीय कार्यवाही को उचित ठहराया ।

यद्यपि भारत- पाक युद्ध में सोवियत संघ ने भारत का समर्थन किया किन्तु वह नहीं चाहता था कि उसके दो पड़ोसी एशियायी राष्ट्र साम्राज्यवादियों के जाल में फंसकर इस तरह लड़ते रहे और अपने को बर्बाद कर लें । रूस के प्रधान मन्त्री को कोसिगिन का कहना था कि -

"--------------अब समय नहीं है कि इस संघर्ष के उद्गम का पता लगाया जाये । कितने मनुष्यों की जानें व्यर्थ जा रही हैं । युद्ध को तत्काल बन्द करना परमावश्यक हैं । "[1]

इस समय सोवियत नीति का प्रमुख उद्देश्य विवादों मे न पड़कर शान्ति की स्थापना करना था ।

**1971 में भारत - पाक युद्ध** के मध्य पुनः छिड़े युद्ध में भी सोवियत रूस ने शान्ति पूर्वक रूप से युद्ध शान्त करने की अपील की । यद्यपि जिन परिस्थितियों में पाकिस्तान ने भारत पर आक्रमण किया था सोवियत रूस ने पाकिस्तान का विरोध किया और उसे दोषी ठहराते हुए कहा पाकिस्तान ने अपने देश में प्रजातन्त्रीय शक्तियों

---

1- नवभारत टाइम्स नई दिल्ली, 6 सितम्बर 1965 पृष्ठ 1

का हनन किया हैं । [1] उन्होंने वर्तमान संघर्ष को शान्तिपूर्वक हल करने की अपील की । भारत - पाक संघर्ष समाप्त करने के लिए सभी शान्तिप्रिय देशों को पूरी कोशिश करनी होगी । इस युद्ध को स्थगित करने की अपील करते हुए भी सोवियत संघ ने युद्ध में भारत की सहायता की । इस युद्ध के दौरान जब अमेरिका का सातवाँ बेड़ा बंगाल की खाड़ी की ओर रवाना हुआ तो सोवियत युद्ध पोत भी हिन्द महासागर की ओर बढ़ा । [2] इस प्रकार सोवियत समर्थन के कारण अमरीका का भारत के विरूद्ध युद्धपोत राजनय व्यर्थ हो गया तथा अमरीका भारत के विरूद्ध हस्तक्षेप की नीति नहीं अपना सका ।

हिन्द महासागर में सोवियत गतिविधियों का एक बड़ा भाग इस क्षेत्र में अमेरिकी सक्रियाओं की प्रतिक्रिया स्वरूप ही सम्पादित होता रहा । एशिया एवं यूरोपीय राष्ट्रों से सोवियत संघ काफी सीमा तक स्थल बद्ध देश हैं । चीन से किसी भी सम्भावित युद्ध की दशा में इन राष्ट्रों से व्यापारिक सम्बन्ध बनाए रखने तथा शस्त्रास्त्र पूर्ति बनाए रखने में सोवियत संघ का हिन्द महासागर में उपस्थित रहना अनिवार्य हैं । इस क्षेत्र में चीनी प्रगति एवं पश्चिमी शक्तियों की क्रिया-कलापों ने सोवियत संघ के लिए दोहरा संकट उत्पन्न कर दिया । अतः हिन्द महासागर में सोवियत संघ की उपस्थिति ने भी भारत एवं उसके पड़ोसी श्रीलंका के सम्बन्धों को कुछ सीमा तक प्रभावित किया । भारत -श्रीलंका समझौता 1987 का स्वागत करते हुए सोवियत संघ के उप प्रधानमन्त्री ने कहा था कि -

" भारत श्रीलंका समझौता इस बात का प्रतीक है कि क्षेत्रीय संघर्ष वास्तविक नीति का अनुसरण करते हुए सुलझाए जा सकते हैं । [3] अतः भारत एवं सोवियत संघ की मैत्री ने दक्षिण एशिया के राष्ट्रों की परस्पर मैत्री को बहुत कुछ सीमा तक प्रभावित किया । भारत-सोवियत मैत्री ने पाकिस्तान और श्रीलंका को भी अमेरिका

---

1- नवभारत टाइम्स नई दिल्ली , 6 दिसम्बर 1971 पृष्ठ 1

2- राजवीर सिंह - भारतीय रक्षा एवं सुरक्षा पृष्ठ 139

3- 1508 - 1987

एवं चीन की ओर अग्रसर होने के लिए प्रेरित किया और उनके मध्य परस्पर संघर्ष और तनाव की स्थिति में वृद्धि की ।

**दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के पारस्परिक विवादों मे साम्यवादी चीन की भूमिका -**

1949 की साम्यवादी क्रान्ति के बाद विश्व राजनीति में एक शक्ति के रूप में चीन का उदय हुआ । आज परमाणिक शक्ति के क्षेत्र में चीन पश्चिमी देशों के समान स्थान रखता हैं । चीन की बढ़ती हुई शक्ति के परिपेक्ष्य में वर्षो पूर्व जान हे ने कहा था -

" विश्व की शांति चीन पर निर्भर है , जो कोई चीन को समझ सकेगा , उसी के हाथ में आगामी पांच वर्षो तक विश्व राजनीति की कुंजी होगी । [1]

चीनी विचार धारा के अनुसार किसी भी अन्तर्राष्ट्रीय विशेषतः एशिया से सम्बन्ध रखने वाली समस्या का समाधान तब तक संभव नहीं हैं जब तक चीनी गणराज्य इसमें भाग न ले । चीन अपने प्रभाव का विस्तार एशिया में , विशेषतः दक्षिण एशिया में करने के लिये सदैव प्रयत्नशील रहा । चीन ने सदैव अपने को एशिया की महाशक्ति के रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया हैं, इसलिये दक्षिण एशिया के देशों के सम्बन्धों में चीन की विस्तारवादी नीति की प्रभावी भूमिका स्वाभाविक हैं ।

एशिया में नेतृत्व की भावना से चीन सदैव भारत के विरूद्ध अपनी स्थिति को सुद्रढ़ करने के लिये प्रयत्नशील रहा हैं । अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिये चीन भारत के पड़ोसी दक्षिण एशियायी राष्ट्र पाकिस्तान , नेपाल एवं श्रीलंका आदि को भारी मात्रा में आर्थिक एवं सैनिक सहायता प्रदान करके उन्हें भारत के विरूद्ध भड़काता रहा हैं । तथा उसे अपने इस उद्देश्य की पूर्ति में कुछ सफलता भी मिली हैं । चीनी नीतियों ने सम्पूर्ण दक्षिण एशियायी क्षेत्र को तनावपूर्ण एवं अस्थिरता प्रदान करने में अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वाह किया हैं ।

चीन अपने प्रभाव का विस्तार करने के लिये दक्षिण एशिया में सदैव प्रयत्नशील हैं । चीन-भारत का सम्बन्ध प्राचीन काल से रहा हैं । 1954 में भारत ने

---

(1) सी0ए0 फडिया ' अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति ' पृष्ठ 46।

तिब्बत पर चीन की प्रभुता को स्वीकार किया । दक्षिण एशिया में महाशक्तियों में चीन की महत्वपूर्ण भूमिका रही । उसका विचार था कि भारत इस क्षेत्र का सर्वेसर्वा हैं ।[1] अतः इस भावना से प्रभावित होकर चीन ने भारत के प्रति अपने दृष्टिकोण में परिवर्तन लाना प्रारम्भ कर दिया , जिसका परिणाम यह हुआ कि मई 1962 में चीन ने भारत पर आक्रमण कर दिया ।

**1965 में भारत व पाकिस्तान के युद्ध में** चीन ने पाकिस्तान को पूरा-पूरा समर्थन दिया और भारत को आक्रामक बताया । चीन ने भारत को चेतावनी देते हुये माँग की कि तीन दिनों के अन्दर भारत सिक्किम चीन सीमा पर गैर कानूनी ढंग से बनाये हुऐ मठ सैनिक प्रतिष्ठानों को हटा ले, अन्यथा इसका परिणाम बहुत बुरा होगा ।[2] चीन ने पाकिस्तान को सैन्य सहायता देने का आश्वासन दिया । चीन ने पाकिस्तान को खुला समर्थन दिया और भारत की कटु आलोचना की । इस युद्ध में चीन द्वारा वाशिंगटन को सूचित किया गया कि वह भारत और पाकिस्तान युद्ध में हस्तक्षेप न करे ।[3]

**1971 के युद्ध में** यह विचार किया गया था कि चीन बांग्लादेश के प्रश्न को समाजवादी सिद्धान्त के दृष्टिकोण से देखेगा, चीन उन असहाय बंगालियों के साथ केवल सहानुभूति ही नहीं प्रकट करेगा वरन् उनको सक्रिय मदद भी देगा क्योंकि चीन आरम्भ से ही पद दलित मानवता का मुख्य प्रवक्ता रहा हैं । इस समय अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति एक विचित्र करवट ले रही थी और चीन ने बांग्लादेश के प्रश्न को समाजवादी सिद्धान्त के दृष्टिकोण से नहीं वरन् अपने राष्ट्रीय दृष्टिकोण से देखा। पश्चिमी पाकिस्तान के तानाशाही की निन्दा करने के बजाये उसका समर्थन करना प्रारम्भ कर दिया ।

---

(1) ए0सी0 नूरानी 'इण्डिया , दि सुपर पावर्स एण्ड नेवरर्स' पृष्ठ 149

(2) हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली, 20 सितम्बर 1965, पृष्ठ - ।

(3) एशियन रिकार्डर, 1-7 अक्टूबर 1965 , पृष्ट - 7600-1

अप्रैल 1971 को चीन की प्रतिक्रिया को व्यक्त करते हुये पीपुल्स डेली ने लिखा -

" कुछ समय से पाकिस्तान ने बार-बार सख्त विरोध की उपेक्षा करते हुये भारत सरकार ने पाकिस्तान के आन्तरिक मामलों में अधिकतम हस्तक्षेप किया हैं।[1]

एशिया में नेतृत्व की भावना से चीन सदैव भारत के विरूद्ध अपनी स्थिति सुदृढ करने के लिये प्रयत्नशीन रहा हैं । अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति करने के लिये चीन भारत के पड़ोसी देशों-पाकिस्तान, नेपाल एवं श्रीलंका आदि को सैनिक एवं आर्थिक सहायता देकर भारत के विरूद्ध भड़काता रहा और संघर्ष उत्पन्न करता रहा । चीन ने श्रीलंका की वायु सेना को प्रशिक्षण देने का भी प्रस्ताव रखा हैं ।[2]

चीन द्वारा श्रीलंका को दी जा रही सैनिक एवं राजनैतिक सहायता के दो पक्ष हैं । पहला पक्ष शुद्ध व्यवसायिक है । जबकि दूसरा पक्ष - राजनैतिक उद्देश्य से प्रभावित है । इस सहायता के माध्यम से चीन श्रीलंका के द्वारा हिन्दमहासागर में अपने एक गढ़ की स्थापना कराना चाहता है तथा भारत के विरूद्ध अपने स्थिति को और अधिक सुदृढ़ करना चाहता हैं । भारत के पड़ोसी राज्य नेपाल के साथ चीन के बढ़ते हुये सम्बन्धों ने भी भारत की सुरक्षा को खतरे में डाल दिया हैं । चीन नेपाल और भारत में संघर्ष करवाने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील हैं ।

इस प्रकार स्पष्ट हैं कि साम्यवादी महाशक्ति चीन की भूमिका ने भी दक्षिण एशिया को काफी सीमा तक प्रभावित किया और भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका आदि नेपाल में संघर्षमय स्थिति उत्पन्न कराने का प्रयास किया ।

---

(1) टाइम्स आफ इण्डिया 13 अप्रैल 1971

(2) रमाकान्त 'चाइना एण्ड श्रीलंका रिलेशन्स ' पृष्ट 155

दक्षिण एशिया में महाशक्तियों-संयुक्त राज्य अमेरिका , सोवियत संघ एवं साम्यवादी चीन की भूमिका का विवेचन करने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता हैं कि दक्षिण एशिया में महा शक्तियों की भूमिका ने सदैव तनाव ही उत्पन्न किया हैं । अमेरिका , रूस चीन ने अपने-अपने हितों की पूर्ति के लिऐ दक्षिण एशिया के देशो में हस्तक्षेप की नीति का अनुसरण किया और दक्षिण एशिया के देशों को संघर्षमय स्थिति में पहुंचा दिया । दक्षिण एशिया के देशों के परस्पर संघर्षो में महाशक्तियों की अभूतपूर्व भूमिका रही हैं ।

**(द) अन्तर्राष्ट्रीय संगठन , क्षेत्रीय संगठन एवं दक्षिण एशिया -**

युद्ध की विभषिका के भीषण परिणाम विचारशील व्यक्तियों को शाँति एवं सुरक्षा के स्थायित्व हेतु अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के निर्माण की ओर, प्रेरित करते हैं । अगस्त 1914 में सर्बिया तथा आस्ट्रिया के झगड़े को लेकर जो विश्वयुद्ध प्रारम्भ हुआ , वह मानव इतिहास का एक भयंकर एवं दीर्घकालीन युग था । वर्षो से इस विनाशकारी संघर्ष के बाद 11 नवम्बर 1918 को इस प्रथम विश्वयुद्ध का अंत हुआ ।

प्रथम विश्वयुद्ध के भीषण परिणामों में सामूहिक सुरक्षा के एक सबके लिये और सब एक के लिये "[1] सिद्धान्त के अन्तर्गत विभिन्न राष्ट्रों ने **राष्ट्रसंघ** के निर्माण की आवश्यकता अनुभव की । 1919 में पेरिस शांति सम्मेलन के समय से ही राष्ट्रसंघ की स्थापना पर गम्भीरतापूर्वक विचार होना प्रारम्भ हो गया । 10 जनवरी, 1970 को राष्ट्र संघ की विधिवत स्थापना हुई , जिसका प्रमुख उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग , शांति एवं सुरक्षा की स्थापना था ।

वास्तव में राष्ट्रसंघ सामूहिक सुरक्षा के सिद्धान्त को क्रियान्वित करने का एक साधन था । प्रथम विश्वयुद्ध से पूर्व शांति स्थापित करने के लिये शक्ति संतुलन सिद्धान्त का प्रयोग होता था किन्तु प्रथम विश्व युद्ध के उपरान्त शक्ति संतुलन के सिद्धान्त का परित्याग करके सामूहिक सुरक्षा के सिद्धान्त को अपनाया गया , जिसका अर्थ था कि संसार के राष्ट्र एक संस्था के अन्दर संगठित होकर सभी राज्यों की सुरक्षा के लिये सामूहिक रूप से जिम्मेदार हैं । राष्ट्रसंघ के विधान की धारा 10 से 16 तक सामूहिक सुरक्षा से सम्बन्धित प्रावधानों को वर्णन किया गया हैं । विधान की धारा 16 के अन्तर्गत राष्ट्रसंघ के सदस्य राष्ट्र आवश्यकता पड़ने पर सामूहिक सुरक्षा के लिये उपयुक्त कदम उठाने को वचनबद्ध थे ।

---

(1) हास0जे0 मोर्गेन्थाऊ ' पालिटिक्स एमंगनेशन्स' पृष्ट 33।

इन प्रावधानों के बावजूद भी राष्ट्रसंघ के अन्तर्गत सामूहिक सुरक्षा-पद्धति सफलतापूर्वक कार्य नहीं कर सकी । वास्तव में सामूहिक सुरक्षा के विकास एवं लागू करने के साधन के रूप में राष्ट्र संघ बुरी तरह दुविधाग्रस्त था तथा वह प्रारम्भ से ही शक्तिहीन था ।[1]

राष्ट्रसंघ को अपने कार्य में कोई सफलता नहीं मिली तथा राष्ट्रसंघ के रहते द्वितीय विश्वयुद्ध छिड़ गया । इससे यह स्पष्ट हो गया कि राष्ट्रसंघ में अनेक त्रुटियाँ थीं, इसलिये वह अपने उद्देश्य की पूर्ति में सर्वथा असमर्थ रहा ।

द्वितीय विश्व युद्ध के भीषण नरमेघ में विचारशील व्यक्तियों को मानवजाति की सुरक्षा के लिये ऐसे अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के निर्माण की आवश्यकता अनुभव कराई जो पुराने राष्ट्रसंघ की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली हो ताकि शांति के स्थायित्व में पुनः व्यवधान न आ पाये । इसी कारण विश्वयुद्ध के दौरान ही अधिकांश महाशक्तियों ने इस दिशा में प्रयास प्रारम्भ कर दिये थे । विभिन्न राष्ट्रों के अथक प्रयासों के परिणाम स्वरूप 1945 में सेन फ्रांसिस्को सम्मेलन हुआ तथा 26 जनवरी 1945 को 51 राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्र चार्टर पर हस्ताक्षर किये । 24 अक्टूबर 1945 को **संयुक्त राष्ट्र संघ** की विधिवत् स्थापना हुई । संयुक्त राष्ट्र संघ का उद्देश्य मानव जाति की भावी संततियों को युद्ध की विभीषिका से बचाना तथा अन्र्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा व्यवस्था कायम करना हैं । महामंत्री त्रिग्वेली ने यह आशा व्यक्त की कि –

संयुक्त राष्ट्र संघ इस संकल्प की सहायता से शस्त्र आक्रमण के विरूद्ध सार्वभौम सामूहिक सुरक्षा की गारंटी दे सकेगा ।[2] राष्ट्र संघ ने विश्व के अनेक राष्ट्रों द्वारा औपनिवेशिक दासता से मुक्ति पाने के लिये किये गये राष्ट्रीय आन्दोलनों ने

---

(1) पामर एण्ड पर्किन्स ' इंटरनेशनल रिलेशन्स' पृष्ठ - 277

(2) यूनाइटेड नेशन्स जनरल एसेम्बली आफीशियल रिकार्ड्स प्लेनरी मीटिंग, 1 नवम्बर 1950 पृष्ठ - 291

महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया हैं तथा शांति एवं व्यवस्था बनाये रखने के प्रयास में सफलता प्राप्त की हैं ।

आज विश्व के 175 देश संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य हैं तथा इसके उद्देश्य एवं सिद्धान्तों में पूर्ण आस्था रखते हैं । संयुक्त राष्ट्र के चार्टर के अनुसार इसके चार उद्देश्य हैं :-

प्रथम- अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की स्थापना , शांति के मार्ग में आने वाली बाधाओं को सामूहिक प्रयासों से रोकना तथा अन्तर्राष्ट्रीय विधि एवं कानून के सिद्धान्त के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को सुलझाना ।

द्वितीय- शांति की व्यापकता को प्रोत्साहित करके स्वतन्त्रता एवं समानता के सिद्धान्त के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ के बीच मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध को बढ़ावा देना ।

तृतीय- संसार की आर्थिक , सामाजिक, सांस्कृतिक एवं मानवीय क्षेत्रों में समस्याओं का समाधान करने के लिये अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग प्राप्त करना तथा मानव अधिकारों एवं मौलिक स्वतन्त्रताओं को प्रोत्साहित करना ।

चतुर्थ- संयुक्त राष्ट्र संघ को एक ऐसा केन्द्र बनाना जहाँ इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए राज्यों के कार्यो में समन्वय स्थापित हो सके ।

वास्तव मे संयुक्त राष्ट्र संघ का मुख्य उद्देश्य सामूहिक सुरक्षा की व्यवस्था हैं । संयुक्त राष्ट्र के विधान में अनुच्छेद 43 के अन्तर्गत यह व्यवस्था की गई हैं कि शान्ति की स्थापना के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य सुरक्षा परिषद के मांगने पर तथा विशेष समझौतों के अनुसार आवश्यकतानुसार अपने सशस्त्र सैनिक एवं सुविधाएँ परिषद को प्रदान करेंगें ।[1] सामूहिक सुरक्षा की कार्यवाही को सफल बनाने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्गत महाशक्तियों को वीटो प्रदान करके विशेष रूप से

---

(1) संयुक्त राष्ट्र चार्टर, अनुच्छेद 43

उत्तरदायी बना दिया गया हैं । इसके साथ ही सामूहिक सुरक्षा की व्यवस्था को स्थाई एवं दृढ़ बनाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ के विधान में प्रादेशिक संगठनों की स्थापना को उचित बताया गया हैं । चार्टर की 51वीं एवं 52 वीं धाराओं में संयुक्त सदस्य राष्ट्रों को प्रादेशिक एवं क्षेत्रीय संगठन बनाने की अनुमति प्रदान की गई हैं । चार्टर की 52वीं धारा के अनुसार-

" अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति एवं सुरक्षा को स्थापित रखने के लिए ऐसे क्षेत्रीय संगठनों एवं अभिकरणों की स्थापना की जा सकती हैं जो चार्टर में निहित उद्देश्यों एवं सिद्धान्तों के अनुरूप हों । वास्तव में यह व्यवस्था इस लिए की गई थी . कि आक्रमण की स्थिति में सुरक्षा परिषद में वीटो के कार्यान्वयन से गतिरोध उत्पन्न हो जाने के कारण सामूहिक सुरक्षा कभी नष्ट न हो जाये ।[1]

क्षेत्रीय संगठनों की छूट इसलिये दी गई . ताकि स्थानीय एवं क्षेत्रीय विवादों का समाधान इन संगठनों के माध्यम से हो सके तथा ये विवाद सुरक्षा परिषद में लाने की आवश्यकता न पड़े । चार्टर में यह व्यवस्था भी की गई हैं कि सुरक्षा परिषद उचित समझे तो वह अपने निर्णयों को इन संगठनों के माध्यम से क्रियान्वित करा सकती हैं ।

दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य हैं । भारत एवं पाकिस्तान प्रारम्भ से ही संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य रहे हैं । बांग्लादेश ने अपने अभ्युदय के उपरान्त 1974 मे संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता प्राप्त की । नेपाल ने 1955 , में भूटान ने 1971 व श्रीलंका ने 1955 में संयुक्त राष्ट्र संघ की सदस्यता प्राप्त की । मालदीव 1965 में इसका सदस्य बना ।

दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्रों ने संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्गत अन्र्राष्ट्रीय विषयों पर समय-समय पर समान एवं विरोधी विचार प्रदान करके कभी-कभी अपनी आपसी समस्याओं को भी संयुक्त राष्ट्र संघ मे रखा । भारत एवं पाकिस्तान

---

(1) दिनेश चन्द्र चतुर्वेदी 'अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध' पृष्ट 58

अपनी स्वतन्त्रता की प्राप्ति के समय से ही एक दूसरे के प्रति शत्रुतापूर्ण नीति अपनाते रहें हैं । दोनों देशों के बीच 1947 से ही कश्मीर समस्या अपना अस्तित्व बनाए हुये है । जनवरी 1948 में सर्वप्रथम भारत ने कश्मीर समस्या को सुरक्षा परिषद के समक्ष रखा । पाकिस्तान ने भी भारत के आरोपों को खण्डन करते हुए उस पर प्रत्यारोपण किया 17 जनवरी 1948 को संयुक्त राष्ट्र की सुरक्षा परिषद के दोनों पक्षों से स्थिति में सुधार के लिये अनुरोध किया तथा इस समस्या के निदान हेतु एक आयोग की स्थापना करने का निश्चय किया । विवाद को हल करने के लिए दोनों पक्षों में काफी विचार विमर्श हुआ किन्तु उसका कोई परिणाम नहीं निकला । संयुक्त राष्ट्र संघ की सुरक्षा परिषद ने इस समस्या के निदान हेतु अनेक आयोगों एवं प्रशासकों की नियुक्ति की किन्तु इस विषय पर उसे कोई सफलता नहीं मिली । पश्चिमी राष्ट्रों ने शीतयुद्ध में अपने स्वार्थों की पूर्ति का साधन बनाकर इस समस्या को सुलझने नहीं दिया

संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा में लगभग प्रतिवर्ष पाकिस्तान की ओर से इस समस्या का उल्लेख किया जाता है तथा इस पर औपचारिक रूप से वार्ता कर ली जाती हैं किन्तु अभी तक इसका कोई हल नहीं निकाला जा सका हैं । अतः संयुक्त राष्ट्र संघ इस समस्या को हल करने में अभी तक असफल रहा हैं ।

1971 में भारत पाक संघर्ष को भी संयुक्त राष्ट्र संघ के अन्तर्गत रखा गया लेकिन इस विवाद के दौरान भी संयुक्त राष्ट्र संघ को कोई विशेष सफलता नहीं मिली । युद्ध आरम्भ होने के पूर्व भी संयुक्त राष्ट्र संघ ने पाकिस्तानी अत्याचारों द्वारा उत्पन्न मानवीय समस्या के प्रति अपनी आँखे बन्द करके अपनी कर्तव्य हीनता का परिचय दिया था । पाकिस्तान ने बांग्लादेश के स्वतन्त्र अस्तित्व को समाप्त करने के उद्देश्य से भीषण सैनिक शक्ति का प्रयोग किया जिसमें लाखों व्यक्ति मारे गये और लगभग एक करोड़ व्यक्ति भागकर भारत शरणार्थियों के रूप में आये । अन्य देशों सहित भारत और स्वयं बांग्लादेश के प्रतिनिधियों ने संयुक्त राष्ट्र संघ का ध्यान इस समस्या की ओर आकर्षित किया परन्तु अमरीकी प्रभाव के कारण संयुक्त राष्ट्र संघ समस्या का समाधान करने और बांग्लादेश में पाकिस्तान द्वारा किये जाने वाले अमानुषिक

कार्यो पर प्रतिबन्ध लगाने हेतु विशेष सहायता नहीं कर सका । बांग्लादेश पर पाकिस्तान का भीषण अनाचार और नृशंस हत्याकाण्ड जारी रहा तथा संयुक्त राष्ट्र संघ उसके विरूद्ध कोई कमठोर कार्यवाही नहीं कर सका ।

27 दिसम्बर 1979 को सोवियत सैनिक हस्तक्षेप के कारण अफगानिस्तान में बबरक करमाल को काबुल की गद्दी पर बैठा दिया गया तथा 28 दिसम्बर 1979 को हफीजुल्लाह अमीन की हत्या कर दी गई । उस समय से आज तक अफगानिस्तान में सोवियत सेना निरन्तर बनी हुई है । यह संकट इसलिए अधिक गम्भीर दिखाई देता है कि पहली बार सोवियत संघ ने साम्यवादी घेरे से बाहर निकलकर एक गुट निरपेक्ष देश के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप करके उसकी अखण्डता और स्वतंत्रता को संकट में डाल दिया । इस संकट के कारण दक्षिणी एशिया इस बात का भय उत्पन्न हो गया है कि किसी भी समय उनकी स्वतन्त्रता का भी हनन हो सकता है । इससे शक्ति सन्तुलन भी बिगड़ गया हैं और हिन्द महासागर में महाशक्तियों की प्रतिस्पर्धा बहुत बढ़ गई है ।

अफगानिस्तान से सोवियत सैनिकों को हटाने के प्रश्न पर संयुक्त राष्ट्रसंघ कोई कारगर कार्यवाही करने में असफल रहा हैं । अफगानिस्तान संकट अब भी ज्यों का त्यों बना हुआ है ।

श्रीलंका एवं भारत के सम्बन्धों में भी कभी-कभी कुछ ऐसे तनावपूर्ण अवसर आए जब दोनों ने सूक्ष्म रूप से अपनी समस्या संयुक्त राष्ट्र संघ में रखी । भारत ने सर्वप्रथम 1983 में श्रीलंका से आने वाले शरणार्थियों की समस्या को निम्न स्वर में संयुक्त राष्ट्र संघ में रखा तथा तमिलों पर हो रहे अत्याचार का प्रश्न उठाया।[1] 1986 में भारत ने जिनेवा में संयुक्त राष्ट्र संघ वार्ता में श्रीलंका पर मानवाधिकार उल्लंघन का आरोप लगाया तथा श्रीलंका की सेना द्वारा तमिलों के प्रति की गई हिंसात्मक

---

(1) एशियन रिकार्डर 17-23 दिसम्बर 1983

कार्यवाही के संदर्भ में अवगत कराया [1] किन्तु संघ ने इस पर कोई सक्रीय कार्यवाही नहीं की ।

अतः स्पष्ट है कि संयुक्त राष्ट्र संघ दक्षिण एशियायी देशों के पारस्परिक विवादों को हल करने में सदैव ही असफल प्रतीत हुआ हैं लेकिन फिर भी दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र संघ में पूर्ण आस्था रखते हैं ।

संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर की सामूहिक सुरक्षा की अवधारणा के अनुरूप विश्व में अनेक क्षेत्रीय एवं प्रादेशिक संगठनों का अविर्भाव हुआ । प्रादेशिक संगठनों व संधियों का निर्माण सामूहिक सुरक्षा के उद्देश्य से किया गया।प्रादेशिक संगठन प्रदेश के हितों की रक्षा के लिए बनाए गए ।

इसी श्रृंखला में सर्वप्रथम **उत्तरी अटलांटिक सन्धि संगठन ( नाटो)** की स्थापना हुई।

4 अप्रैल 1949 को संयुक्त राज्य अमेरिका की राजधानी वाशिंगटन में 12 राष्ट्रों ने एक समझौते पर हस्ताक्षर करके नाटो को जन्म दिया । इस समझौते में कहा गया कि इस संगठन का उद्देश्य हस्ताक्षर करने वाले राज्यों की जनता के प्रजातन्त्र, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता एवं कानून के शासन पर आधारित स्वाधीनता , सामूहिक विरासत एवं सभ्यता की रक्षा करना हैं । समझौते की प्रस्तावना में चार्टर में निहित लक्ष्यों में विश्वास प्रकट किया गया तथा यह कहा गया कि वे समस्त राष्ट्रों एवं सरकारों के साथ शान्तिपूर्ण सम्बन्धों को स्थापित रखना चाहते हैं । इस संगठन में बेल्जियम, कनाडा, फ्रान्स आइसलैण्ड, इटली , लक्जमवर्ग, नीदरलैण्ड , नार्वे पुर्तगाल , युनाइटेड किंगडम एवं संयुक्त राज्य अमेरिका सम्मिलित थे ।

वास्तव में नाटो शान्ति एवं सुरक्षा स्थापित करने वाला सन्धि संगठन न बनकर एक सैनिक संगठन बन गया जिसका मुख्य उद्देश्य सोवियत रूस की बढती हुई

---

(1) एशियन रिकार्डर, 16-22 अप्रैल 1986

शक्ति को रोकना तथा सोवियत आक्रमण के विरूद्ध संयुक्त राष्ट्र संघ से पर्याप्त सुरक्षा न पा सकने की सम्भावना था । इस संगठन से सैनिक गुटबन्दी एवं शीतयुद्ध को प्रोत्साहन मिला एवं इसके कारण पूर्व एवं पश्चिम के देशों में अन्तर्राष्ट्रीय तनाव बढ़ा हैं। डी0डब्ल्यू0क्राउले के शब्दों में-

" संयुक्त राज्य का नाटो में सम्मिलन स्पष्ट रूप से विश्व सम्बन्धों में एक बड़ी क्रान्ति का सूचक हैं ।"[1] आइजन हॉवर ने नाटो पर टिप्पणी करते हुए कहा था- "नाटो विश्व शान्ति एवं सुरक्षा के प्रति अविछिन्न सोवियत साम्यवादी धमकी के विरूद्ध अमरीकन सुरक्षा मैत्रियों का एक मूलभूत और अपरिहार्य तत्व हैं ।"[2]

यद्यपि दक्षिण एशिया के कोई भी राष्ट्र नाटो या उत्तरी अटलांटिक सन्धि संगठन के सदस्य नहीं है किन्तु परोक्ष रूप से इस संगठन के दक्षिण एशियायी क्षेत्र पर अपना प्रभाव डाला हैं । पाकिस्तान अपने जन्म काल से ही पश्चिमी शक्तियों का प्रवक्ता रहा हैं । अमेरिका एवं ब्रिटेन आदि पश्चिमी शक्तियों ने अपने संगठन की वृद्धि हेतु तथा इस क्षेत्र में साम्यवादी प्रसार को रोकने के लिये पाकिस्तान को अधिकाधिक मात्रा में सैनिक सहायता प्रदान करके अपना पक्ष प्रबल किया हैं । तथा इस क्षेत्र को तनावग्रस्त रखने के लिये प्रयासरत रहा हैं जिसमें उसे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई हैं । पाकिस्तान के अतिरिक्त श्रीलंका भी इस संगठन के प्रभाव से अछूता नहीं रह पाया हैं । श्रीलंका के शासकों ने समय-समय पर अपने क्षेत्र में इस संगठन के सदस्यों को आमन्त्रित करके तथा उन्हें अपने क्षेत्र की सैनिक सुविधायें प्रदान करके दक्षिण एशिया के क्षेत्र को तनावपूर्ण स्थिति में रखा हैं । अतः इस सैनिक संगठन ने काफी समय तक दक्षिण एशियाई क्षेत्र में अपने हितों की पूर्ति के लिये अस्थिरता एवं अशान्ति उत्पन्न करने के लिये सदैव प्रयास किये हैं इसी श्रृंखला के अन्तर्गत 8 सितम्बर 1954 में **दक्षिणी पूर्वी एशिया सन्धि संगठन (सीटो)** की स्थापना हुई । इस संगठन में ब्रिटेन, फ्रांस, आस्ट्रेलिया, अमेरिका, पाकिस्तान, फिलीपाइन्स, न्यूजीलैण्ड, एवं थाईलैण्ड के प्रतिनिधियों ने भाग

---

(1) डी0डब्ल्यू0क्राउले "द बैकग्राउण्ड टू करेन्ट अफेयर्स" पृष्ठ 150

(2) डॉ0 जैन एण्ड मान्डोत "अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध " पृष्ठ 196

लिया । इन देशों ने दक्षिणी-पूर्वी एशिया की सामूहिक सुरक्षा और आर्थिक सम्बन्धों के विकास के उद्देश्य से एक सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर किया जिसे सीटो की संज्ञा दी गयी।

इस सन्धि के अनुच्छेद 4 में कहा गया कि किसी भी सदस्य राष्ट्र के विरूद्ध सशस्त्र आक्रमण की स्थिति में अथवा शान्ति भंग होने की आशंका पर सभी सदस्य राज्य अपनी वैद्यानिक प्रक्रियाओं के अनुसार सामूहिक कार्यवाही करेंगें । इस संगठन में सम्मिलित होने के लिये बर्मा, भारत, श्रीलंका, इण्डोनेशिया पाकिस्तान आदि को आमन्त्रित किया गया था । परन्तु पाकिस्तान के अतिरिक्त किसी भी देश ने इसमें भाग नहीं लिया।

वास्तव में इस संगठन का उद्देश्य एशिया में साम्यवादी चीन के विस्तार को रोकना था, न कि शान्ति एवं सुरक्षा की स्थापना । इस सन्धि के अनुच्छेद 4 के अन्तर्गत ' आक्रमण' शब्द की अमेरिका ने स्पष्ट से व्याख्या करते हुये कहा कि 'आक्रमण' का तात्पर्य केवल साम्यवादी आक्रमण से है । अर्थात् केवल साम्यवादी आक्रमण के समय अमेरिका सहायता करेगा अन्यथा आपसी विवादों में हस्तक्षेप नहीं करेगा। जवाहर लाल नेहरू ने इसकी आलोचना करते हुये इसे एक प्रकार का मुनरों सिद्धान्त बताया जिसे दक्षिण एशिया पर जबरदस्ती थोप दिया गया हैं ।

नेहरू जी का यह भी कहना था कि यह दोहरी बात और दोहरे विचारों का एक उदाहरण हैं जहाँ सीटो का उद्देश्य शान्ति और एकता बताया जा रहा हैं, वहाँ दूसरी ओर इसके साधन विपरीत परिणाम वाले हैं । यह हर प्रकार से एक ग़लत ख़तरनाक और हानिकारक मार्ग है ,, जो इस क्षेत्र में शान्ति स्थापना के स्थान पर तनाव को ही अधिक बढ़ायेगा ।

भारत में अमेरिका के भूतपूर्व राजदूत चेस्टर बाउल्स ने भी सीटो को दक्षिण एशिया पर अमेरिका द्वारा येन केन प्रकारेण अपने अधिकारों के पुर्नस्थापन के एक साधन के रूप में देखा । उनका विचार था कि दक्षिण एशिया के देश अपनी परतन्त्रता की भयानक स्मृति को कभी नहीं भूल सकते हैं और जब पशिचमी देश कहते है कि साम्यवाद से एशिया की रक्षा करने के लिये आये हैं , इस क्षेत्र पर एक बुरी स्मृतियों की लहर दौड जाती हैं ।

वी0के0 मेनन के शब्दों में :-

" यह सुरक्षा का क्षेत्रीय संगठन नहीं है अपितु ऐसे विदेशी लोगों का संगठन है जिसे इस क्षेत्र में आपने स्वार्थो की रक्षा करनी है " ।

सीटो का प्रयोग इसके संस्थापक पश्चिमी देश यहाँ पर सशस्त्र आक्रमण करने के एक साधन के रूप में भी कर सकते हैं । इसकी स्थापना के समय ही चीन के तत्कालीन प्रधानमन्त्री चाउ एन लाई ने कहा था कि यह आक्रमण का एक साधन है जिसे सुरक्षा का जामा पहना दिया गया हैं ।

दक्षिणी पूर्वी एशियाई सन्धि संगठन का वास्तव में प्रमुख उद्देश्य इस सम्पूर्ण क्षेत्र का साम्यवादी चीन के प्रभाव से बचाना था । अपने इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु दक्षिण एशिया के भारत, पाकिस्तान एवं श्रीलंका आदि देशों को इस संगठन में सम्मिलित होने के लिये आमन्त्रित किया गया था । लेकिन पाकिस्तान के अतिरिक्त दक्षिण एशिया के किसी भी देश ने इस संगठन की सदस्यता ग्रहण नहीं की । इसको एक क्षेत्रीय संगठन की संज्ञा देना उचित प्रतीत नहीं होता क्योंकि इसमें दक्षिण पूर्वी एशिया के केवल तीन राष्ट्र शामिल हैं तथा पश्चिम के पांच राष्ट्र हैं इसके सदस्यों में इस संगठन के उद्देश्यों के सम्बन्ध में भिन्नता की स्थिति है । पाकिस्तान इसे भारत विरोधी संगठन की स्थिति में लेता है । पाकिस्तान के द्वारा इस संगठन की सदस्यता ग्रहण करने पर इस संगठन ने प्रत्यक्षरूप से दक्षिण एशियाई क्षेत्र को प्रभावित किया हैं। पाकिस्तान ने पश्चिमी शक्तियों से अधिकाधिक मात्रा में सैनिक सहायता प्राप्त करके सम्पूर्ण दक्षिण एशियाई क्षेत्रको तनावग्रस्त एवं आतंकित कर दिया है ।

नेहरू जी ने सीटो को पश्चिमी देशों द्वारा दक्षिणी एशिया पर अपने अधिकार स्थापित करने का एक तरीका कहा। उनका कहना था कि इस एक प्रकार का मुनरों सिद्धान्त है जिसे यहाँ के देशों पर जबरदस्ती थोप दिया गया है ।

इसी श्रृंखला में **केन्द्रीय सन्धि संगठन अथवा बगदाद पैक्त (सेन्टो)** की स्थापना की गई ।

अमरीकी विदेशमंत्री जॉन फस्टर डलेस ने अपनी 1953 की मध्यपूर्व यात्रा के बाद सोवियत रूस की सीमा से लगने वाले राष्ट्रों टर्की, ईरान आदि को ब्रिटेन की सहायता से से एक सुरक्षा संगठन बनाने का निश्चय किया । 23 सितम्बर 1955 को पाकिस्तान बगदाद सन्धि का चौथा तथा 19 अक्टूबर 1955 को ईरान इसका पाँचवा सदस्य बना । स्वेज संकट के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका भी इसकी सैनिक समिति में भाग लेने लगा । 1956 में तेहरान में हुये दूसरे वार्षिक अधिवेशन में यह घोषणा की गयी कि अमेरिका बगदाद संधि वाले देशों को सहायता देगा । संक्षेप में इस संधि का प्रधान उद्देश्य सोवियत रूस की दक्षिणी सीमा से लगे राज्यों में उसके विरूद्ध गुटबन्दी तथा इन देशों में अमेरिका के सैनिक और हवाई अड्डे स्थापित करना था । सोवियत संघ ने बगदाद पैक्ट की आलोचना करते हुये कहा कि :-

" यह एक आक्रामक, सैनिक ओर राजनीतिक गठबन्धन ही नहीं हैं बल्कि गुलाम बनाने के साधनों में से एक साधन हैं एवं उपनिवेशवाद की भाँति शोषण की एक नयी पद्धति हैं ।

पामर एवं परकिन्स ने इसे एक दुर्बल व्यवस्था की संज्ञा दी हैं ।[1]

दक्षिण एशियायी राष्ट्रों में पाकिस्तान द्वारा इस संगठन की सदस्यता ग्रहण करने के कारण सम्पूर्ण दक्षिण एशियायी क्षेत्र अस्थिर, तनावपूर्ण एवं आतंकित हो गये । अमेरिका ने पाकिस्तान को इस संगठन का सदस्य बनने के कारण भारी मात्रा में सैनिक एवं आर्थिक सहायता प्रदान की जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव भारत तथा अन्य दक्षिण एशियायी राष्ट्रों पर पड़ा । भारत ने इसकी तीव्र भर्त्सना भी की । पाकिस्तान पश्चिमी शक्तियों के हाथों की कठपुतली बनकर इस क्षेत्र को सदैव आतंकित करता रहा हैं । भारत के साथ 1965 एवं 1971 के युद्ध इसके प्रमाण हैं । इन युद्धों में पाकिस्तान को अमेरिका द्वारा अत्याधिक मात्रा में सैन्य सामग्री प्राप्त हुई । यही कहना पड़ेगा कि अमेरिका के बल पर ही पाकिस्तान ने भारत पर सीधा आक्रमण किया ।

---

(1) पामर एवं परकिन्स 'इंटरनेशनल रिलेशन्स' पृष्ट 584

"सेण्टो" ब्रिटेन, तुर्की और पाकिस्तान के मुट्ठी भर राजनीतिज्ञों का संगठन बनकर रह गया हैं । यह संगठन अपने सदस्य राज्यों को कभी भी कोई लाभ या शक्ति नहीं प्रदान कर पाया और इसी कारण इस समय-समय पर सदस्य राज्यों की जनता के व्यापक आदि तीव्र विरोध का सामना करना पड़ा है ।

संयुक्त राष्ट्र चार्टर की 52 वीं धारा के अनुसार सामूहिक सुरक्षा की अवधारणा का अनुसरण करते हुये एवं अन्य प्रादेशिक संगठनों की प्रतिक्रिया स्वरूप साम्यवादी राष्ट्रों ने मित्रता एवं पारस्परिक सहयोग की बीस वर्षीय संधि पर हस्ताक्षर किये जिसे **पूर्वी यूरोपीय संधि संगठन अथवा वार्सा सन्धि** कहते हैं वार्सा सन्धि में रूस एवं पूर्वी यूरोप के सात राष्ट्रों अल्बानिया , बल्गारिया , चेकोस्लोवाकिया, पूर्वी जर्मनी , हंगरी , पौलेण्ड तथा रूमानिया ने 14 मई 1955 में बारसा में हस्ताक्षर किये ।

इस सन्धि की भूमिका ने यूरोप में सामूहिक सुरक्षा की पद्वति को स्थागित करने पर बल दिया गया था यह कहा गया कि पश्चिमी यूरोप की संधि के निर्माण से तथा पश्चिमी जर्मनी के पुनः शस्त्रीकरण से यह आवश्यक हो गया है कि वह अपनी सुरक्षा को सुदृढ़ करें एवं यूरोप में शांति स्थापित रखे । इस समझौते की मुख्य धारा 3 के अनुसार यदि किसी सदस्य पर सशस्त्र आक्रमण होता है तो के अन्य देश उसकी सैनिक सहायता करेंगें । सैनिक सहयोग के अतिरिक्त बार्सा सन्धि हस्ताक्षरकर्ता राष्ट्रों में आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सहयोग की व्यवस्था भी करते हैं ।

वास्तव में वारसा सन्धि नाटो सन्धि को प्रतिउत्तर था । यदि नाटो सन्धि के माध्यम से अमेरिका रूस के विरूद्ध अपनी घेराबन्दी को मजबूत करना चाहता था तो सोवियत संघ ने भी वारसा सन्धि के माध्यम से अपनी स्थिति को काफी सुदृढ़ किया था । सोवियत विदेश मंत्री ग्रोगिको ने कहा था कि :-

'हम यूरोप की शांति को मजबूत करने वाले हर प्रस्ताव पर सहमत हैं।'[1]

---

(1) जनसत्ता , 6 जनवरी 1964 पृष्ठ 2

उन्होंने कहा कि अमेरिका पश्चिम यूरोप में क्रूस और पर्शिन्ग मिसाइलें तैयार कर चुका हैं, ऐसी स्थिति में बारसा सन्धि के देशों में एकता और प्रभावी सामूहिक सहयोग की आवश्यकता बढ़ गई हैं । यह सन्धि हमारी जनता की उपलब्धियों की रक्षा करती हैं ।

दक्षिणी एशिया का कोई भी राष्ट्र वार्सा सन्धि का सदस्य नहीं हैं, इसलिये प्रत्यक्ष रूप से इस संगठन ने दक्षिण एशियाई क्षेत्र पर अपना कोई विशेष प्रभाव अंकित नहीं किया हैं लेकिन भारत-सोवियत मैत्री 1971 के कारण इस संगठन का भी परोक्षरूप से दक्षिण एशियाई क्षेत्र पर कुछ प्रभाव पड़ा हैं । भारत सोवियत सम्बन्धों के कारण दक्षिण एशियायी राष्ट्र भारत से अपने को असुरक्षित महसूस करते रहें हैं तथा इसी कारण पाकिस्तान , श्रीलंका एवं बांग्लादेश जैसे दक्षिण एशियायी देशों का झुकाव पश्चिमी शक्तियों के प्रति निरन्तर बढता गया , जिसके परिणामस्वरूप यह क्षेत्र अधिकांशतः तनावपूर्ण स्थिति में रहा हैं ।

अतः वार्सा सन्धि ने भी परोक्ष रूप से दक्षिण एशियायी क्षेत्र में अस्थिरता, तनाव एवं आतंक उत्पन्न करने में योगदान दिया है ।

दक्षिण पूर्वी एशिया के देशों ने भी सामूहिक सुरक्षा की अवधारणा का अनुसरण करते हुये 1967 में **दक्षिण पूर्वी एशियायी राष्ट्र संगठन (एशियान)** का निर्माण किया इस संगठन में इण्डोनेशिया, मलेशिया , थाईलैंड एवं फिलीपीन्स आदि राष्ट्र सम्मिलित हैं ।

'एशियान' का उद्देश्य अपने देशों को सुरक्षित रखते हुये एक साझा बाजार तैयार करना है तथा सदस्य देशों के बीच आर्थिक सहयोग में वृद्धि करना हैं । वास्तव में एशियान की स्थापना अमेरिका की प्रेरणा से हुई हैं जिसके अन्तर्गत 'वियतनाम विरोध' स्पष्ट है । अमेरिकी एवं चीन के साम्राज्यवादियों ने एशियान को भी सैनिक गठबन्धन का रूप देने का प्रयास किया हैं ।

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद निर्मित हुये संगठनों को 2 श्रेणी में विभाजित किया जा सकता हैं :-

प्रथम, - आर्थिक , सामाजिक और सांस्कृतिक सहयोग के संगठन ।

द्वितीय, प्रादेशिक सुरक्षा के संगठन ।

आर्थिक सहयोग के संगठनों को सामान्यतः उपयोगी और हितकर माना जाता हैं परन्तु सुरक्षा संगठनों के सम्बन्ध में अनेक आपत्तियाँ उठाई जाती हैं । यह कहा जाता है कि नाटो, सीटो तथा वारसा पैक्ट जैसे संगठन संयुक्त राष्ट्र चार्टर की भावना के अनुकूल नहीं हैं । इस संगठनों से विश्व दो सशस्त्र कैम्पों में विभाजित हो गया । इनके राष्ट्रो में सहयोग के स्थान पर फूट और घृणा का वातावरण विकसित हुआ ।

दक्षिण एशियायी क्षेत्र में परस्पर तनावपूर्ण स्थिति उत्पन्न करने के लिये इन सैनिक संगठनों की प्रत्यक्ष या परोक्ष भूमिका रही हैं । भारत - पाकिस्तान विवाद में जटिलता उत्पन्न करने के लिये सीटो एवं सेन्टो ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया हैं । इन संगठनों ने अपने सामरिक एवं आर्थिक हितों की पूर्ति हेतु सम्पूर्ण दक्षिण एशियायी क्षेत्र को प्रभावित किया हैं । वर्तमान समय में भारत-पाक , भारत-बांग्लादेश, भारत-श्रीलंका आदि दक्षिण एशियायी क्षेत्र के पारस्परिक विवाद उन्हीं सैनिक संगठनों के उद्देश्यों के परिणाम हैं ।

**दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन ( दक्षेस )**

प्रादेशिक संगठनों की श्रृंखला में दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने हेतु दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन 'दक्षेस' का निर्माण किया गया । इस संगठन का क्षेत्र राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र और निगुर्ट आन्दोलनों के सिद्धान्तों के अन्तर्गत सम्बन्ध को आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक दृढता प्रदान करने तक सीमित हैं । इस संगठन का निर्माण करते समय उन कमियों को दूर करने का प्रयास किया गया जिसके अन्तर्गत अन्य संगठन व संधियाँ असफल रही थीं । यही कारण है कि दक्षेस एक सैनिक संगठन न बनकर परस्पर देशो में आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक सहयोग में वृद्धि करने वाला संगठन बना ।

दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन का गठन 8 दिसम्बर 1985 को हो गया । अपने में यह ऐतिहासिक घटना हैं जिसके माध्यम से पिछले 39 वर्षो की विसंगतियों में सामंजस्य की स्थापना का नया द्वारा खुल जाता है ।

दक्षिण एशिया के देशों में सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक विकास करने के विचार से इस संगठन का निर्माण किया गया । इस संगठन में कोई भी निर्णय सर्वसम्मति से लिये जाने की शर्त हैं तथा आपसी विवादों को इस मंच से उठाने की छूट नहीं है । अन्योन्याश्रित घटनाओं का विश्लेषण या समाधान इसके द्वारा संभव नहीं हैं तथापि इस नये संगठन से जो क्षेत्रीय सहयोग का व्यापारिक , सामाजिक और सांस्कृतिक आधार तैयार होगा, उससे राजनीतिक समस्याओं का समाधान द्विपक्षीय वार्ताओं से निकालने में पर्याप्त सहयोग मिलेगा इसमें संदेह नहीं हैं।

इस संगठन के उद्देश्य निम्न प्रकार से हैं :-

प्रथम- दक्षिण एशिया की जनता के कल्याण हेतु कार्य करना और उसका जीवन स्तर सुधारना।

द्वितीय- आर्थिक उन्नति , सामाजिक प्रगति और सांस्कृतिक विकास को बढ़ावा देना और इस क्षेत्र के प्रत्येक व्यक्ति को सम्मानपूर्वक जीवन बिताने तथा आपसी क्षमताओं का पूर्ण उपयोग करने के लिये अवसर प्रदान करना ।

तृतीय- दक्षिण एशियायी देशों की सामूहिक आत्म-निर्भरता को विकसित करना और उसे सुदृढ़ करना ।

चतुर्थ- क्षेत्रीय देशों में परस्पर विश्वास, समझदारी के भाव भरना और एक - दूसरे की समस्याओं को गम्भीरता से समझना ।

पंचम- आर्थिक , सामाजिक, सांस्कृतिक, वैज्ञानिक एवं तकनीकी क्षेत्रों में दक्षिण एशिया के क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ाना और परस्पर एक दूसरे की सहायता करना ।

षष्ठ- अन्य विकासशील देशों के साथ सम्बन्धों को सुदृढ करना ।

सप्तम्   अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर समान हित के मसलें उपस्थित होने की स्थिति में परस्पर सहयोग को दृढ़ बनाना ।

अष्ठम्   समान उद्देश्य और लक्ष्य वाले अन्तर्राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय संगठनों के साथ सहयोग करना।

इसके अतिरिक्त दो प्रमुख बातें वहीं हैं कि समस्त निर्णय सर्वसंमति से होगें और आपसी विवादों को इस मंच से नहीं उठाया जायेगा ।

यह दस सूत्रीय घोषणा पत्र लगभग वहीं जिसे 1983 में नई दिल्ली सम्मेलन में स्वीकार किया गया था और जिसमें आँशिक फेरबदल के साथ उसे थिम्पू वार्ता में स्वीकार किया गया था ।

दक्षेस के उद्देश्यों को स्पष्ट करते हुये श्रीमती इन्दिरा गांधी ने 1983 में दिल्ली में सम्पन्न हुई सभा में कहा था कि यह क्षेत्रीय सहयोग किसी देश की स्वतंत्रता को सीमित नहीं करेगा । यह तो सदस्य देशों को आर्थिक विकास के साथ क्षेत्र को मजबूत बनायेगा । दक्षेस राष्ट्र आत्मनिर्भर हों, यही मुख्य उद्देश्य है ।[1]

दक्षेस के सामूहिक आत्मनिर्भरता के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए एक सक्रिय कार्य योजना तैयार की गयी है । उसके तीन स्तर हैं । पहला सब रीजनल लेवल पर जिसमें राष्ट्रीय नीति के निर्धारण केन्द्रों की भूमिका महत्वपूर्ण हैं। दूसरा रीजनल लेवल जिसमें राष्ट्रीय सरकारें आपस में सहयोग करें तथा संयुक्त कार्य योजना बनाये तथा तीसरा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर इसमें राष्ट्र अपनी राजनैतिक स्तर एवं आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विकसित एवं औद्योगिक राष्ट्रों के साथ सम्बन्ध बनायें ।

इस प्रकार दक्षिण एशिया के देशों ने भी " दक्षेस " संगठन का निर्माण किया जिससे के आपपस में सहयोग स्थापित करके अपना विकास करे एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण एशिया के सुदृढ़ स्थिति में प्रस्तुत करें ।

---

(1) रामदेव भारद्वाज " भारत और आधुनिक विश्व " पृष्ठ- 354

## चतुर्थ अध्याय

### क्षेत्रीय सहयोग के लिये किये गये प्रयास

(अ) 1945 से 1980 तक किये गये प्रयास

(ब) 1980 से 1985 तक परिस्थितियों का निर्माण

(स) दक्षेस की स्थापना

## क्षेत्रीय सहयोग के लिये किये गये प्रयास

दक्षिण-एशिया , एशिया का दक्षिणी भाग है, जिसमें भारत, पाकिस्तान, बॉंग्लादेश , नेपाल, भूटान, श्रीलंका, और मालदीव देश सम्मिलित हैं । अनादिकाल से दक्षिण एशियाई देश एतिहासिक , आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक रूप से परस्पर जुड़े हुये हैं । प्रारम्भ से ही ये देश परस्पर सहयोग के आकांक्षी रहे हैं । अनेक विकास शील देशों का पारस्परिक सहयोग इनके लिये प्रेरणादायक रहा है । यद्यपि दक्षिण-एशिया के देशों ने इस सहयोग की स्थापना के लिये प्रारम्भ से किसी क्षेत्रीय संगठन की स्थापना नहीं की किन्तु इन देशों ने एक-दूसरे का सहयोग प्राप्त करने के लिये अनेक समझौते एवं सन्धियाँ अवश्य की । ऐसे अनेक सम्मेलन आयोजित किये गये, जिनमे अधिकांश दक्षिण एशियाई देशों ने भाग लिया ।

दक्षिण-एशिया के देशों में भारत अन्य छोटे देशों की अपेक्षा सर्वाधिक विकसित एवं सम्पन्न देश है और चूँकि समस्त अल्प विकसित देशों की सीमायें भारत से ही जुड़ती है अतः समस्त देश भारत पर ही विशेष रूप से सहयोग के लिये निर्भर रहे हैं, और उन्होंने भारत से सहयोग की अपेक्षा से अनेक सन्धियाँ की । अन्य देशों ने भी परस्पर सहयोग स्थापित करने के लिये अनेक प्रयास किये ।

## (अ) 1945 से 1980 तक किये गये प्रयास

दक्षिण-एशिया में सहयोग की भावना एशियाई जागरण के युग से ही दिखाई देती हैं । एशिया के नये उदारवादी राष्ट्र - अफ्रीका और लैटिन अमेरिका अपनी विकास की रणनीतियों की योजना में जनसंख्या वृद्धि , तकनीकी कौशल एवं निपुणता, मानवशक्ति, विकास की धीमी गति, प्रति व्यक्ति कम आय, बढ़ती हुयी मुद्रा स्फ़ीति , व्यापार का असन्तुलन कम उत्पादकता जैसी संभावी कठनाइयों के कारण विशिष्ट कठिनाइयों का सामना कर चुके थे । विकसित देशों के असहयोग के कारण इन कठिनाइयों पर विशेषतः ध्यान दिया गया ।

किन्तु एशिया पर योरोप तथा अमेरिका का प्रभुत्व देर तक स्थिर नहीं रह सका । बीसवीं सदी के मध्य भाग तक भारत, लंका, बर्मा, आदि बहुत से देश पाश्चात्य साम्राज्यवाद के शिकजें से मुक्त हो गये । " एशिया का विद्रोह " बीसवीं शताब्दी की सर्वाधिक महत्व पूर्ण विकास सिद्ध हो सकता है ।[1] 1947 में प्रथम " एशियन सम्बन्ध सम्मेलन " में पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने अपने उद्‌गार व्यक्त करते हुये कहा था- "यह परिवर्तन हो रहा है--- एशिया पुनः अपने स्वरूप को पहचान रहा है । हम परिवर्तन के एक महान युग में रह रहे हैं : और इसमें नवीन युग का समावेश तब होगा जब एशिया अन्य महाद्वीपों सहित अपना उचित स्थान ग्रहण करेगा ।[2]

प्रथम विश्व-युद्ध के बाद एशिया और अफ्रीका में स्वतन्त्रता , राष्ट्रीयता तथा लोकतन्त्र की पहली लहर आयी । एशियावासी " आत्मनिर्णय " की माँग करने लगे । सम्पूर्ण महाद्वीप में पाश्चात्य प्रभुत्व से छुटकारा पाने की प्रबल लालसा जागृत

---

(1) डा0बी0एल0फड़िया " अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति " पृष्ठ-250

(2)--- वही---- पृष्ठ -251

हुयी । द्वितीय विश्वयुद्ध में श्वेत जातियों को जिन प्रारम्भिक गम्भीर पराजयों का सामना करना पड़ा था , उससे एशियाई जनता को यह विश्वास हो गया कि पश्चिमी राष्ट्र अजेय नही है । इस काल में विभिन्न एशियाई राष्ट्रों में स्वतन्त्रता आन्दोलनों ने जोर पकड़ा और 1947 में स्वतन्त्र भारत के उदय से एशियाई राष्ट्रवाद को बहुत प्रोत्साहन मिला। बर्मा , श्रीलंका आदि अनेक राष्ट्र स्वतन्त्र हो गये । विश्व मामलों में उपयुक्त प्रभाव की प्राप्ति के लिये नव स्वतन्त्र एशियाई राष्ट्र एक ओर तो पाश्चात्य शक्तियों और साम्यवादी गुट के शीत युद्ध में अधिकांशतः गुट-निरपेक्षता की नीति अपनाने लगे, तथा दूसरी ओर वे गुट-निरपेक्षता, पंचशील, उपनिवेशवाद का विरोध जातीय समानता की मांग आदि के आधार पर एक सामान्य नीति के विकास का प्रयत्न करने लगे।

एशियाई एकता के प्रयास के लिये किये गये **1947** में 'प्रथम एशियाई सम्मेलन' में 28 एशियाई देशों के प्रतिनिधि आये । इस सम्मेलन का उद्देश्य एशियाई राष्ट्रों के बीच मैत्री व सहयोग को प्रोत्साहित करना तथा एशियाई जनता की प्रगति व हितों में वृद्धि करना था । पण्डित जवाहर लाल नेहरू ने सम्मेलन का महत्व बताते हुये कहा कि " परिस्थितियों में परिवर्तन आ रहा है तथा एशिया को अपनी स्थिति का ज्ञान हो गया है ----- एशिया के देश अब दूसरे के हाथ का मोहरा नहीं बनेगें, विश्व के विषय में उनकी अपनी नीतियों का होना निश्चित है"।[1]

**जनवरी, 1949** में 'दूसरा एशियाई सम्मेलन' नई दिल्ली में इण्डोनेशिया के प्रश्न पर विचार करने के लिये बुलाया गया जिसमें भाग लेने वाले उन्नीस देशों के प्रतिनिधियों ने उच्चपुलिस और सेनाओं के इण्डोनेशिया से अविलम्ब चले जानें और । जनवरी, 1950 तक उसे स्वतन्त्र किये जाने की मांग की । इस अवसर पर एशियाई राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने पारस्परिक एकता का परिचय देते हुये गुटबन्दी की भावना को बुरा बताया और भविष्य में और भी अधिक पारस्परिक सहयोग के लिये सहमति प्रकट की ।

---

(1) डा0 बी0एल0 फड़िया, " अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति " पृष्ठ-256

**मई, 1950 में** फिलीपाइन्स ने एशियाई राष्ट्रों के मध्य सांस्कृतिक और आर्थिक सहयोग के उद्देश्य से बेगुई में एक एशियाई सम्मेलन का आयोजन किया ।

**अप्रैल, 1954** में कोलम्बो शक्तियों भारत, पाकिस्तान, श्रीलंका, बर्मा, तथा इण्डोनेशिया के प्रधान मन्त्रियों ने हिन्द-चीन की समस्या पर विचार विमर्श करने के लिये पारस्परिक वार्ताऐं की । ये प्रधान मन्त्री पुनः दिसम्बर, 1954 में बोगोर में एकत्रित हुये और उन्होने एशिया एवं अफ्रीका के राष्ट्रों का वृहत सम्मेलन बुलाने का निश्चय किया जो 'बाण्डुंग सम्मेलन' नाम से प्रसिद्ध है ।

द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एशिया में नवजागरण की लहर का सर्वोत्तम रूप 'बाण्डुंग सम्मेलन' में प्रकट हुआ । भारत, बर्मा, और इण्डोनेशिया , द्वारा इस महान अफ्रो-एशियाई सम्मेलन का आयोजन किया गया जो **18 अप्रैल 1955 से 27 अप्रैल 1955 तक चला।** इस सम्मेलन में भारत सहित 29 राष्ट्र सम्मलित हुये । जिन उन्तीस राष्ट्रों ने इस सम्मेलन में भाग लिये, वे शक्ति व राजनीतिक दृष्टि से अधिक शक्तिशाली नहीं थे किन्तु एतिहासिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओ की दृष्टि से बें केवल पुराने ही नहीं वरन् सम्मान्नीय भी थे । सम्मेलन मे भाग लेने वाले देशों ने यह निश्चय किया कि वे आर्थिक विकास के लिये एक दूसरे को विशेषज्ञों , अग्रगामी योजनाओं तथा उपयुक्त साधन-सामग्री द्वारा सहायता प्रदान करेंगे । आर्थिक विकास के कार्यक्रम को चलाने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा एक विशेष निधि की व्यवस्था होनी चाहिये । आणविक शक्ति का विकास एशिया तथा अफ्रीका के देशों के शांति पूर्ण प्रयोजनों के लिये होना चाहिये । इन देशों को अपनी आर्थिक उन्नति तथा विशेष हितों की रक्षा के लिये अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों तथा संयुक्त राष्ट्र संघ की बैठकों में सम्मलित होने से पहले विचार विमर्श करके सामान्य हित की नीति निश्चित कर लेनी चाहिये । व्यापारिक उन्नति के लिये पारस्परिक समझौते करने चाहिये तथा अन्तर्राष्ट्रीय भूलों को स्थिर करना चाहिये ।

जवाहर लाल नेहरू चाहते थे कि इस सम्मेलन के द्वारा एशियाई देशों के बीच सहयोग और मित्रता की भावना को मजबूत किया जाये ।[1]

इस सम्मेलन के बाद भी एशियाई एकता का कोई सर्वमान्य स्वरूप सामने नहीं आया। एशियाई देशों में बिखराव की स्थिति उत्पन्न हो गयी । दक्षिण-एशिया के देशों में भी परस्पर विवाद उत्पन्न हुये जिनको समाप्त करने के लिये और आपस में सहयोग बढ़ाने के लिये अनेक वार्तायें, समझौते, सन्धियाँ की गयी ।

भारत-पाक 1965 के युद्ध में, युद्धविराम को उप-महाद्वीप में स्थाई-शांति-स्थापना में परिवर्तित करने के लिए दोनों देशों के शासनाध्यक्षों-पाकिस्तान के राष्ट्रपति अय्यूब खाँ और भारत के प्रधानमंत्री लाल बहादुर शास्त्री को वार्ता के लिए ताशकंद में आमंत्रित किया गया । 4जनवरी, 1966 को यह प्रसिद्ध सम्मेलन आरम्भ हुआ और सोवियत रूस के प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप 10 जनवरी, 1966 को प्रसिद्ध ताशकंद समझौते पर हस्ताक्षर हुए ।[2]

इस घोषणा के माध्यम से दोनों देशों के नेताओं के बीच पुनः सामान्य और शान्तिपूर्ण सम्बन्ध स्थापित करने और दोनों देशों की जनता में सद्भावना और मैत्री कायम करने के अपने दृढ़ संकल्प की घोषणा की । दोनों देशों के नेताओं ने इस बात पर सहमति प्रकट की कि दोनों पक्ष संयुक्त राष्ट्र संघ के उद्देश्य पत्र के अनुसार भारत और पाकिस्तान अच्छे पड़ोसी जैसा सम्बन्ध कायम करने के लिए हर सम्भव प्रयास करेंगे । उन्होंने इस बात की पुष्टि की कि वे उद्देश्य पत्र की व्यवस्था का पालन करते हुए बल प्रयोग का तरीका नहीं अपनायेंगे और विवादों को शांतिपूर्ण तरीकों से हल

---

(1) डा0 बी0एल0 फाड़िया " अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति " पृष्ठ-258

(2) रिमार्डिंग सोवियत होप्स एण्ड एक्सपेक्टटेशन्स, अध्याय-4

करेंगे । दोनों देशों के नेता यह अनुभव करते हैं कि दोनो देशों में तनाव कायम रहने से न तो उनके क्षेत्र और विशेषकर भारत-पाक उपमहाद्वीप में शांति रह सकती है और न भारत और पाकिस्तान की जनता का हित सम्भव हो सकता है। इस पृष्ठभूमि में जम्मू व कश्मीर के मामले पर विचार किया गया और दोनों पक्षों ने अपनी - अपनी स्थिति प्रस्तुत की ।[1]

दोनों देशों के नेताओं ने अपनी-अपनी सेनाओं को 5 अगस्त, 1965 की स्थिति पर लौटने के आदेश देने का निर्णय लिया और दोनों देश युद्ध-विराम रेखा पर युद्ध-विराम की शर्तों का पालन करेंगे ।[2] दोनों देशों के नेता इस बात पर सहमत हो गये कि भारत और पाकिस्तान सम्बन्ध एक - दूसरे आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने के सिद्धान्त पर आधारित होंगे । एक-दूसरे के विरूद्ध विषैले विरोधी प्रचार को रोकने की घोषणा की गयी एवं सामान्य कूटनीतिक सम्बन्ध बनाये रखने की घोषणा की गयी ।

भारत के प्रधानमंत्री व पाकिस्तान के राष्ट्रपति ने यह स्वीकार किया कि वे आर्थिक , व्यापारिक, यातायात सम्बन्धी और भारत-पाक के मध्य सांस्कृतिक आदान-प्रदान की पुनः स्थापना के लिए कदम उठाने पर विचार - करेंगे और भारत तथा पाकिस्तान के मध्य चल रहे वर्तमान समझौतों को बनाये रखने के लिए कदम उठायेंगे । 1 अप्रैल को हुए भारतीय नहरों की पानी की सप्लाई के समझौते को मान्यता देने की घोषणा भी की गयी ।[3]

दोनों देशों में परस्पर मित्रतापूर्ण एवं मधुर सम्बन्ध स्थापित करने की घोषणा की थी । इन्दिरा गांधी एवं जुल्फीकार अली भुट्टो के मध्य जून 1972 में

---

(1) एशियन रिकार्डर, 9-15 अप्रैल 1966, पृष्ठ- 7018-19

(2) --- वही ----

(3) वहीं---- 30 अप्रैल-6 मई 1966 पृष्ठ 7060

भारत और पाकिस्तान के मध्य शिमला समझौता हुआ ।[1] इस समझौते के अनुसार भारत सरकार तथा पाकेस्तान सरकार ने यह निर्णय किया कि दोनों देश पारस्परिक मेलजोल को उत्पन्न करेंगे तथा मित्रतापूर्ण सम्बन्धों को स्थापित करेंगे और युद्धों को समाप्त करेंगे । दोनों देशों के मध्य सम्बन्ध संयुक्त राष्ट्र संघ के सिद्धान्तों और उद्देश्यों के अनुसार निर्धारित होंगे ।

दोनों देश अपने मतभेदोंको शांतिपूर्ण उपायों से हल करेंगे । दोनों देश सह अस्तित्व, एक-दूसरे की अखण्डता का सम्मान और प्रभुसत्ता का सम्मान करेंगे तथा समानता और पारस्परिक लाभ के आधार पर एक-दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेंगे । इसके अतिरिक्त दोनों देश एक-दूसरे के विरूद्ध विषैला प्रचार नहीं करेंगे । दोनों देश डाक-तार, हवाई और समुद्री यातायात को बहाल करने के लिये कदम उठायेंगे । आर्थिक क्षेत्र में और व्यापार में दोनों देशों के मध्य सहयोग शीघ्र प्रारम्भ हो जायेगा । विज्ञान एवं संस्कृति के क्षेत्र में आदान-प्रदान को उन्नत किया जायेगा । सेनायें अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से अपनी-अपनी ओर हट जायेंगी ।

इसी बीच 1960 के दशक में विकासशील राष्ट्रों के समक्ष अनेक कठिनाइयों के बाद 1970 के दशक में ही एक नयी अवधारणा का प्रचलन हुआ जिसे "नयी अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था के नाम से जाना जाता है । " नयी अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था से अभिप्राय है- नवोदित विकासशील देशों के मन में इस बात की उत्कण्ठा हुई कि उनका आर्थिक विकास पूँजीवादी देशों की स्वेच्छा पर निर्भर न रहे, बहुराष्ट्रीय निगम उन्हें कच्चा माल उत्पन्न करने वाले उपनिवेश न मानें ।[2] विश्व आर्थिक-व्यवस्था का

---

(1) फॉरेन अफेयर्स रिकार्ड, जून 1972

(2) लिव कॉमलिव, " दि इण्टरनेशनल इकनॉमिक आर्डर" पृष्ठ-8

संचालन एक - दूसरे की सम्प्रभुता का समादर, अहस्तक्षेप तथा कच्चे माल पर उत्पादक राष्ट्र का पूर्णाधिकार आदि सिद्धान्तों पर है।[1]

वस्तुत वे सिद्धान्त विकासशील राष्ट्रों के राष्ट्रीय हितों के अनुकूल हैं ।

अनेक प्रयासों के बावजूद 1971 तक एशियाई एकता का कोई ठोस रूप उभर कर सामने नहीं आया। कुछ लोगों का मानना था कि एशिया जैसे विशाल महाद्वीप के राष्ट्रों में इतनी अधिक विविधता है कि उन्हें एक सूत्र में बाँधना असम्भव सा है । इसलिए क्षेत्रीय आधार पर एशियाई राष्ट्रों को संगठित किया जाये । इसी प्रक्रिया में दक्षिणी- पूर्वी एशिया के राष्ट्रों का एक संगठन जिसे " ऐशियान " के नाम से पुकारा जाता है, अस्तित्व में आया ।

1974 की राष्ट्र संघ की महासभा में " न्यू इंटरनेशनल इकनामिक आर्डर" द्वारा विकास हेतु अनेक सुझाव दिए गये ।[2] इसके बाद राष्ट्रमंडल के उच्च अधिकारियों और गुट-निरपेक्ष देशों की बैठकों में समय-समय पर इस पर बल दिया गया । विकसित देशों पर इनके सुझाव का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उनमें से अधिकाँश ने इस कारण से ध्यान नहीं दिया क्योंकि उनके दक्षिण देशों से लाभ कम हो जाते । औद्योगिक राष्ट्रों की यह प्रवृत्ति है कि वे अपने आर्थिक हित की पूर्ति इन अविकसित राष्ट्रों की कीमतों पर करते हैं । उत्तरी - दक्षिणी वार्ता के इस अंधकारमय योजना के पक्षों के सामने आने पर विकासशील राज्यों द्वारा परस्पर प्रभावपूर्ण वार्तायें हुई । ग्रुप ऑफ 77 ( 1960 के दशक में संयुक्त राष्ट्र संघ में विकासशील देशों के दो-तिहाई सदस्य अपने को ग्रुप ऑफ 77 कहने लगे थे ) और गुटनिरपेक्ष सम्मेलन ( सोवियत संघ और अमेरिका के गुटों से पृथक रहने वाले राष्ट्रों का सम्मेलन ) का मुख्य लक्ष्य दक्षिण-दक्षिण सहयोग की दिशा में वृद्धि का था ।[3]

---

(1) लिव कर्मोलिव" दि इण्टरनेशनल इकनॉमिक आर्डर " पृष्ठ-8

(2) प्रमोद कुमार मिश्र ढाका समिति एण्ड मार्क" पृष्ठ-2

(3)---वही---- पृष्ठ-3

सहयोग के लिए की गयी वार्ताओं की अनेक श्रृंखलाओं के पश्चात् ग्रुप आफ 77 द्वारा " इकनॉमिक कोआपरेशन एमण्ग डेवलपिंग कन्ट्रीज "की अंतिम रिपोर्ट इस बिन्दु को भली-भाँति समझने के लिए प्रकाशित की गयी । विकासशील देशों के क्षेत्रीय सहयोग की तीव्र आवश्यकता पर बल देते हुए इस रिपोर्ट ने अपना यह निष्कर्ष दिया- " वर्तमान विश्व की स्थिति द्वारा कठिनाइयों और अनिश्चितताओं का उभरना , सहयोगी मापदंडों को तीव्र और मजबूत नये सिरे से करने के लिए यह एक सही कदम है और विकासशील देशों के लिए एकता आवश्यक है जो कि आपसी हित और विद्यमान साधनों के उपयोग पर आधारित हो ।"[1] ग्रुप ऑफ 77 ने सामूहिक आपसी विश्वास के साधनों की वचनबद्धता को बार-बार दोहराया और इस बात पर बल दिया कि विकासशील देशों के मध्य आर्थिक सहयोग अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों को फिर से बनाने के लिए सामूहिक रूप से एक रचनात्मक कदम है । इस दृष्टिकोण से तत्कालिक भौगोलिक, आर्थिक समस्या " वर्तमान संरचनात्मक कुप्रबंध का प्रतिरूप और अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सम्बन्धों में पूरी तरह से असमानता का होना है । " अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक सहयोग के पुनर्निर्माण की वार्ताओं में प्रगति न होना और विकसित देशों के असहयोगी रवैये के कारण " न्यू इंटरनेशनल इकनॉमिक आर्डर " का विकास होना राजनैतिक इच्छा का न होना सिद्ध करता है । इस पृष्ठभूमि को देखते हुए रिपोर्ट ने यह सुझाव दिया कि-" "विकासशील देशों का मजबूत होकर जुड़ना और आपसी एकता का होना बहुत आवश्यक एवं समय की माँग है । "[2]

इकनॉमिक कोआपरेशन एमण्ग डेवलपिंग कन्ट्रीज के पहलुओं पर दृष्टि रखते हुए सभा ने स्पष्ट किया कि विकासशील देशों के मध्य आपसी सहयोग अर्थव्यवस्था में सम्भावी वस्तुओं की पूर्ति एवं अस्तित्व का पूर्ण लाभ उठाने के अवसर देता है । सहयोग का कार्यक्रम विकास की सम्भावनाओं को व्यापार , तकनीकी , खाद्य एवं कृषि , ऊर्जा, कच्चामाल, वित्त , औद्योगीकरण और तकनीकी सहयोग के क्षेत्र में

---

(1) फाइनल रिपोर्ट ऑफ दि हाई लेबल कांफ्रेस ऑन इकनामिक कोअपरेशन एमण्ग डेवलपिंग कन्ट्रीज, 13-18 मई 1981, सेक्शन-85

(2) --- वही ----

में वृद्धि करता है ।[1] यह एक तरफ विकासशील देशों का उपक्षेत्रीय, क्षेत्रीय व अन्र्तक्षेत्रीय स्तर पर सहयोगी प्रयत्नों का अस्तित्व स्वीकार करता है । दूसरी तरफ यह जो देश लम्बे समय से आपसी हित के परिणामों के लिए परस्पर जुड़े हुए है, उनके लिए एक ठोस, एकीकृत और समयबद्ध योजना पर बल देता है । यह ये भी विश्वास करता है कि "इकनॉमिक कोआपरेशन एमण्ड डेवलपिंग कन्ट्रीज " की योजना को अपनाने व कार्यान्वियन करने पर यह विकासशील देशों के व्यवहारिक एवं संतुलित विकास की सम्भावनाओं एवं जनता के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के लिए अच्छी जानकारी देगा ।

ये रिपोर्ट दक्षिण - दक्षिण सहयोग के बाजार, व्यापार , तकनीक , खाद्य कृषि, ऊर्जा, कच्चेमाल, वित्त, औद्योगीकरण और तकनीक सहयोग जैसे मुद्दों के पृथक-पृथक परिणामों पर भी एक निश्चित परिणाम को लेकर पहुँची । यह रिपोर्ट समन्वय , नेतृत्व, अनुकरणीय कार्य एवं क्रान्ति जैसे विशिष्ट विभाग के मशीनीकरण पर ध्यान देती है ।

छठा गुटनिरपेक्ष सम्मेलन (1979) जो हवाना में हुआ उसकी मुख्य निर्देशक नीति " विकसित देशों के मध्य सामूहिक व आत्म-निर्भरता पर बल देना " थी।[2] इसने सामूहिक आत्मनिर्भरता जो कि समानता, न्याय, आपसी हित व एक दूसरे की स्वतन्त्रता व संप्रभुता का पूर्ण सम्मान करने पर भी कई सुझाव दिए । समस्त आवश्यक साधनों को एकत्रित करके उनके सफलतापूर्वक कार्यान्वियन किया जाये , जिससे उपक्षेत्रीय व अन्र्तक्षेत्रीय सहयोग से गुटनिरपेक्ष और दूसरे विकसित देश लाभान्वित हों ।[3]

---

(1) फाइनल रिपोर्ट ऑफ ए हाई लेबल कांफ्रेस ऑन इकनामिक कोअपरेशन एमाण्डा, डेबलपिंग कन्ट्रीज 13-18 नई 1981 , सेक्शन -25

(2) प्रमोद कुमार मिश्र, " ढ़ाका समिति एण्ड सार्क " पृष्ठ-5

(3) इकनॉमिक रिवोल्यूशन नं0 7 टू डिकेट्स ऑफ दि नॉन एलाइन्मेंट पृष्ठ-469

क्यूबा द्वारा संचालित " नाम " द्वारा एवं बांग्लादेश की चेयरमैनशिप के अन्तर्गत ग्रुप ऑफ 77 ने " नाम एक्शन प्रोग्राम " तथा " इकनॉमिक कोआपरेशन ऑफ डेवलपिंग कन्ट्रीज " प्रोग्राम ऑफ एक्शन नामक योजनाओं पर सामूहिक रूप से विचार विमर्श किया । ये सिफारिशें नई दिल्ली सम्मेलन को भेज दी । " नाम " ने 21 क्षेत्रों को इंगित किया जो दक्षिण-एशिया का प्रतिनिधित्व कर सकते थे । " नाम " द्वारा इंगित किये गये कुछ महत्वपूर्ण क्षेत्र इस प्रकार थे - यातायात , तकनीकी , मत्स्य -पालन , स्वास्थ्य, बीमा, खेल, गृहनिर्माण, भार एवं माप का प्रभावीकरण, शिक्षा एवं संस्कृति, पर्यटन, अनुसंधान एवं सूचना व्यवस्था, औद्योगीकरण, नारी, रोजगार,दूरसंचार तथा परमाणु,उर्जा के शांतिपूर्ण उपयोग आदि ।

ग्रुप ऑफ 77 ने दूसरी ओर व्यापार, उद्योग एवं कृषि , ऊर्जा, वित्त तथा मौद्रिक सहयोग पर भी ध्यान दिया। दोनों ग्रुप के मध्य उचित संस्थात्मक समन्वय के लिए " नाम " ने कई वार्तायें, समितियाँ तथा योजनायें बनायी ।[1] उदाहरण के लिए यह सुझाव दिया गया कि नाम एक्शन प्रोग्राम को सहयोग के विभिन्न क्षेत्रों में इकनामिक कोआपरेशन ऑफ डेवलपिंग कंट्रीज के प्रोग्राम के साथ निकट समन्वय के लिए नियमित रूप से सभाओं का आयोजन करना चाहिए जैसा कि काशकास में किया गया था । यह भी सुझाव दिया गया कि पहली बार दोनों ग्रुप को राष्ट्रीय स्तर पर एक संयुक्त रूप से समस्याओं का अध्ययन करना चाहिए जिससे कि काराकास प्रोग्राम ऑफ एक्शन और नाम एक्शन प्रोग्राम का समन्वित क्रियान्वयन किया जा सके ।

राष्ट्रसंघ तथा गुटनिरपेक्ष सम्मेलनों में दक्षिणी एशिया के कुछ राष्ट्रों ने सम्भावी सहयोग के लिए कुछ संकेत दिए । 1973 में होने वाला अलीजर्स सम्मेलन में नेपाल के राजा वीरेंद्र सिंह के भाषण में सहयोग की उपयोगिता पर विशेष ध्यान दिया गया । वहाँ उन्होंने कहा- " हम एक विश्व में रहते हैं । इसीलिए उन राष्ट्रीय

---

(1) 7 नाम , दिसम्बर,न0 6 पृष्ठ 355 -56

सम्बन्धों का एक रचनात्मक ढाँचा विभिन्न देशों के मध्य सहयोग की आवश्यकता को दर्शाता है । यदि सहयोग संभव नहीं तो सहअस्तित्व एक बड़ी जरूरत बन जाता है । मुजीब के समय में एक तरफ तो बांग्लादेश व भारत के मध्य क्षेत्रीयता की कुछ समस्यायें आई और दूसरी तरफ छोटे दक्षिणी एशिया राष्ट्रों में भी ये समस्यायें उभरी । ढ़ाका एवं काठमाण्डू में भी अनेक बार 1970 में उच्च स्तरीय बैठकें इन समस्याओं के हल को लेकर की गयी ।

5 अप्रैल, 1974 को नई दिल्ली में भारत, पाकिस्तान और बांग्लादेश के विदेश मंत्रियों का सम्मेलन हुआ । भारत की ओर से उसमें श्री स्वर्णसिंह, पाकिस्तान की ओर से वहाँ के विदेश मंत्री श्री अजीज अहमद तथा बांग्लादेश की ओर से कमाल हुसैन सम्मिलित हुए । 9 अप्रैल को यह त्रिपक्षीय वार्ता सफल हुई और तीनों देशों के मध्य एक ऐतिहासिक समझौता हो गया । समझौते के अनुसार पाकिस्तान ने यह स्वीकार किया कि बांग्लादेश में जितने भी गैर बंगाली पाकिस्तानी है, उन सबकी पाकिस्तान अपने देश में वापसी के लिए तैयार है । बांग्लादेश ने भी स्वीकार किया कि वह पाकिस्तानी युद्धबन्दियों पर युद्ध-अपराध के मुकदमें नहीं चलायेगा और सबको पाकिस्तान वापस भेज देगा । इस निर्णय पर तीनों देशों ने परस्पर सहयोग के आधार पर समझौता कर लिया ।[1]

**बांग्लादेश कार्य प्रपत्र-** 1970 के अंत में स्व0 जियाउर्रहमान ने बहुत से पड़ोसी देशों की यात्रायें कीं । उन्होंने क्षेत्रीय सहयोग की सम्भावना को खोजने की दृष्टि से दक्षिण एशियाई राष्ट्रों के मध्य शिखर वार्ता का प्रस्ताव किया । यद्यपि कुछ राष्ट्र जैसे नेपाल भूटान ने इस प्रस्ताव का स्वागत किया किन्तु दूसरे देश जैसे - भारत, पाकिस्तान व श्रीलंका की इस समय इसकी सफलता के प्रति आशंकित थे । बाद में ढ़ाका में विदेशी दूतावास ने दक्षिण-एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की भूमिका के लिए प्रपत्र प्रस्तुत किया । यह वही समय था जब बांग्लादेश वर्किंग पेपर[2] निकाला गया था।

---

(1) प्रमोद कुमार मिश्रा " इण्डया , पाकिस्तन, नेपाल एण्ड बांगलादेश "

(2) प्रमोद कुमार मिश्रा " साउथ एशिया इन इंटरनेशनल पालिटिक्स पृष्ठ-27।

जियाउर्रहमान ने दक्षिण एशिया की छः राजधानियों (नई दिल्ली, इस्लामाबाद, काठमांडू, थिम्पू, कोलम्बो , माले, का दौरा किया एवं व्यक्तिगत रूप से वर्किंग पेपर की एक - एक प्रति वहाँ वितरित की । वर्किंग पेपर के मुख्य मुद्दों पर विस्तृत रूप से विचार-विमर्श किया गया था । इसकी अधिकांश घोषणायें नई दिल्ली में की गयी, जो विदेश मंत्रियों की बैठक से मेल खाती हैं । बांग्लादेश वर्किंग पेपर की ये विशेषतायें दिल्ली एवं ढ़ाका के विकास से विशेष रूप से सम्बन्धित हैं ।

प्रथम- इसने क्षेत्रीय सहयोग को दक्षिण एशियाई राज्यों के द्विपक्षीय एवं विश्व स्तर पर परस्पर सम्बन्धों को पूर्ण करने के लिए सुझाव दिया। नईदिल्ली व ढ़ाका की शिखर वार्ता में विदेश मंत्रियों की बैठक में इस सुझाव पर दोहरा बल दिया गया ।

द्वितीय- यह सामाजिक , आर्थिक मामलों में सहयोग की एक नई शुरूवात चाहता था जिसमें राजनीति तनावों को नज़रअंदाज किया जाये । सौभाग्यवश इन सुझावों को भी उपमहाद्वीपों की राजनैतिक वास्तविकताओं को ध्यान में रखते हुए सराहा गया। 11 विशाल क्षेत्रों की ओर बांग्लादेश वर्किंग पेपर द्वारा संकेत किया गया। जैसे - दूरसंचार, अंतरिक्ष विज्ञान, यातायात, जहाज-पर्यटन , कृषि, अनुसंधान, बाजार-विस्तार , विज्ञान एवं तकनीकी सहयोग, शिक्षा एवं तकनीकी सहयोग सांस्कृतिक सहयोग आदि ।

तृतीय- बांग्लादेश वर्किंग पेपर ने स्पष्ट रूप से यह बल दिया कि विभिन्न विकासशील अनुभवों के बजाये दक्षिणी एशियाई देश " दक्षेस " के अनुभवों से कमियों को पूरा करने वाले क्षेत्रों की खोज की जाये । सौभाग्यवश, इस सुझाव का दिल्ली वार्ता व ढ़ाका वार्ता में दृढ़तापूर्वक अनुमोदन किया गया ।

चतुर्थ- यह निश्चय किया गया कि दक्षेस के अनुभव आर्थिक एवं सांस्कृतिक माँगो में क्षेत्रीय तनाव को धीरे-धीरे कम करेंगे ।

पंचम- दक्षेस की यह धीमी गति से उत्पत्ति सोच - समझकर प्रारम्भ की गयी । इसका प्रारम्भ सचिव बैठक से होकर विदेशमंत्रियों तक पहुँची, तब शिखर वार्ता ने अंतिम रूप लिया ।

अंतिम रूप से चार नामों से एक नाम चुना गया जो दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग समुदाय धीरे-धीरे दक्षेस के नाम से औपचारिक रूप से ढ़ाका में कार्यान्वित हुआ ।[1]

---

(1) प्रमोद कुमार मिश्र " ढ़ाका समिति एण्ड सार्क " पृ0 10

### (ब) 1980 से 1985 तक परिस्थितियों का निर्माण - -

दक्षिण-एशिया में क्षेत्रीय - सहयोग की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये 1980 में बाँग्लादेश के राष्ट्रपति स्वर्गीय ज़ियाउर्रहमान ने इस बात का आह्वान किया कि " इस क्षेत्र के राष्ट्रों को आपस मे मिल कर लेटिन अमेरिका , अफ्रीका तथा मध्य-पूर्व के देशों द्वारा निर्मित संगठन की भांति एक क्षेत्रीय संगठन का निर्माण करना चाहिये । वास्तव में इस संगठन का प्रस्ताव दक्षिण-दक्षिण सहयोग के सामूहिक आत्म-निर्भरता कार्यक्रम एवं उत्तरी-दक्षिणी वार्ता कार्यक्रमों की महत्ता को देखते हुये किया गया था । राष्ट्रपति ने इस अवधारणा से प्रेरित होकर दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने के लिये एक संगठन बनाने पर विचार किया । इस संगठन में क्षेत्रीय विकास , समृद्धि तथा शांति के महान आदर्श सम्मिलित थे । उस समय इस संगठन के लिये शेष छै देशों ने कोई विशेष उत्साह प्रदर्शित नही किया। इस संगठन के लिये अप्रैल, 1981 में सम्पन्न हुयी विदेश-सचिवों की बैठक में दो मुख्य बातें उभर कर आयी । प्रथम - क्षेत्रीय सहयोग आवश्यक वांछनीय एवं लाभकारी है । द्वितीय - इस बात की आवश्यकता महसूस की गयी कि ऐसे सहयोग के लिये सावधानीपूर्वक समस्त साधनों के साथ तैयारी करना चाहिये ।[1]

यह विचार किया गया कि , क्षेत्रीय सहयोग , पारस्परिक विश्वास एवं राष्ट्रीय भावनाओं और सदस्य देशों की निजी आवश्यकताओं पर आधारित होना चाहिये । क्षेत्रीय सहयोग में सम्बन्धित देशों के द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय मामलों को न उठाया जाये । क्षेत्रीय विकास का प्रारम्भ पाँच विशिष्ट क्षेत्रों- कृषि, ग्रामीण-विकास, दूर-संचार खगोलशास्त्र , स्वास्थ्य और जनसंख्या से किया जाये।[2] इनके अध्ययन के लिये

---

(1) विमल प्रसाद," रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-63

(2) बेसिक डाकूमेंट्स ऑन साऊथ एशियन रीजनल कोआपरेशन (न्यू देहली) पृ0 9-10

बांग्लादेश, श्रीलंका , भारत, पाकिस्तान , एवं नेपाल के प्रतिनिधियों की नियुक्ति की गयी। इन प्रतिनिधियों का उत्तरदायित्व था कि क्षेत्रीय सहयोग की बाधाओं को दूर करने पर विचार करे एवं आर्थिक क्षेत्र में होने वाले लाभों पर विचार करें । उन्हें यह भी कार्य सौंपा गया कि क्षेत्रीय सहयोग को सुदृढ़ करने के लिये विशिष्ट परियोजनाओं के विषय में ज्ञान प्राप्त करें । विशिष्ट परियोजनाओं को उपयुक्त सहायता देना और उनके कार्य को आगे बढ़ाते हुये उन पर दृष्टि रखना भी इनके कार्य क्षेत्र में आता था । इस बैठक में इस बात पर भी सहमति हुयी कि कुछ और ऐसे सम्भावित क्षेत्र खोजे जायें जिनमें सहयोग स्थापित हो सकें । इसके लिये एक कमेटी बनायी गयी, जिसमें समस्त देशों के प्रतिनिधि थे ।[1]

इसके बाद विदेश सचिव स्तर की तीन और सभायें काठमाण्डू-नवम्बर 81 इस्लामाबाद-अगस्त 1982 और ढ़ाका-मार्च 1983 में सम्पन्न हुयी ।[2] इन सभाओं में क्षेत्रीय सहयोग के उद्देश्यों की भली प्रकार से विवेचना की गयी , कुछ क्षेत्र जिनमें सहयोग संभव था, उन पर विचार किया गया और उनके लिये उपयुक्त कार्यक्रमों द्वारा की जाने वाली कार्यवाही पर भी विचार किया गया । ये सभायें अनेक कारणों पर आधारित थी —

(1) नौकरशाहों द्वारा लाये गये सामान्य रूप से राजनैतिक प्रशासन के कारण सामाजिक , आर्थिक क्षेत्रों में कम से कम राजनैतिक अधिकारियों के द्वारा राजनैतिक हस्तक्षेप सहित, सहयोग के अवसरों पर विस्तृत रूप से विचार किया गया ।

(2) प्रथम व तृतीय सभाओं के मध्य नौ बड़े सहयोग के क्षेत्र पहचाने गये । यहाँ बांग्लादेश वर्किंगपेपर की मुहर आसानी से देखी जा सकती थी । अध्ययन कर्ताओं द्वारा ये क्षेत्र दर्शाये गये - कृषि ग्रामीण विकास, आन्तरिक्ष विज्ञान, स्वास्थ्य, जनसंख्या-वृद्धि , यातायात, डाक, तार सेवा, वैज्ञानिक एवं तकनीकी सहयोग, खेल, कला एवं संस्कृति।

---

(1) बेसिक डाकूमेंट्स ऑन साउथ एशियन रीजनल कोआपरेशन ( न्यू देहली) पृष्ठ-6-7
(2) विमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशियन " पृष्ठ-63

⟨3⟩ यद्यपि औपचारिक रूप से इस सहयोग में भारत व पाकिस्तान असन्तुष्ट सहयोगी थे, दोनों ही धीरे-धीरे उसे ठोस आधार देने के लिये झुक गये ।.

⟨4⟩ दक्षेस की नीतियों के अनुरूप अशत्रुता का सिद्धान्त बहु संख्यकों की अपेक्षा एक सामान्य सिद्धान्त की तरह स्वीकृत किया गया । वित्तीय क्षेत्र में राज्य के सदस्यों द्वारा इच्छिक योगदान देना निश्चित किया गया । आवश्यकता के अनुसार बाह्य देशों से वित्तीय सहायता के लिये पर्याप्त क्षेत्र खोजे गये ।

कोलम्बो की प्रथम सभा में क्षेत्रीय सहयोग को स्थापित करने के लिये विचार की गयी समस्त वार्तो के लिये एक समिति बनाई गयी । जहाँ सात देशों के विदेश सचिव उपस्थित थे । श्रीलंका इस समिति के लिये एक समन्वयकारी देश साबित हुआ जिसने अगस्त 1983 में दक्षिणी एशियाई विदेशमंत्रियों की पहली सभा में विचार विमर्श के लिये विभिन्न सिफारिशों पर एक विस्तृत रिपोर्ट दी । कोलम्बो में हुयी यह सभा विदेश सचिवों की पाँच अध्ययन समूहों के गहन अध्ययन पर आधारित थी । श्रीलंका वर्किंग पेपर[1] ने तीन मुद्दों पर ध्यान दिया ।

⟨1⟩ सहयोग के लिये सहमत देशों में इन्टीग्रेटिड प्रोग्राम ऑफ एक्शन के निर्माण पर ।

⟨2⟩ आधुनिकी करण एवं मशीनीकरण के कार्यन्वयनपर सिफारिश, स्वीकृत योजना का समन्वय एवं नेतृत्व ।

⟨3⟩ इन्टीग्रेटिड प्रोग्राम ऑफ एक्शन का जहाँ तक संभव हो सके, कम अवधि में पूर्ण होने वाले अंगों का कार्यान्वन कर दिया जायें एवं दीर्घावधि में पूर्ण होने वाले अंगों के लिये समुचित प्रबन्ध किये जायें ।

---

⟨1⟩ एस0डी0मुनि एण्ड अनुराधा मुनि, " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया" पृष्ठ-153

श्रीलंका वर्किंग पेपर ने सुझाव दिये कि काम करने वाले समूहों द्वारा खोजी गयी सहयोगी क्रियायें या तो कम अवधि की हो या दीर्घावधि की हो । कम अवधि की क्रियायों के लिये आँकड़ों , विशेषज्ञ सेवा-प्रशिक्षण, अनुसंधान एवं सेमिनार द्वारा उस क्षेत्र के देशों में परस्पर सहयोग के लिये किया जाना सम्मलित होगा ; एवं दीर्घावधि की योजना में प्रशिक्षण एवं अनुसंधान की क्षेत्रीय संस्थाओं का निर्माण , राष्ट्रीय संस्थाओं के बीच सम्बन्धों को बनाना एवं सुदृढ़ करना होगा जिसमें सहयोग के स्वीकृत क्षेत्रों में सात दक्षिण एशियाई देश सम्मलित हैं । इन क्षेत्रों में आधार भूत आवश्यकताओं- डाक सेवायें दूरसंचार ,रेलवे, राष्ट्रीय मार्ग, जहाज अन्तिरिक्ष-विज्ञान इत्यादि पर बल देना सम्मिलित है । [1]

क्षेत्रीय योजनाओं के लिये आधुनिकीकरण एवं मशीनीकरण का कार्यान्वन सहयोग तथा नेतृत्व के लिये श्रीलंका वर्किंग पेपर ने निम्नलिखित निर्देश दिये-

(1) हर समन्वयकारी देश के लिये विभागीय स्तर पर वर्किंग ग्रुप जो कि धीरे-धीरे तकनीकी समिति में बदल जायेगें, बनाये जायें । केन्द्रीय बिन्दु, विभिन्न राष्ट्रीय संस्थानों या उच्च संगठनों में स्थापित किये जायें, जहाँ वे पहले नहीं थे ।

(2) राष्ट्रीय स्तर पर विदेशी मामलों से सम्बन्धित मन्त्रियों को केन्द्रीय मुद्दों पर सहयोग किया जायें ।

अन्तिम रूप से क्षेत्रीय स्तर पर एक पुर्ननिरीक्षण समिति बनाई जाये, जिसके उद्देश्य इस प्रकार हों- योजनाओं को पारित करना, अर्न्तविभागीय प्राथमिकताओं को निश्चित करना, वित्त के आधुनिकीकरण की खोज करना जो कि या तो क्षेत्रीय हों या बाह्य साधनों के हो । विभागीय योजनाओं के कार्यान्वन की प्रगति का पुर्ननिरीक्षण करना तथा उचित अध्ययन पर आधारित सहयोग के नये क्षेत्रों को पहचानना ।[2]

---

(1) एस0डी0मुनि एण्ड अनुराधा मुने " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया" पृष्ठ- 157-158

(2)--वही---- पृष्ठ-159-60

श्रीलंका वर्किंग पेपर ने सात देशों के बीच आर्थिक विकास की असाध्य समस्याओं को देखते हुये सरकार को कुछ प्रायोगिक सुझाव दिये--

सार्क की योजनाओं के लिये नियमित बजट वितरण तथा छात्रवृत्ति उपलब्ध कराना, यात्रा एवं निवास भत्ते आदि के रूप में आपसी सहायता दी जाये । श्रीलंका वर्किंग पेपर द्वारा सामूहिक रूप से समिति के कार्यो पर जो बल दिया गया, उसके प्रमुख तत्व इस प्रकार थे- अशलुता के सिद्धान्त पर आग्रह करने की बजाय समझौते के सामान्य क्षेत्रों में अनुकूलताओं को ढूढ़ना या उन्हें एक मत करना । इसकी अधिकांश तो सिफारिशें नई दिल्ली में विदेशमन्त्रियों की होने वाली बैठक के अर्न्तगत की गयीं।

**विदेशमन्त्रियों की बैठक ( नई दिल्ली, माले, थिम्पू )-** एक-दो अगस्त, 1983 को नईदिल्ली में क्षेत्रीय स्तर पर दक्षिणी एशियाई विदेश मन्त्रियों की पहली बैठक सम्पन्न हुयी, इसके उद्घाटन भाषण में बोलते हुये श्रीमती इन्दिरा गाँधी ने दक्षिणी एशिया के देशों के सकारात्मक तत्वों पर प्रकाश डाला । जैसे सामान्य ऐतिहासिक उत्तराधिकार स्थिति, भूगोल तथा मानसून आदि ।[1] दूसरी ओर उनकी दृष्टि में इन क्षेत्रों की जनता गरीबी से संघर्ष कर रही थी तथा आर्थिक पिछड़े पन का सामना कर रही थी। इन सामान्य तत्वों के होतें हुये भी इनमें से प्रत्येक देश का अपना अलग व्यक्तित्व एवं राजनैतिक ढाचाँ था । प्रधान मंत्री ने स्पष्ट रूप से कहा कि दक्षिण-एशिया के देशों के मध्य क्षेत्रीय सहयोग एक सामान्य उद्देश्य है । यह किसी के विरूद्ध कोई लक्ष्य नहीं है ।[2] क्योंकि उनकी अर्थव्यवस्था में कुछ निश्चित अपूर्णतायें है अतः यह दक्षिण एशियाई देशों के लिये सोचना स्वाभाविक है कि वे परस्पर आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में अपने अनुभवों को बाँटे जो कि योजना के अधिकतम उपयोग तथा सूचनाओं के परस्पर विवरण से संभव है । उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि वे समस्त

---

(1) टाइम्स ऑफ इण्डिया , 2 अगस्त 1983

(2) मीटिंग ऑफ फारेन अफेयर्स, न्यू देहली 1983 सार्क फाइनल डाकूमेंटस पृ0 7-8

क्षेत्र जो कि क्षेत्रीय सहयोग के लिये चुने गये है, उनमें व्यक्ति का व्यक्ति से सम्पर्क एक सबसे बड़ा लक्ष्य हो ।

उन्होने अपने भाषण में कहा-

" हमारा संगठन प्रत्येक देशों की स्वतन्त्रता पूर्वक निर्णय लेने की क्षमता को बाध्य नहीं करेगा। यह हमारे देशों की अर्थ व्यवस्था को विकसित एवं शक्तिशाली बनायेगा--- हमारे मध्य उत्पन्न हुयी विभिन्नताओं एवं कठिनाइयों के समय हमें विचलित नहीं करेगा --- हमारा परस्पर सहयोग वाह्य दबावों को सहन करने में परस्पर एकता के द्वारा हम भविष्य में स्वतन्त्रता, शान्ति और समृद्धि को प्राप्त करने की आशा कर सकते है"[1]

नई दिल्ली की बैठक में उद्घोषणा के प्रपत्र में निम्न बातों पर प्रकाश डाला गया-- समस्त सात विदेश मन्त्रियों ने क्षेत्रीय सहयोग की गति को सामान्य समस्याओं की दृष्टि से समझा तथा उनकी जनता की अभिलाषाओं को पूरा करने की तीव्र इच्छा व्यक्त की । सामाजिक , आर्थिक विकास को तीव्र करने की ज़रूरतों पर बल दिया । वे सामूहिक रूप से इस मुद्दे पर सहमत थे कि क्षेत्रीय सहयोग ऐच्छिक एवं सामूहिक आत्म-निर्भरता पाने के लिये आवश्यक है जैसा कि सातवें गुट-निरपेक्ष सम्मेलन की उद्घोषणाओं में भी कहा गया था ।

दक्षेस उद्घोषणा आठ विस्तृत उद्देश्यों को इंगित करती है । दक्षेस का क्रियान्वन दक्षिणी एशिया के लोगों के कल्याण में वृद्धि करेगा तथा उनके जीवन स्तर को ऊँचा करेगा, उनकी सामाजिक, आर्थिक वृद्धि को तीव्र करेगा एवं व्यक्तिगत संभावनाओं को बढ़ायेगा । इसके द्वारा सामूहिक आत्म-निर्भरता को बढ़ाना आपसी विश्वास एवं समझ को उत्पन्न करना, आपसी सहायता को बढ़ाना तथा विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग स्थापित करना एवं विश्व बाजार में दक्षिण एशियाई देशों के मध्य सहयोग पर बल देना आदि बातों में वृद्धि करना था ।[2]

---

(1) बिमल प्रसाद , " रीजनल " कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-64

(2) प्रमोद कुमार मिश्रा , " ढ़ाका समिति एण्ड सार्क" पृष्ठ-14

नई दिल्ली में विदेश मन्त्रियों के प्रथम सम्मेलन में दक्षेस के मूल-भूत सिद्धान्तों की नींव पड़ी । इस सम्मेलन में भविष्य की वार्ता के लिये निम्न आधार सुनिश्चित किये गये ।

(1) परस्पर लाभ हेतु सम्प्रभुता , समता एवं क्षेत्रीय अखण्डता के परिपेक्ष में विचार करना।

(2) द्विपक्षीय व बहुपक्षीय मामलों से मुक्त रखना ।

(3) परस्पर सर्व सम्मति से निर्णय लेना ।

इसी सम्मेलन में विदेश सचिवों ने तकनीकी समिति का भी गठन किया । जिसका कार्य परस्पर सहयोग का मार्ग ढूढंना था । समिति ने उस समय कृषि , ग्रामीण-विकास पर्यावरण, दूर संचार, स्वास्थ्य, यातायात तथा डाक सेवा के साथ-साथ खेल, कला और संस्कृति के क्षेत्रों में पारस्परिक सहयोग हेतु सुझाव प्रस्तुत किये थे।

1984 की 10-11 जुलाई को माले में विदेश मन्त्रियों की पुनः बैठक हुयी। माले मालदीव की राजधानी है । मालदीव के राष्ट्रपति श्री अब्दुल गयूम ने इसके उद्घाटन भाषण में कहा — " दक्षिणी एशिाई क्षेत्र के समुदायों में काफी विविधता है किन्तु फिर भी इसकी आशायें एवं अपेक्षायें प्रतिकूल नहीं है।"[1]

माले की बैठक में इसकी सामूहिक सरकारी विज्ञप्ति इन देशों के विदेश मन्त्रियों द्वारा किये गये महत्व पूर्ण कार्य विस्तार के प्रति सराहना को स्पष्ट करती है। ये कार्य समिति के स्तर पर विशेषतः इन्टीग्रेटेड प्रोग्राम ऑफ एक्शन के कार्यान्वन के समन्वय एवं नेतृत्व के थे , जो कि दिल्ली में विदेश मन्त्रियों की बैठक में तय किये गये थे।[2] इसने तकनीकी समितियों द्वारा उनके कार्य में समर्पण की भूमिका को सराहा तथा देशों को वित्तीय सहायता एवं इटीग्रेटिड प्रोग्राम ऑफ एक्शन के कार्यो को उत्साहित करने की सराहना की ।

---

(1) दि हिन्दू " 11 जुलाई, 1984

(2) सार्क मीटिंग ऑफ फॉरेन मिनिस्टर्स, पृष्ठ 27-28

विदेश मन्त्री दक्षिण एशियाई देशों की राजधानी के मध्य दूर संचार एवं यातायात सम्बन्धों में सुधार लाने पर सहमत हुये । सरकारी विज्ञप्ति में कहा गया कि समस्त दक्षिण एशियाई देशों को अपनी बाह्य आर्थिक नीतियों में समन्वय करना चाहिये। इसने तेजी से गिरती हुयी कीमतों पर , व्यापार के बदलते हुये स्वरूपों का ह्रास होना, संरक्षण कार्यो को तीव्र करना, बढ़ता हुआ ऋणभार तथा विकासशील देशों के वित्तीय साधनों के प्रबाह में गिरावट आना, इत्यादि पद चिंता व्यक्त की । यह विचार किया गया कि दक्षेस देशों की दिल्ली में सातवें "नाम " सम्मेलन में पारित किये गये आर्थिक प्रस्तावों का अनुसरण करना चाहिये तथा ग्रुप ऑफ 77 के विभिन्न बाजारों में सहयोग करना चाहिये।

जुलाई, 1985 में भूटान की राजधानी थिम्पू में दक्षिण एशियाई देशों के विदेश-मन्त्री स्तर की बैठक सम्पन्न हुयी । इस सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में भूटान ने कहा-- " दक्षिण एशिया के देशों को अपने पुराने पूर्वाग्रहों से हटकर इस क्षेत्र की जनता के लिये वैयक्तिक एवं सामूहिक विकास के लिये साहस एवं विकास के साथ आगे बढ़ना चाहिये ।[1]

भारत के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के राज्य मन्त्री खुर्शीद आलम खाँ को द्वीप के जातीय समस्या के विरोध को लेकर श्रीलंका द्वारा समर्थन न देने का निश्चय किया गया । यद्यपि छै राष्ट्रों के विदेश सचिवों ने क्षेत्रीय सहयोग औपचारिक संगठन की योजना को अन्तिम रूप दे दिया, कोलम्बो के अप्रतिनिधित्व ने निश्चित रूप से सार्क के इतिहास में पहली वार तनाव की स्थिति उत्पन्न कर दी ।[2] श्रीलंका के द्वारा जो यह कदम उठाया गया, यह सार्क के विचार का विरोधी नहीं था ।

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स , नईदिल्ली, 14 जुलाई 1985

(2) दि स्टेट्समैन, 6 जून , 1985

इस अनिश्चितता के क्षणों में अध्यक्ष ज़ियाउर्रहमान तथा प्रधान मन्त्री राजीव गांधी ने श्रीलंका के राष्ट्रपति जयवर्धने से बातचीत की तथा उनकी स्थिति पर पुर्नविचार करने का विश्वास दिलाया, तत्वश्चात श्रीलंका ने दो सदस्यीय दल, को जिसका नेतृत्व ई०डब्ल्यू विक्रम सिंह ने जो कि राष्ट्रपति के वरिष्ठ राजनैतिक सलाहकार थे, एक प्रतीकात्मक प्रतिनिधित्व के लिये भेजने का निश्चय किया । वास्तव ने जिस प्रकार से अन्य छै देशों ने सभाओं में भाग लिया, श्रीलंका जो अपने आपको अलग महसूस करता था, उसके पास अपनी कठोर स्थिति को सुधारने के सिवा कोई अन्य मार्ग नही था ।

भूटान के राजा ने 1985 को अपने भाषण में दक्षिण एशियाई देशों को भूतकाल की रूकावटों को दूर करने तथा आगे साहस व विश्वास से अपने व्यक्तिगत भविष्य को तथा सम्पूर्ण क्षेत्र एवं उसकी जनसंख्या को अपने हित के लिये सामूहिक रूप से योग्यता पूर्वक आकार देने का आवाहन किया ।[1] थिम्पू सम्मेलन का महत्वपूर्ण तथ्य था या कि भाग लेने वाले राज्यों में दक्षिण एशिया के क्षेत्रीय सहयोग में सीमा सम्बन्धी कोई मतभेद नहीं था । वे सभी प्रयोगात्मक रूप से दक्षेस को एक महत्वपूर्ण प्रेरणा देने के लिये एक उच्च स्तर पर मन्त्रीय परिषद बनाने के लिये तैयार हो गये । श्रीलंका जिसकी इस विषय में अपनी सीमिततायें थी, धीरे-धीरे उसने भी दूसरों के साथ शामिल होने का निश्चय किया ।[2]

उच्च अधिकारियों द्वारा जो भाषण दिया गया वह यह स्पष्ट करता है कि विकसित देशों द्वारा जो निर्यात के संरक्षणकारी अवरोध विकासशील देशों के लिये लगाये गये है, वे तीव्र एवं प्रगतिशील ढंग से समाप्त किये जायें । इससे पहले कि विभिन्न अन्तर्राष्ट्रीय बैठकों का आयोजन हो, बे इस बात पर सामूहिक रूप से सहमत हो गये

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स, नई दिल्ली, 14 मई 1985

(2) टाइम्स आफ इण्डिया , 15 मई 1985

कि दक्षिण एशियाई देशों के मध्य विश्व-व्यापी आर्थिक मामलों पर पर्याप्त विचार विमर्श होना चाहिये ।[1]

थिम्पू सम्मेलन के अन्त में मन्त्रियों ने ढ़ाका सम्मेलन को ध्यान में रखते हुये, एक चार्टर को अन्तिम रूप दिया । उन्होंने यह भी निश्चित किया कि नये संगठन का नामकरण " दक्षेस " किया जाये । मन्त्रि-परिषद का विचार बिना किसी विरोध के स्वीकार कर लिया गया । प्रस्तावित चार्टर ने विदेश मन्त्रियों की स्टेन्डिंग कमेटी की कल्पना की गयी, जो कि विभिन्न क्षेत्रों की प्रगति के नेतृत्व के कार्यों पर अधिकार करने का कार्य करेगी । इसका अभिप्राय यह है कि यह दक्षेस देशों को बल का प्रयोग न करने, हस्तक्षेप न करने तथा राष्ट्र संघ चार्टर और गुट-निरपेक्ष सिद्धान्तों का पालन करने पर बल देता है । 1983 में दिल्ली में हुयी विदेश मन्त्रियों की बैठक में इस बात पर अधिक बल नही दिया गया था ।[2]

यद्यपि पाकिस्तान दक्षेस का सचिवालय स्थापित करने के लिये काफी उत्सुक था, किन्तु दूसरे सदस्यों ने यह महसूस किया कि इस अवसर पर अभी इसके लिये यह उचित नहीं है । सामूहिक सरकारी विज्ञप्ति जो कि थिम्पू बैठक के अंत में प्रकाशित की गयी, वह तीसरी दुनियाँ के लिये विकासशील देशों की सहायता के अति आवश्यक मापों के लिये एक धार्मिक आशा थी ।[3] इन राष्ट्रों के सदस्य आर्थिक मामलों में किसी अन्तर्राष्ट्रीय सभा के पहले ही आपसी विचार विमर्श से इस पर सहमत हो गये थे । विकास शील देशों के लिये रियायती साधनों को विकसित करने के लिये मन्त्रियों को बुलाया गया। उन्होंने विकसित देशों द्वारा विकासशील देशों के निर्यात पर संरक्षणात्मक अवरोधों के तीव्र उन्मूलन की आवश्यकता पर बल दिया ।[4]

---

(1) दि स्टेट्समैन, 14 मई, 1985
(2) हिन्दुस्तान टाइम्स 15 मई 1985
(3) पैट्रीऑट, 15 मई 1985
(4) प्रमोद कुमार मिश्र " ढाका समिति एण्ड सार्क" पृष्ठ-16

पाँच वर्षों में 'दक्षेस' संगठन हेतु सेमिनार आयोजित किये गये, तकनीकी अध्ययन समितियाँ गठित की गयीं तथा विभिन्न प्रोजेक्ट पर कार्य फिर भी प्रारम्भ नही हो सका । केवल क्षेत्रीय अंतरिक्ष विज्ञान शोध पर ही कार्य प्रारम्भ हो सका । इस पर 11.6 मिलियन व्यय का अनुमान है । यद्यपि इसकी स्थापना के लिये भी स्थान का चुनाव नहीं हो सका। भारत ने इस हेतु भवन प्रदान करने का प्रस्ताव रखा तथा वह एक कम्प्यूटर भी प्रदान करने को तत्पर था । दक्षेस संगठन के विधिवत् गठन में सही तौर पर ढाई वर्ष का समय लगा, यह एशियान की तुलना में कम समय है । साथ ही सार्क संगठन के लिये सदस्य देशों के मध्य व्याप्त राजनैतिक तनाव भी किसी सीमा तक जिम्मेदार है । भारत और श्रीलंका के मध्य जातीय समस्या के सम्बन्ध में तनाव भारत-पाक के मध्य परमाणु अस्त्रों की बढ़ती होड़ का तनाव, बाँग्लादेश के मध्य गंगाजल बँटवारे का विवाद इत्यादि राजनैतिक समस्यायें इसके गठन में अब तक किसी न किसी प्रकार आड़े आती रहीं । इस लिये ढ़ाका में राजनैतिक मुद्दों पर पूर्णतया चुप्पी रखी गयी । परस्पर राजनैतिक मुद्दों के कारण ही मन्त्री परिषद का गठन विलम्बित रहा,क्यों कि श्रीलंका इसके लिये सहमत नहीं था । किन्तु 1985 में थिम्पू वार्ता में शेष छै देशों ने इस हेतु न केवल सकारात्मक पहल की वरन् श्रीलंका को समझाने का भी प्रयास किया ।

इस बार श्रीलंका की अनुपस्थिति में मन्त्रीपरिषद गठित करने का प्रस्ताव पारित कर दिया गया । अन्ततः श्रीलंका का समर्थन भी इसे प्राप्त हुआ । इसके प्रारूप तथा कार्यान्वन के विषय में श्रीलंका मौन रहा ।

स्पष्ट है कि इस संगठन के गठन में अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा किन्तु फिर भी अन्त में समस्त सदस्य देशों द्वारा इसके प्रारूप एवं गठन को समर्थन प्राप्त हो गया ।

## (स) दक्षेस की स्थापना

कोई भी संगठन किसी एक दिन के प्रयासों का निर्माण नही होता बल्कि वर्षो से चले आ रहे प्रयासों के फलस्वरूप उसका निर्माण होता है । विगत वर्षो के दौरान दक्षिणी एशिया के राजनैतिक, सामाजिक , आर्थिक , सैनिक, महत्व को देखते हुये और उसके देशों के मध्य परस्पर सहयोग और विश्वास की आवश्यकता के देखते हुये इस क्षेत्र में आपसी सहयोग बढ़ाने के लिये किसी संगठन की आवश्यकता महसूस हुयी । फलस्वरूप लगातार प्रयासों के परिणामस्वरूप " दक्षेस " नामक क्षेत्रीय सहयोग की स्थापना हुयी ।ऐसा माना गया कि यदि क्षेत्र के देशों में आपसी सहयोग और मित्रता की भावना सुदृढ़ होगी तो वे आपस में मिल बैठ करकर और विचार विमर्श कर अपनी समस्या का निवारण कर लेगें, और ये क्षेत्र महाशक्तियों के संघर्ष से बच जायेगा ।

दक्षेस अर्थात दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संघ का विधिवत् गठन 8 दिसम्बर 1985 को हो गया । अपने में यह एक एतिहासिक घटना है जिसके माध्यम से पिछले 39 बर्षो की विसंगतियों में सामंजस्य की स्थापना नया द्वार खुल जाता है । 7-8 दिसम्बर 1985 , में, ढ़ाका में एतिहासिक शिखर सम्मेलन की पूर्व सन्ध्या पर विदेश सचिव तथा दक्षिणी एशियाई देश के विदेशमंत्रियों द्वारा प्रस्तावित सभा हुयी । 3दिसम्बर को जब विदेश सचिवों का अनौपचारिक रूप से मिलना हुआ,उन्होंने राष्ट्र के उच्च अधिकारियों से दक्षेस की रूपरेखा को क्रियान्वित करने के लिये एक स्थाई सचिवालय स्थापित करने की सिफारिश करने का निश्चय किया। सचिवालय के बजट की पूर्ति के लिये निर्धारित राशि का 3% कम से कम समस्त राष्ट्रों को देना अनिवार्य होगा । विभिन्न राष्ट्रों की धनराशि देय क्षमता को देखते हुए यह निर्धारित किया गया कि भारत 32% ,पाकिस्तान 25% ,बांग्लादेश नेपाल श्रीलंका प्रत्येक राष्ट्र 11% ,भूटान मालदीव 5-5% धनराशि बजट पूर्ति के लिये देंगे[1] विचार विमर्श की कार्य - सूची सचिवालय

---

1- बिमल प्रसाद,"रीजनल कोअपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-89

के लिये सहयोग के रूप में पाकिस्तान नेपाल, बांग्लादेश के साथ एक वर्ष के लिये क्रियात्मक सहयोग की बनाई गयी । श्रीलंका ने इसका विरोध किया । इन सभी विचारों पर ध्यान देते हुये नई दिल्ली में एक छोटा सचिवालय दक्षेस की गतिविधियों को क्रमशः बढ़ाने के लिये स्थापित किया गया ।[1] भारत ने " दक्षेस की गतिविधियों को ऊर्जा के क्षेत्र के लिये सहपर्यटन योजनाओं को सम्मलित करके इसका क्षेत्र विस्तार करने का प्रस्ताव किया ।[2] यह सुझाव विदेश सचिव रोमेश भण्डारी ने सात दक्षिण एशियाई देशों की विदेश सचिवों की सभा में अपने वक्तव्य द्वारा दिया । उनके विचार में यद्यपि सामान्य रूप से सबके एक मत होने से दक्षेस की गतिविधियों के क्षेत्र में विस्तार होगा । कुछ स्वतन्त्र विशेषज्ञ तथा व्यवसायिकों ने इस सम्बन्ध में नये प्रस्ताव दिये । उन्होंने कहा कि इस सभा को सावधानी पूर्वक यह ध्यान रखना चाहिये कि इन क्षेत्रों तथा दूसरे उचित क्षेत्रों में भी सहयोग बढ़ता रहें । भण्डारी ने समिति को यह भी सूचित किया कि भारत दक्षेस के लिये एक आन्तरिक्ष-विज्ञान केन्द्र स्थापित करने का इच्छुक है । विश्व अन्तरिक्ष विज्ञान केन्द्र के स्थापित होने से मानसून गतिविधि केन्द्र को देश में स्थापित करने में सहायता प्राप्त होगी । उन्होंने यह भी कहा कि भारत दक्षेस सदस्य देशों के बीच सीधे वार्तालाप को सुविधा की स्थापना करने का इच्छुक है एवं इसके विशेषज्ञ कुछ समय पूर्व ही पड़ोसी देशों का भ्रमण कर चुकें है ।

बांग्लादेश ने अल्प अवधि में ही संयुकत राष्ट्र संघ को यह संदेश भेजा कि दक्षेस समिति ने दक्षिणी एशिया के अन्तर्राज्यीय सम्बन्धों में एक वृहत्त प्रवाह स्थापित किया है और इस समिति ने बढ़ती हुयी संभावनाओं के लिये एक नया द्वार खोला है ।

4 दिसम्बर को दक्षेस की समिति ने उस घोषणा को अन्तिम रूप दे दिया जिसे सात दक्षिण एशियाई नेताओं ने दो दिन की वार्ता में स्वीकार कर लिया था ।

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स- 4 दिसम्बर-1985

(2) इकनॉमिक टाइम्स 5 दिसम्बर 1985

यह घोषणा विदेश सचिवों द्वारा पारित कर दी गयी एवं इस उद्घोषणा पर समस्त देश पूर्ण रूप से एक मत हो गये ।[1] आपसी समझ की जो विस्तृत रूप रेखा खीचीं गयी थी वहाँ विरोधी राजनैतिक मुद्दों पर स्पष्ट रूप से कुछ अन्तर थे । अन्तिम रूप से लिया जाने वाला निर्णय दक्षेस की स्वीकृत का था ।[2]

विदेश सचिवों की सभा के उपरान्त सभा के मुख्य वक्ता राजदूत अतुल हसन ने कहा कि - अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दों पर कोई विशेष प्रकाश नहीं डाला गया । उनके विचार में कोई विरोधी एवं द्विपक्षीय मुद्दों पर विचार विमर्श नहीं किया जाना चाहिये ।[3] जब यह प्रश्न पूँछा गया कि क्या अफगानिस्तान की स्थिति को ध्यान में रखते हुये घोषणा में कोई विचार विमर्श हो तो अबुल हसन ने नकारात्मक उत्तर देते हुये कहा कि क्षेत्रीय राजनैतिक मुद्दों पर कोई विचार विमर्श नही किया जायेगा । इस विरोधी टिप्पणी पर प्रहार करते हुये , पाकिस्तान के विदेश मन्त्री साहवजादा याकूब खाँ ने बांग्लादेश टेलीविजन पर एक साक्षात्मक में कहा कि सभा के आकर्षण का केन्द्र आर्थिक मुद्दों पर न होकर मुख्य रूप से राजनैतिक होगा ।

भारत के विदेश मन्त्री श्री भगत ने कहा कि दक्षेस उन क्षेत्रों में शान्ति , एकता और सहयोग स्थापित करने में एक बड़ा योगदान दे सकता है जिनमें भूत काल में अविश्वास, वैमनस्यता तथा विचारों के मतभेद रह चुके है ।[4] पाँच दिसम्बर को विदेश मन्त्रियों की सभा ने दो विशेषज्ञों की कमेटी बनाने की सिफारिश की जो कि दक्षिण एशियाई देशों में सहयोग के मापदण्डों पर सुझाव दे सके । क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स , 5 दिसम्बर 1985.

(2) इण्डियन एक्सप्रेस, 5 दिसम्बर 1985

(3) टाइम्स आफ इण्डिया, 5 दिसम्बर 1985

आंतकवाद तथा नशे के बढ़ते हुये प्रभाव जैसी समस्याओं का सामना किया जा सके । ये दो मुद्दें बाँग्ला देश के विदेश मन्त्री द्वारा उठाये गये, तथा उनके द्वारा सार्क देशों के बीच सहयोग के लिये सुझाव दिये गये । जिसका पाकिस्तान के विदेश मन्त्री अनुमोदन किया ।[1]

सभा के बाद दक्षेस के एक उच्च अधिकारी ने कहा कि ये विशेषज्ञ समिति विदेश सचिवो की स्टेन्डिंग कमेटी को अपनी सिफारिशें देगी जिस पर अन्तिम रूप से विदेश मन्त्रियों द्वारा विचार विमर्श किया जायेगा । यह सभा बांग्लादेश के विदेश मन्त्री हुमायूँ रशीद चौधरी की अध्यक्षता में की गयी । उन्होंने भी दक्षेस के चार्टर, लक्षण तथा उद्घोषणा की रूप रेखा का अनुमोदन किया । यह सभा चूँकि आपसी समझ तथा मित्रता के माहौल में रखी गयी अतः प्रस्तावित सभा की समिति में क्षेत्र के सातों राष्ट्रों की भागीदारी पर कोई आपसी विरोध नही था । यह पूरी तरह से स्पष्ट हो गया कि सभी देश विकासशील देशों की बढ़ती हुई आर्थिक समस्याओं तथा सैन्य दौड़ से उत्पन्न तनाव एवं कलह से त्रस्त है एवं भौगौलिक एवं राजनैतिक स्थिति को ध्यान में रखते हुये सहयोग के समझौते पर पहुँचने के इच्छुक थे । सभा में यह आशा की गई कि जिनेवा में कुछ समय पूर्व सम्पन्न हुई उच्च अधिकारियों की सभा अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा पर एक सकारात्मक प्रभाव डालेगी । अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति विशेषरूप से विकासशील देशों से विकसित देशों की ओर साधनों के प्रवाह, सहायता की रियायती- दरें, व्यापार-संरक्षण, अनेक पक्षों से द्विपक्षीय मामलों तथा उत्तर दक्षिणी वार्ता में प्रगति न होना आदि पर विचार किया गया । एक उच्चाधिकारी ने कहा कि विदेश मंत्रियों ने शिखर-वार्ता में एक कार्य-सूची का प्रस्ताव किया जिसमें संगठन की शर्तो पर विचार विमर्श भी शामिल था । एक अव्यवस्थित कार्यसूची राज्य स्तरीय सभा के लिये भी रखी गई, जिसे वे अपनी दृष्टि से देखे एवं महत्वपूर्ण ध्यान देने योग्य मुद्दों को समझते हुये उनपर विचार विमर्श कर सकें।

---

(1) स्टेट्समैन, 6 दिसम्बर 1985

दक्षेस के विदेश मन्त्रियों के द्वारा आयोजित की गयी सभा में सभी विरोधी राजनैतिक एवं द्विपक्षीय मुद्दों को नज़र -अन्दाज किया गया तथा तत्कालीन क्षेत्रीय सहयोग की अनुरूपता पर बल दिया गया । जिससे दक्षेस में इस सहयोग को बढ़ावा मिल सके । पाकिस्तान के विदेश मंत्री याकूब खाँ ने कहा कि पूर्व की बातों को ध्यान में न रखते हुये क्षेत्रीय सहयोग एक ऐसा उपाय है जिसकी एक मतता पर दक्षिणी एशिया मे अधिक समय तक विरोध नहीं रहेगा।[1] नेपाल के विदेश मंत्री रणधीर सुब्बा ने कहा कि सामूहिक,आर्थिक शक्ति सकारात्मक राजनैतिक समझ को बढ़ायेगी तथा दक्षिणी एशिया में मित्रता व आपसी समझ के एक नये युग का प्रारम्भ करेगी । इसी प्रकार के उद्गार बांग्लादेश के विदेश मंत्री हुमायू रशीद चौधरी द्वारा प्राकट किए गये, उन्होंने सभा की अध्यक्षता की थी ।[2]

बी0एल0 भगत ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि यह क्षेत्र विश्व-व्यापी राजनैतिक तनाव की स्थिति से गुजर रहा है , अतः दक्षिण एशियाई देशों के मध्य सहयोग राष्ट्रीय एवं सामूहिक हितों को बनाये रखने के लिए बहुत आवश्यक है । उन्होंने कहा कि दक्षेस के लिए सचिवालय स्थापित करने का समय अब आ चुका है ।

बांग्लादेश के विदेश मंत्री भी श्रीमान् भगत के दक्षेस के एक स्थायी सचिवालय स्थापित करने के सुझाव से सहमत थे।[2] उन्होंने यह भी कहा कि अन्तर्राष्ट्रीय आंतकवाद वह तथ्य है जिससे कोई भी पूर्णरूपेण राष्ट्र सुरक्षित नहीं है । सम्भवतः दक्षिण एशिया में विचारों का आदान-प्रदान इसके लिए उपयोगी सिद्ध हो कि किस तरह से दक्षेस देश क्षेत्र में इस वर्तमान समस्या के विरूद्ध अपनी सुरक्षा को मजबूत बनाने में सहयोग कर सकें । पाकिस्तान के विदेशमंत्री श्री याकूब खाँ ने यह महसूस

---

(1) इण्डियन एक्सप्रेस, 6 दिसम्बर 1985

(2) स्टेट्समैन , 6 दिसम्बर 1985

किया कि सभा समिति ने आंतकवाद के बढ़ते हुए भय तथा नशीली वस्तुओं का प्रचलन सार्क देशों के सहयोग के प्रयास में सम्मिलित करने की सिफारिश करें । उन्होंने कहा कि विदेश सचिवों की कमेटी द्वारा नये क्षेत्रों में कार्य करने के लिये मशीनीकरण के विकास पर बल दिया जाना चाहिये।

श्री याकूब खाँ ने श्री चौधरी के इस सुझाव का अनुमोदन किया कि एक योजना समिति बनायी जाये जो कि स्टैंडिग कमेटी की अध्यक्षता में दक्षेस के इन्टीग्रेशन प्रोग्राम ऑफ एक्शन की अन्तर्राष्ट्रीय प्राथमिकताओं में पहल करे । यह भी महसूस किया गया कि विदेशमंत्रियों द्वारा सार्क के सचिवालय की स्थापना की सिफारिश समिति को की जाये । उन्होंने यह भी कहा कि सार्क देशों को इस बात के लिए सजग हो जाना चाहिए कि दुलर्भ साधनों की बरबादी पुनरावृत्ति के प्रयासों में न हो । क्षेत्र के साधन तथा अनुभव दक्षेस देशों की सामान्य समस्याओं का सामना करने के लिये प्रभावी हों।

कुछ सदस्य देशों द्वारा यह विचार किया गया कि सहयोग के क्षेत्रों को धीरे-धीरे बढ़ाया जाये । कुछ मुख्य क्षेत्र जैसे-व्यापार एवं उद्योग कुछ समय के लिए छोड़ दिये जाये । एक उच्चाधिकारी ने कहा कि सहयोग का विस्तार दूसरे क्षेत्रों में नौ प्रमाणित क्षेत्रों में लागू किये जाने के पश्चात् होगा । मूल्यांकन के माध्यम से ये नौ क्षेत्र क्षेत्रीय सहयोग के कार्यान्विन पर सहमत हो गये थे ।[1] कुछ योजनायें जिन पर पहले सहमति हो गयी थी, उन्हें कुछ समय के लिये छोड़ दिया गया । दक्षेस केंद्रों की स्थापना से सम्बन्धित विचार पर भी कुछ मतभेद हो गये । उदाहरण के लिए भारत और बांग्लादेश दोनों ने अपने दावे प्रस्तुत किये । विदेश मंत्रियों ने इस मुद्दे को स्टेंडिंग कमेटी के सिपुर्द कर दिया और एक निश्चित समय पर रिपोर्ट देने के लिये कहा । पत्रकारों के अनुसार सचिवालय स्थापित करने का निर्णय दक्षेस की प्रगति का संकेत देता था । ढ़ाका के वक्ता ने कहा कि विदेश मंत्रियों की सभा के उक्त मुद्दों पर अनुमोदन

---

(1) इण्डियन एक्सप्रेस, 6 दिसम्बर 1985

समिति निर्विरोध प्रगति की स्थित का निर्माण किया जा सकेगा । ये मुद्दें कार्यक्रम प्रपत्र, उद्देय एवं उद्घोषणा की रूपरेखा आदि के थे ।

जब दो राजा ( नेपाल एवं भूटान , ( तीन, राज्याध्यक्ष ( पाकिस्तान, श्रीलंका, मालदीव ( एवं एक प्रधानमंत्री ( भारत ( महत्वपूर्ण सभा के लिये ढ़ाका में पहुँचना शुरू हुए तब उस समय यह शहर एक उत्सव की तरह प्रतीत हुआ । पूरा एअरपोर्ट समिति के बैनर से सजाया गया जिसके नारे थे शांति एवं समृद्धि कमे लिये सार्क[1] भारतीय प्रधानमंत्री जब 6 दिसम्बर 1985 को वहाँ पहुँचे तो उनका गर्व के साथ स्वागत किया गया । वहाँ राजनीतिज्ञों, बुद्धिजीवियों एवं नागरिकों का एक बड़ा समूह उपस्थित था । कमल हुसैन जो कि शेख हुसैन ग्रुप में आवामी, लीग के नेता थे, उन्होंने प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के साथ सामान्य वार्ता की किन्तु शिखर वार्ता की इच्छा एवं उत्साह मुख्य रूप से पाकिस्तान के अध्यक्ष श्री जियाउलहक द्वारा प्रकट की गयी जिन्होंने विरोधी, द्विपक्षीय मुद्दों पर विचार विमर्श करके क्षेत्रीय सहयोग को मजबूत एवं ठोस रूप देने के लिये बल दिया । शिखर वार्ता की पूर्व संध्या पर श्री जियाउलहक ने भारत पर हल्के प्रहार किये । उन्हें यह भय था कि भारत द्वारा नेतृत्व किये जाने की भावना सार्क के द्वारा स्थापित सहयोग की भावना को निरूत्साहित करेगी उनके विचार से भारत को यह महसूस करना चाहिए कि समस्त देश समान हैं तथा छोटे पड़ोसी देशों का विश्वास जीतने के लिए सकारात्मक कदम उठाये जाने चाहिये।[2] भारत ने भी बांग्लादेश के पत्रकार को एक साक्षात्कार में कहा कि भारत विरोधी प्रचार इस तरह के धूर्ततापूर्ण नहीं होने चाहिये । अन्तर्राष्ट्रीय प्रेस के साक्षात्कार में कश्मीर का मुद्दा उठाया गया तथा पाकिस्तान के परमाणु कार्यक्रम का विरोध किया गया। जनरल जिया ने अपने साक्षात्कार में चाइना को पाकिस्तान का सबसे सुदृढ़ समर्थ माना । अपने परमाणु योजना का बचाव करते हुए उन्होंने कहा कि भारत अपने उस प्रस्ताव को पूरा करने में असमर्थ है जिसमें कि नई दिल्ली में छः सदस्यों का परमाणु कार्यक्रम

---

(1( हिन्दुस्तान टाइम्स, 7 दिसम्बर 1985

(2( पैट्रीओट, 7 दिसम्बर 1985

क्लब बनाने का प्रस्ताव था । पाकिस्तान ने उपस्थित पत्रकारों को तथा पश्चिमी माध्यम को यह दिखाने की कोशिश की कि जो मतभेद हुए वह भारत के कारण थे दक्षेस की ये सभा विरोधी मुद्दो एवं द्विपक्षीय मुद्दों को उठाने में असफल हुई । ढाका में जो सूचनायें थीं उनमें से दो मुख्य थीं परमाणु नीति एवं विदेश नीति ।

दो दिन की शिखर वार्ता के पहले दिन सातों नेताओं ने अपने उद्घाटन काल में नवनिर्मित संसद भवन में तय किया कि सम्पूर्ण क्षेत्र के देशों के राज्य एवं सरकार के उच्चाधिकारी वर्ष में एक बार मिलेंगे । दक्षेस के चार्टर को पारित कर दिया गया जिसकी वार्ता वर्ष में एक बार होना तय की गयी । दूसरी वार्ता नवम्बर 86 में दिल्ली में होना निश्चित की गयी ।[1] 1987 में तीसरी वार्ता में भूटान मेजबान होगा । चार्टर में सिफारिश की गयी कि विदेश मंत्रियों की एक सभा जब आवश्यक हो, की जायेगी । किन्तु वह किसी भी स्थिति में छः महिने में एक बार होना अनिवार्य है ।

विदेश सचिवों की स्टेंडिंग कमेटी के वर्ष में दो काल होंगे । वार्ता में इस निर्णय का अनुमोदन किया गया कि विदेश मंत्रियों द्वारा नशीली दवाईयों के आवागमन तथा आंतकवाद में क्षेत्रीय सहयोग के प्रश्न को सुलझाने के लिए एक विशेषज्ञ समिति बनायी जाये जो कि विदेश सचिवों की विदेशी समिति को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करें ।[2] वार्ता में नेपालियों का यह प्रस्ताव जो कि कांठमाण्डू में सार्क के सचिवालय स्थापित होने से सम्बन्धित था ,पर ध्यान दिया गया किन्तु इसका निर्णय नहीं लिया गया । यह भी तय किया गया कि विशेषज्ञों की एक कमेटी बनेगी जो विकासशील देशों के लिये अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं के विचार विमर्श के लिये बनायी जायेगी । पाकिस्तान ने कमेटी की पहली सभा के लिये मेजबानी का प्रस्ताव किया । उसके बाद क्रमशः वित्त एवं योजना मंत्रियों के स्तर की सभायें सम्पन्न हुई । शिखर वार्ता द्वारा पाकिस्तान द्वारा दिया गया यह सुझाव कि महिलाओं का स्तर ऊँचा उठाया जायें, स्वीकार कर लिया गया । एक कमेटी इस उद्देश्य के लिये भी तय की गई ।

---

(1) इण्डियन एक्सप्रेस 8 दिसम्बर 1985

(2) हिन्दुस्तान टाइम्स 8 दिसम्बर 1985

प्रथम दिन सातों नेताओं ने दो औपचारिक बैठकों में भाग लिया और सार्क द्वारा प्रभागीय मामलों में प्रशासनिक सहयोग के रूप में कार्य करने के लिये अपने विचार व्यक्त किये ये सभी नेता इस संगठन को क्षेत्रीय मामलों में एक राजनैतिक शक्ति प्रदान करने के लिये इच्छुक थे । बांग्लादेश के अध्यक्ष एच0एम0इरशाद सार्क के चेयरमैन चुने गये उन्होने इस सभा का स्वागत किया और कहा कि सहयोग के क्षेत्र निश्चित किये जाये तथा निर्विहन गणना के आधार पर सहयोग के लिये निश्चित मापदण्ड बनाये जायें ।[1] ये गणना राज्यों की वास्तविकताओं एवं राज्यों के संकल्पों पर आधारित हो । इरशाद ने कहा कि सहयोग की नीति स्पष्ट रूप से आपसी समझ पर आधारित हो जिससे कि संयुक्त फर्मो में प्रत्येक सदस्य की स्वतन्त्रता बनी रहे एवं उन्हें न्याय की प्राप्ति हो । जनरल ने इस बात पर जोर दिया कि दक्षेस यह प्रतिज्ञा करे कि वह द्विपक्षीय एवं बहुपक्षीय मामलों में हस्तक्षेप नहीं करेगा । यह इंगित करते हुये उन्होंने कहा कि यह संकल्प उनकी नीति की शक्ति है । उन्होंने यह विश्वास दिलाया कि यह एक सशक्त एवं फलदायक संगठन सिद्ध होगा । उन्होंने सोचा कि सहयोग में जिन लक्ष्यों तक पहुँचना है वे पूरी तरह से स्पष्ट है लेकिन यह सहयोग के क्षेत्र या प्रपत्र को पूर्ण नहीं करता । उन्होने यह भी कहा कि सार्क मात्र एक अपेक्षाओं के लिये एक नया कदम है जो कि राज्यों तथा गाँवो की सीमितताओं की निराशाओं से दूर है ।.

पिछले पाँच वर्षो से सातदक्षिण एशियाई राज्यों में जो सहयोग का रूप उभर कर आया वह क्षेत्र की राजनैतिक वासतविकताओं एवं अनिवार्यताओं के अनुरूप है प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने सभा को सम्बोधित करते हुये कहा " सभी देश अपने द्विपक्षीय सम्बन्धों को एक सामान्य क्षेत्रीय पहचान बनाने के लिये प्रतिज्ञाबद्ध नहीं है । बल्कि दक्षिण एशियाई सहयोग को एक नये कदम के रूप में बनाने के लिये इच्छुक है। ये द्विपक्षीय मामले क्षेत्रीय सहयोग के लिये तनावपूर्ण सिद्ध न हो पायेंगे । "[2] उन्होंने यह भी कहा कि तात्कालिक अनुभवों को देखते हुये यह आशा की जा सकती है कि क्षेत्रीय सहयोग द्विपक्षीय सम्बन्धों में एक निश्चित रूप से लाभकारी प्रभाव डालेगा

---

(1) टाइम्स ऑफ इण्डिया , 8 दिसम्बर 1985
(2) स्टेट्समैन 8 दिसम्बर 1985

विश्वव्यापक आर्थिक स्थितियों के बारे में राजीव गांधी ने कहा विश्व अर्थ व्यवस्था एक गहरे संकट में है तथा अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थान भी उथल पुथल की स्थिति में है, विकास का क्रम टूटा है तथा बहुमुखी विकास एक गंभीर दबाव में आ गया है । दक्षिण एशियाई क्षेत्र में इस स्थिति के प्रभाव का सामना करते हुये उन्होंने सोचा कि इस क्षेत्र के देश इन समस्याओं का मुकाबला करने मे समर्थ है किन्तु वे लगातार गरीबी , अशिक्षा, कुपोषण तथा वे उन बिमारियों से जो कि सम्बन्धित देशों मे बाह्य वातावरण के द्वारा आई है - इनसे लगातार ग्रस्त है । इस सम्बन्ध में उन्होंने यह कहा कि दक्षिणी सहयोग का उद्देश्य सामूहिक आत्मनिर्भरता एवं बहुमुखी विकास पर जोर देना तथा विश्व व्यापी सहयोग जैसे लक्ष्यों तक पहुँचाना है । दक्षिणी एशियाई क्षेत्र मानवीय क्रियात्मकता के लिये एक औजार सिद्ध होगा, जो इन सातों देशों के मध्य सम्बन्धों को दृढ़ करेगा ।

पाकिस्तान के अध्यक्ष ने सुझाव दिया कि एक निश्चित समय में सार्क के सदस्यों के द्वारा सामान्य हित के मामलों के क्रियान्वयन की एक विचार विमर्श की प्रणाली बनाई जानी चाहिये । वह यह भी चाहते थे कि सामूहिक रूप से एक दूसरे के विरूद्ध दबाव डालने एवं परमाणु हथियारों के प्रयोग का बहिष्कार किया जायें ।[1] राष्ट्र संघ चार्टर और गुटनिरपेक्ष सम्मेलन में एक अच्छे पड़ोसी सम्बन्धों के लिये किये गये वादे के अनुसार जियाउलहक चाहते थे कि क्षेत्रीय स्तर पर किये गये समझौते पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाये ।

नेपाल के राजा बीरेन्द्र ने कहा कि सार्क सभा क्षेत्र में सामान्य हितों को बढ़ाने में सहायक होगी । यह आपसी मतभेदों को सहयोग एवं एकता द्वारा समाप्त कर सकेगी । उन्होंने यह महसूस किया कि एक लम्बे अन्तराल के पश्चात् आपसी अविश्वास एवं सन्देहों से दूर दक्षिण एशिया के लोग आपसी लेन-देन तथा जिओ और

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स, 8 दिसम्बर 1985

और जीने दो के सिद्धांत पर अग्रसर होंगे । इस क्षेत्र के देश शांति एवं जीवन स्तर को ऊँचा उठाने के लिये प्रयत्नशील रहेंगे ।

भूटान के राजा ने दक्षिण एशिया मे परमाणु हथियारों के विकास पर दुख प्रकट किया । उन्होंने कहा कि परस्पर विचार विमर्श के द्वारा ही इस गंभीर समस्या से छुटकारा प्राप्त हो सकता है । दक्षेस इसमें हमारी मदद करेगा । वर्तमान काल में क्षेत्रीय सहयोग में आने वाली बाधाओं में सबसे बड़ी बाधा भय, चिन्ता एवं शंका है । इस विचार से यदि क्षेत्रीय सहयोग में उन्नति होती है तो इसके लिये हमें एक-दूसरे पर सन्देह के रूख से दूर होकर आपसी समझ एवं विश्वास का रूख अपनाना होगा।[1]

श्रीलंका के अध्यक्ष ने कहा कि भारत इस क्षेत्र में सबसे विशाल देश है और इसीलिये इस क्षेत्र में शांति एवं सुरक्षा की सबसे बड़ी जिम्मेदारी भारत की है । यह आवश्यक है कि छोटे देशों में विश्वास पैदा करने के लिये भारत पहल करें।

मालद्वीव के अध्यक्ष ने कहा कि सार्क विश्व में शांति एवं उन्नति के प्रसार के लिये एक प्रपत्र है । सार्क की प्रगति के लिये आवश्यक है कि समस्त देश भिन्नता की भावना को लेकर चलें ।[2]

इस प्रकार दक्षिण एशिया में विकास के महत्वपूर्ण उद्देश्यों को लेकर औपचारिक रूप से दक्षेस की स्थापना 8 दिसम्बर 1985 को कर दी गई । सभा ने ढाका उद्घोषणा पत्र को उद्घोषित करते हुये इसकी स्थापना की ।

---

(1) प्रमोद कुमार मिश्रा, " ढाका समिति एण्ड सार्क" पृष्ठ- 28

(2) ---- वही --- पृष्ठ- 29

## पंचम अध्याय

### दक्षेस के क्रिया- कलाप

(अ) प्रथम सम्मेलन - ढाका

(ब) द्वितीय सम्मेलन - बंगलौर

(स) तृतीय सम्मेलन- काठमांडू

(द) चतुर्थ सम्मेलन- इस्लामाबाद

(य) पंचम सम्मेलन - मालदीव

(र) षष्ठ सम्मेलन - श्रीलंका

## दक्षेस के क्रिया-कलाप

दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की भावना को सुदृढ़ करने के लिए "दक्षिण एशियायी क्षेत्रीय सहयोग संगठन" का गठन 8 दिसम्बर 1985 को हुआ । इसका सचिवालय काठमांडू में स्थापित करना निश्चित किया गया और यह निर्णय लिया गया कि प्रत्येक वर्ष के अन्त में दक्षेस संगठन का अधिवेशन बारी-बारी से प्रत्येक देश में होगा तथा उस देश का शासनाध्यक्ष उस संगठन का अध्यक्ष होगा । दक्षेस के प्रत्येक सम्मेलन में समस्त देशों के राष्ट्राध्यक्षों एवं शासनाध्यक्षों की उपस्थिति आवश्यक है । यदि किसी राष्ट्र के राष्ट्राध्यक्ष या शासनाध्यक्ष उपस्थित न हुए तो सम्मेलन रद्द कर दिया जायेगा । इन सम्मेलनों द्वारा दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की भावना सुदृढ़ की जायेगी व इसके मार्ग में आने वाली बाधाओं, कठिनाइयों को दूर किया जायेगा ।

दक्षिण एशिया के समस्त देशों के शासनाध्यक्षों की प्रथम बैठक 6 से 8 दिसम्बर 1985 को ढ़ाका में सम्पन्न हुई । श्रीप्रमोद कुमार मिश्र जी का विचार है कि ढ़ाका सम्मेलन में भारत का सहयोग विशेष रूप से युवा प्रधानमंत्री का बड़ा ही संचरणशील एवं रचनात्मक रहा है । जैसा कि दक्षेस विश्व की 20% मानव जाति का प्रतिनिधित्व करता है, किन्तु यह आर्थिक विपन्नता का क्षेत्र है। परिस्थितियों के मुताबिक इसमें कोई भी संदेह नहीं कि राजीव गांधी इसे जन-आन्दोलन का रूप देने के इच्छुक हैं।[1]

दक्षिण एशियाई देशों का द्वितीय सम्मेलन 1986 में बंगलौर में सम्पन्न हुआ । इस सम्मेलन में आर्थिक , राजनैतिक एवं सांस्कृतिक सहयोग पर बल देते हुए आंतकवादी गतिविधियों का विरोध किया गया ।

दक्षिणी एशियायी देशों का तृतीय सम्मेलन नेपाल की राजधानी काठमांडू में नवम्बर 1987 में सम्पन्न हुआ । इस सम्मेलन में समस्त शासनाध्यक्षों ने भाग लिया।

---

(1) प्रमोद कुमार मिश्र "ढ़ाका समिति एण्ड सार्क" पृष्ठ-29

इस सम्मेलन में शासनाध्यक्षों ने आर्थिक एवं सांस्कृतिक सहयोग पर बल देते हुए एक क्षेत्रीय खाद्य सुरक्षा भंडार की स्थापना पर सहमति हुई । दक्षिण एशिया के सातों राष्ट्रों ने क्षेत्रीय आंतकवाद विरोधी समझौते पर हस्ताक्षर किये । [1]

दक्षिण एशियायी देशों का चतुर्थ सम्मेलन पाकिस्तान की राजधानी इस्लामाबाद में 1989 में सम्पन्न हुआ । इसमें आर्थिक सहयोग पर बल देते हुए दक्षेस देशों के बीच स्वतंत्र यात्राओं का प्रस्ताव रखा गया । सातों देशों के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश एवं सांसद बिना वीसा के दक्षेस देशों में यात्रायें कर सकते हैं ।

दक्षेस का पाँचवा शिखर सम्मेलन मालदीव की राजधानी माले में 1990 में सम्पन्न हुआ । इस सम्मेलन में विश्व की राजनैतिक, आर्थिक व सामाजिक स्थिति की समीक्षा करते हुए दक्षिण एशियायी देशों ने आर्थिक क्षेत्र मे आपसी सहयोग सुदृढ़ करने हेतु संयुक्त उद्यम स्थापित करने तथा क्षेत्रीय परियोजनाओं हेतु सामूहिक कोष गठित करने का निर्णय लिया गया ।

दक्षिण एशियायी देशों का छठा सम्मेलन श्रीलंका की राजधानी कोलम्बों में 1991 में सम्पन्न हुआ । इस सम्मेलन में सदस्य राष्ट्रों के मध्य व्यापार में वृद्धि, आंतकवाद से निबटने के प्रयासों, नशीली चीजों के व्यापार पर रोक लगाने, बाल विकास तथा पर्यावरण के संरक्षण का संकल्प लिया गया ।

दक्षिण एशियाई राष्ट्रों द्वारा परस्पर सहयोग स्थापित करने के लिये इन सम्मेलनों द्वारा प्रस्तुत की गयी शासनाध्यक्षों की भूमिकाओं का चित्रण एवं उनके मध्य किये गये कार्यों एवं समझौतो का वर्णन इस अध्याय में प्रस्तुत किया जायेगा ।

---

(1) नव भारत टाइम्स , 4 नवम्बर 1987

**प्रथम सम्मेलन**

दक्षिण एशिया के सात राष्ट्रों- भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका एवं मालदीव के शासनाध्यक्षों तथा राष्ट्राध्यक्षों की प्रथम सभा आठ दिसम्बर 1985 को ढ़ाका में आरम्भ हुयी । सभा ने ढ़ाका उद्घोषणा पत्र को उद्घोषित करते हुये " दक्षेस " को स्थापित किया । सातों देशों के राष्ट्राध्यक्षों ने "दक्षेस " के चार्टर तथा उद्घोषणा की सात प्रतियों पर इस संगठन की स्थापना को पारित करने के लिये हस्ताक्षर किये ।[1] सदस्य देशों के राष्ट्राध्यक्षों एवं शासनाध्यक्षों ने यह आशा व्यक्त की कि गम्भीर आर्थिक संकट और विकसित देशों के उपेक्षापूर्ण व्यवहार के बावजूद दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन विकासशील देशों के बीच आपसी सहयोग का उदाहरण प्रस्तुत करेगा ।

उद्घाटन में बांग्लादेश के राष्ट्रपति ने आशा व्यक्त की कि सामूहिक आत्म निर्भरता के माध्यम से " दक्षेस " देश आर्थिक स्वतन्त्रता का उद्देश्य प्राप्त करने मे सफल होगें । नेपाल के राजा वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह देव ने संगठन का चार्टर स्वीकृत करने का प्रस्ताव किया जबकि पाकिस्तान के अध्यक्ष ज़ियाउलहक ने प्रस्तुत घोषणा की स्वीकृति दी, जिसका उन्होंने ढ़ाका उद्घोषणा पत्र में सुझाव दिया था ।[2] सभा को सम्बोधित करते हुये राजीवगांधी ने यह जोर दिया कि संगठन को सफल बनाने के लिये जनता का सहयोग अत्यन्त आवश्यक है । उन्होंने इस बात का संकेत दिया कि प्रत्येक भाग लेने वाले देश को इस संगठन में आवाज उठाने का समान अधिकार है । उन्होंने यह भी आशा व्यक्त की कि यह चार्टर दक्षिणी एशिया के क्षेत्र में शान्ति एवं एकता बनाये रखने मे सहायता देगा । संगठन के निर्माण को एक नया कदम

---

(1) सुधीर डे इन स्टेट्समेन ( न्यू देहली 10 दिसम्बर 1985 की रिपोर्ट के अनुसार)

(2) हिन्दुस्तान टाइम्स 8, दिसम्बर 1985

बताते हुये प्रधान मन्त्री श्री राजीव गाँधी को पूर्णरूप से विश्वास था कि क्षेत्रीय सहयोग सातों देशों की सम्बन्धित विकास योजनायों में सहायक सिद्ध होगा ।

भूटान के राजा जिग्में सिग्में वॉग्चुक ने दक्षिणी एशिया क्षेत्र के अन्दर मत-भेदों को मिटाने का वातावरण बनाने में " दक्षेस " को एक अच्छा प्रारम्भ बताया। उन्होंने कहा कि दक्षेस आपसी समक्ष में एक दृढ़ भूमिका अदा करेगा ।[1] अपने प्रारम्भिक भाषण में बोलते हुये श्रीलंका राष्ट्राध्यक्ष जे0आर0 जयवर्धनेने यह स्वीकार किया कि भारत पर इस क्षेत्र की सबसे बड़ी जिम्मेदारी आती है। सबसे बड़ा देश होने के नाते एवं शेष सदस्यों के सामूहिक सेना में भी बड़ा होने के नाते यह आवश्यक है कि विश्वास लाने के लिये भारत हममें से पहल करे । मालदीव के अध्यक्ष एम0ए0गयूम ने कहा कि सार्क शान्ति, प्रगति एवं विश्व में विशेषरूप से दक्षिण एशिया के क्षेत्र मे स्थिरता को बढ़ावा देने का हमारा एक प्रपत्र है। उन्होंने कहा कि इसके लिये महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि हम अपनी शक्ति एवं समृद्धि को पहचाने और गाड़ी के दो पहियों की तरह साथ-साथ आगे बढ़े ।

**ढाका उद्घोषणा एवं दक्षेस चार्टर** इस उद्घोषणा में कहा गया कि क्षेत्रीय संगठन, जिसमें भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका , नेपाल , भूटान और मालदीव सम्मिलित है, यह व्यक्तिगत एवं सामूहिक आत्म-निर्भरता एवं इन देशों की आर्थिक एवं सामाजिक विकास की गति को तीव्र करेंगे ।[2] इन सात देशों की सरकारों के उच्च अधिकारियों ने दक्षेस की स्थापना पर क्षेत्रीय सहयोग के लिये एक दृढ़ विश्वास व्यक्त किया। इन उच्चाधिकारियों ने दक्षिणी एशियाई शिखर सभा की पहली ऐतिहासिक महत्ता को प्रकट किया । वे इस बात पर सहमत थे कि क्षेत्रीय सहयोग से साथ-साथ कार्य करने पर उनकी सामान्य समस्यायें मित्रता, विश्वास एवं आपसी समझ से सुलझायी जा

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स, 9 दिसम्बर 1985

(2) इण्डियन एक्सप्रेस न्यूडेली, 7 दिसम्बर, 1985

सकती है तथा आपसी सम्मान, समानता, एवं परस्पर लाभ की दिशा में कार्य किया जा सकता है । उन्होंने कहा कि दक्षेस के अन्तर्गत की गयी सामयिक सभायें इस स्तर पर परस्पर विश्वास , सद्भाव एवं इस क्षेत्र के देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा देगीं। उच्चाधिकारियों ने यह भी कहा कि उनका मुख्य उद्देश्य इन देशों में मानवीय एवं संसाधनीय साधनों आदर्श उपयोग के द्वारा आर्थिक एवं सामाजिक विकास की गति को तीव्र करना है , जिससे कि इन देशों की जनता की समृद्धि एवं कल्याण में वृद्धि हो तथा उनके जीवनस्तर में सुधार हो ।

दक्षिणी एशियाई देशों के नेताओं में यू0एन0 चार्टर के प्रति अपनी प्रतिज्ञाओं को दोहराया तथा इन देशों के सह-अस्तित्व, समानता, विवादों के शान्तिपूर्ण निपटारों में,आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करना तथा आंतकवादी तरीकों के प्रयोग न करने पर दबाव,दूसरे देशों के राजनैतिक स्वतन्त्रता आदि सिद्धान्तों को दोहराया गया[1]। उन्होंने इस तथ्य पर विचार किया कि क्षेत्रीय सहयोग इन समस्यायों के लिये एक तार्किक समाधान प्रस्तुत करेगा । दक्षिण एशियाई देशों के नेता अपने व्यक्तिगत एवं क्षेत्रीय शक्ति, विस्तृत बाजार की सम्भावनायें, मानवीय एवं प्राकृतिक साधनों एवं अर्थ व्यवस्था को कमजोर करने वाले तथ्यों के प्रति सजग थे। उन्हे पूर्ण विश्वास था कि प्रभावी क्षेत्रीय सहयोग के द्वारा वे अपनी क्षमताओं का अधिकतम अपने लोगों के लाभ एवं आर्थिक विकास की गति को तीव्र करने तथा राष्ट्रीय सामूहिक आत्म-निर्भरता को दृढ़ करने में कर सकते है । वे इस बात पर सहमत थे कि उनके देश जो कि मानवीय सभ्यता में एक महत्व पूर्ण योगदान रखते हैं, अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों के साथ मिलकर अच्छा कार्य कर सकते हैं एवं निर्णयों को प्रभावी बना सकते है जो उनके लिये महत्वपूर्ण है। सरकारों के उच्चाधिकारियों ने इस बात पर बल दिया कि क्षेत्रीय सहयोग को

---

(1) प्रमोद कुमार मिश्रा " ढाका समित एण्ड सार्क, " पृष्ठ- 32

सुदृढ़ करने के लिये उनकी जनता का सहयोग अत्याधिक आवश्यक है। वे इन देशों के बीच व्यक्ति दर व्यक्ति सम्बन्ध बढ़ाने को सहमत थे । अन्त में उन्होंने इस क्षेत्र में लोगों के विचार जानने का भी निश्चय किया । सरकारों के उच्चाधिकारियों ने नौ पारस्परिक सहमत क्षेत्रों में एक के सुझाव के इस कार्यक्रम की प्रगति का स्वागत किया। उन्होंने यह इच्छा व्यक्त की कि सहयोग के कदमों को भाईचारे एवं समानता की शक्ति से विस्तृत किया जाये । समस्त नेता परस्पर इसबातपर सहमत थे कि वे अपने व्यक्तिगत एवं सामूहिक उद्देश्यों को प्रभाव पूर्ण रूप दे सकते है तथा शांति एवं सुरक्षा के वातावरण में अपनी जनता के जीवन स्तर को ऊचाँ उठा सकते हैं । इस सम्बन्ध में उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर बिगड़ती हुयी आर्थिक स्थिति को भी प्रकट किया । उन्होंने परमाणु क्षेत्र में बढ़ती हुयी सैनिक होड़ के बारे में भी चेतावनी दी । इस सम्बन्ध में उन्होंने ये अपील की कि समस्त देश परमाणु हथियारों के परीक्षण, उत्पादन एवं विस्तार को आपसी वार्ता से प्रतिबन्धित कर दिया जाये । उन्होंने यह आशा की कि अध्यक्ष रीगन एवं गोर्वाचोव्य के बीच में हाल ही में हुयी वार्ता अन्तर्राष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा पर सकारात्मक प्रभाव डालेगी ।[1] शिखर सम्मेलन में यह गहरा विश्वास व्यक्त किया गया कि " नाम " की सार्थकता अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक महत्वपूर्ण दबाव डालेगी । अपने सामान्य मूल्यों , सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं एतिहासिक परम्पराओं से बंधे हुये ये देश इस निर्णय पर दृढ़ थे कि वे अपने व्यक्तिगत एवं क्षेत्रीय शक्ति विस्तृत बाजार की संभावना मानवीय एवं प्राकृतिक साधनों का प्रयोग अपने क्षेत्र की जनता के लाभ के लिये तथा राष्ट्रीय एवं सामूहिक आत्मनिर्भरता के लिये करेंगे । उन्होंने अपने इस दृढ़ विश्वास को व्यक्त किया कि उनके देश जो कि मानवीय सभ्यता में एक महत्वपूर्ण योगदान देते हैं, वे अपने अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेंगे, तथा इन निर्णयों को प्रमाणित करेंगे जो कि उन पर प्रभाव डाल सकते हैं।

---

(1) इण्डियन एक्प्रेस, 9 दिसम्बर 1985

दक्षेस चार्टर, जिसमे दस आर्टिकल[1] निहित है, को विस्तृत भागों में बॉटा गया-

**प्रथम भाग-** दक्षेस , अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के वातावरण से दूर दक्षिणी एशिया के सातों देशों की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक ज्वलन्त समस्याओं की एक वास्तविक तस्वीर पर प्रकाश डालता है । इन देशों के नेता दक्षिणी एशिया की जनता के विभिन्न क्षेत्रों में परस्पर निकटता को प्रेरणा देने के इच्छुक हैं । वें इस तथ्य की ओर भी सचेत थे कि क्षेत्रीय सहयोग पारस्परिक हित, इच्छाओं, एवं कल्याण को बढ़ावा देने के लिये आवश्यक है तथा यह इस क्षेत्र में लोगों का जीवन स्तर ऊँचा करेगा । दूसरी तरफ वे इस बात पर सहमत थे कि यह उनके राष्ट्रीय एवं सामूहिक एवं आत्मनिर्भरता में एक भव्य योगदान देगा । नेताओं ने दिल्ली में 2 अगस्त, 1983 को आयोजित की गयी विदेश मन्त्रियों की उद्घोषणा को सार्क में एक सकारात्मक विकास बताया। दक्षेस की स्थापना सम्बन्धित देशों की प्रेरणा एवं प्रयत्नों का परिणाम था ।

**द्वितीय भाग-** दूसरे भाग में दक्षेस के आठ विस्तृत उद्देश्य रखे गये, जो कि निम्न है ।

यह जीवन स्तर को बढ़ायेगा । आर्थिक वृद्धि को तीव्र करेगा तथा सभी को सम्मान से रहने का अवसर प्रदान करेगा । यह चार्टर सामूहिक आत्म-निर्भरता को मजबूत करेगा, पारस्परिक विश्वास को बढ़ावा देगा तथा आर्थिक एवं तकनीकी एवं वैज्ञानिक क्षेत्रों में सक्रीय सहायता देगा जिसमें दूसरें देशों तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ सहयोग शामिल है । यह व्यक्ति दर व्यक्ति सम्बन्धों में सहायक होगा तथा क्षेत्र के देशों के बीच सूचनायें देगा ।

---

(1) इण्डियन एक्सप्रेस, 9 दिसम्बर 1985

**तृतीय भाग** - तीसरे भाग में मुख्यतः इसकें कार्यो के नियमों एवं विषयवस्तु को दर्शाया गया है । सार्क सार्वभौमिक समानता, राष्ट्रीय पूर्णता, राष्ट्रीय स्वतन्त्राता तथा दबाव का प्रयोग न करने में, दूसरे देश के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने तथा सभी विवादों को शान्ति पूर्ण हल करने में विश्वास रखता है ।

**चतुर्थ भाग से अष्टम भाग तक**-इस अध्याय में संगठनात्मक मामलों का विस्तृत विवरण है । सभी देशों के उच्चाधिकारी वर्ष में एक बार अवश्य मिलने चाहिये अथवा अत्याधिक आवश्यकता के समय उन्हें परस्पर मिलना चाहिये । कार्यो के स्तर पर चार्टर मन्त्रियों की एक काउन्सिल प्रस्तुत करता है जो कि इस संगठन की नीतियों को बनायेगा, सहयोग की प्रगति की समीक्षा करेगा ; सहयोग के नये क्षेत्रों को निश्चित करेगा तथा आवश्यकता पड़ने पर संगठन में संसाधनों को बढ़ावा देगा । यह चार्टर विदेशी सचिवों की एक प्रत्यक्ष समिति प्रस्तुत करता है जो कि सदस्य देशों को इन मन्त्रियों की काउन्सिल की सामूहिक रिपोर्ट देगा एवं उन मामलों की नीति से अवगत करायेगा । प्रत्यक्ष समिति की बैठकें आवश्यकतानुसार रखी जायेगी । प्रत्यक्ष समिति की सहायतार्थ, विशेष क्षेत्रों में विशेषज्ञों की सभा या देशों के उच्च तकनीकी ऐजेन्सियों की सभा का प्रावधान रखा गया । सार्क के सचिवालय के बारे में यद्यपि एक सामान्य सहमति बन चुकी थी, फिर भी ये काउन्सिल के मन्त्रियों के ऊपर छोड़ा गया कि वे इसके संगठन, कार्यो एवं विषय वस्तुओं पर अन्तिम निर्णय लें । थोड़े ही समय में एक अस्थाई सचिवालय ढ़ाका में शुरू कर दिया जायेगा ।

**नवम भाग**-अग्रिम अध्याय आर्थिक व्यवस्थाओं के लिये रखा गया । यह दिल्ली उद्घोषणा के निर्देश बिन्दुओं पर आधारित है। दूसरे शब्दों में यह सदस्य देशों के एच्छिक योगदान पर आधारित है । तकनीकी समितियों की यह जिम्मेदारी है कि वे निश्चित क्षेत्राय योजनाओं के संभावित खर्च के लिये सिफारिश दें । आवश्यकताओं के अनुसार बाह्य वित्त के साधनों को भी लिया जा सकता है ।

**दशम अध्याय**-अन्तिम अध्याय में अशत्रुता एवं अमित्रता के आधार पर समस्त स्तरों पर निर्णय लेने से सम्बन्धित तथ्य है । इसमें यह भी निश्चित किया गया कि दक्षेस संगठन में द्विपक्षी एवं विवादीय - मामलें शामिल नहीं है ।

दक्षिणी एशिया में दक्षेस की उत्पत्ति का अनेक देशों के नेताओं ने स्वागत किया। चीन के राष्ट्राध्यक्ष झाओंजिआंग ने ढ़ाका शिखर सम्मेलन को दक्षिण एशिया क्षेत्र में एक महान ऐतिहासिक कदम बताया । उसने सातों देशों के मिले जुलें कदम का स्वागत करते हुये बांग्लादेश के अध्यक्ष जनरल इरशाद को एक टैलीग्राम में कहा कि " दक्षिणी एशियाई क्षेत्रीय सहयोग बांग्लादेश द्वारा प्रेरित की गयी प्रगति के प्रति महान सफलता है । उन्होने ये आशा की कि यह शिखर सफलता के मुकुट से सजे ।[1]

रीगन ने शिखर के चेयरमैन को अपनी सदभावनायें व्यक्त की, -उन्होंने अपने सन्देश में कहा कि - संयुक्त राज्य अमेरिका क्षेत्रीय सहयोग के कार्यक्रमों को सफल करने के लिये यह कामना करता है कि सार्क आन्दोलन फलदायी हो ।[2]

आस्ट्रेलिया के प्रधानमन्त्री ने कहा कि उनका देश क्षेत्रीय सहयोग के मूल्यों मे दृढ़ विश्वास रखता है ।

संयुक्त राज्य के महासचिव ने ढ़ाका में पहले क्षेत्रीय सम्मेलन में दक्षिणी एशियाई नेताओं की सफलता की कामना की । शिखर सम्मेलन के अध्यक्ष को भेजें गये सन्देश में कुईलर ने यह आशा की कि वह सम्मेलन प्रगति के नये मार्ग को विकसित करेगा, तथा प्रदेश में तनाव को दूर करेगा ।

राष्ट्र संघ के प्रमुख ने अपनी शुभकामनायें अध्यक्ष इरशाद एवं ढ़ाका में सभी सरकारों के उच्च अधिकारियों को क्षेत्रीय सहयोग के लिये दक्षेस की इस एतिहासिक सभा के लिये भेजी । उन्होंने कहा कि "मैं पिछले कुछ वर्षों से इस नये क्षेत्रीय संगठन के

---

(1) हिन्दुस्तान टाइम्स , 7 दिसम्बर 1985
(2) टाइम्स ऑफ इण्डिया, 8 दिसम्बर 1985

सकारात्मक विकास से सन्तुष्ट था । " उन्होने कहा कि इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसका श्रेय ढाका को दिया जाना चाहिये जिसने दक्षिणी एशिया सहयोग के विचार को सबसे पहले प्रस्तुत किया ।

यूरोपियन कमेटी के अध्यक्ष डेटर्स ने अपने सन्देश में अध्यक्ष इरशाद एवं दूसरे सदस्य देशों के राष्ट्राध्यक्षों को दक्षेस की सफलता के लिये शुभकामनायें दी।

ढाका शिखरवार्ता में भी कमोई बड़ा निर्णय नही लिया जा सका । वस्तुस्थिति तो यह है कि जो सात देश आज दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन के सदस्य हैं, उनके संबंध कभी भी मधुर नहीं रहे । इसलिये ढाका शिखरवार्ता की इस उपलब्धि को भी कम नहीं आंका जा सकता कि उसने इन देशों को एक मंच पर लाने का काम कर दिखाया है । भारत पाकिस्तान कमे मध्य कश्मीर और पंजाब के सवाल को लेकर जैसा तनाव है या भारत श्रीलंका के मध्य तमिल समस्या को लेकर जैसा अविश्वास है, वैसी स्थिति में ढाका शिखर वार्ता से किसी बड़े राजनीतिक घोषणा-पत्र की आशा भी नहीं थी । शायद प्रधानमंत्री राजीव गांधी को भी इसका आभास रहा होगा, इसीलिये उन्होंने अपने भाषण में राजनीतिक मुद्दों को पूरी तरह नजरअंदाज करते हुये दक्षिण एशियाई देशों की आर्थिक स्थिति और विकसित देशों द्वारा किये जा रहे उनके आर्थिक शोषण को मुख्य मुद्दा बनाया ।

## द्वितीय शिखर सम्मेलन

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन 'दक्षेस' का दूसरा शिखर सम्मेलन 16 और 17 नवम्बर, 1986 को भारत देश के बंगलौर नामक स्थान पर सम्पन्न हुआ। प्रथम शिखर सम्मेलन ढ़ाका में 1985 में हुआ था, जहाँ इस सम्मेलन की औपचारिक स्थापना की गई थी।

शिखर सम्मेलन से पूर्व विदेश मंत्रियों की बैठक बंगलौर में हुई। इसमें सम्मेलन द्वारा जारी किये जाने वाले घोषणा- पत्र को तैयार किया गया। इसकी औपचारिक रूप से घोषणा सम्मेलन की समाप्ति बैठक में की गयी।

दक्षेस शिखर सम्मेलन ने दक्षिण एशिया सहयोग का विस्तार करने के निर्णय के साथ-साथ आपसी सहयोग को सबल आधार देने का संकल्प किया है। नेताओं द्वारा जारी एक संयुक्त विज्ञप्ति में नये क्षेत्रों में सहयोग के लिये विशेषज्ञ स्तर पर विचार होगा और यह प्रक्रिया मार्च, 1987 तक पूरी कर ली जायेगी। संघ के सचिवालय का उद्घाटन सदस्य देशों के विदेश मंत्रियों की उपस्थिति में 16 जनवरी, 1987 को काठमांडू में किया जायेगा।[1] इसके महासचिव बांग्लादेश के श्री अब्दुल हसन होंगे। इस सम्मेलन में संस्थागत रूप से समयबद्ध कार्यक्रम लागू करने की घोषणा की गयी। सम्मेलन में यह भी निर्णय लिया गया कि तीसरा शिखर सम्मेलन 1987 मे काठमांडू में और चौथा शिखर सम्मेलन कोलम्बों में आयोजित किया जायेगा।[2]

दक्षेस समिति की अध्यक्षता करते हुए भारत के प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने कहा इस क्षेत्र पर औपनिवेशिक शासन और दबाव के जख्म अभी भी बाकी हैं।

---

(1) दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 17 नवम्बर 1986

(2) दैनिक जागरण " दक्षेस को संस्थागत आधार प्रदान करने का संकल्प" 18 नवम्बर 1986.

उनसे मुक्त होकर स्वावलम्बी होने के लिए क्षेत्रीय सहयोग बेहद ज़रूरी है । उन्होंने कहा कि हम दक्षेस को एक गैर राजनीतिक मंच बनाना चाहते हैं, जहाँ द्विपक्षीय मुद्दों का बोझ न डाला जाये । दक्षेस हमारे इस विश्वास की अभिव्यक्ति है कि राष्ट्रीय प्रयासों को हम क्षेत्रीय सहयोग के द्वारा हासिल करें । क्षेत्रीय सहयोग राजनेताओं की भीड़ एकत्र करने से नहीं बढ़ेगा वरन् कृषि , टेक्नालॉजी, चिकित्सा आदि क्षेत्रों के पेशेवरों के मध्य संवाद बढ़ाने से बढ़ेगा । श्री गाँधी ने यह भी कहा कि दक्षिण एशिया प्राकृतिक और मानव संसाधनों की अपार प्रचुरता के बावजूद भूख और ग़रीबी के दौर से गुज़र रहा है ।[1]

आतंकवाद की आलोचना करते हुए उन्होंने कहा कि हमें किसी भी तरह आंतकवादियो को मदद या प्रश्रय नहीं देना चाहिए । अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के जिम्मेदार सदस्यों के रूप में हमें इस बात की आस्था करनी चाहिए कि हमारी भूमिका को कभी भी इस क्षेत्र में आंतकवादी कार्यवाही के लिए उपयोग न किया जा सके ।[2]

उन्होंने आगे कहा कि हम भूगोल से जुड़े हैं और इतिहास हमें पक्के सूत्र में बाँधता है । हममें से प्रत्येक ने एक-दूसरे का कुछ न कुछ अपनाया है । हमारे दृष्टिकोण और मूल्यों में समानताएं हैं । आज़ादी पाने के बावज़ूद हमने अलगाव बनाये रखा है और संदेह की भावना से ग्रसित रहे हैं । हमें अतीत के इस आघात से उबरना है । उन्होंने कौटिल्य का उल्लेख करते हुए कहा कि पड़ोसी देश शक्ति का बड़ा स्रोत होते हैं । दक्षेस का उद्देश्य हम समस्त देशों के बीच इसी प्रकार के सम्बन्धों का विकास करना है और आस-पास के क्षेत्र में शांति, प्रगति और स्थिरता का लाभ उठाना है । द्विपक्षीय सम्बन्धो में कभी-कभी कठिन क्षण आते हैं । दक्षेस हमें याद दिलाता है कि ऐसे क्षणों में हमें ऐसे प्रयास करने चाहिए जो हमें एक जुट करें ताकि हम बँटे नहीं ।[3]

---

(1) नवभारत टाइम्स " दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग "17 नवम्बर, 1986

(2) -वही-

(3) -वही -

श्री गाँधी ने केवल नेताओं को ही नहीं बल्कि सभी पक्षों पर विशेष सहयोग के बीच सम्पर्क के विकास पर बल दिया और कहा कि हमारे इंजीनियरों, डाक्टरों, किसानों, कलाकारों और बुद्धिजीवियों के बीच एक - दूसरे के बारे में अधिक जानकारी होनी चाहिए । अब सहयोग की भावना का विकास हो रहा है । परस्पर सहायता और सामूहिक आत्मनिर्भरता का ढ़ाँचा खड़ा करने के लिए दक्षेस में मजबूत आधारों का विकास किया जा रहा है । हमें क्षेत्रीय क्षमताओं और संसाधनों के बारे में किये गये सर्वेक्षण से हमारे सहयोग को बल मिलेगा । ग्रामीण विकास पर विशेष बल देते हुए कहा कि डाक, संचार, परिवहन-सम्पर्क को भी क्षेत्रीय सहयोग का रूप देना चाहिए ।[1]

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री मोहम्मद जुनेजो ने दूसरे शिखर सम्मेलन के उद्घाटन अधिवेशन में भाषण देते हुए कहा कि आंतकवाद का मुकाबला करने के लिए सामूहिक तौर पर काम करना चाहिये । पाकिस्तान आंतकवाद खतरे का मुकाबला करने में हर सहयोग देने को तैयार है । इसके लिए हम हर स्तर पर सहयोग करेंगे। सुझाव देते हुए जुनेजो ने यह भी कहा कि महत्वपूर्ण सैनिक गतिविधियों की पूर्ण जानकारी एक-दूसरे को देनी चाहिए । उन्होंने अपील की कि हमारे राष्ट्रों के आपसी विश्वास के निर्माण के लिए यात्रा करनी चाहिए ।

बांग्लादेश के राष्ट्रपति एच0एम0 इरशाद ने कहा कि हम पहले ढ़ाका शिखर सम्मेलन से आगे बढ़े है और नेपाल में दक्षेस सचिवालय स्थापित करने का फैसला किया है किन्तु अब हमें सहयोग की दिशायें तेजी से तय करनी होगी । उन्होंने आशा व्यक्त की कि आर्थिक सहयोग की संभावनाओं पर बैठक से सहयोग और बढ़ेगा ।[2]

---

(1) नव भारत टाइम्स " आपसी सहयोग के विस्तार का संकल्प " 18 नवम्बर 1986

(2) दैनिक जागरण कानपुर " दक्षेस को संस्थागत आधार प्रदान करने का संकल्प " 18 नवम्बर 1986

नेपाल के राजा वीरेंद्र विक्रय शाह ने कहा कि दक्षिण एशिया में आज से एक नया युग प्रारम्भ हुआ है जो आजादी में बढ़ोत्तरी करेगा और मन्द आर्थिक विकास जैसी समस्याओं का एक जुटता और सह-अस्तित्व की भावना के साथ समाधान करेगा । नेपाल नरेश ने कहा कि हम मिलकर अपने इलाके में अस्थिरता दूर करने का यत्न करें और शांति तथा सहयोग के साथ मिलकर आगे बढ़ें । हम मिलकर अपने इलाके को उन्नत और प्रभावशील बना सकते हैं ।

भूटान नरेश ने बंगलौर घोषणा पत्र का पूर्ण समर्थन करते हुए कहा कि दो वर्षों की मेहनत के नतीजे अच्छे निकल रहे हैं । आशा है कि आंतकवाद और नशीले पदार्थों की तस्करी की समस्या भी दक्षेस प्रभावी ढंग से निपटायेगा । उन्होंने कहा कि दक्षेस देशों को विश्वव्यापी निःशस्त्रीकरण के लिए सामूहिक रवैया अपनाना चाहिए तथा पूर्ण निः-शस्त्रीकाण के लिए महाशक्तियों से अपनी बातचीत फिर से आगे बढ़ाने का आग्रह करना चाहिए ।[1]

श्रीलंका के राष्ट्रपति ने लिखित के बजाये आशु भाषण दिया । उन्होंने आपसी सहयोग के जरिये दक्षिण एशिया को खुशहाल बनाने का आह्वान किया । श्री जयवर्धने ने अपने भाषण में कहा कि हिंसा से नफरत बढ़ेगी और घृणा से हिंसा दूर नहीं हो सकती है । प्रेम से ही इसे दूर किया जा सकता है। उन्होंने आशा व्यक्त की कि दक्षेस देशों में विश्वास बढ़ेगा और द्विपक्षीय मामलों पर भी आपस में विचार कर समस्या का हल ढूंढ सकेंगे ।

मालदीव के राष्ट्रपति ने कहा कि दक्षिण एशिया के 3-4 करोड़ बच्चों के कल्याण के लिए हमें तेज काम करना चाहिए ।

दक्षिण एशियाई राष्ट्रों ने महाशक्तियों से व्यापक परमाणु प्रतिबंध-संधि के जरिये परमाणु शस्त्र दौड़ समाप्त करने तथा टकराव, हस्तक्षेप व प्रभुत्व की नीति

---

{1} इण्डियन एक्सप्रेस, 18 नवम्बर 1986

त्यागने की अपील की । यह अपील घोषणा के उस मसौदे में की गयी है, जिसे इस संगठन के सदस्य राष्ट्रों के मंत्रियों ने तैयार किया है ।[1]

दक्षेस के नेताओं ने रिकजाविक शिखर वार्ता में उत्पन्न गतिरोध पर निराशा व्यक्त की तथा दोनों बड़ी शक्तियों से पुनः बार्ता प्रारम्भ करने की अपील की ।

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग शिखर सम्मेलन में आंतकवाद के बढ़ते ख़तरों पर चिंता व्यक्त की गयी और सातों देशों ने आंतकवाद को नेस्तनाबूद करने के लिए सामूहिक कार्यवाही करने का जो संकल्प व्यक्त किया वह बिल्कुल सामाजिक है । अब वक्त आ गया है कि दुनिया के सभी देश आपसी भेदभाव भुलाकर आंतकवाद का मिलकर मुकाबला करें तथा उसे जितनी जल्दी संभव हो जड़ से समाप्त कर दें ।[2]

समस्त सात देशों को ओर से पर्यावरण के विषय में विचार विमर्श महत्वपूर्ण रहा । इस समिति में समस्त देशों के पारस्परिक , आर्थिक एवं पर्यावरण सम्बन्धी विषयों के विकास एवं सहयोग पर विशेष बल दिया गया । निःशास्त्रीकरण पर भी विशेष बल दिया गया । इसके पूर्व की सम्पन्न की गयी बैठक में जिन नौ विशिष्ट क्षेत्रों में नीतियों को अपनाया गया था , उनके कार्यान्वयन के स्वरूप की भी समीक्षा की गयी । सभी एक-दूसरे से लगे हुए पड़ोसी देश है , इसलिए यदि उनमें पारस्परिक सहयोग एवं सद्भाव बढ़ सके तो सभी देशों के लिए वह बांछनीय होगा । सम्मेलन में आशा व्यक्त की गयी कि व्यापार एवं उद्योग के सहयोग पर भी विचार होगा । आर्थिक नीति के सम्बन्ध में दक्षेस के सदस्य देशों ने यह फैसला किया है कि वे बहुपक्षीय वार्ता के दौर में अपनी धार्मिक स्थितियों, राष्ट्रीय प्राथमिकताओं और हितों को मद्दे नज़र रखकर आपस में अधिक से अधिक सहयोग करेंगे ।[3]

---

(1) दैनिक जागरण महाशक्तियाँ परमाणु अस्त्रों की अपील छोड़े" 17 नवम्वर, 1986 पृ0-1

(2) दैनिक जागरण " आतंकवाद के विरूद्ध संकल्प" संपादकीय, 18 नवम्बर, 1986

(3) दैनिक जागरण " सार्क " शिखर सम्मेलन की अपील-महाशक्तियाँ परमाणुअस्त्रों की होड़ छोंडे।" 17 नवम्बर 1986

सात देशों के नेताओं ने दूर-संचार की दरों में कमी करने, वीसा की व्यवस्था में कुछ छूट देने, आवागमन के लिए क्षेत्रीय मुद्रा के विनिमय की व्यवस्था, बाल-कल्याण के लिए विशेष कार्यक्रम की घोषणा की । घोषणा ने महिलाओं के कल्याण पर विशेष बल दिया गया । सम्मेलन में महिलाओं की भागीदारी और नशीले पदार्थो के दुरूपयोग एवं अवैध धंधों को रोकने के लिए तकनीकी समितियाँ बनाने का भी निश्चय किया गया ।

समापन सम्मेलन में बंगलौर घोषणा पत्र को मंजूरी दी गयी जिसमें दक्षिणी एशिया के देशों में सहयोग को राजनीतिक समर्थन प्रदान किया गया । साथ ही सहयोग के विस्तार की भी घोषणा की गयी । शिखर सम्मेलन में तय किया गया कि अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं पर विचार करने के लिए सदस्य देशों के आर्थिक मामलों के मंत्रियों की बैठक अगले वर्ष के आरम्भ में नई दिल्ली में होगी । इसके अतिरिक्त विदेश मंत्रियों की बैठक भारत में मई 1987 में होगी जिसमें क्षेत्रीय सहयोग संस्थानो के गठन और कार्य पर विचार होगा । शिखर सममेलन एक दक्षिण एशियाई प्रसारण कार्यक्रम जिसमें रेडियो और टी0वी0 सम्मिलित होगा, आरम्भ करेगा । पर्यटन को बढ़ावा देने के लिये समिति तौर पर सभी देशों की मुद्रा विनिमय की व्यवस्था की जायेगी । शिखर सम्मेलन मे 11 नये तकनीकी दल गठित करने का फैसला किया गया जो सहयोग के कार्यक्रमों पर विचार करेगे । एक युवा कार्यक्रम भी आरम्भ किया जायेगा और इसके लिए एक स्वयं सेवी कार्यक्रम की स्थापना की जायेगी । वे एक-दूसरे के देश में कृषि और वन विकास के क्षेत्र मे काम करेंगे ।

बंगलौर घोषणा - पत्र में शिखर सम्मेलन के सदस्यों देशों ने राष्ट्रीय अखण्डता , एकता, सार्वभौमिकता का आदर करते हुए एक दूसरे के आंतरिक मामलों में दखल न देने के संकल्प के साथ आपसी विवादों को शांतिपूर्ण तरीकों से हल करने पर सहमति प्रकट की । साथ ही उन्होंने कहा कि उनकी जनता और सरकार मिलकर समान हित की नीतियों के निर्धारण तथा अपनी समान समस्याओं के हल के लिए समान

नीति तय करेंगी । घोषणा में कहा गया कि सदस्य देश अपने देश के लोगों के जीवन को उन्नत तथा सुखी बनाने के उद्देश्य से राहत कार्यो पर बल देंगे । यद्यपि इन देशों की अनेक समस्यायें है तथापि संस्कृति, दर्शन और मूल्यों में समानता भी दृष्टिगोचर होती है । इससे क्षेत्रीय सहयोग को सबल आधार मिलता है ।

घोषणा पत्र में कुछ ठोस रचनात्मक कार्यो का भी उल्लेख है । 1980 तक सभी बच्चों को टीका लगाने का लक्ष्य पूरा करने, सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था, शिशु-पोषण, पीने के स्वच्छ जल का प्रबन्ध तथा पर्याप्त आवास की व्यवस्था दो हजार ईसवी तक पूरी करने का संकल्प किया गया ।

आंतकवाद के खिलाफ दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग शिखर सम्मेलन में जो संकल्प व्यक्त किया गया है कि यह आशा की जानी चाहिए कि इसके सभी सदस्य देश ईमानदारी से उस संकल्प को पूरा करने के लिए भरसक प्रयास करेंगे, लेकिन वहीं यह प्रश्न भी उठता है कि क्या पाकिस्तान जो कि सार्क का सदस्य है, ईमानदारी से अपने संकल्प पर कायम रह पायेगा ? यह शंका उठना इसलिए भी स्वाभाविक है क्योंकि पंजाब में जो अभी आंतकवादी गतिविधियाँ चल रही है तथा जम्मू-कश्मीर में जो पृथकतावादी ताकतें सर उठाने लगी हैं, उसके पीछे पाकिस्तान का हाथ है।[1]

अब जब पाकिस्तान एक ओर से आंतकवाद को खुलेआम प्रोत्साहन दे रहा है, ऐसी स्थिति में कैसे विश्वास किया जाये कि पाकिस्तान अपनी हरकतों को छोड़कर शीघ्र ही आतंकवाद के खिलाफ कोई मुहिम छेड़ देगा अथवा दक्षिण एशियाई देशों द्वारा आंतकवाद के खिलाफ छेड़े जा रहे आन्दोलन में अपना सक्रिय सहयोग देगा। आवश्यकता इस बात की है कि सार्क के अन्य सदस्य देश पाकिस्तान पर इस बात के लिए दबाव डालें कि वह आंतकवाद के खिलाफ होने वाली किसी भी सामूहिक कार्यवाही में ईमानदारी से सहयोग करे ।

---

(1) दैनिक जागरण " आंतकवाद के विरूद्ध संकल्प " संपादकीय 18 नवम्बर 1986

शिखर सम्मेलन में महाशक्तियों से परमाणु शस्त्रों की होड़ छोड़नी की बात कही गयी, वह कोई नई बात नहीं है, इसके पहले गुटनिरपेक्ष आन्दोलन में भी यही अपील की गयी थी लेकिन ऐसी अपीलों का महाशक्तियों पर कोई असर पड़ता दिखाई नहीं दे रहा है । महाशक्तियों में परमाणु शस्त्रों की होड़ निरन्तर बढ़ती जा रही है । ऐसा विदित होता है कि महाशक्तियों को विश्व-जनमत की अब कोई परवाह नहीं रह गयी । ऐसी स्थिति में अब यह आवश्यक हो गया है कि महाशक्तियों पर परमाणु शस्त्रों की होड़ छोड़ने का दबाव निरन्तर डाला जाये और दुनियाँ के अधिक से अधिक देशों द्वारा इस दिशा में प्रयास किए जाएँ ।

अतः स्पष्ट है कि दक्षिण एशियाई देशों का जो सम्मेलन बंगलौर में हुआ, उससे कोई बड़ा नया परिवर्तन एशियाई देशों में होने वाला हो, इसकी संभावना नहीं है । अनेक स्तरों पर इसी प्रकार के आर्थिक और सांस्कृतिक सहयोग की बातें अब होने लगी हैं और हर देश के प्रमुख राजनीतिज्ञ इस प्रकार के मंचों का प्रयोग केवल अपनी राजनीतिक छवि ही उभारने के लिए अधिक करते हैं। आज का राजनीतिज्ञ चाहे वह कितना ही प्रमुख क्यों न हो, न तो वह पूर्व की भाँति जागरूक है और न पूर्व की भाँति संवेदनशील । जबकि लोकतांत्रिक प्रक्रिया में राजनीतिज्ञ का संवेदनशील होना आवश्यक है ।

दक्षेस एक ऐसा जन्तु है जिससे किसी को न तो क्षति होने वाली है और न यह जन्तु इतना समर्थ ही है कि वह किसी को बहुत भारी लाभ पहुँचा सके ।[1] कहने का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि इस तरह के संगठनों का निर्माण न किया जाये बल्कि कहने का तात्पर्य यह है कि दक्षेस या इस प्रकार के सम्मेलन जो निरन्तर होते रहते हैं , यदि उनकी संख्या विभिन्न स्तरों पर बढ़ती जायेगी, जो परस्पर सहयोग का जो दृष्टिकोण है वह भी धीरे-धीरे उतना ही रहस्यमय हो जायेगा जो स्थिति आज समाजवाद के शब्द को लेकर उत्पन्न हो चुकी है । जिस प्रकार समाजवाद शब्द

---

(1) दैनिक जागरण "निरर्थक सम्मेलन " संपादकीय 19 नवम्बर 1986

अत्यन्त रहस्यपूर्ण है, उसी प्रकार दो देशों के बीच परस्पर सहयोग होने की भावना भी अत्यन्त रहस्यपूर्ण होती जा रही है और यह स्थिति अच्छी नहीं है । मुँह में राम , बगल में छुरी वाली कहावत बहुत दिनों तक नहीं चल सकती । उदाहरणस्वरूप - पाकिस्तान और भारत परस्पर क्या सहयोग करेंगे जबकि पाकिस्तान का जन्म ही इसलिए हुआ कि जो कुछ भारतवर्ष में हो, उसे उसका विरोध करना है । वह चाहे भारतीय संस्कृति हो या भारतीय मानसिकता अथवा भारतीय राजनीति । जब किसी राष्ट्र की बुनियाद ही दूसरे राष्ट्र का विरोध करना मात्र ही हो तो ऐसे राष्ट्रों में सहयोग की अपेक्षा कैसे की जा सकती है ? नेपाल और भारत के बीच सहयोग होना आवश्यक है लेकिन दक्षेस का मंच इस सहयोग के लिए ज़रूरी है या परस्पर मैत्रीपूर्ण संधियाँ अथवा विश्वास का वातावरण । बांग्लादेश और श्रीलंका के विषय में भी यही तथ्य दोहराया जा सकता है । निश्चित रूप से दक्षेस उन समस्याओं को तो दूर नहीं कर सकता जो परस्पर देशों के मध्य जन्म ले चुकी हैं। उदाहरणार्थ , भारत और श्रीलंका में तमिल मूल के कारण उत्पन्न हुई समस्या को लिया जा सकता है ।

यह तो उचित प्रतीत होता है कि परस्पर सहयोग दक्षिण एशियाई देशों में होना चाहिए किन्तु यह स्थापित कैसे हो ? यह विचारणीय प्रश्न है ।

वास्तविकता यह है कि जब तक राजनीतिज्ञों में प्रचार पाने की भूख बढ़ती जायेगी वह दक्षेस की तरह मंच बनाते रहेंगे और जहाँ कहीं भी उन्हें अवसर उपलब्ध होगा , वे अपना हित करने का प्रयास करेंगे किन्तु इन प्रयासों से किसी भी देशों के मध्य वास्तविक सहयोग की भावना उत्पन्न नहीं हो सकेगी । वास्तविक सहयोग चाहे वह आर्थिक हो,राजनीतिक हो या सांस्कृतिक हो, तभी संभव होगा जब दो देशों के बीच परस्पर विश्वास की भावना उत्पन्न हो सके और इसके लिए आवश्यक है कि दोनों देश परस्पर बहुत कुछ विचार करें और समझने का प्रयास करें ।

## तृतीय सम्मेलन

दक्षेस का तीसरा शिखर सम्मेलन नेपाल की राजधानी काठमाँडू में 2, 3 एवं 4 नवम्बर 1987 में सम्पन्न हुआ । इससे पूर्व द्वितीय शिखर सम्मेलन भारत के बंगलौर नामक स्थान पर सम्पन्न हुआ था । सम्मेलन में दक्षिण एशिया के समस्त देश सम्मिलित थे । सम्मेलन के प्रारम्भ में नेपाल नरेश श्री वीरेन्द्र विक्रम शाह देव ने अध्यक्ष पद गृहण किया और उन्हींके संचालन में सम्मेलन की शेष कार्यवाही सम्पन्न हुई ।

इस क्षेत्र की विशालता और विविधता के कारण काठमांडू शिखर सम्मेलन में यूँ तो अनेक मुद्दे थे किन्तु समय की सीमा के कारण वर्तमान प्राथमिक समस्या पर व्यापक रूप से विचार किया गया । यह समस्या थी-आतंकवाद ।

पिछले कई वर्षों से दक्षिण एशिया के कुछ देशों में विशेषतः भारत और श्रीलंका में आंतकवादी गतिविधियाँ इतनी बढ़ गयीं कि उनकी राष्ट्रीय शाँति एवं सुरक्षा के लिए गम्भीर खतरा बन गयी हैं । भारत एवं श्रीलंका में इस समस्या के क्षेत्रीय आयाम अलग -अलग हैं । आंतकवादी संकट से निबटने हेतु जहाँ श्रीलंका को भारत से पूर्ण सहायता प्राप्त हो रही है वहीं भारत का यह दुःखद अनुभव और विश्वास है कि उसका पड़ोसी देश पाकिस्तान भारत के आंतकवादियों को आश्रय , प्रशिक्षण और प्रोत्साहन दे रहा है ।

भारत ने पिछले वर्ष बंगलौर में सम्पन्न हुए सम्मेलन में इस प्रश्न को आग्रहपूर्ण ढंग से उठाया था और आंतकवाद से निबटने के लिए व्यापक क्षेत्रीय सहमति और समझौते की माँग की थी । उस समय पाकिस्तान के प्रधानमंत्री मुहम्मद खाँ जुनेजो ने भारत को आश्वासन भी दिया था किन्तु भारत की मान्यता है कि पाकिस्तान का वास्तविक व्यवहार इससे बिल्कुल उल्टा है ।

अतः इस मामले पर काठमांडू में एक - आंतकवाद निरोधक समझौते" को स्वीकार करना और सातों देशों के विदेश मंत्रियों का उस पर हस्ताक्षर करना शिखर सम्मेलन की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है ।[1]

सम्मेलन का अध्यक्ष चुने जाने के उपरान्त नेपाल -नरेश ने दक्षेस देशों के मध्य सहयोग के विभिन्न कार्यक्रमों का स्वागत किया और सदस्य देशों को इस तथ्य के लिए आगाह किया कि तदर्थ और वैविध्यपूर्ण दृष्टिकोण अपनाने से संगठन के लिए कठिनाइयाँ उत्पन्न होंगी । उन्होंने कहा कि इस क्षेत्र की सामाजिक , आर्थिक , भौगोलिक स्थितियों का यह तकाजा है कि दक्षेस देशों को साझा और सुस्पष्ट दृष्टिकोण अपनाना चाहिए । उनका कहना था कि इस क्षेत्र की सबसे ज्वलंत समस्या गरीबी और जनसंख्या में वृद्धि की है । हाल की भीषण बाढ़ एवं सूखे की समस्या ने उनके कष्ट और बढ़ाये हैं । नेपाल नरेश ने दक्षेस की मूल भावना सहयोग तथा परस्पर सौहार्द को बढ़ाने पर बल दिया । उन्होंने कहा कि नेपाल दूसरे देशों पर आपसी चौधराहट लादने के खिलाफ है । हम चाहते है कि कोई भी देश अन्य देशों पर अपने हितों के लिए दबाव नहीं डाले । नेपाल नरेश ने आतंकवाद एवं मादक द्रव्यों के अवैध धंधे जैसी समस्याओं पर काबू पाने के लिए सार्क देशों के मध्य सहयोग की बढ़ती हुई भावना पर प्रसन्नता व्यक्त की ।[2]

भारत के प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन " दक्षेस " के तीसरे शिखर सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए समस्त सदस्य देशों के बीच और गहरे सम्बन्धों का आहवान किया और कहा कि दक्षेस की अर्थव्यवस्था क्षेत्रीय सहयोग से ही पोषित होगी । उन्होंने कहा कि " हम लोगों ने क्षेत्रीय सम्बन्धों की एक ऐसी ग्रिन्ड बनाई है जो उन अवरोधों को तोड़ती जा रही है जो हम लोगों को अलग-अलग किए हुए थी ।" [3]

---

(1) प्रगति मंजूषा, "सार्क का तीसरा शिखर सम्मेलन, " दिसम्बर 1987

(2) दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 3 नवम्बर 1987

(3) दैनिक जागरण "सार्क सम्मेलन में राजीव गांधी का सम्वोधन" पृष्ठ-1, 3 नवम्बर 1987

श्री गांधी ने कहा कि दक्षेस संगठन जो ढ़ाका में बना , बंगलौर सम्मेलन के बाद और सुदृढ़ हुआ तथा यह जनता की आकाँक्षाओं को पूरा करने में काफी हद तक सफल रहा है । भारत के प्रधानमंत्री श्री गांधी ने विश्वास व्यक्त किया है कि इस क्षेत्र में आंतकवाद की समस्या से मुक्ति दिलाने के लिए शीघ्र ही और भी अधिक कारगर उपाय किये जायेंगे । सार्क देशों ने इसी दिशा में एक कदम के रूप में नशीले पदार्थों की तस्करी रोकने के लिए एक ताना-बाना तैयार किया है । उन्होंने कहा कि दक्षेस दक्षिण एशियाई देशों के बीच शीघ्र ही दृश्य -श्रृव्य आदान-प्रदान कार्यक्रम शुरू करेगा । इसके अतिरिक्त शिक्षा एवं पर्यटन के क्षेत्र में भी सहयोग बढ़ाया जायेगा । उन्होंने कहा कि शीघ्र ही दक्षेस देशों को अपना दस्तावेज केन्द्र भी हो जायेगा । श्रीगांधी ने कहा कि सार्क के माध्यम से दक्षिण एशिया देशों की जो प्रगति की रफ्तार बनी हुई है, उसे घटने नहीं देगा ।[1]

बांग्लादेश के राष्ट्रपति हुसैन मोहम्मद इरशाद ने कहा कि भारत के नेतृत्व में दक्षेस सहयोग सिद्धान्त से ठोस गतिविधि की ओर अग्रसर हुआ है । बंगलादेश में प्राकृतिक विपदाओं के समय " सार्क" देशों द्वारा की गयी सहायता क्षेत्रीय सहयोग का ऐतिहासिक और महत्वपूर्ण उदाहरण है ।

भूटान नरेश जिग्में सिग्में वाँगचुक ने भारत-श्रीलंका समझौते के लिए भारत के प्रधानमंत्री राजीव गांधी तथा श्रीलंका के राष्ट्रपति जूनियस जयवर्धने की सराहना की । उन्होंने कहा कि यह शांति तथा दक्षेस मूल्यों के प्रति उनकी प्रतिबद्धता का द्योतक है। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि इससे श्रीलंका में चल रहा जातीय संघर्ष समाप्त होगा और वहाँ शांति की स्थापना हो सकेगी ।

---

(1) जनसत्ता नई दिल्ली,3 नवम्बर 1987

शिखर सम्मेलन में श्रीलंका के राष्ट्रपति जयवर्धने ने भारत - श्रीलंका समझौते का स्वागत किया । उनके भाषण ने आपसी राजनैतिक मुद्दों की चर्चा का मार्ग खोला और छोटे देश दो शक्तियों भारत और पाकिस्तान के बीच संतुलन बनाने के प्रयास में लगे रहें । [1] इसके बाद वह हिमालय में पानी के संयुक्त विकास की मांग पर बांग्लादेश तथा नेपाल को लेकर जोर देने लगे । नेपाल के महाराजा ने भी देशों के टुकड़े करवाने और दक्षेस देशों में विदेशी सेना की मौजूदगी जैसे गम्भीर मामले को उठाया ।

अंत में अपने समापन भाषण में महाराजा वीरेंद्र ने सम्मेलन की सफलता पर संतोष व्यक्त करते हुए कहा कि "इसके फलस्वरूप हमारे क्षेत्र के (सात) देशों के बीच समन्वय और मैत्री भावना अधिक पुष्ट हुई है ।"[2]

इस सम्मेलन की सबसे बड़ी उपलब्धि आंतकवाद विरोधी समझौते पर हस्ताक्षर और क्षेत्रीय खाद्य भण्डार बनाने पर सहमति है । जहाँ तक पर्यावरण सम्बन्धी प्रयास तथा क्षेत्रीय देशों के बीच विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग के संकल्प की बात हैं, यह पारम्परिकता मात्र है जो कि प्रत्येक सम्मेलन में प्रायः होती है ।

प्रारम्भ में आंतकवाद की परिभाषा और परिधि को लेकर कुछ मतभेद थे लेकिन बंगलौर से गठित विशेषज्ञ समिति की रिपोर्ट की सहायता एवं परस्पर वार्ता से इस पारिभाषिक एवं तकनीकी गुत्थी को सुलझा लिया गया । आंतकवाद विरोधी समझौते पर भारत पहले सहमत नहीं था । उसका कहना था कि इस सम्बंध में प्रत्येक देश को अपने यहाँ उचित कानून बनाना चाहिए किन्तु बाद में भारत सहमत हो गया ।[3] यह समझौता सभी देशों की राष्ट्रीय संसद 6 महिने के अन्तर्गत स्वीकृत कर लेगी । समझौते में संयुक्त राष्ट्र संघ के आंतकवाद विरोधी समझौते का पूर्णरूप से समावेश कर दिया

---

(1) इण्डिया टूडे, 30 नवम्बर 1987 पृष्ठ-56

(2) टाइम्स ऑफ इण्डिया, 5 नवम्बर 1987

(3) नव भारत टाइम्स, 4 नवम्बर 1987

गया है । राष्ट्रसंघ के आंतकवाद विरोधी प्रस्ताव 2625 के अन्तर्गत व्यवस्था है कि प्रत्येक राष्ट्र किसी अन्य राष्ट्र में नागरिक संघर्ष को संगठित करने, प्रेरित करने या उसमें मदद अथवा साझेदारी से अपने को अलग रखेगा अर्थात् किसी राष्ट्र में आंतकवादी गतिविधियों में सम्मिलित नहीं होगा ।

शिखर सम्मेलन में ऐसे दो-तीन मामलें और भी थे, जिन्हें लेकर सदस्य देशों में आरम्भ में मतभेद की बात सुनी जा रही थी । ये प्रश्न थे -

1- पाकिस्तानी प्रधानमंत्री जुनेजो का " दक्षेस् " एवं दक्षिण पूर्वी एशियाई संघ (एशियान) के मध्य अधिकाधिक तालमेल और गठबन्धन की माँग करने वाला प्रस्ताव ।

2- दक्षेस की सदस्यता के लिए अफगानिस्तान का कथित आवेदन ।

3- कुछ सदस्य देशों का यह प्रस्ताव कि विकास कार्यों को तेजी प्रदान करने और पूँजी निवेश की कमी को पूरा करने के लिए दक्षेस विदेशों तथा विदेशी संस्थाओं से सहायता ले । इन तीनों प्रश्नों पर भारत के प्रधानमंत्री ने गम्भीरता एवं परिपक्वता से विचार करने की माँग की है और कहा कि सम्मेलन को इन पर न तो शीघ्रता में कोई निर्णय लेना चाहिए और न पूर्वाग्रहों के आधार पर इन्हें यो ही टालना चाहिए।

एशियान के साथ गठबन्धन के प्रश्न पर भारत का दृष्टिकोण यह रहा कि वह (एशियान) एक दृष्टि से अपूर्ण क्षेत्रीय संगठन है क्योंकि उसमें दक्षिण-पूर्व एशिया का एक बड़ा भाग और प्रगतिशील देश वियतनाम सम्मिलित नहीं है । अतः जब स्वयं एशियान की अपनी गठन सम्बन्धी क्षेत्रीय समस्यायें ही पूर्ण रूप से सुलझी नहीं हैं, उसके और दक्षेस के मध्य सामान्य सहयोग के अतिरिक्त कोई विशेष गठबन्धन करना नई समस्याओं को निमंत्रण देना होगा । दूसरी ओर, पाकिस्तानी विरोध के बावजूद अफगानिस्तान के सदस्यता आवेदन पर भारत यह तर्क था कि अफगानिस्तान इस क्षेत्र से जुड़ा एक संयुक्त देश है जो संयुक्त राष्ट्रसंघ और गुटनिरपेक्ष सम्मेलन का प्रारम्भिक

सदस्य है, इसलिए उसकी माँग को महज निराधार शंकाओं और पूर्वाग्रहों के आधार पर टाल देना गलत होगा ।

संगठन के सहयोग भावना के अनुरूप व्यापक तर्क-वितर्क के बाद इन दोनों प्रश्नों को संगठन की स्थाई समिति को गम्भीरता से विचार करने के लिये सौंप दिया गया । इस प्रकार की सर्वसम्मति निर्णय करने की परम्परा को बनाये रखते हुये इन महत्वपूर्ण प्रश्नों पर गम्भीरता से विचार विमर्श करने की व्यवस्था की गई । शिखर सम्मेलन का यह फैसला इस तथ्य का परिचायक है कि संगठन के सभी सदस्य सभी महत्वपूर्ण मसलों पर खुले मस्तिष्क और सहयोग भावना से व्यवहार करने को दृढ़ संकल्प है । विदेशी आर्थिक और वित्तीय सहायता के प्रश्न पर अन्ततः यह सहमति हो गयी कि फिलहाल क्षेत्र के आन्तरिक साधन ही पर्याप्त है ; तथा अभी इन्हीं का अधिकाधिक सहयोग पूर्ण प्रयोग किया जाये ।

शिखर सम्मेलन में वर्तमान क्षेत्रीय अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं के सन्दर्भ में दो और महत्वपूर्ण निर्णय किये गये । पहला निर्णय- खाद्यान का एक संयुक्त भण्डार की स्थापना का था, जो प्राकृतिक संकट की घड़ी में सभी क्षेत्रीय देशों को खाद्य सहायता और राहत पहुँचाने में समर्थ होगा, तथा जिसके रहते इस क्षेत्र के देशों को शोषणकारी साधन सम्पन्न बड़े देशों का मुंह नहीं ताकना पड़ेगा । सम्मेलन में संघ के सात सदस्य देश भारत, बांग्लादेश , पाकिस्तान, नेपाल, भूटान, मालदीव एवं श्रीलंका दो-दो लाख टन खाद्यान का संयुक्त भण्डार रखने सम्बन्धी समझौते पर हस्ताक्षर करेगें । भारत का इसमें सर्वाधिक योगदान होगा ।[1]

दूसरा निर्णय- पिछले पन्द्रह वर्षों में विषेशतः 1972 के स्टॉकहोम पेर्यावरण सम्मेलन के बाद से दुनियाँ भर में पर्यावरण की समस्याओं के प्रति नई जागृति हुयी है, विकासरत तीसरी दुनिया के देश ; जिनमें इस क्षेत्र के सभी देश आते है-

---

(1) दैनिक जागरण " दक्षेस शिखर सम्मेलन आज से संयुकत खाद्य भंडार बनाने का निर्णय लिया जायेगा" 2 नवम्बर -1987

भू-क्षरण वन विनाश, जलमार्गों का व्यापक प्रदूषण इत्यादि पर्यावरणीय समस्याओं को लेकर अत्यधिक चिन्तित है । ये प्रायः ऐसी वे समस्यायें हैं जिनसे अकेले ही निपटने में बड़े धनाड्य देश भी असमर्थ हैं अतः इनके निराकरण के लिये क्षेत्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की अत्यन्त आवश्यकता है । काठमाण्डू सम्मेलन में मुख्यतः श्री राजीव गांधी की पहल पर इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया गया और इससे निपटने के लिये क्षेत्रीय सहयोग की सम्भावनाओं को खोजने और उनके क्रियान्वन के मार्ग सुझाने के लिये एक विशिष्ट अध्ययन दल का गठन किया गया। यह निर्णय आधुनिकीकरण से उत्पन्न गम्भीर समसामयिक समस्याओं के प्रति सम्मेलन के नेताओं की । सहजता और दीर्घगामी दृष्टिकोण को स्पष्ट करता है । संघ के सदस्य देशों की दक्षिण एशिया में बच्चों के स्वास्थ्य और मानसिक विकास के प्रति जागरूकता उनके द्वारा बच्चों के कल्याण के लिये एक योजना शुरू किये जाने और टीकाकरण का एक व्यापक कार्यक्रम 1990 तक पूरा करने के इरादे से प्रतिबिम्बत होगी ।[1]

दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संघ के दृश्य एवं श्रव्य आदान-प्रदान कार्यक्रम के तहत रेडियो एवं टेलीविजन से पहला प्रसारण कल दक्षेस के सभी सात सदसय देशों में होगा । इस अवसर पर टेलीविजन बांग्लादेश का उपहार कार्यक्रम तथा रेडियो बांग्लादेश का संगीत कार्यक्रम प्रस्तुत करेगा । दृश्य-श्रव्य आदान-प्रदान करने कार्यक्रम के तहत प्रत्येक महीने की पहली तारीख को टेलीविजन से तथा 15 ता0 की सुबह रेडियो से कार्यक्रम प्रसारित किये जायेगे ।[2]

सहयोग भावना से प्रेरित और परिपक्व सूझबूझ से प्रभावित ये समस्त ठोस निर्णय जहाँ एक ओर तीसरे दक्षेस सम्मेलन की सार्थकता और सफलता के ठोस प्रमाण थे वहीं दूसरी ओर देखा जाये तो तीन दिनों के विचार-विमर्श के बाद इन नेताओं के पास उपलब्धि के तौर पर दिखाने को अधिक कुछ नहीं था । वैसे रिकार्ड के लिये तो इन नेताओं ने इस क्षेत्र में आंतक वाद को दबाने के लिये क्षेत्रीय सहयोग उपसन्धि की क्षेत्रीय

---

(1) दैनिक जागरण " दक्षेस शिखर सम्मेलन आज से प्रसारण" 2 नवम्बर 1987 पृष्ठ-1

(2) -वही-

आपात खाद्य भण्डार बनाने पर ये देश सहमत हुये और प्राकृतिक विपदाओं के कारण एवं परिणामों व पर्यावरण की सुरक्षा के लिये एक अध्ययन दल बनाने का निर्णय लिया किन्तु इन सबके पीछे चलीं गयीं राजनैतिक चालों, छोटी-छोटी बातों पर अड़ जाने की प्रवृत्तियों को देखें तो यहीं दृष्टिगोचर होगा, कि नेताओं की मुख्य उपलब्धि यही रही कि उन लोगों ने एक ऐसे मंच को राजनीति के रंग में रंग दिया जिसे इस क्षेत्र की सामूहिक, आर्थिक स्वायत्तता बढ़ाने के लिये बनाया गया था ।

पुराने प्रति द्वन्दियों, भारत एवं पाकिस्तान के मध्य पुरानी प्रति द्वन्दिता ही चलती रही । सम्मेलन से यह भी स्पष्ट हो गया कि इस क्षेत्र में दादागिरी कायम है । भारत के खिलाफ छोटे देशों की एक जुट होने की प्रवृत्ति स्पष्ट दिख जाती है इस लिये भारत सार्क को सदैव सशंय की दृष्टि से देखता है।[1]

दिल्ली के एक अखबार ने टिप्पणी की कि यह एक बड़ा शिखर सम्मेलन नहीं था बल्कि वहाँ तो एक साथ इक्कीस छोटे-छोटे शिखर सम्मेलन चल रहे थे । भाग लेने वाले सातों दक्षिण एशियाई देशों के नेता एक दूसरे के साथ निजीरूप से मिल जुल रहे थे । राजीव गांधी कभी श्रीलंका के राष्ट्रपति जयवर्धने से तो कभी पाकिस्तानी प्रधानमन्त्री जुनेजो से मिल रहे थे। काठमाण्डू की तटस्थ भूमि पर दोनों देशों के नेताओं के मध्य उन मुद्दों पर बातचीत प्रारम्भ हुयी जिन पर सदैव किसी न किसी कारण अवरोध खड़ा हो जाता था । महत्वपूर्ण बात यह हुयीं कि दोनों देशों के प्रधान मन्त्रियों नें भारत और पाकिस्तान के सर्वेक्षण जनरलों को निर्देश दिया कि वे मिल बैठकर कच्छ क्षेत्र में समुद्री सीमा तय कर लें । यह इलाका सदैव विवादग्रस्त रहा है ।

अन्ततः ऐसे सम्मेलनों में आमसहमति बनाने की राजनीति का एक बड़ा बोझ निश्चित रूप से प्रमुख भागीदारों के कन्धों पर पड़ता है । भारत को दूसरे देशों

---

(1) इण्डिया टुडे " दक्षेस, चढ़ा रंग राजनीतिका - सहयोग और सामूहिक आर्थिक स्वयत्ता के लक्ष्य भूल गये" 30 नवम्बर, 1987-पृष्ठ-56

के नेताओं के समक्ष झुकना पड़ा और आंतकवाद की क्षेत्रीय सहयोग की उपसन्धि पर हस्ताक्षर करना पड़ा क्यों कि वह अपने लिये दादागीरी जैसे कुशब्द से बचना चाहता था । एक अन्य कारण यह भी था कि मुक्ति चीतों को संरक्षण के मामले में उसने निश्चित रवैया अपना लिया था ।

नेपाल के लिये यह अन्तर्राष्ट्रीय अखबारों में सुर्खियों में आने का अच्छा अवसर था । इस देश के शासक वर्ग के लोग सोचते थे कि बड़े नेताओं के जुटने से नेपाल अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर पहुँच गया ।

किन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि काठमाण्डू शिखर सम्मेलन में अपने औपचारिक निर्णयों द्वारा न केवल क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ाया है और नई दिशायें दी है बल्कि अनौपचारिक सम्पर्को और वार्ता द्वारा तनाव के शिथलीकरण और शान्ति की स्थापना के मार्ग मे भी यथेष्ट योगदान दिया है ।

## चतुर्थ सम्मेलन

दक्षिण एशियाई देशों का चौथा दक्षेस शिखर सम्मेलन पाकिस्तान की राजधानीइस्लामावाद में 31 दिसम्बर ,1988 को सम्पन्न हुआ । इसके पूर्व तृतीय शिखर सम्मेलन नेपाल की राजधानी काठमांडू में हुआ था । सम्मेलन के प्रथम दिन उद्‌घाटन समारोह हुआ, जिसमें दक्षेस के अध्यक्ष नेपाल नरेश वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह ने मेजबान देश की प्रधानमंत्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो को अगले वर्ष के लिए अध्यक्ष पद संभालने का प्रस्ताव रखा, जिसे सर्व-सम्मति से स्वीकार किया गया । तत्पश्चात् प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो ने सम्मेलन की अध्यक्षता की ।

उद्‌घाटन समारोह में समस्त देशों के राज्याध्यक्षों एवं शासनाध्यक्षों ने दक्षेस को नई दिशा देने और इसे अधिक गतिशील बनाने पर बल दिया ।

इस्लामाबाद घोषणा में क्षेत्र के एक अरब से अधिक लोगों के जीवन स्तर में आमूल सुधार लाने के उद्‌देश्य से " सार्क 2000 " नामक क्षेत्रीय परिवेक्ष्य कार्य योजना का संकल्प लेने के अतिरिक्त 1989 को " मादक पदार्थ निरोधक वर्ष"[1] के रूप में मनाने का निश्चय किया गया । दक्षेस ने एक विशेष दस्तावेज के द्वारा सातों देशों के सांसदों तथा सर्वोच्च न्यायाधीशों को एक - दूसरे के देश में बगैर किसी प्रतिबंध के स्वछंद रूप से आने जाने का भी महत्वपूर्ण कदम उठाया । पाकिस्तानी प्रधानमंत्री बेनजीर भुट्टो के मुताबिक पत्रकारों सहित कुछ अन्य श्रेणियों के लोग भी इस रियासत के दायरे में लिये जा सकते हैं ।

दक्षेस घोषणा में राष्ट्रीय विकास योजनाओं में बाल-कल्याण योजनाओं को प्रमुखता देने सम्बन्धी संकल्प को दोहराते हुए इन नेताओं ने फैसला किया कि वर्ष 1990 को " सार्क बालिका वर्ष"[2] के रूप में मनाया जायेगा । व्यापार- उत्पादन और सेवा क्षेत्रों में सहयोग की संभावना सम्बन्धी दक्षेस अध्ययन में हुई प्रगति पर संतोष

---

(1) जनसत्ता नई दिल्ली, 1 जनवरी 1989

(2) -वही-

व्यक्त करते हुए नेताओं ने महासचिवो को निर्देश दिया कि वह सम्पर्कता दल की अलग से बैठक बुलायें और उन क्षेत्रों का पता लगायें जिनमें तत्काल सहयोग किया जा सकता है ।

दक्षेस देशों ने आह्वान किया कि बड़ी सैनिक शक्तियाँ निरस्त्रीकरण के उपायों के द्वारा संसाधनों की बचत करके उन्हें विकास के कार्यो में लगायें । घोषणा में विकसित देशों में संरक्षणवाद को समाप्त करने और विकसित देशों मे जाते धन को रोकने के उपाय करने का भी अनुरोध किया गया । दक्षेस नेताओं ने ग्रुप 77 के उस प्रस्ताव का समर्थन किया जिसमें विकासशील देशों के विकास को बढ़ावा देने के लिए 1990 में संयुक्त राष्ट्र महासभा का एक विशेष अधिवेशन बुलाने की माँग की गयी है।[1]

इस्लामाबाद घोषणा में दक्षेस के मूल उद्देश्यों व संयुक्त राष्ट्र संघ में विश्वास को दोहराया गया है । दक्षेस देशों ने निर्णय लिया कि शिक्षा के क्षेत्र में भी वे एक-दूसरे के साथ सहयोग करेंगे । इसके लिए तकनीकी समिति बनाने का फैंसला किया गया । बांग्लादेश इस समिति का अध्यक्ष होगा । सार्क देशों ने यह आशा व्यक्त की कि गुट-निरपेक्ष आन्दोलन के काम-काज के तरीकें में सुधार के लिये जारी बहस से आन्दोलन और मजबूत होगा और समकालीन वास्तविकताओं के प्रति अपनी भूमिका निभा सकेगा ।

इस्लामाबाद घोषणा में भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका और मालदीव ने इस सदी के अन्त तक क्षेत्र की जनता की बुनियादी आवश्यकतायें पूर्ण करने के लिए आर्थिक कार्य योजना बनाने, एकजुट कोशिशों से आंतकवाद व नशे पर प्रतिबंध लगाने व सभी हथियारों की बढ़ोत्तरी रोकने की भरपूर कोशिशें करने का संकल्प किया ।

---

(1) नवभारत टाइम्स, "दक्षेस के कुहासे में बढ़ता काफिला " गिरीश मिश्र
10 जनवरी 1989 पृष्ठ-5

दक्षेस नेताओं ने अमरीका व सोवियत संघ के मध्य सभी प्रकार के परमाणु हथियारों को समाप्त करने के लिए हुई संधि का स्वागत किया और आशा व्यक्त की कि दोनों महाशक्तियाँ परस्पर वार्ता द्वारा परमाणु निरस्त्रीकरण अपना लेंगी। उन्होंने इस बात पर भी संतोष व्यक्त किया कि समस्त दक्षेस देश अपने - अपने देशों को परमाणु हथियार मुक्त रखना चाहते है ।

दक्षेस को " बहसमंच" बनाने के बजाये कार्यवाही मंच बनाने की इच्छा व्यक्त की गयी । प्रथम बार दक्षेस देशों के लिए एक आर्थिक योजना की पेशकश की गयी जिसके तहत भोजन, वस्त्र, आवास, शिक्षा, प्राथमिक-स्वास्थ्य और जन-संख्या नियंत्रण जैसी बुनियादी आवश्यकतायें सम्मिलित की गयीं ।

बांग्लादेश, भारत, नेपाल और पाकिस्तान में बाढ़, तूफान और भूकंप से हुए जानमाल के नुकसान पर गहरा दुःख व्यक्त किया गया । ऐसे कुदरती संकटों से बचने के लिए पर्यावरण और प्राकृतिक हादसों के अध्ययन की अपील की गयी । विकसित और विकासशील देशों से अपील की गयी कि वे विकास सम्बन्धी सहायता बढ़ायें , कर्ज की समस्यायें सुलझावें, विकसित देशों के बाजारों में विकासशील देशों की भागीदारी बढ़ाये विकासशील देशों का व्यापार असंतुलन मिटाये, आवश्यक उपभोक्ता वस्तुओं के मूल्य बढ़ाने से रोके और संयुकत राष्ट्र विकास दशक की असरदार अन्तर्राष्ट्रीय रणनीति बनायी जाये । [1]

घोषणापत्र में 3 नवम्बर 1988 को मालदीव पर हुए हमले पर चिंता व्यक्त की गयी और भारतीय कार्यवाही का समर्थन किया गया ।[2]

शिक्षा की तकनीकी समिति की मेजबानी की बांग्लादेश की पेशकाश भी मान ली गयी । एटमी परीक्षण और रासायनिक हथियारों पर रोक लगाने के लिए बड़ी ताकतों में व्यापक समझौते की माँग की गयी । यह संतोषव्यक्त किया गया कि दक्षेस

---

(1) नवभारत टाइम्स " दक्षेस के कुहासे में बढ़ता काफिला " गिरीश मिश्र
10 जनवरी 1989 पृष्ठ-5

(2) -वही- ।

देश स्वयं को एटमी हथियारों से मुक्त रखना चाहते हैं ।

पाकिस्तान में मानव संसाधन विकास केन्द्र बनाने की पेशकश का स्वागत किया गया और दक्षेस के महासचिव को निर्देश दिया गया कि वह इस पेशकश पर विचार के लिए विशेषज्ञों का दल बनायें। दक्षेस नेताओं ने एक बार पुनः अन्तर्राष्ट्रीय आंतकवाद की निंदा की और कहा कि वे आंतकवाद के विरूद्ध मुहिम जारी रखेंगे।[1]

सम्मेलन में निश्चय किया गया कि अगली शिखर बैठक 1989 के अंत में कोलम्बो में आयोजित की जायेगी ।[2] घोषणापत्र स्वीकार किये जाने से पूर्व जो औपचारिक बातचीत हुई उसमें सार्क नेताओं ने पाकिस्तान के इस सुझाव को स्वीकार नहीं किया कि सदस्य देश अपने रक्षा व्यय में कमी करें । परन्तु सामान्य हित के अधिकांश मामलों पर सदस्य देशों में आम सहमति रही ।

कुल मिलाकर इस्लामाबाद का शिखर सम्मेलन सकारात्मक उपलब्धियों के साथ सद्‌भाव और मैत्री के वातावरण में सम्पन्न हुआ । इसके पहले 1987 में हुये काठमाण्डू सम्मेलन जैसी कटुता और विवादों से भी इस बार मुक्ति मिली । काठमाण्डू सम्मेलन के दौरान आंतकवाद और अफगानिस्तान की सदस्यता के मसलें ने खासा तूल पकड़ लिया था । किन्तु इस्लामाबाद सम्मेलन में वैसी स्थिति नहीं उत्पन्न हुयी और दक्षिण एशिया के सुखद भविष्य का रास्ता इसमें सुगम हुआ ।

दुनियाँ के बिल्कुल नये संगठनों में एक दक्षेस के मजबूत होने के लक्षण अन्ततः दिखने लगे । इस संगठन की क्षमता का ही नतीजा था कि उसके दो बेहद झगड़ालू लेकिन महत्वपूर्ण देशों के नेता समझौता वार्ता की मेज पर एक साथ बैठे । विदेश राज्य मन्त्री नटवर सिंह ने कहा कि "दक्षेस का सपना पूरा हो रहा है ।[3]

---

(1) जनसत्ता नई दिल्ली, 1 जनवरी 1989

(2) दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 1 जनवरी 1989

(3) इण्डिया टुडे- 31 जनवरी 1989 पृष्ठ-74

द्विपक्षीय वार्ताओं के लिये मंच मुहैया कराने 1989 को " दक्षेस नशाबन्दी विरोधी" वर्ष और 1990 को " दक्षेस बालिका वर्ष " के रूप मे घोषित करने तथा जटिल मुद्दों को सुलझाने के अलावा संगठन ने आखिरकार वास्तविक सहयोग की दिशा मे बढ़ना प्रारम्भ कर दिया । संगठन भले ही अभी यूरोपीय आर्थिक समुदाय या एशियान की तरह न बन पाया हो लेकिन दक्षेस यात्रा ने दस्तावेज जरिये इस दिशा में कदम बढ़ा दिये है । राजीव गांधी ने कहा " एक बार परम्परा कायम होने पर, जिसमें हम अपनी नौकरशाही को दरवाजे खोलने की राजनैतिक प्रतिबद्धता का संकेत देते हैं, दरवाजे अपने आप खुलने लगते है । पहले दिमाग की खिड़किया खोलने की जरूरत है ।"[1]

दक्षेस के तीन नेताओं ने तीन दिन के विचार विमर्श, द्विपक्षीय वार्ताओं और शाही दावतों के बाद कुछ ठोस ' परिणाम सामने आये लेकिन इनमें से कुछ को ही आमराय से पारित करके इस्लामाबाद घोषणा पत्र में सम्मलित किया गया । अनेक लोगों ने खासतौर पर पश्चिमी समाचार जगत और राजनायकों ने घोषणा पत्र को अत्यधिक कमजोर बताया । घोषणा पत्र सहयोग के अपेक्षाकृत ठोस कार्यक्रम का प्रारम्भ है । लेकिन सम्मेलन इसलिये अधिक प्रभावशाली रहा कि उससे दक्षेस देशों ने दूसरी उपलब्धियाँ हासिल की। उदाहरण के तौर पर शिखर सम्मेलन भारत और पाकिस्तान के प्रधान मंत्रियों को एक मंच पर ले आया । जैसा कि लाहौर के अंग्रेजी दैनिक " द नेशन" के स्तम्भकार सफदर महमूद कहते है " अन्ततः दक्षेस को सफलता इस बात पर निर्भर करेगी कि भारत और पाकिस्तान के बीच किस तरह के रिश्ते बनते हैं।"[2]

किन्तु सम्पूर्ण विश्लेषण करने पर दक्षेस शिखर सम्मेलन के माध्यम से " दक्षिण एशिया के सुखद भविष्य " की परिकल्पना उस आदर्श की तरह है जिसका

---

(1) इण्डिया टुडे "दक्षेस-खुले दिल के झरोखे" एक रिपोर्ट, 31 जनवरी 1989, पृ0-74

(2) -वही-

यथार्थ से बहुत कम वास्ता होता है । वास्तविकता का पता घोषणा पत्र में पारित प्रस्तावों से कम, पर्दे के पीछे क्रूर दॉव पेचों से अधिक चलता है । प्रारम्भ इस्लामाबाद घोषणा पत्र से ही करें । इस घोषणा पत्र में पाकिस्तान का सुझाव सम्मलित नहीं किया गया , जिसमें कहा गया था कि " क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ करने के लिये दक्षेस देश सेना में कटोती करनें और एटमी निरस्त्रीकरण का संकल्प लें " यानि दक्षिण एशिया को परमाणु आयुध मुक्ति क्षेत्र बनाया जाये ।

भारत ने सदैव ही एटमी निरस्त्रीकरण के किसी भी क्षेत्रीय उपाय का विरोध किया है । पाकिस्तान इस विरोध को जानता भी है । 1974 में भारत के परमाणु विस्फोट के बाद से ही पाकिस्तान दक्षिण एशिया में एटमी निरस्त्रीकरण की मांग करता रहा है। इस बार भी उसने यही किया । भारत का कहना है कि यह अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है और एटमी निरस्त्रीकरण विश्व स्तर पर होना चाहिये । फिर दक्षिण एशिया तो भौगोलिक दृष्टि से भी अन्य एशियाई राष्ट्रों से पृथक नहीं है । यह निरस्त्रीकरण कैसे संभव है । और फिर क्षेत्र विशेष के देशों का हाथ बांधने से ही इसका लागू होना संभव नही है ।

स्पष्ट है कि भारत के विरोध को जानते हुये भी पाकिस्तान ने इस मसले को घोषणा पत्र में सम्मिलित कराने की चेष्टा की ।

इसके अतिरिक्त विश्लेषकों ने इस बात पर ध्यान आकर्षित किया कि श्री राजीव गांधी नेपाल नरेश की पूरी तरह से उपेक्षा कर रहे है । नेपाल के साथ बढ़ता अविश्वास किसी छिपा नहीं है । इस्लामाबाद में तो इसकी और भी पुष्टि हो गयी । बांग्लादेश के राष्ट्रपति इरशाद भी रूष्ट से दिखे । उनके प्रतिनिधि मण्डल के कुछ सदस्यों ने कहा कि राष्ट्रपति ने अपने को अलग-थलग कर दिये जाने की शिकायत की। नरेश वीरेन्द्र और इरशाद उस समय भी सकोंच में अवश्य पड़े होंगे जब शिखर सम्मेलन खास तौर पर समापन सत्र में , सिर्फ लोकन्त्र की ही बात करता रहा । लंका के वर्तमान राष्ट्रपति जयवर्धने भावुकतापूर्ण भाषण दिया । उन्होंने कहा कि " दक्षिण एशिया के क्षेत्र में लड़ाई जारी है और दक्षेस को अपने असर का इस्तेमाल करना चाहिये।[5]

जयवर्धने ने अपनी इच्छा बड़े संतुलित ढंग से निकाली । उद्घाटन भाषण में उन्होंने श्रीमती बेनजीर को 1987 के उस बयान की याद दिलाई जिसमें उन्होंने " हमेशा तैयार रहने वाली नियन्त्रित सेना और सुरक्षा सेवाओं की जरूरत " पर बल दिया था । सेना के साथ बेनजीर की बहु प्रचारित समस्याओं की चर्चा करना अप्रिय बात थी । बाद में जयबर्धने ने यह कह कर कई पाकिस्तानी वफादारों को भी क्षुब्ध कर दिया कि " " दक्षेस की सफलता भारत पर है । " [1]

जहाँ पाकिस्तान व भारत पूरे सम्मेलन में छाये रहे, वही छोटे देशों के नेताओं की कुछ शिकायतें भी सही थी ।प्रचार के सन्दर्भ में देखा जाये तो भारत और पाकिस्तान के बीच हुयी द्विपक्षीय बात-चीत ने पूरे शिखर सम्मेलन को छोड़ दिया । श्रीमती बेनजीर ने सिर्फ श्री राजीव गांधी को ही निजी रात्रि भोज पर आमन्त्रित किया । अन्त मे भी सिर्फ श्री राजीव गांधी ने ही श्रीमती बेनजीर के साथ साक्षत्र कान्फ्रेंस को सम्बोधित किया । बांग्लादेश के एक प्रतिनिधि ने शिकायत की " कभी-कभी तो हमें ऐसा महसूस कराया गया, गोया हम अंश कालिक खिलाड़ी है या सिर्फ बाराती " ।

किन्तु अन्तिम विश्लेषण में कुछ नेताओं की रूष्टता की उपेक्षा भी की जा सकती है क्योंकि भारत और पाकिस्तान के सम्बन्ध ही इस क्षेत्र की शक्ति, समीकरण तय करते है । इन्हीं के सुमधुर सम्बन्धों पर ही मुख्यतः दक्षेस की सफलता निर्भर करती है ।

दक्षेस का पाँचवा शिखर सम्मेलन 1989 में कोलम्बो में होना निश्चित हुआ था । यह निर्णय इस्लामाबाद सम्मेलन में ही किया गया था किन्तु श्रीलंका में भारतीय शांति सेना के जवानों की वापसी विवाद का मुद्दा बनी हुई है । श्रीलंका के वर्तमान प्रधानमंत्री प्रेमदासा ने इसी को अपनी ढ़ाल बनाया और कहा , " हम लोग आत्म

---

(1) इण्डिया टुडे " दक्षेस खुले दिल के झरोखे" एक रिपोर्ट ,31 जनवरी, 1989 पृष्ठ-74

सम्मान के साथ कैसे इसे आयोजित कर सकते हैं जब एक पड़ोसी सेना हमारी धरती पर हो।[1]

शाँति सेना की वापसी के आधार पर भारत श्रीलंका सम्बन्धों में काफी तनाव उत्पन्न हो गया था, क्योंकि श्रीलंका सरकार एक निश्चित समय में शाँति-सेना की पूर्ण वापसी चाहती थी जबकि भारत-सरकार समझौते की सभी शर्तें पूर्ण होने पर ही शान्ति सेना की वापसी के पक्ष में थी । दोनों ही देश अपने-अपने पक्ष में अनेक तर्क प्रस्तुत कर रहे थें तथा एक - दूसरे पर आरोप - प्रत्यारोप लगा रहे थे ।

शांति -सेना की वापसी के आधार पर श्रीलंका ने जुलाई 1989 में दक्षेस देशों के विदेशमंत्री स्तर की कराँची में आयोजित होने वाली बैठक का बहिष्कार किया। श्रीलंका के विदेशमंत्री ने पाकिस्तान के विदेशमंत्री को एक पत्र लिखकर सूचित किया कि " वे दक्षेस के विदेश सचिव स्तर की बैठक में सम्मिलित होने के लिए सक्षम नही है, क्योंकि भारत-श्रीलंका के मध्य शांति सेना की उपस्थिति के संदर्भ में काफी मतभेद हो गया है ।[2]

इस प्रकार श्री लंका ने शिखर सम्मेलन न करने का फैसला किया है । प्रारम्भ में ही श्रीलंका ने मई 1985 में सार्क के थिम्पू बैठक के बहिष्कार की धमकी दी थी किन्तु भूटान के मेजबान राजा बांगचुक ने समझा-बुझाकर संकट खत्म कराया। जून 1987 में राजीव गांधी ने राष्ट्रपति से बात करके दक्षेस की मंत्रि-स्तरीय बैठक में श्रीलंका की उपस्थिति निश्चित करायी ।

दक्षेस के उद्देश्यों के तहत दक्षेस न द्विपक्षीय विवादों को सुलझाने का मंच है और न द्विपक्षीय संबंधों से इसके काम प्रभावित होने चाहिए । भारतीय शांति सेना

---

(1) पब्लिक एशिया, जुलाई 1989, पृष्ठ-6।

(2) दि हिन्दू-28 जून 1989

की वापसी की शर्त पर जिस प्रकार श्री प्रेमदास ने सार्क शिखर सम्मेलन को टाला, यह उचित नहीं कहा जा सकता । दक्षेस क्षेत्रीय सहयोग के लिए है नकि द्विपक्षीय विवादों को हल करने के लिए ।

श्रीलंका सरकार ने दक्षेस सम्मेलन में अपना प्रतिनिधि न भेजने का निर्णय करके केवल दक्षेस घोषणा पत्र का उल्लंघन ही नहीं किया वरन् भारत पर दबाव डालकर उसकी अन्तर्राष्ट्रीय छवि धूमिल करने का प्रयास किया ।

अंततः 19अप्रैल को तीन दिन की सभा का आयोजन करने के लिए श्रीलंका सरकार तैयार हुई । भारत का मत था कि अप्रैल में श्रीलंका पाँचवी शिखरवार्ता (1989) की और दिसम्बर 1990 में मालदीव छठी शिखर वार्ता के लिए तैयार हो जाये जैसा कि इस्लामाबाद शिखर सम्मेलन में ही निश्चित हो गया था । एक बार कोलम्बो सरकार ने भी ये संकेत दिए कि वह 19 अप्रैल, 1990 में सम्मेलन का आयोजन करेगा किन्तु चूँकि सार्क देशों में तीन सदस्य (पाकिस्तान, बांग्लादेश, मालदीव) इस्लाम धर्म को मानने वाले हैं और अप्रैल 1990 में रमजान पड़ने के कारण से इन तीनों देशों ने सम्मेलन में उपस्थिति होने से असमर्थता प्रकट की ।

दक्षेस के कार्यों में बांधा डालने के लिए श्रीलंका के वर्तमान राष्ट्रपति प्रेमदास ही दोषी हैं। किस व्यवस्था एवं चार्टर के माध्यम से उन्होंने दक्षेस को द्विपक्षीय विषय का आधार बनाया ? दक्षेस न द्विपक्षीय विवादों को सुलझाने की मंच है और न ही द्विपक्षीय विवादों से इस संगठन की कार्यप्रणाली प्रभावित होनी चाहिये । दक्षेस क्षेत्रीय सहयोग के लिए है न कि आपसी सम्बन्धो के भेद-भावों को मिटाने के लिए । श्रीलंका शांति सेना की वापसी के प्रश्न पर बैठक स्थगित कर सकता है तो नेपाल भी व्यापार एवं पारागमन संधि को लेकर बैठक स्थिगित करवा सकता था । इस प्रकार की गतिविधियों से दक्षिण एशिया में द्विपक्षीय विषय अधिक प्रभावित होंगे न कि क्षेत्रीय

सहयोग की भावना ।

24 मार्च 1990 को भारतीय शांति सेना अपने देश वापस आ चुकी थी लेकिन दक्षेस के पाँचवे शिखर सम्मेलन के आयोजन के कोई स्पष्ट आसार नजर नहीं आये । अंततः यही कहा जा सकता है कि श्रीलंका पाँचवा शिखर सम्मेलन कराना ही नहीं चाहता था । देखा जाये तो प्रारम्भ से ही श्रीलंका हस्तक्षेप करता चला आ रहा है । पूर्व निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार चतुर्थ शिखर सम्मेलन श्रीलंका में आयोजित होना था किन्तु उस समय भी श्रीलंका के द्वारा इस आयोजन को कराने में असमर्थता प्रकट करने पर यह सम्मेलन इस्लामाबाद में सम्पन्न हुआ था ।

मालदीव 1990 में शिखर सम्मेलन के लिए पूर्णरूप से तैयार हो गया । 1988 में इस्लामाबाद सम्मेलन में हुए शिखर सम्मेलन में समस्त देश छठा शिखर सम्मेलन मालदीव में होने के लिए तैयार थे ।[1] किन्तु चूँकि श्रीलंका सरकार ने पाँचवा शिखर सम्मेलन ही सम्पन्न नहीं करवाया, इस कारण, नवम्बर 1990 में ही छठा शिखर सम्मेलन की जगह पाँचवा शिखर सम्मेलन सम्पन्न हुआ ।

---

(1) स्टेट्समैन, 18 जनवरी 1990

## पंचम शिखर सम्मेलन

21 नवम्बर, 1990 से प्रारम्भ होकर 23 नवम्बर 1990 को मालदीव की राजधानी माले में दक्षेस का 5वाँ शिखर सम्मेलन सम्पन्न हुआ । इस बार सम्मेलन दो वर्ष के अंतराल के बाद हुआ । सम्मेलन में कुछ नव नियुक्त शासनाध्यक्ष सम्मिलित हुए इनमें भारत के प्रधानमंत्री श्री चन्द्रशेखर, पाकिस्तान के प्रधानमंत्री मियां नवाज शरीफ व नेपाल के प्रधानमंत्री श्री भट्टाराय एवं श्रीलंका के प्रधानमंत्री डी0बी0 विजयतुंगे का नाम लिया जा सकता है । सम्मेलन का उद्घाटन 21 नवम्बर को हुआ, जिसमें मालदीव के राष्ट्रपति श्री गयूम को दक्षेस का नया अध्यक्ष चुना गया ।

सम्मेलन में विश्व की राजनैतिक , आर्थिक, व सामाजिक स्थिति की समीक्षा की गयी । दक्षेस देश स्वयं जिन समस्याओं से जूझ रहे हैं, उन पर भी विचार करके एक नीति बनाने पर सहमति प्रगट की गयी । दक्षिण एशियाई देशों ने आर्थिक क्षेत्र में आपसी सहयोग मजबूत करने के लिए संयुक्त उद्यम स्थापित करने तथा क्षेत्रीय परियोजनाओं हेतु सामूहिक कोष गठित करने का फैसला किया है । घोषणापत्र के अनुसार परियोजनाओं के अध्ययन एवं प्रगति के लिए सदस्य देशों को आसान शर्तों पर कोष उपलब्ध कराया जायेगा ।[1] कोष के लिए संसाधन जुटाने के संबन्ध में काम करने के लिए दक्षेस के सदस्य देशों के राष्ट्रीय विकास बैंको की पहली बैठक भारत में होगी जिसमें परियोजनाओं के संयुक्त उद्यमों पर कोष खर्च करने के तरीके पर विचार-विमर्श किया जायेगा ।[2]

भारत सरकार की तरफ से जारी की गयी एक अध्ययन रिपोर्ट में सुझाव दिया गया है कि सार्क देशों में परियोजनाओं को बढ़ावा देने हेतु एक वित्तीय संस्थान

---

(1) दैनिक हिन्दुस्तान "संयुक्त उद्यम व सामूहिक कोष गठित करने की घोषणा"
24 नवम्बर 1990 पृष्ठ-1

(2) - वही -

विकास क्षेत्रीय परिषद बनायी जानी चाहिए । सार्क सचिवालय को सौंपी गयी इस रिपोर्ट में सार्क के सदस्य देशों के मध्य दीर्घकालिक पूँजी निवेश अवसर पैदा करने पर बल दिया गया है । यह रिपोर्ट नई दिल्ली में गुटनिरपेक्ष देशों व दूसरे प्रगतिशील देशों के लिए अनुसंधान व सूचना प्रणालियों से संबंधित एक संस्थान ने तैयार की है । इसमें कहा गया है कि अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय बाजार के नये कायदों से निपटने में कुछ दक्षेस देशों के विकास वित्त संस्थानों (डी0एफ0आई0) ने काफी विशेषज्ञता प्राप्त कर ली है । प्रस्तावित परिषद का काम क्षेत्रीय परियोजनाओं की उपयोगिता का अध्ययन करना और उनके लिए प्रतियोगी शर्तों पर धन उपलब्ध कराना होगा । क्षेत्र में मौजूद तकनीक और संसाधनों का इस्तेमाल कर उद्योग लगाने वालों को जोखिम से बचाने के लिए विशेष सहायता सेल बनाया जायेगा ।[1]

सम्मेलन में नेताओं ने विकासशील देशों के लिए अधिक दिनों तक खाद्य जुटाने के संबंध में जैव-प्रौद्योगिक (बायो टेक्नालॉजी) के महत्व तथा चिकित्सा सम्बन्धी आवश्यकताओं पर बल दिया और इस क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने का आह्वान किया।

घोषणा-पत्र में दक्षेस देशों के क्षेत्र में आत्मनिर्भरता की आवश्यकता पर बल दिया गया और क्षेत्रीय संसाधनों को जुटाने के लिए रणनीति तैयारकरने हेतु मंत्रियों की परिषद को निर्देश दिया गया ताकि क्षेत्र में सामूहिक तथा व्यक्तिगत आत्मनिर्भरता को बढ़ावा मिल सके । सम्मेलन में नेताओं ने वाणिज्य और उत्पादन के क्षेत्र में राष्ट्रीय अध्ययन पूरा किये जाने पर संतोष जताया और निश्चित सीमा के भीतर तेजी से क्षेत्रीय अध्ययन पूरा करने की ज़रूरत पर बल दिया । उन्होंने उम्मीद जताई कि इससे क्षेत्र के लोगों में समृद्धि के लिए सहयोग के नये द्वार खुलेंगे ।

---

(1) जनसत्ता, नई दिल्ली "भारत सार्क देशों में दीर्घकालिक पूँजीनिवेश बढ़ाने के हक में" 23 नवम्बर 1990 पृष्ठ-4

सम्मेलन में नेताओं ने तेल कीमतों में वृद्धि के कारण भुगतान संतुलन पर दबाव पड़ने और निर्यात में कमी आदि के कारण दक्षिण एशियाई देशों को हुए नुकसान की भरपाई के लिए व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय सहायता की अपील की । सम्मेलन में परिषद की उस सिफारिश को मंजूर किया जिसमें सुप्रीप कोर्ट के जजों और सांसदों को दक्षिण एशियाई देशों के अन्दर यात्रा करने के लिए वीसा की छूट देने की बात कही गयी है।[1] सम्मेलन में इस बात को शुरू करने का फैसला भी दिया गया ।

अंत में उन्होंने खाड़ी समस्या के सम्बन्ध में सुरक्षा परिषद के प्रस्ताव के प्रति अपने संकल्प को दोहराया और शांतिपूर्ण हल की आवश्यकता पर बल दिया। दक्षिण एशियाई देशों ने आम राय से कुवैत से इराकी सैनिकों की बिना शर्त वापसी और यहाँ संवैधानिक सरकार की बहाली की माँग की । दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन के पाँचवे शिखर सम्मेलन के समापन अधिवेशन में मंजूर घोषणा पत्र में खाड़ी संकट के शांतिपूर्ण हल पर जोर दिया गया । दक्षेस देशों ने एक मत से कुवैत से इराकी सैनिकों की बिना शर्त वापसी ओर वहाँ संवैधानिक सरकार की बहाली की माँग की । समापन अधिवेशन में स्वीकार घोषणा पत्र में खाड़ी संकट के शांतिपूर्ण हल पर जोर दिया गया है । इसमें कहा गया है कि खाड़ी संकट के कारण सार्क देशों की अर्थव्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ा है सार्क नेताओं ने व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय मदद की भी माँग की । उन्होंने कहा कि तेल कीमतों में बढ़ोत्तरी और अन्तर्राष्ट्रीय मदद व निर्यात व्यापार की कम्मी के कारण उनके भुगतान संतुलन पर गहरा असर पड़ा है । उन्होंने कहा कि दक्षेस देशों के आपसी सहयोग से इस समस्या का कुछ हद तक मुकाबला किया जा सकता है । [2]

दक्षेस सम्मेलन में कहा गया कि खाड़ी संकट के कारण देश की अर्थव्यवस्था पर काफी बुरा प्रभाव पड़ा है । सार्क देशों ने व्यापार , उत्पादन और सेवा

---

(1) जनसत्ता नई दिल्ली " सार्क देश आर्थिक सहयोग बढ़ायेगे-24 नवम्बर 1990 पृ0-।

(2) जनसत्ता सार्क देश आर्थिक सहयोग बढ़ायेंगे । 24 नवम्बर 1990-पृ0-।

सम्बन्धी मुद्दों पर अगले वर्ष 28 फरवरी तक क्षेत्रीय अध्ययन पूरा करने के लिए तेजी से कार्यवाही करने की आवश्यकता पर बल दिया गया । नेताओं ने बताया कि उनके यहाँ इस बारे में पहले ही राष्ट्रीय अध्ययन पूर्ण किये जा चुके हैं । दक्षेस नेता इस तथ्य से पूर्णरूपेण सहमत थे कि उनके परस्पर सहयोग से विश्व को उत्पादन, उपभोग और व्यापार संबंधी नई चुनौतियों का सामना किया जा सकेगा । व्यापार और उत्पादन में सहयोग के लिए जिन वस्तुओं के नाम सुझाये गये हैं, वे-लौह अयस्क , प्राकृतिक रबर, चाय, काफी, सूती कपड़े , रेशम सिल्क सिंथेटिक कपड़े , लोटा, सल्यूनियम , परिवहन निगम उपकरण, मशीनरी, उपभोक्ता इलेक्ट्रानिक्स, दूरसंचार और कार्यालय उपकरण, रासायनिक उर्बरक और दवाइयाँ । अध्ययन के अनुसार कृषि रसायन उद्योग रसायन , टायर-ट्यूब , लुगदी, कागज और सीमेंट के क्षेत्र में भी सार्क देशों के बीच सहयोग की संभावनायें है । इसमें सरकारी बाजार संगठनों के बीच समन्वय और बैंको में सहयोग का सुझाव दिया गया है ।[1]

विकसित देशों के बाजारों को एकीकृत करने पर भी उन्होंने सहमति जताई । बैठक में तीन प्रमुख संस्थाओं के विषय में भी सहमति हुई । इसके अनुसार इस्लामाबाद में मानव संसाधन विकास केन्द्र, काठमाण्डू के क्षेत्रीय क्षय रोग उपचार केन्द्र और नई दिल्ली में क्षेत्रीय प्रलेखन केन्द्र खोले जायेंगे ।

दक्षेस घोषणा पत्र में मादक द्रव्यों के अवैध व्यापार, अवैध रूप से हथियारों की विक्री और आंतकवादी गतिविधियों के बीच बढ़ते सम्बन्धों पर चिंता व्यक्त की गयी । आंतकवाद के दमन की कार्यवाही सम्वन्धी समझौते की भाँति दक्षेस के सदस्यों ने मादक द्रव्य और नशीली चीजों की तस्करी को असरदार ढंग से रोकने के लिए समझौते पर दस्तखत किये हैं। इसमें इस व्यापार के दोषी अपराधियों का सदस्य देशों के मध्य प्रत्यार्पण का प्रावधान है । समझौते में कहा गया कि यदि कथित अपराधी एक देश से भागकर दूसरे देश में चला जाता है तो वह देश समस्त दक्षेस देशों को उक्त

---

(1) जनसत्ता नई दिल्ली," भारत सार्क देशों में दीर्घकालिक पूँजी निवेश बढ़ाने के हक में " 23 नवम्वर 1990 पृष्ठ-4

अपराधकर्मी की पहचान के लिए समस्त जानकारियाँ उपलब्ध करायेगा । वह सदस्य देश जिसके देश से भागकर कोई अपराधकर्मी चला जायेगा, यदि उस अपराधी को प्रत्यार्पित नहीं करा सकेगा तो अपने देश में ही तुरन्त उसके विरूद्ध कानूनी कार्यवाही प्रारम्भ कर देगा । समझौते में यह व्यवस्था है सदस्य देश दूसरे देश को मामले के अनुसंधान, कानूनी कार्यवाही और न्यायिक कार्यवाही करने में यथा संभव अधिक से अधिक सहयोग करेगा । समझौते में इस बात पर जोर दिया गया कि कोई सदस्य देश बैंक गोपनीयता के बहाने एक दूसरे देश को कानूनी मदद देने से इंकार नहीं करेगा । दक्षेस के प्रत्येक सदस्य देश अपने यहाँ नशीले एवं मादक द्रव्यों की खेती को भी हतोत्साहित करेगा ।

सम्मेलन में नेताओं ने अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था स्थापित करने तथा सदस्य देशों की राष्ट्रीय अर्थव्यवस्थाओं के बीच सामंजस्य स्थापित करने की दिशा में प्रयासों का स्वागत किया । नेतागण इस बात पर आश्वस्त थे कि इस दिशा में आपसी सहयोग एक महत्वपूर्ण कारक सिद्ध हो सकता है और इसके द्वारा लक्ष्यों को सिद्ध ढंग से प्राप्त किया जा सकता है । सम्मेलन में दक्षेस के सदस्य देशों के लिए रियायत पर अधिक संसाधन और प्रोद्योगिकी जुटाने तथा आयात के लिए बाजार उपलब्ध कराने की आवश्यकता पर बल दिया गया ।

भारतीय प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर ने समापन समारोह में अपना भाषण हिन्दी में देकर दक्षेस के अपने सहयोगियों को आश्चर्यचकित कर दिया । उन्होंने कहा कि दक्षेस अपने अस्तित्व के पाँच वर्ष बाद शैशवास्था से ऊबर चुका है । इसलिए उपर्युक्त यही होगा कि सदस्य देश क्षेत्र के लोगों के हितों के साधन जुटाने के लिए अधिक ठोस क्षेत्रों में मदद एवं सहयोग करना प्रारम्भ कर दें । श्री चन्द्रशेखर ने कहा कि मुझे इस बात की खुशी है कि शिखर सम्मेलन में हम लोगों ने जैव प्राद्योगिकी, आर्थिक क्षेत्रों और पर्यावरण से सम्बद्ध मुद्दों पर सहयोग की ठोस आधारशिला रखी है ।

शिखर सम्मेलन के समापन सत्र में अपने भाषण में प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर ने कहा कि सम्मेलन में लिये गये निर्णयों से क्षेत्रीय सहयोग और इन देशों की जनता के बीच सम्पर्क अधिक बढ़ेगा । इस सम्मेलन ने सहयोग का ठोस आधार रखा है । उन्होंने कहा कि क्षेत्रीय परियोजनाओं के लिए प्रस्तावित कोष की स्थापना से क्षेत्रीय सहयोग में मदद मिगी ।[1]

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री मोहम्मद नवाज़ शरीफ ने सम्मेलन के दौरान दक्षेस नेताओं में विचार विनिमय को सार्थक बताया ।

बांग्लादेश के राष्ट्रपति श्री इरशाद ने सम्मेलन के निर्णयों पर सन्तोष व्यक्त किया और कहा कि यह सम्मेलन संगठन को गति प्रदान करने में सफल रहा है।

श्रीलंका के प्रधानमंत्री डी0बी0 विजेतुंगे ने भी सम्मेलन को लाभकारी बताया । भूटान नरेश जिग्में सिग्में वांगचुक ने क्षेत्र में स्थायी शाँति और मैत्री के लिए माले भावना के निर्माण पर जोर दिया ।

मालदीव के राष्ट्रपति और दक्षेस के अध्यक्ष अब्दुल गय्यूम ने कहा कि शिखर सम्मेलन के फैसलों से इस संगठन को अधिक प्रभावकारी बनाने की आशायें बंधी हैं । इससे क्षेत्र के लोगों के जीवन-यापन को और अधिक बेहतर बनाया जा सकेगा ।

माले घोषणा पत्र में कहा गया कि दक्षेस ने नेताओं ने इस तथ्य पर ध्यान आकर्षित किया कि प्राकृतिक आपदा के कारण एवं परिणामों और पर्यावरण की रक्षा की प्रणाली शीघ्र ही विकसित कर ली जायेगी । घोषणापत्र में पर्यावरण को विश्व महत्व के विषय के रूप में उभरने की चर्चा करते हुए अपूर्व जलवायु परिवर्तन पर चिन्ता प्रकट की गयी ।

---

(1) राजस्थान पत्रिका " दक्षेस देश आर्थिक सहयोग बढ़ायेंगे" 24 नवम्बर 1990- पृ0-1

घोषणापत्र के अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय से आग्रह किया गया कि वह जलवायु परिवर्तन से उत्पन्न नई चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए अतिरिक्त वित्तीय साधन जुटायें और उपयुक्त प्राद्यौगिकी उपलब्ध करायें ।

संयुक्त राष्ट्र में मेजबान मालदीव द्वारा छोटे-छोटे देशों की रक्षा व संरक्षण के लिए की गयी पहल का हवाला देते हुए घोषणा पत्र में इस बात पर सहमति प्रकट की गयी कि छोटे देश अपनी आजादी एवं क्षेत्रीय अखण्डता की रक्षा के लिए उनकी विशेष मदद के हकदार हैं । [1]

अन्तर्राष्ट्रीय मुद्दों पर चर्चा करते हुए माले घोषणा पत्र में यह आशा प्रकट की गयी कि हथियार नियंत्रण के विषय में दो महाशक्तियों के मध्य चल रही वार्ता के फलस्वरूप ऐसा समझौता हो सकेगा जिससे परमाणु हथियारों में कटौती की जा सकेगी और अंततः परमाणु हथियारों को समाप्त किया जा सकेगा ।

दक्षेस नेताओं ने निरस्त्रीकरण एवं विकास के बीच निहित संबंध की चर्चा करते हुए समस्त देशों को आह्वान किया गया कि वे अतिरिक्त वित्तीय संसाधन, मानवीय उर्जा और सृजनात्मकता को विकास में लगाने के नये उपाय करें । [1] दक्षेस नेताओं ने इस बात पर खेद प्रकट किया कि विकासशील देशों के लिए अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक वातावरण प्रतिकूल रहा है । यह स्थिति नकारात्मक संसाधन प्रवाह बड़े व्यापारिक प्रतिबंध, गम्भीर विदेशी कर्ज़ के बोझ और ब्याज की ऊँची दर से उत्पन्न हुई है।

सम्मेलन में 1990 के दशक को " दक्षेस बालिका दशक " वर्ष 1991 को " दक्षेस आश्रय वर्ष " और 1993 को " दक्षेस " विकलांग वर्ष " मनाने का फैसला किया है ।

---

(1) दि हिन्दुस्तान टाइम्स, 24 नवम्बर 1990

(2) राजस्थान पत्रिका " दक्षेस देश - आर्थिक सहयोग " बढ़ायेंगे 24 नवम्बर 1990 पृ0-1

पंचम शिखर सम्मेलन ने तय किया कि दक्षेस के सदस्य देशों के बीच आपसी सहयोग के नये क्षेत्र के रूप में संयुक्त कटीर उद्योग एवं हस्तशिल्प उद्यम लगाने हेतु तुरन्त उपाय किये जायेंगे । शिखर सम्मेलन ने दक्षेस के महासचिव को निर्देश दिया कि वे एक विशेषज्ञ दल बनायें जो संयुक्त उद्यम लगाने के आधार पर कोष के स्रोत और अन्य सम्बद्ध मामले तय करें । इसकी विदेश मंत्रियों की वर्ष के मध्य में होने वाली बैठक में विचार एवं समीक्षा की जायेगी ।

मालदीव के राष्ट्रपति अब्दुल गयूम ने सम्मेलन के अंत में तैयार संयुक्त विज्ञप्ति जारी की । उन्होंने कहा कि दक्षेस अब नया मार्ग अख्तियार करेगा, क्योंकि इसके विकसित होने का चरण ख़तम हो चुका है । इस बारे में वे एवं बांग्लादेश के राष्ट्रपति सदस्य देशों से विचार-विमर्श प्रारम्भ करेंगे ।

दक्षेस के नेताओं ने मंत्रिपरिषद के अध्यक्ष को निर्देश दिया कि वे दक्षेस की गतिविधियों को सुधारने से सम्बन्धित सिफारिशें तैयार करें ताकि यह संगठन प्रभावशाली भूमिका का निर्वाह कर सकें । संयुक्त प्रेस वक्तव्य में कहा गया है कि दक्षेस के नेताओं ने " दक्षेस 2000 बुनियादी जरूरत परिप्रेक्ष्य " नाम की क्षेत्रीय योजना को शीघ्र पूरा करने का आह्वान किया ।

संयुक्त प्रेस विज्ञप्ति में कहा गया कि योजनाकर्ताओं की गरीबी उन्मूलन की कार्यनीति पर गम्भीरता से विचार विमर्श कर उसके लिये उपयुक्त सिफारिशे पेश करनी चाहिए । दक्षेस के नेताओं ने इस बात पर संतोष प्रकट किया कि पाकिस्तान में मानव संसाधन विकास केन्द्र की स्थापनाके लिए कार्य जारी है । उन्होंने दक्षेस के क्षेत्र में रहने वाले विकलांगों का दुःखदर्द कम करने के लिए तुरन्त उपाय करने का आह्वान किया । इन नेताओं ने दक्षेस के सदस्य देशों के मध्य जनसंचार के क्षेत्र में सहयोग के महत्व पर भी बल दिया और महासचिव के0के0 भार्गव को निर्देश दिया कि वे पत्रकारों, संवाद समितियों तथा जन संचार माध्यमों के संघों , महासंघों के आपस में सहयोग कराने की दिशा में प्रयास करें ।

शिखर सम्मेलन ने दक्षेस सचिवालय को इस बात का अधिकार दिया कि वह यूरोपीय समुदाय और दक्षिण पूर्व एशियाई देश से सूचना , खबरों के अध्ययन और प्रकाशनों के आदान-प्रदान के लिए प्रयास करें और सहयोग के क्षेत्रों का पता लगायें । दक्षेस के नेताओं ने कोलम्बो में छठे दक्षेस शिखर सम्मेलन करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया ।[1] विदेश मंत्रियों की बैठक यहाँ छः महिने पश्चात् होगी ।

माले में सम्पन्न पाँचवा शिखर सम्मेलन क्षेत्रीय शांति, स्थिरता, सद्भावना एवं सौहार्द की स्थापना के साथ-साथ क्षेत्र के सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के संकल्प को भी पूर्ण करता है ।

मालदीव में सम्पन्न हुए पाँचवे दक्षेस शिखर सम्मेलन में ही यह निश्चित कर लिया गया था कि छठा दक्षेस शिखर सम्मेलन श्रीलंका की राजधानी कोलम्बो में सम्पन्न होगा । वह शिखर सम्मेलन 7 नवम्बर 1991 को सम्पन्न होना निश्चित किया गया । किन्तु जब सम्मेलन का समय निकट आया तो भूटान नरेश जिग्में सिग्में बांगचुक ने अपने देश में राजनीतिक परिस्थितियों के कारण शिखर सम्मेलन में उपस्थित होने में अपनी असमर्थता व्यक्त की है । भूटान में सत्ता विरोधी तत्व सक्रिय हो रहे हैं और भूटान नरेश के सलाहकारों ने उन्हें आगाह किया है कि उनकी कोलम्बो यात्रा कमे दौरान के तत्व कोई बड़ी गड़बड़ी कर सकते हैं । भूटान नरेश को कोलम्बो शिखर सम्मेलन में न जाने की राय दी गयी है ।[1]

दक्षेस के घोषणा पत्र में ऐसा विधान है कि इसके सदस्य देशों में से अगर एक देश का भी शासनाध्यक्ष शिखर सम्मेलन में सम्मिलित न हो सके तो शिखर सम्मेलन स्थगित करना पड़ता है। श्रीलंका सरकार ने भूटान नरेश से आग्रह किया कि वह कम

---

(1) टाइम्स ऑफ इण्डिया , 24 नवम्बर 1990

(2) दैनिक हिन्दुस्तान " दक्षेस सम्मेलन अब भी अधर में " 5 नवम्बर 1991 पृ0-1

से कम एक दिन के लिए कोलम्बो अवश्य आ जायें ताकि शिखर सम्मेलन सम्पन्न हो सके किन्तु जब भूटान के विदेशमंत्री । दिन पूर्व की विदेश मंत्रियों की होने वाली बैठक में न पहुँच सके तो सम्मेलन स्थगित करना पड़ा । स्थगित करने का फैसला - सम्पन्न हुई सार्क की मंत्रिस्तरीय बैठक में किया गया । सार्क के अध्यक्ष एवं मालदीव के राष्ट्रपति एम०ए० गयूयम ने प्रधानमंत्री पी०वी० नरसिंह राव को बताया कि वे सदस्य देशों से मशविरा करके सम्मेलन के लिए नई तिथि की घोषणा शीघ्र ही करेंगे । गयूयूम का संदेश मिलने के बाद श्री राव ने अपनी कोलम्बो यात्रा रद्द कर दी । बांग्लादेश, मालदीव और पाकिसतान के शासनाध्यक्षों ने श्रीलंका की सद्भावना यात्रा करने का फैसला किया ।[1]

दक्षेस के संस्थापक सदस्य बांगचुक की गैर मौजूदगी में सम्मेलन हो सकता है या नहीं इस पर विचार करने के लिये मंत्रिस्तरीय बैठक हुई । इस बैठक में श्रीलंका ने पूरी कोशिशें की कि भूटान नरेश का प्रतिनिधि मंडल सम्मेलन में किया जा सके पर सदस्य देश इस पर सहमत नहीं हुए । दक्षेस की स्थायी समिति के अध्यक्ष और श्रीलंका के विदेश सचिव बनाई तिलकरत्न ने कहा - " मंत्रिपरिषद को आशा है कि भूटान नरेश शिखर सम्मेलन में भाग लेने के लिए अपना कोई प्रतिनिधि भेजेंगे । " भारत के प्रतिनिधि एडुआर्दो फलेरिया ने बाद में पत्रकारों से कहा-" हम लोग नई परम्परा कायम नहीं करेंगे ।"[2] जब एक सदस्य देश किसी कारण से भाग नहीं ले पाये तो स्थगित करना इसके चार्टर की धारा 10 और 11 में है ।

इस सम्मेलन में व्यापार अवरोधों को दूर करने , क्षेत्रीय परियोजनाओं के लिए एक कोष की स्थापना और उग्रवाद को दबाने के लिए आपसी सहयोग बढ़ाने जैसे कदम उठाये जाने की संभावना थी ।[3] दक्षेस के बैठक के समय लिबरेशन टाइगर्स ऑफ

---

(1) जनसत्ता " भूटान नरेश वांगचुक शामिल नहीं हो पायेंगे- सार्क सम्मेलन स्थगित" 7 नवम्वर 1991 पृष्ठ-1

(2) नवभारत टाइम्स 7 नवम्बर 1991

(3) दैनिक हिन्दुस्तान " दक्षेस शिखर सम्मेलन अचानक स्थगित" 7 नवम्बर 1991

तमिल ईलम " लिट्टे के किसी भी हमले की संभावना को टालने के लिए कोलम्बो में अभूतपूर्व सुरक्षा के बंदोबस्त किये गये थे ।.

पिछले तीन वर्षों के दौरान यह दूसरा अवसर है जब दक्षेस की बैठक नहीं हो पाई है । 1989 में श्रीलंका ने अपनी जमीन पर भारतीय शांति सेना की उपस्थिति के विरूद्ध विरोध प्रकट करते हुए बैठक आयोजित करने से इंकार कर दिया गया था ।

दक्षेस के अध्यक्ष स्थगित शिखर सम्मेलन की नई तिथि के लिए सम्बद्ध देशों से विचार विमर्श करेंगे ।

श्रीलंका ने भारत पर आरोप लगाया कि भारत के विरोध के कारण ही शिखर सम्मेलन स्थगित करना पड़ा । भूटान नरेश के स्थान पर प्रतिनिधि आने से सम्मेलन सम्पन्न हो सकता था । इसके अतिरिक्त श्रीलंका ने यह भी आरोप लगाया कि भूटान नरेश ने कोलम्बो न आने का निर्णय भारत के संकेत पर किया । भारत ने श्रीलंका के इस आरोप पर आश्चर्य प्रकट किया । सार्क के वर्तमान अध्यक्ष मालद्वीव के राष्ट्रपति श्री मयूम ने भी श्रीलंका सरकार की इस राय से असहमति प्रकट की है । बी0बी0सी0 के प्रसारण में श्री गयूम ने कहा कि इसके लिए किसी पर आरोप नहीं लगाया जा सकता क्योंकि ऐसा किसी के चाहे बगैर हो गया ।[1] गयूम ने श्रीलंका सरकार की इस राय से असहमति प्रकट की कि एक देश के शासनाध्यक्ष की गैरउपस्थिति में भी सम्मेलन हो सकता था । उन्होंने बताया कि पिछले वर्ष यद्यपि राष्ट्रपति रणसिंघे प्रेमदास भी माले में उपस्थित नहीं थे किन्तु उन्होंने अपने प्रधानमंत्री को भेजा था । लेकिन भूटान में कोई प्रधान मंत्री नहीं है , इसलिए इस बार स्थिति दूसरी हैं ।[2]

---

(1) जनसत्ता " भारत को अचरज , गयूम भी श्रीलंका से सहमत नहीं " 14 नवम्बर 1991

(2) -वही-

श्री गयूम ने पाकिस्तान की इस सलाह से सहमति प्रकट की कि भविष्य में ऐसा अवसर न आने देने के लिए उपाय करने चाहिए । गयूम ने उम्मीद की कि रद्द सार्क सम्मेलन नये सिरे से इसी वर्ष के अंत तक अवश्य होगा । गयूम ने कहा कि " संभव है कि दिसम्बर में हो ।"[1] और उनके कथनानुसार ही दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की एक दिन की शिखर बैठक 21 दिसम्बर 1991 में कोलम्बो में होनी निश्चित की गयी । यह पूर्ण बैठक होगी । श्रीलंका ने इसकी मेजबानी करने की घोषणा कर दी ।[2] श्रीलंका विदेश विभाग के एक बड़े अधिकारी ने कहा कि बैठक एक दिन होने की बजाये उसकी विषय सूची में कोई कटौती नहीं की जायेगी । विदेश सचिव और दक्षेस की स्थायी समिति के अध्यक्ष बनाई तिलकरत्न ने पत्रकारों को बताया कि बैठक में क्षेत्र में गरीबी के बारे में विशेष रूप से बातचीत की जायेगी । उन्होंने बताया कि दक्षेस मंत्रिपरिषद 20 दिसम्बर को कोलम्बो घोषणापत्र को अंतिम रूप देगी । उद्घाटन और समापन समारोह छोटा होगा ।

दक्षेस की 21 दिसम्बर से कोलम्बो में प्रारम्भ होने वाली बैठक में क्षेत्रीय परियोजनाओं के लिए 50 लाख डालर का दक्षेस कोष स्थापित करने के बारे में फैसला किया जायेगा । इसके अलावा सदस्य देशों को इस बात के लिए राजी कराये जाने की संभावना है कि 1997 तक सदस्य देशों के मध्य व्यापार प्रणाली को उदार बनाया जाये। इस शिखर बैठक में पूर्व 20 दिसम्बर को विदेश मंत्रियों की बैठक होगी । भारत, पाकिस्तान, नेपाल, बांग्लादेश, श्रीलंका, मालदीव और भूटान के विदेशमंत्री सीमा शुल्क सम्बन्धी वर्तमान बाधाओं को समाप्त करने के प्रस्ताव पर फैसला लेंगे । विदेश मंत्रियों की बैठक में प्राकृतिक आपदाओं के कारणों और उसके परिणामों पर विशेषज्ञ समिति की सिफारिशों पर चर्चा की जायेगी । विदेशमंत्री बच्चों के विकास के लिए एक कार्ययोजना पर भी बातचीत करेंगे । बैठक में श्रीलंका के प्रस्ताव पर भी विचार किया जायेगा कि गरीबी दूर करने के लिए एक दक्षिण एशियाई आयोग स्थापित किया जाये ।

---

(1) जनसत्ता "भारत को अचरज,गयूम भी श्रीलंका से सहमत नहीं" 14 नवम्बर 1991

(2) राजस्थान पत्रिका 13 दिसम्बर 1991

## छठा शिखर सम्मेलन

21 दिसम्बर, 1991 को श्रीलंका की राजधानी कोलम्बों में दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संगठन का छठा शिखर सम्मेलन सम्पन्न हुआ । इस शिखर सम्मेलन से वे सभी आशंकायें, दुश्चिन्तायें और उहापोह की स्थितियाँ स्वतः ही समाप्त हो गयीं, जो पूर्व आयोजित सम्मेलन के स्थगन से अनायास ही उत्पन्न हो गयी थी । इस शिखर सम्मेलन में भारत के प्रधानमंत्री श्री पी0वी0 नरसिंह राव , पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ , बांग्लादेश की प्रधानमंत्री श्रीमती खालिदा जिया नेपाली प्रधानमंत्री श्री गिरिजा प्रसाद कोइराला, भूटान के राजा जिग्में -सिग्में बांगचुक , श्रीलंका के राष्ट्रपति रणसिंघे प्रेमदास एवं मालदीव के राष्ट्रपति श्री अब्दुल गयूम उपस्थित थे । श्रीलंका के राष्ट्रपति प्रेमदास ने नये सार्क अध्यक्ष के रूप में सम्मेलन की अध्यक्षता की ।

दक्षेस देशों के सातों नेताओं ने कोलम्बो घोषणा पत्र को स्वीकार कर लिया, जिसमें सदस्य राष्ट्रों के मध्य व्यापार को उदार बनाने, आंतकवाद से निबटने तथा नशीली चीजों के व्यापार पर रोक लगाने, बच्चों के कल्याण के लिए काम करने तथा पर्यावरण संरक्षण के लिए कदम उठाने का संकल्प व्यक्त किया गाया है । छः घंटे के छठे दक्षेस शिखर सम्मेलन के घोषणा पत्र को स्वीकार करते हुए सदस्य राष्ट्रों ने वर्ष 2000 तक सबके लिए शरण के विश्व-व्यापी लक्ष्य के लिए काम करने का भी निश्चय किया । शिखर सम्मेलन दो सत्रों में चला।[1]

एक दिन का यह सम्मेलन आंतकवाद से निपटने के लिए तुरन्त कदम उठाने की अपील के साथ हुआ था । सार्क के नये अध्यक्ष श्रीलंका ने आंतकवाद के खतरे से निपटने के लिये " दक्षेस घोषणा पत्र के विस्तार " का आह्वान किया क्योंकि आंतकवाद ने क्षेत्र में सीमायें पार करके " मौत और तबाही" का खतरानाक जाल बुन लिया है । अध्यक्ष का पद संभालने के तुरन्त बाद रणसिंघे प्रेमदास ने अपने बड़े तीखे भाषण में कहा कि जब क्षेत्र की वैध सरकारों पर बाह्य ताकतों के भाड़े के लोगों द्वारा

---

(1) राजस्थान पत्रिका " आंतकवाद से निबटने व व्यापार को उदार बनाने के लिये काम करने का संकल्प " 22 दिसम्बर 1991 पृष्ठ-1

हमले किये जा रहे हों, साजिशें व धोखाघड़ी की जा रही हों तो क्या हमें हाथ पर हाथ धरे बैठे रहना चाहिए क्या हमारे देशों में से किसी में भी जन-आकाँक्षाओं को कुचलने के लिए शातिरों और नाकाम जरायम पेशे वालों की साजिशें रची जा रही हों । तो हमें मुँह बंद रखना चाहिए। उन्होंने इन सवालों के जवाब में सवाल करते हुए कहा कि क्या ऐसी ताकतों के विरूद्ध लड़ने के लिए हमारा अपने घोषणा पत्र के तकनीकी पहलुओं के विस्तार करने योग्य सामूहिक नैतिक दायित्व नहीं है । उन्होंने कहा कि आंतकवाद संबंधी सार्क समझौते की पुष्टि के लिए विधायी कदम उठाने से पहले आंतकवाद के खिलाफ व्यवहारिक सहयोग और आपसी तालमेल के उपायों के लिए इने उत्साह से कोशिश जरूरी है ।[1]

भारत के प्रधानमंत्री श्री पी0वी0नरसिंह राव ने प्रस्ताव रखा कि दक्षेस देशों को एक सामूहिक , आर्थिक, रक्षा व्यवस्था कायम करनी चाहिए क्योंकि विकसित देश क्षेत्रीय गुट और गठबंधन कायम कर रहे हैं और ऐसी संभावना है कि उनका रूख भेदभावपूर्ण होगा । बर्हिमुखी व्यापार प्रणालियों के अपनाने से आर्थिक प्रतिस्पर्धीओं को बढ़ावा मिलेगा । इसका महत्वपूर्ण लाभ यह होगा कि व्यापारियों एवं उद्यमियों के बीच सीमा व्यापार संपर्क बढ़ेगा । इससे लोगों के बीच तालमेल की संभावनायें बढ़ेंगी।

उद्घाटना सत्र में प्रधानमंत्री ने धनी देशों की गुटबंदी के कारण विश्व व्यापार में गतिरोध आने का अंदाजा लगाया और अपील की कि सार्क देशों को नई सामूहिक, आर्थिक सुरक्षा प्रणाली बनानी चाहिए ताकि पूरे क्षेत्र में वस्तुओं और लोगों की अप्रतिबंधित आवागमन हो सके । उन्होंने सार्क के सदस्यों से मिलकर कदम उठाने के लिए नये कार्यक्रम बनाने को कहा और घोषणा की कि भारत इसमें पूरी मदद करेगा । श्री राव ने कहा कि फायदे के लिए हमारी प्रतिभाएं और संसाधन जिस हद तक काम आ सकते हैं, हम उन्हें बेहिचक लगाने को तैयार हैं ।[2]

---

(1) जनसत्ता नई दिल्ली " सार्क देश आंतकवाद का मिलकर सामना करेंगे " नई दिल्ली 22 दिसम्बर 1991

(2) -वही-

श्रीराव ने कहा कि विकसित देशों की आर्थिक गुटों से चुनौतियों से निपटने के लिए दक्षेस देशों को यथाशीघ्र एक कार्य योजना बना लेनी चाहिये क्योंकि ये गुट विकासशील देशों के हितों के लिए नुकसानदेह सिद्ध हो सकते हैं । प्रधानमंत्री ने कहा कि विश्व की आर्थिक परिस्थिति में हो रहे परिवर्तनों में कार्य योजना की त्वरित शुरूवात को आवश्यक बना दिया है ।

श्रीराव ने विकसित देशों के गुटों के बारे में कहा कि अगर वे दक्षेस देशों से कुछ मदद चाहते है तो वे इसके लिये तैयार हैं लेकिन अगर वे ऐसा नहीं करते हैं तो सार्क देश उसके लिए भी तैयार हैं । श्रीराव ने कहा कि भारत से उस आयोग में दो विशेषज्ञ नामित करने के लिए कहा गया है जो विभिन्न देशों में गरीबी कम करने के उपायों के बारे में अध्ययन करेगा ।[1]

दक्षेस देश में व्यापार उदारीकरण के बारे में श्रीराव ने कहा कि कोलम्बो शिखर बैठक में प्रथमबार इस मुद्दे पर प्रगति हुई है । कोलम्बो घोषणा में सभी देशों से व्यापार उदारीकरण पर चरणबद्ध कदम उठाने के लिये कहा गया है । पहले इस दिशा में इसलिए प्रगति नहीं हो पायी थी क्योंकि यह महसूस किया जा रहा था कि इससे कुछ देशों को ही फायदा होगा । बदलती दुनियाँ में दक्षेस की भूमिका के बारे में प्रधानमंत्री ने कहा "दक्षेस देशों को सहयोग बढ़ाना होगा और अब हमारे पास खोने के लिए समय नहीं है ।"[2]

उन्होंने कहा कि सदस्य राष्ट्रों के रूख में आमतौर पर नरमी आई है ताकि वाणिज्य व्यवस्था में सहयोग का मार्ग स्पष्ट हो सके । कोलम्बो घोषणा का हवाला देते हुए उन्होंने बताया कि शासनाध्यक्ष व्यापार नीतियों को उदार बनाने पर सहमत हो गये हैं तथा उन्होंने दक्षेस के स्तर पर प्राथमिकताओं वाली व्यापार प्रणाली अपनाने का विचार स्वीकार कर लिया है । व्यापार में अवरोध और गतिहीनता समाप्त

---

(1) जनसत्ता "अमीर देशों की तरह सार्क भी आर्थिक गुट बनायें" 22 दिसम्बर 1991

(2) दैनिक हिन्दुस्तान 23 दिसम्बर 1991

करने के शिखर सम्मेलन के संकल्प का स्वागत करते हुए श्री राव ने कहा कि इससे क्षेत्रीय स्तर पर सामूहिक रूप से आर्थिक सुरक्षा प्रणाली अपनाने का मार्ग प्रशस्त होगा।

पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ ने अपने भाषण में पड़ोसी देशों से अच्छे संबंध बनाने की इच्छा व्यक्त की । उन्होंने कहा " हम सभी समस्याओं और विवादों को आपसी लाभ के आधार पर पूरी गंभीरता के साथ हल करना चाहते हैं किन्तु पाकिस्तान भी अपने पड़ोसियों से ऐसे ही आचरण की उम्मीद करता है । परमाणु अप्रसार के लिए उन्होंने कहा कि पाकिस्तान इस मुद्दे पर कोई भी अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्रीय या आपसी समझौता करने को तैयार है । परमाणु हथियार मुक्त बनाने के अपने प्रस्ताव को लेकर उन्होंने कहा मुझे अब भी आशा है कि दक्षिण एशिया के नेता इस क्षेत्र को परमाणु हथियार मुक्त क बनाने की कल्पना को साकार करेंगे ।[1]

दक्षेस देशों की भुगतान संतुलन , संसाधनों की तंगी , मँहगाई और गरीबी, बेरोजगारी, बीमारियों और अशिक्षा जैसी समस्याओं का जिक्र करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि संगठन की पिछली बैठकों में इस दिशा में कारगर सहयोग के क्षेत्र में प्रगति हुई है उन्होंने कहा कि " हम इस दिशा में कुछ भी कर सकते हैं । हमें अपने कार्यक्रमों को गतिशील बनाना होगा और हमारे लोगों से जुड़े विकास सम्बन्धी मुद्दों की ओर तेजी से बढ़ना होगा ।"

श्री नवाज शरीफ ने इस तथ्य पर खेद प्रकट किया कि छठा सम्मेलन निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार नहीं हो सका । उन्होंने कहा कि भविष्य में ऐसी व्यवस्था होनी चाहिए कि इस तरह सम्मेलन स्थगित न होने पायें ।

दक्षिण एशियाई क्षेत्र में सीमित संसाधन तथा इसके पिछड़ेपन का जिक्र करते हुए पाकिस्तान के प्रधानमंत्री ने सुझाव दिया कि सदस्य राष्ट्रों को विकासशील देशों की ज्वलंत ऋण समस्याओं के बारे में अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर अपनी स्थिति प्रकट

---

(1) नव भारत टाइम्स , 22 दिसम्बर 1991

करनी चाहिए । साथ ही उन्हें यह भी देखना होगा कि गरीब देशों से संसाधनों का प्रवाह सम्पन्न देशों को न होने पाये और विकासशील देशों में विदेशी पूँजी निवेश बढ़े । बदलती दुनियाँ में सार्क की भूमिका के बारे में प्रधानमंत्री ने कहा कि सार्क देशों को सहयोग बढ़ाना होगा । उन्होंने कहाँ कि हम सहज अध्ययन और बहस में फँसकर होड़ में पीछे नहीं छूट सकते । इस समय जबकि और लोग आगे बढ़ रहे है, सार्क देशों को आपसी सहयोग के लिए महत्वाकांक्षी कार्य योजना बना लेनी चाहिए । प्रधानमंत्री ने कहा कि दक्षेस ने बाल-कल्याण एवं शिक्षा पर एक नया अध्याय खोला है जिसे गम्भीरता से लिया जाना चाहिए । उन्होंने सदस्य देशों के बीच पर्यटन सहयोग बढ़ाने के लिए सार्क घोषणा पत्र का स्वागत किया । श्रीराव ने कहा कि 1988 में दक्षेस के जजों को वीजा की छूट दी थी । अब यह सुविधा सांसदों को भी दे दी गयी है जो अगले वर्ष अप्रैल से लागू होगी ।[1]

भूटान नरेश ने पिछले महिने शिखर के भाग न ले पाने और इसकी वजह से बैठक स्थगित हो जाने पर क्षमा माँगते हुए कहा कि देश के आंतरिक हालात ने उन्हें मजबूर कर दिया था ।उन्होंने बताया कि भूटान में आंतकवाद व विदेशी घुसपैठियों और तोड़फोड करने वाले तत्वों से निपटने के लिए बेहतर इंतजार किया जा चुका है ।[2] भूटान नरेश ने कहा कि दक्षिण एशिया में आंतकवाद के लगातार प्रसार से आज क्षेत्रीय सहयोग की नींव ही चरमरा उठी है ।

मालदीव के राष्ट्रपति श्री गयूम ने अपने भाषण में सुझाव दिया कि आंतकवाद सम्बन्धी दक्षेस समझौते में ही इसके प्रावधानों को कारगर ढंग से अमल में लाने का कोई उपाय सम्मिलित किया जाना चाहिए ।

---

(1) जनसत्ता "अमीर देशों की तरह सार्क भी आर्थिक गुट बनाये" 23 दिसम्बर 1991

(2) जनसत्ता "सार्क देश आंतकवाद का मिलकर सामना करेंगे" 22 दिसम्बर 1991

दक्षिण एशिया के समस्त देश क्षेत्र में व्यापार को उदार बनाने पर सहमत हो गये । आंतकवाद की समस्या पर भी विशेष बल दिया गया । आंतकवाद के खतरे से सबसे अधिक प्रभावित होने और पाकिस्तान के साथ इस मुद्दे को उठाने के बावजूद भारत ने दक्षेस में इसकी चर्चा नहीं की । प्रधानमंत्री पी0वी0 नरसिंह राव ने अपने भाषण में यह सोचकर इसकी चर्चा नहीं की कि दक्षेस घोषणा पत्र आपसी मुद्दों को उठाने की इजाजत नहीं देता । पाकिस्तानी प्रधानमंत्री श्री नवाज शरीफ ने भी आतंकवाद के मुद्दे की चर्चा नहीं की । यही नहीं पाकिस्तान ने पहलीबार कश्मीर का मुद्दा भी नहीं उठाया ।

घोषणापत्र में कहा गया कि यदि इस क्षेत्र में आंतकवाद को खत्म करना है तो इसके लिए दक्षेस देशों में सहयोग आवश्यक है । नेताओं ने सदस्य देशों से आग्रह किया कि आंतकवाद को कुचलने के लिए दक्षेस क्षेत्रीय सम्मेलन के तहत अपने दायित्वों को पूरा करने के लिये सभी आवश्यक उपाय करें ।[1]

घोषणा में मानव अधिकारों की रक्षा की प्रवृतियों का स्वागत करते हुए यह विचार व्यक्त किया गया कि मानव अधिकारों को केवल "संकीर्ण और विशुद्ध राजनीतिक दृष्टिकोण " से नहीं देखा जाना चाहिए । इसमें कहा गया है कि " एक ओर नागरिक और राजनीतिक अधिकारों तथा दूसरी ओर आर्थिक और सामाजिक अधिकारों में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है तथा यह भी उतने ही महत्वपूर्ण है । भारत द्वारा पेश किया गया यह एक महत्वपूर्ण विचार था जिसका लगभग सभी सदस्य देशों ने समर्थन किया ।

पाकिस्तान ने दक्षिण एशिया को परमाणु मुक्त क्षेत्र बनाने की अपनी इच्छा को दोहराते हुए अमेरिका, सोवियत संघ, चीन, भारत और पाकिस्तान के बीच सलाह-मशविरे का प्रस्ताव रखा । सातों देशों ने निरस्त्रीकरण की सामान्य प्रवृत्तियों का स्वागत किया । सम्मेलन में आशा व्यक्त की गयी कि इस तरह की प्रवृत्तियाँ सैन्य शक्तियों को विश्व के अन्य क्षेत्रों में संयम बरतने को प्रेरित करेंगी। दक्षेस शासनाध्यक्षों

---

(1) राजस्थान पत्रिका " आतंकवाद से निबटने व व्यापार बनाने के लिये काम करने का संकल्प " 22 दिसम्बर ।9। पृ0-।

ने आशा व्यक्त की कि शांति की स्थितियों में बची धनराशि का उपयोग तीसरी दुनियाँ के देशों के भावी विकास के संबर्धन में किया जायेगा ।

कोलम्बो घोषणा पत्र में एशिया समेत दुनियाँ के विभिन्न भागों में लोकतांत्रिक ढंग से चुनी गयी लोकप्रिय सरकारों की स्थापना की प्रवृत्ति का स्वागत किया गया । दक्षेस के शासनाध्यक्ष ने दूरगामी महत्व का निर्णय लेते हुए कहा कि हाल में गठित अंतरसरकारी दल को एक ऐसे संस्थागत ढाँचे के विषय में समझौता करना चाहिए जिससे दक्षेस के सदस्य देशों के बीच व्यापार के उदारीकरण के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके ।

शासनाध्यक्षों ने मेजबान श्रीलंका द्वारा पेश किए गये दक्षेस प्राथमिकता के आधार पर व्यापार व्यवस्था को 1997 तक लागू करने के प्रस्ताव की सूक्ष्मता से जाँच करने का भी फैसला किया । उन्होंने गरीबी उन्मूलन के लिए एक स्वतंत्र दक्षिण एशियाई समिति की स्थापना का भी निश्चय किया । इसमें दक्षेस के सदस्य देशों के विशिष्ट लोग सम्मिलित होंगे जो इस क्षेत्र में सातों देशों के अनुभवों का गहराई से अध्ययन करेंगे । घोषणा में इस क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा की सुविधा के विसतार पर बल देते हुए एक दूसरे के अनुभवों तथा तकनीकी विशेषज्ञता का लाभ उठाकर सन् 2000ई0 तक सभी बच्चों के लिए प्राथमिक शिक्षा सुलभ करने तथा लक्ष्य प्राप्त कराने की बात कहीं गयी ।

विश्व में तकनीक के क्षेत्र में हो रही प्रगति की चर्चा करते हुए प्रधानमंत्री ने कहा कि अनुसंधान और विकास कार्यो को बढ़ावा देने और नये उर्जा स्रोतों खासकर सौर ऊर्जा के इस्तेमाल को बढ़ावा देने के लिये सार्क देशों को मिलजुलकर प्रयास करना चाहिए । उन्होंने यह भी सलाह दी कि ग्रामीण पेयजल आपूर्ति और मल निकासी जैसी परियोजना प्रारम्भ करने और दवाइयों की परम्परागत प्रणालियों के बारे में एक-दूसरे के अनुभवों का लाभ उठाना चाहिए ।

दक्षेस नेताओं ने विदेश सचिव स्तरीय स्थायी समिति को निर्देश दिया कि वह अगले वर्ष, अप्रैल में यहाँ एक विशेष बैठक करें और इसमें दक्षेस संगठन के विषय में सभी सुझावों व टिप्पणियों पर विचार किया जाये । यह समिति अपनी रिपोर्ट दक्षेस मंत्रिपरिषद को देगी ।

एक दिवसीय छठा दक्षेस सम्मेलन इस अर्थ में सफल कहा जायेगा कि विग्रह की आशंकाओं के बावजूद सहयोग की भावना अधिक दिखायी दी। चूँकि नवम्बर के प्रथम सप्ताह में होने वाली बैठक स्थगित हो गयी थी इसलिए स्वाभाविक था कि सहयोगपूर्ण वातावरण कोलम्बो में नहीं बन पायेगा । आशंका का दूसरा कारण ये भी था कि तीन दिन चलने वाला सम्मेलन एक दिन में ही समाप्त हो गया । परन्तु एक दिन जो कुछ हुआ उसे देखते हुए वह प्रतीत हुआ कि भाग लेने वाले देश इस बैठक को सफल एवं सार्थक बनाना चाहते थे । इसलिए काम की बातें ही अधिक हुई । यद्यपि पाकिस्तान व श्रीलंका ने अपनी पुरानी बातों को ही दोहराया लेकिन भारत के प्रधानमंत्री नरसिंह राव ने सार्क की वास्तविक उपयोगिता को पूरी तरह से स्पष्ट कर दिया ।

इस छठे सम्मेलन में जो भी कार्यवाही आनन फानन में वृद्धि हुई और घोषणा पत्र में जो घोषणाएं कीं गयी, यदि वे पूर्ण की जाती है तो निश्चय ही सार्क की सार्थकता में महत्वपूर्ण कदमों को और भी जोड़ जा सकता है ।

सातवाँ शिखर सम्मेलन 1992 में किसी भी समय ढ़ाका में आयोजित किया जाना निश्चित हुआ है यद्यपि यह सम्मेलन भूटान में आयोजित किया जाना था, तथापि भूटान नरेश द्वारा असमर्थता व्यक्त करने के कारण ही सातवाँ शिखर सम्मेलन बांग्लादेश में आयोजित किये जाने की घोषणा की गयी है ।

ज्ञातव्य है कि दक्षेस का पहला शिखर सम्मेलन भी 1985 में बांग्लादेश की राजधानी ढ़ाका में ही आयोजित किया गया था।

# षष्ठ अध्याय

## दक्षेस के कार्यों की समीक्षा

(अ) सफलतायें एवं असफलतायें

(ब) समस्यायें , निराकरण एवं सुझाव

(स) संगठनात्मक दोष एवं सुझाव

## दक्षेस के कार्यों की समीक्षा

8 दिसम्बर 1985 को ढ़ाका में दक्षिण एशिया के सात देशों के राष्ट्राध्यक्षों का सम्मेलन हुआ तथा दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग परिषद की स्थापना हुई। क्षेत्रीय सहयोग परिषद के सदस्य देशों के नेताओं ने इस अवसर पर जो भाषण दिये उनमें आपसी सहयोग में वृद्धि एवं तनाव समाप्त करने पर बल दिया गया । उन्होंने यह भी कहा कि नये संगठन के जन्म से इन सात देशों के बीच सद्भावना , भाईचारा और सहयोग का नया युग प्रारम्भ हुआ । उन्होंने क्षेत्रीय सहयोग परिषद के जन्म को एक " युगान्तकारी घटना ", " नये युग का शुभारम्भ " " सामूहिक सूझबूझ" एवं " राजनीतिक इच्छाशक्ति की अभिव्यक्ति " तथा एक " जन-आन्दोलन " बताया।

" दक्षेस " का प्रथम सम्मेलन क्षेत्रीय सहयोग का प्रारम्भिक चरण था, दूसरा अग्रगति का , तीसरा सुदृढ़ीकरण का तो चौथे सम्मेलन में इसने भविष्य की ओर कदम बढ़ाया । पाँचवें एवं छठे सम्मेलन के उपरान्त दक्षेस एक वास्तविकता का रूप प्रतिबिम्बित करता है । दक्षेस के अन्तर्गत सम्पन्न हुये इन सम्मेलनों ने दक्षिण एशियायी क्षेत्र में उत्पन्न अनेक समस्याओं को सुलझाने का प्रयत्न किया है और कठिनाइयों के बावज़ूद परस्पर प्रेम, सद्भावना और उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया ।

## (अ) सफलतायें एवं असफलतायें

दक्षिण एशियाई क्षेत्र में महाशक्तियों के आगमन और उन्हें दिये जाने वाले आमन्त्रणों की पृष्ठभूमि में एक कारण सदैव उपस्थित रहा और वह था क्षेत्रीय सहयोग की अनुपस्थिति या अभाव । चूँकि इस क्षेत्र में समस्त देशों के मध्य आपसी सहयोग और सद्भावना के स्थान पर तनाव और शत्रुता व्याप्त थी, अतः उन्होंने परस्पर विश्वास करने के बजाये महाशक्तियों से सहायता अर्जित की और फलस्वरूप यह क्षेत्र उन महाशक्तियों की प्रयोगशाला बन कर रह गया ।

इन सब समस्याओं से छुटकमारा पाने के लिए अस्सी के दशक में दक्षिण एशिया तथा भारतीय उपमहाद्वीप में शाँति और सहयोग के लिये किये जाने वाले प्रयासों में दक्षेस की स्थापना एक महान उपलब्धि है । 1980 के प्रारम्भ में बांग्लादेश के तत्कालिक राष्ट्रपति स्व0 ज़ियाउर्रहमान की पहल से अस्तित्व में आये इस संगठन की विधिवत स्थापना को अब लगभग सात वर्ष पूरे होने वाले हैं और अब यह संगठन एक वास्तविकता बन चुका है ।

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की स्थापना कुछ मूलभूत उद्देश्यों को लेकर हुई थी । ऐसा माना गया था कि यदि क्षेत्र के देशों में आपसी सहयोग और मित्रता की भावना सुदृढ़ होगी तो वे परस्पर मिलबैठ कर आपसी समस्या का निराकरण कर लेंगे और यह क्षेत्र महाशक्तियों के आपसी संघर्ष क्षेत्र बन जाने से बच सकेगा । क्षेत्रीय सहयोग की इस यात्रा के प्रारम्भ में आपसी तनाव ने हल्की सी आशंका अवश्य उपस्थिति की थी किन्तु स्वर्गीय ज़ियाउर्रहमान के शब्दों में -- " ...... महत्वपूर्ण घटनाओं और राजनीतिक परिस्थितियों के आधार पर काफी अन्तर हो सकता है किन्तु यें विभिन्नतायें ऐसी खाई बना सकने में समर्थ नहीं हैं, जिन पर पुल न बनाया जा सके। छुपा हुआ विश्वास आज इसके विकास का स्रोत है ।"[1]

---

(1) प्रगति मंजूषा " शाँति प्रयासों में सार्क की भूमिका" फरवरी-मार्च 1987 पृष्ठ-95

वर्तमान समय में इस क्षेत्र में व्याप्त समस्याओं और तनावों के निराकरण से दक्षेस निश्चितरूप से महत्वपूर्ण और निर्णायक भूमिका निभा सकने में समर्थ है। यदि दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संघ और उसके देश आपसी निर्णय पर आधारित कार्यवाही का सम्पादन करने में सफल हो जाते हैं तो निश्चित रूप से यह क्षेत्र शांति क्षेत्र के रूप में दृष्टिगोचर होगा ।

दक्षेस सम्मेलनों में सातों देशों ने एक मत से यह स्वीकार किया कि उनका एक लक्ष्य गरीबी मिटाना एवं आर्थिक व सामाजिक विकास की प्रक्रिया को तेज करना है । इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये उस क्षेत्र में शांति और स्थिरता अति आवश्यक है । सभी राष्ट्राध्यक्षों ने संयुक्त राष्ट्र घोषणापत्र में आस्था व्यक्त करते हुये कहा कि वे विवादों का शांतिपूर्ण हल खोजने, एक-दूसरे की प्रभुसत्ता के सम्मान और आंतरिक मामलों में अहस्तक्षेप की नीतियों पर चलेंगे । अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध में वृद्धि करने हेतु गुट निरपेक्ष आन्दोलन की महत्वपूर्ण भूमिका में सभी ने विश्वास व्यक्त किया।

क्षेत्रीय सहयोग के वे मुद्दें, जिनके कारण यह संगठन सफलता की ओर अग्रसर हुआ, घोषणा पत्र में निम्न प्रकार से हैं-

राष्ट्रसंघ और गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के घोषणा पत्र पर दृढ़तापूर्वक अमल करके क्षेत्र में शांति, स्थिरता, सद्भाव और प्रगति को बढ़ाया जाये । एक-दूसरे की सार्वभौमिकता का सम्मान हो, क्षेत्रीय अखंडता और एक-दूसरे के आंतरिक मामलों में हस्तक्षेप न किया जाये ।

शांति , स्वतन्त्रता, सामाजिक न्याय और आर्थिक आधारों पर आपस में जुड़े हुए ऐतिहासिक सम्बन्धों को और अधिक सुदृढ़ किया जाये । दक्षिण एशियाई देशों के लोगों की समान समस्याओं, हितों और आशंकाओं को पूर्ण करने के लिये मिला-जुला प्रयास हो ।

दक्षिण एशियाई देशों में आपसी सहयोग से इस क्षेत्र के लोगों की भलाई और उनका जीवन- स्तर सुधारने में मदद मिलेगी । इस क्षेत्र के देशों के आर्थिक, तकनीकी व सामाजिक मामलों में सहयोग से इस क्षेत्र के देशों को राष्ट्रीय व सामूहिक आत्मनिर्भरता पाने में मदद मिलेगी । सहयोग, लेन-देन और अनुबन्ध बढ़ने से क्षेत्र के देशों में सहयोग व आपसी सूझ-बूझ की भावना का विकास होगा ।

दक्षिण एशियाई सहयोग का उद्देश्य क्षेत्र के लोगों का भला करना है । उनका आर्थिक सामाजिक और सांस्कृतिक विकास करना है । समान उद्देश्यों के लिये अन्तर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय संगठनों में सहयोग की बात भी घोषणापत्र में कही गयी ।

दक्षेस की सबसे महत्वपूर्ण उपलब्धि यह हुई कि इसका सचिवालय अतिशीघ्र स्थापित हो गया जबकि 1953 में **नौरडिक** काउंसिल की स्थापना हुई किन्तु इसका सचिवालय आज तक नहीं स्थापित हो सका ।[1] समय-समय पर जिन तिथियों में सम्मेलन सम्पन्न हुये , वे दक्षिण एशिया के इतिहास में अत्याधिक महत्वपूर्ण तिथियाँ बन चुकी हैं।

**प्रथम दक्षेस सम्मेलन** में देशों की आम जनता के बीच सम्बन्धों को सुदृढ़ बनाने की बात पर बल दिया गया । देशों में आपसी सम्बन्धों में सुधार की गुंजाइश ऐसी स्थिति में ही संभव है जब देशों की जनता के आपसी सम्बन्ध - बेहतर हों ।[2] इस सम्मेलन में क्षेत्रीय स्तर पर सामाजिक, सांस्कृतिक , तकनीकी एवं वैज्ञानिक क्षेत्र में सक्रिय एवं पारस्परिक सहयोग को बढ़ावा देने पर बल दिया गया ।

इस शिखर सम्मेलन में कूटनीतिक स्तर पर अनेक महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हुई । यह तथ्य दक्षेस की सफलता का सूचक है कि वह दो विरोधी राष्ट्रों के सदस्यों

---

(1) विमल प्रसाद " रीजनल कॉपरेशन इन साउथ एशिया " पृ0 149

(2) दिनमान " दक्षिण एशिया- क्षेत्रीय सहयोग" 15-21 दिसम्बर- 1985, पृष्ठ-38

को वर्ष में एक बार अवश्य मिलने का अवसर प्रदान करता है जिससे वे एक-दूसरे से अपनी शिकायतें कहने और जानने का अवसर प्राप्त करते हैं । इस नये संगठन ने भारत के प्रति क्षेत्रीय देशों में व्याप्त अविश्वास के भाव को कम किया । जो देश भारत को दादागिरी की आशंकाओं से देखते थे उन्होंने ढ़ाका के मंच पर भारत और उसके तत्कालिक नेता प्रधानमंत्री राजीवगांधी की सराहना की । इस मंच से कम्पूचिया, अफगानिस्तान या तमिलों की समस्या का उठना भी एक महत्व पूर्ण बात थी । इस सम्मेलन के फलस्वरूप बने सौहार्द के वातावरण के कारण न केवल भारत-पाकिस्तान अपितु अन्य देश भी एक-दूसरे के निकट आये, यह एक महत्वपूर्ण बात है।

दक्षिण एशिया के देशों में परस्पर सांस्कृतिक सहयोग बढ़ाने के लिये संयुक्त खेल , दक्षिण एशियाई क्रिकेट, विद्वत्गोष्ठियों, नृत्य ,संगीतमेलों का आयोजन किया जा रहा है । " सार्क-दृश्य -श्रव्य केंद्र " की स्थापना के द्वारा दक्षेस देशों को परस्पर एक-दूसरे से जोड़ने का प्रयास किया जा रहा है । दक्षिण एशिया क्षेत्रीय सहयोग संघ के दृश्य-श्रव्य आदान-प्रदान कार्यक्रम के तहत रेडियो और टेलीविजन से प्रसारण प्रत्येक माह की पहली तारीख को प्रारम्भ हो चुका है ।

**द्वितीय दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग शिखर सम्मेलन-** जो बंगलौर में सम्पन्न हुआ इस सम्मेलन में यह निश्चय किया गया कि सातों राष्ट्र आंतकवाद के विरूद्ध दृढ़ संकल्प लेंगे और ईमानदारी से इस संकल्प को पूरा करने का प्रयत्न करेंगे । दक्षिण एशियाई राष्ट्रों ने महाशक्तियों से व्यापक परमाणु परीक्षण प्रतिबन्ध सन्धि के माध्यम से परमाणु अस्त्र दौड़ समाप्त करने तथा टकराने, हस्तक्षेप और प्रभुत्व की नीति त्यागने की अपील की । नशीली दवाओं पर रोक , बाल विकास कार्यक्रम, महिला कल्याण की व्यवस्था, आवागमन को बढ़ावा देने के लिये क्षेत्रीय सहयोग की व्यवस्था एवं वीसा प्रणाली में छूट देने के लिये निर्णय लिया गया ।

सम्मेलन के उपरान्त समस्त देशों ने आतंकवाद की समस्या को गम्भीरतापूर्वक लिया । आंतकवाद ऐसा मामला है जिसपर किसी भी देश की भिन्न-भिन्नराय नहीं है । सभी देशों ने आंतकवाद की रोकथाम के लिये अपने-अपने देशों में कानून बना लिये हैं ।[1] दक्षेस देश इस भंयकर समस्या से मुक्ति पाने के लिये निरन्तर प्रयत्नशील हैं ।महाशक्तियों से छुटकारा पाने के लिये दक्षेस देशों ने परस्पर सूझ-बूझ का परिचय देते हुये दक्षिण एशियाई क्षेत्र को परमाणुमुक्त क्षेत्र घोषित करने की माँग पर बल दिया है । दक्षेस संगठन के अन्तर्गत इन देशों ने सामाजिक सुधार पर विशेष बल दिया है । मादक द्रव्यों की तस्करी को रोकने के लिये हर सम्भव प्रयत्न किये जा रहे हैं । नशीले एवं मादक पदार्थो की तस्करी पर रोक सम्बन्धी दक्षेस समझौते पर दक्षेस के सदस्य देशों ने हस्ताक्षर किये हैं । इसमें इस व्यापार के दोषी अपहरणकर्मियों के दक्षेस के सदस्य देशों के बीच प्रत्यार्पण का भी प्रावधान है । समझौते में मादक द्रव्यों के व्यापारियों, हथियार-विक्रेताओं और आतंकवादियों के बीच साँठगाँठ को तोड़ने के उपाय की भी व्यवस्था है, क्योंकि इस साँठ-गाँठ से सम्बद्ध देशों की अर्थव्यवस्था भी प्रभावित होती है और उनकी स्थिरता एवं सुरक्षा पर आँच आती है ।[2] बाल-कल्याण एवं शिक्षा के व्यापक प्रसार के लिये दक्षेस देश प्रयासरत हैं । 1988 में सुप्रीम कोर्ट के जजों को वीजा की छूट देने के साथ-साथ यही सुविधा संसद सदस्यों को भी प्रदान कर दी गयी है । यह दक्षेस की सफलता के लक्षण हैं ।

**तृतीय सम्मेलन** में एक सुरक्षित खाद्य भंडार बनाने पर सहमति हुई जिसके परिणाम स्वरूप 2.21 लाख टन के एक सुरक्षित अन्न भण्डार की स्थापना की गयी । यह भंडार सदस्य राष्ट्रों को विदेशी ऋण या अल्प अन्न उत्पादन, प्राकृतिक आपदाओं की स्थिति में कम से कम खाद्य संकट से बचाये रखेगा । इसके अतिरिक्त पिछले 15 वर्षो में विशेषतः 1972 के स्टॉक होम पर्यावरण सम्मेलन के बाद से सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण की समस्याओं के प्रति जो नई जागृति उत्पन्न हुई है, यह अनुभव

---

(1) दैनिक हिन्दुस्तान " दक्षेस बैठक में व्यापारिक अड़चन दूर होने की आशा " सुन्दर लाल कुकरेजा, 21 दिसम्बर 1991

(2) राजस्थान पत्रिका " मादक पदार्थो की तस्करी पर रोक के लिये समझौता " 24, नवम्बर 1990 पृष्ठ-1

किया गया कि दक्षेस इस जागृति को नई दिशा देने में सहायक सिद्ध होगा ।

इस सम्मेलन के उपरान्त विकसित देशों के आर्थिक गुटों के कारण दक्षेस देश यह महसूस करने लगे हैं कि विकास की दौड़ में कहीं वे पीछे न रह जायें। दक्षेस देश अपने दो तरफा पूर्वाग्रह और पुराने राग-द्वेष त्यागने पर सहमत हो गये हैं ताकि आर्थिक, सामाजिक और दूसरे क्षेत्रों में आपसी सहयोग बढ़ाया जा सके । दक्षेस देशों की तकनीकी उपसमिति ने दक्षेस देशों के बीच वायुयान व्यापार आदान-प्रदान के संदर्भ में निश्चय किया है, जिसके परिणाम स्वरूप इन देशों के मध्य व्यापार एवं वाणिज्य में प्रगति हो सकती है ।[1]

**चतुर्थ सम्मेलन** जो इस्लामाबाद में 1988 में सम्पन्न हुआ, के अन्तर्गत सांस्कृतिक सहयोग पर बल देने के लिये " दक्षिण एशिया महोत्सव " आयोजित करने पर बल दिया गया । इस सम्मेलन में सार्क -2000 कार्यक्रम की घोषणा की गयी जिसके द्वारा सदस्य देशों के 2000 तक अपनी आधारभूत आवश्यकताओं जैसे- खाद्य पदार्थ, कपड़ा , शिक्षा, स्वास्थ्य, जनसंख्या एवं आवास की समस्याओं से मुक्त करने का संकल्प लिया गया । यह दक्षेस की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। दक्षेस देशों ने 1989 को " नशाबन्दी विरोधी वर्ष" एवं 1990 को " बालिका वर्ष " के रूप में मनाया, यह विभिन्न देशों में एकता एवं प्रेम का प्रतीक है । दक्षेस देशों में परस्पर सहयोग स्थापित करने हेतु दक्षेस देशों के दूर - संचार की तकनीकी समिति की बैठक 25 अक्टूबर को ढ़ाका में हुई । बैठक में दक्षेस देशों के मध्य दूर-संचार सेवा के विकास तथा पारस्परिक सहयोग के सम्पर्क के लिये संतोष व्यक्त किया गया। इस सभा में इस क्षेत्र में और अधिक प्रगति करने के लिये बल दिया गया जिसमें इन देशों के बीच पारस्परिक प्रशिक्षण, प्रशिक्षण-शिविर, सेमीनार तथा अध्ययन के संदर्भ में परस्पर देशों में जाने की छूट दी जानी चाहिए ।[1] सात देशों में संचार व्यवस्था सरकारी स्तर पर हो गयी है और जन-सामान्य के स्तर पर होने के लिये दक्षेस देश प्रयासरत है।

---

(1) आई0डी0एस0ए0 साउथ एशियन न्यूज रिव्यू, अक्टूबर-1987.
(2) आई0डी0एस0ए0 साउथ एशिया न्यूज रिव्यू, दिसम्बर-1989

**पाँचवे शिखर सम्मेलन** में बुनियादी आर्थिक क्षेत्रों के सहयोग पर बल दिया गया । इसमें भारत ने लघु एवं कुटीर उद्योगों के क्षेत्र में सहयोग बढ़ाने एवं परियोजनाओं के लिये क्षेत्रीय कोष कायम करने का सुझाव दिया । इस घोषणापत्र में कहा गया कि परियोजनाओ के अध्ययन एवं प्रगति के लिये सदस्य देशों को आसान शर्तो पर कोष उपलब्ध कराया जायेगा ।

इस प्रकार दक्षेस क्षेत्रीय निर्धनता , बेरोजगारी , भुखमरी, विदेशी कर्ज तथा अन्तर्राष्ट्रीय शक्तियों द्वारा संसाधनों के रोहन जैसी समस्याओं को समाप्त करने के लिये प्रयासरत है । दक्षेस देशों में मानवसंसाधन विकास केन्द्र, क्षयरोग नियंत्रण केन्द्र , क्षेत्रीय दस्तावेज केन्द्र की स्थापना पर सहमति प्रदान कर दी गयी है । दक्षेस देशों में परियोजनाओं को बढ़ावा देने के लिये विकास वित्त संस्थानों की एक क्षेत्रीय परिषद बनाने पर बल दिया जा रहा है । प्रस्तावित परिषद का काम क्षेत्रीय परियोजनाओं की उपयोगिता का अध्ययन करना व देशों में डी0एफ0आई0 को मजबूत करना और प्रतियोगी शर्तो पर कोष उपलब्ध करवाना होगा । दक्षेस देशों में उद्यम , विकास तथा छोटे उद्योगों के लिये ढाँचा मज़बूत करने, दक्षेस जहाजरानी संगठन बनाने और संयुक्त उद्यमों तथा तकनीक हस्तांतरण के लिए आचार संहिता बनाये जाने का सुझाव भी दिया गया है । अन्तर्राष्ट्रीय वित्त बाजार के नये कायदों से निपटने में कुछ दक्षेस देशों के विकास वित्त संस्थानों (डी0एफ0आई0) ने काफी विशेषज्ञता हासिल कर ली है ।[1]

**छठे शिखर सम्मेलन** में पुनः आंतकवाद से छुटकारा, दक्षिण एशिया को परमाणु मुक्त बनाने की इच्छा प्रकट की गयी । दक्षेस देशों की भुगतान सन्तुलन, संसाधनों की तंगी, मँहगाई और गरीबी, बेरोजगारी , बीमारी और अशिक्षा जैसी समस्याओं पर भी दृष्टिपात किया गया ।

---

(1) जनसत्ता "भारत सार्क देशों में दीर्घकालिक पूँजीनिवेश बढ़ाने के हक में,"

23 नवम्बर-1990, पृष्ठ-4

इन क्षेत्रों पर विचार करना दक्षेस की महत्वपूर्ण सफलता है । ये कार्यक्रम दक्षेस को गतिशीलता प्रदान करते है एवं मनुष्यों से जुड़े हुए विकास के मुद्दों को प्रगति प्रदान करते हैं ।

दक्षिण एशियाई संगठन के सातों देशों के राष्ट्राध्यक्षों की एक-दूसरे देशों में मित्रतापूर्ण यात्रायें, वार्तालाप और अनेक व्यापारिक समझौतो पर हस्ताक्षर इस तथ्य के प्रमाण हैं कि दक्षेस संगठन ने दक्षिण एशिया के देशों के मध्य परस्पर विश्वास को जन्म दिया है और साथ ही साथ दक्षिण एशिया की प्रगति का मार्ग भी प्रशस्त किया है । इन सम्मेलनों के उपरान्त इस क्षेत्र में सहयोग की अभी तक सबसे अधिक और आशा से बढ़कर प्रगति हुई है ।[1]

1991 को " दक्षेस आवास वर्ष " एवं 1992 को " दक्षेस पर्यावरण वर्ष घोषित किया गया है, इसका उद्देश्य यही है कि दक्षेस राष्ट्रों की इन प्रमुख समस्याओं को शीघ्रातिशीघ्र समाप्त किया जाये । इन्हीं कल्याण कार्यक्रमों की श्रृंखला में जेनेटिक संसाधन के संरक्षण की बात उठाई गयी है । समस्त देशों द्वारा जर्माप्लाज़्म बैंक के रखरखाव एवं जैनेटिक संरक्षण में विशेषज्ञों के आदान-प्रदान में सहयोग प्रदान करने पर बल दिया जा रहा है ।

दक्षेस जिसके छः अधिवेश सम्पन्न हो चुके हैं और जिसके विदेशमंत्री और राष्ट्राध्यक्ष अनेक बार एक साथ मिलकर वार्तायें कर चुके हैं, यह सिद्ध करता है कि दक्षिण एशिया में आपसी सौहार्द में आने वाली अधिकांश बाधायें दूर हो रही हैं और आर्थिक विकास के साथ-साथ एक ऐसा मजबूत राजनैतिक माहौल बन रहा है, जिसमें आशंका और संदेह की भावना काफी हद तक दूर हो चुकी है । दक्षेस की सर्वश्रेष्ठ उपलब्धि यही है कि यह सात देशों को एक साथ ले आया है और उनमे सहयोग,

---

(1) विमल प्रसाद, " रीजनल कॉओपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-149

विश्वास और राजनैतिक सम्बद्धता की भावना उत्पन्न की है ।

दक्षेस देशों में सबसे अधिक परस्पर मतभेद भारत व पाकिस्तान के मध्य हुये हैं किन्तु इस संगठन के माध्यम से इन देशों के बीच मित्रता के भाव भी उत्पन्न हुये । पाकिस्तान की प्रधानमंत्री श्रीमती बेनजीर भुट्टो ने इस्लामाबाद सम्मेलन में मानव संसाधन के विकास व 2000 ई. में दक्षेस के जिस परिदृश्य की बात को उठाया, उससे दक्षेस के विकास में एक नया मोड़ आया ।[1]

वास्तव में दक्षेस दक्षिण एशियाई राष्ट्रों के सम्पूर्ण विकास के लिये प्रयत्नशील है । श्रीलंका से भारतीय शांति सैनिकों की वापसी , नेपाल भारत के मध्य व्यापार-पारगमन संधि सम्बन्धी विवाद की समाप्ति तथा बांग्लादेश सम्बन्धी तीन बीघा-भूमि सम्बन्धी विवाद के हल हो जाने से दक्षेस का राजनैतिक वातावरण भी काफी सौहार्दपूर्ण हो गया है । यह दक्षेस की एकता एवं अखण्डता का ही निष्कर्ष है कि श्रीलंका की अखंडता की रक्षा भारत ने की तथा मालदीव को भी भाड़े के सैनिकों से भारत ने ही मुक्ति दिलायी । भूटान, बांग्लादेश, नेपाल , पाकिस्तान में यदि आपस में बहुत घनिष्ट मित्रता नहीं है, तो कोई वैमनस्य भी दक्षेस के कारण नहीं उत्पन्न हो पाता है । चूंकि दक्षिण एशिया गरीब राष्ट्रों का समूह है । इन राष्ट्रों की आत्मनिर्भरता के लिये दक्षेस के द्वारा परस्पर सहयोग को बढ़ावा दिया जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप गैर-क्षेत्रीय राष्ट्रों पर इन राष्ट्रों की निर्भरता कम हो रही है। श्री कैलाश चन्द्र काला ने कहा भारत एवं पाकिस्तान की सीमाओं से सेनाओं की वापसी दोनों देशों के मध्य सहयोग एवं सद्इच्छा का उदाहरण है ।[2]

---

(1) पब्लिक एशिया, नियाज ए नायक, " सार्क ने सहयोग के नये द्वार खोले हैं " जून, 1989 पृष्ठ-62

(2) पोलिटिकल साईंस रिव्यू, वाल्यूम 26, कैलाश चन्द्र काला " इम्पीडिमेंट्स इन कोआपरेशन एण्ड सिक्योरिटी ऑफ साउथ एशिया" जुलाई - दिसम्बर 1986 पृष्ठ-59

दक्षेस के महासचिव श्री के0के0 भार्गव ने कहा कि—

"संघ के सदस्य राष्ट्रों में सूचना, नशावृत्ति , उग्रवादी समस्या, सांस्कृतिक आदान-प्रदान आदि क्षेत्रों में आशातीत प्रगति हुई है । हमने सूचना पूल व सार्क अनाजपूल भी बनाया है, जो कि अप्रत्याशित परिस्थितियों में सदस्य राष्ट्रों की ज़रूरतों को पूरा करेगा । [1]

सोसाइटी फॉर इन्टरनेशनल डेवलपमेंट के राजस्थान स्कन्ध के अध्यक्ष व मुख्य सचिव वी0वी0एल0 माथुर ने कहा कि—

" दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संघ ने अल्प समय में ही काफी सफलतायें प्राप्त कर ली हैं । दक्षेस सदस्य देशों की समस्याओं को, विशेषतः मूल समस्याओं को अधिक कारगर ढंग से हल कर सकेगा"। [2]

इस प्रकार दक्षेस संगठन आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक विकास को तीव्र करते हुए एवं एक दूसरे की प्रभुसत्ता और अखण्डता का सम्मान करते हुए आपसी सहयोग से सामूहिक आत्म निर्भरता के लिए एक अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के रूप में सफलता की ओर अग्रसर है । दक्षेस का गठन किसी महाशक्ति के संकेत पर न होकर क्षेत्रीय आवश्यकताओं के कारण हुआ है । दक्षिण एशिया गुट-निरपेक्ष जैसे महान आन्दोलन के जनकों में से एक रहा है । अतः यह आशा की जाती है कि यह विशाल संगठन इक्कीसवीं सदी की शांति सद्भाव, शोषणमुक्त अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के लिये मार्ग प्रशस्त कर सकता है ।

---

(1) राजस्थान पत्रिका , के0के0 भार्गव " दक्षेस राष्ट्रों में पारस्परिक सहयोग की बड़ी ज़रूरत " 2 अगस्त 1991

(2) - वही -

दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग सम्मेलन जहाँ एक ओर क्षेत्रीय सहयोग में सफल हुआ वहीं दूसरी ओर कुछ उद्देश्यों की पूर्ति में **असफल** भी रहा ।

दक्षेस संगठन जिसकी आधारशिला बांग्लादेश के राष्ट्रपति स्वर्गीय ज़ियाउर्रहमान के इस आवाह्न के साथ प्रारम्भ हुयी थी " इस क्षेत्र के राष्ट्र-देशों को आपस में मिलकर लेटिन अमेरिका, अफ्रीका तथा मध्य-पूर्व के देशों द्वारा निर्मित संगठन की भाँति एक क्षेत्रीय संगठन का निर्माण करना चाहिये " । इसके साथ ही क्षेत्रीय सहयोग संगठन जिसका कि विकास समृद्धि तथा शांति के महान आदर्शों के भरे हुये नारों के साथ निर्माण हुआ उसकी उपलब्धि मात्र इतनी ही है कि सिर्फ छः सम्मेलन ही सम्पन्न हुये । भले ही इन सम्मेलनों में उन समस्याओं के हल और कारणों पर प्रकाश डाला गया जिससे दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग स्थापित किया जा सके । किन्तु ये सारे सम्मेलन केवल भारी घोषणाओं के साथ ही प्रारम्भ एवं समाप्त हो गये । उपलब्धि के तौर पर कुछ भी विशेष सफलता प्राप्त नही की जा सकी । 1985 में अस्तित्व में आने के बाद से ही दक्षेस परस्पर विरोधी नेताओं के समूह जैसा रहा है । इस कारण से व्यापार , उद्योग, ऊर्जा, वित्त जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे दब गये है, जबकि छोटे-मोटे मुद्दे ही अभी तक विषय सूची में हॉवी रहे है ।[1]

**प्रथम सम्मेलन** में केवल दक्षेस की रूपरेखा ही प्रस्तावित की गयी थी संगठन द्वारा चार्टर को मंजूरी दी गयी और संगठन के मुख्य उद्देश्यों को व्यक्त किया गया । किन्तु आज तक उसके उद्देयों में से एक भी उद्देश्य सफलीभूत न हो सका । न तो यह संगठन सम्पूर्ण क्षेत्र की जनता आर्थिक , सामाजिक , सांस्कृतिक विकास के लिये कोई विशेष सहयोग दे सका, न दक्षिण एशिया के देश एक दूसरे के आन्तरिक

---

(1) इण्डिया टूडे " दक्षेस शिखर पर संकट " दिलीप बॉब, 30 नवम्बर-1991 पृ0-76

मामलों मे हस्तक्षेप न करने के सिद्धान्त पर ही चल सके, न प्रतिवर्ष राष्ट्राध्यक्षों की बैठक ही सम्पन्न हो सकी । इन सबके साथ ही द्विपक्षीय मामलों को भी जोर-शोर के साथ उठाया गया ।

बंगलौर का **दूसरा शिखर सम्मेलन** संचार के क्षेत्र में एवं आंतकवाद के क्षेत्र में दृढ़ संकल्प लेने के साथ समाप्त हो गया । इस सम्मेलन से दक्षिण एशियाई देशों में कोई नया बड़ा परिवर्तन होने की संभावना नही प्रतीत हुयी । बड़े स्तरों पर इसी प्रकार के आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक सहयोग की बातें होती है और हर देश के प्रमुख राजनीतिज्ञ इस प्रकार के मंचों का प्रयोग केवल अपनी राजनीतिक छवि उभारने के लिये अधिक करते हैं ।[1] ऐसा ही दक्षेस के साथ भी हुआ ।

काठमाण्डू के **तीसरे शिखर सम्मेलन** में एवं इस्लामाबाद के **चौथे शिखर सम्मेलन** में जो कि भारी घोषणाओं से शुरू और समाप्त हुये , अभी तक आंतकवाद और नशीली वस्तुओं का गैर कानूनी आवागमन पर रोक के लिये किये गये समझौतों की कोई उपलब्धि नही दिखाई दी । पर्यावरण और प्राकृतिक विपदाओं पर केवल कागज़ पर ही काम चल रहा है , व्यवहारिक जगत में कुछ भी नहीं दिखाई देता है । उद्योग तथा व्यापार के क्षेत्र में सहयोग का कोई भी प्रस्ताव आज तक नही आया है । संगठन के सहयोग का जो दृश्य काठमाण्डू में दिखाई दिया, कि श्रीलंका - भारत समझौते का कोई उत्साहवर्धक स्वागत भी नही किया गया ।भारत को समस्त राष्ट्र आज भी सन्देह की दृष्टि से देखते हैं । जबकि मालदीव में भारतीय सेना त्वरित कार्यवाही से स्पष्ट हो चुका है , कि भारत रक्षक है, भक्षक नहीं । अन्य क्षेत्रों में भी सहयोग का परिणाम अभी तक शून्य ही रहा है ।

---

(1) नवभारत टाइम्स " आपसी सहयोग के विस्तार का संकल्प " 18 नवम्बर 1986

1989 में श्रीलंका ने अपने यहाँ दक्षेस शिखर सम्मेलन आयोजित करने से इन्कार कर दिया क्योंकि वह मानता था कि भारतीय शांति सेना की श्रीलंका में उपस्थिति उसके अपने आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप्प है, जबकि दोनों देशों के बीच एक हस्ताक्षरित सन्धि के तहत भारतीय सेना वहाँ गयी थी । इस तरह श्रीलंका ने मान्य सिद्धान्तों का उल्लंघन किया ।

**पाँचवे शिखर सम्मेलन** में आर्थिक क्षेत्र में बुनियादी सहयोग, जनसंचार माध्यमों में सहयोग, क्षेत्रीय दस्तावेज केन्द्र की स्थापना, कृषि - सूचना केन्द्र की स्थापना, मादक-द्रव्यों की तस्करी रोकने पर समझौता, अपराधियों की खोज आदि पर ध्यान आकर्षित किया गया था । किन्तु अभी तक न तो आर्थिक क्षेत्र में कोई सहयोग स्थापित हो सका, न केन्द्रों की स्थापना हो सकी, न तस्करी पर रोक लगाई जा सकी और न ही अपराधियों को खोजने में कोई प्रयास सफल हुआ ।

दक्षेस के **छठे शिखर सम्मेलन** के लिये आरोपों और प्रत्यारोपों का दौर चला जिसका मुख्य लक्ष्य भारत था । श्रीलंका के विदेश मन्त्री हेराल्ड का कहना था कि भारत के प्रधानमंत्री के हठ पूर्ण रवैयें के कारण कोलम्बों में होने वाला छठा सार्क सम्मेलन रद्द हुआ । उनके अनुसार कईबार सभी सदस्य राष्ट्र एवं राष्ट्रीय प्रधान नहीं सम्मलित हुये फिर भी सम्मेलन में व्यवधान नहीं पड़ा । उदाहरण के तौर पर बंगलौर सम्मेलन 1986 में तत्कालीन पाकिस्तानी राष्ट्रपति जिया-उलहक के स्थान पर प्रधान मंत्री श्री मुहम्मद खाँ जनेजो उपस्थित हुये । इसी तरह माले में दक्षेस सम्मेलन 1990 में राष्ट्रपति प्रेमदासा के स्थान पर प्रधान मन्त्री श्री विजय तुंगे उपस्थित हुये । किन्तु भूटान नरेश की अनुपस्थिति में उनके प्रतिनिधि से शिखर सम्मेलन सम्पन्न क्यों नही हो सकता था ? जबकि स्पष्ट है कि भूटान में राजा के सिवा अन्य कोई भी शासनाधिकारी नही है । अतः श्रीलंका का यह आरोप दक्षेस की सफलता में अवरोध उपस्थित करता है ।

छठे शिखर सम्मेलन में आंतकवादी समस्याओं पर विशेष बल दिया गया एवं इन्हें दूर करने की अपील की गयी किन्तु यदि दक्षिण एशिया के क्षेत्रों पर दृष्टि डाली जाये, तो लगभग अधिकाँश क्षेत्र आंतकवादी समस्याओं से ग्रसित है । पाकिस्तान पर तो यह आरोप ही लगाया जाता है कि वह आतंकवादियों को हथियार एवं प्रशिक्षण दे रहा है ।

इसके साथ ही इस सम्मेलन में संतुलित व्यापार प्रणाली की कामना की गयी किन्तु इस क्षेत्र में व्यापार प्रणाली को संतुलित करने के प्रयास भी नज़र नहीं आ रहे है ।

पिछले वर्षो में सम्मेलनों की कोई बड़ी उपलब्धि अब तक सामने नहीं आ आई है । इसका मुख्य कारण यह है कि दक्षेस में जो देश शामिल हैं उनकी शासन प्रणालियाँ और उनके उद्देश्य और हित भिन्न रहे हैं और उनमें व्यापक मतभेद भी विद्यमान हैं । गत वर्षो में दक्षेस से जुड़े देश न तो आपसी सहयोग बढ़ा पाये हैं और न ही अपने सम्बन्धों को सुधार पाये हैं ।[1]

दक्षेस शिखर सम्मेलनों द्वारा दक्षिण एशिया के सुखद भविष्य की परिकल्पना उस आदर्श के समान है जिसका यथार्थ से वहुत कम वास्ता होता हैं। संगठन की सफलता और असफलता का पता घोषणा पत्रों में पारित प्रस्तावों से कम और परोक्ष में हुये क्रूर दाव पेचों से अधिक पता चलता है । यदि इस्लामाबाद सम्मेलन को देखे तो उसके घोषणा पत्र में पाकिस्तान का वह सुझाव शामिल नहीं किया गया जिसमें कहा गया था कि क्षेत्रीय सुरक्षा व्यवस्था सुदृढ़ करने के लिये दक्षेस देश सेना में कटौती करने और एटमी निरस्त्रीकरण का संकल्प लें । यानि दक्षिण एशिया को परमाणु आयुध मुक्त क्षेत्र बनाया जाये । 1974 में भारत में परमाणु विस्फोट के बाद से ही पाकिस्तान दक्षिण एशिया में एटमी निरस्त्रीकरण की माँग करता रहा है । भारत का कहना है कि यह अन्तर्राष्ट्रीय समस्या है और एटमी निरस्त्रीकरण विश्व स्तर पर होना चाहिये । फिर दक्षिण एशिया भौगोलिक दृष्टि से अन्य एशियाई राष्ट्रों से पृथक नही है । अतः यह निरस्त्रीकरण कैसे संभव है ।[2]

---

(1) राजस्थान पत्रिका " दक्षेस सम्मेलन और भारत " संपादकीय , 12 नवम्बर 1991 पृ0-6
(2) नवभारत टाइम्स " दक्षेस कुहासे में बढ़ता मैत्री काफिला ", गिरीश मिश्र, 10 जन0-1989

स्पष्ट है कि भारत के विरोध को जानते हुये भी पाकिस्तान ने इस मसले को घोषणा-पत्र में शामिल कराने की चेष्टा की ।

कहने का तात्पर्य यह है कि क्षेत्रीय सहयोग संगठन के सदस्य देशों के आपसी विवादों, हितों के टकराव, संशयोंतनावों की उपेक्षा करके सही परिप्रेक्ष्य में न तो परिणामों को देखा जा सकता है और न ही उनका विश्लेषण किया जा सकता है । श्री लोकराज बरल ने कहा कि राजनैतिक , आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं का सामना दक्षेस देश कर रहे हैं किन्तु इस क्षेत्र में उतना सहयोग नही हो रहा है जितना कि होना चाहिये।[1]

समस्त देश अपने पृथक अस्तित्व और पहचान के लिये प्रयत्नशील हैं । अन्य देश भारत के प्रति शंकालु ही नहीं बल्कि भारत की विशाल आबादी, आकार-प्रकार और प्रगति से चिन्तित हो कर उस पर नियन्त्रण लगाने केलिये प्रयत्नशील हैं। राजीव गांधी ने इस्लामाबाद में कहा कि- भारत किसी भी देश से ग़लत फायदा नहीं उठाना चाहेगा, और दक्षेस के देशों को बराबरी का दर्ज़ा देगा । किन्तु घटनाक्रम बताते है कि भारत के प्रति अविश्वास कम नही हुआ है । इसके साथ अन्य पड़ोसी देशों के द्विपक्षीय विवाद इसके प्रमाण हैं ।

बांग्लादेश ने गंगा नदी के पानी को लेकर विवाद खड़ा किया और इस विवाद में नेपाल , भूटान को भी सम्मलित करना चाहा बाढ़ और तूफान के मौकें पर राहत के लिये गये भारतीय विमानों को उसने वहाँ उतरने की अनुमति नहीं दी । भारत के प्रति शंका को लेकर विचार-विमर्श का दौर भी बांग्लादेश में चला । इसमें अनेक देश सम्मलित हुये और अध्यक्षता भूटान ने की ।

---

(1) बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " प्रॉलम्बस एण्ड प्रोसपेक्ट्स' पृष्ठ-194

नेपाल के सम्बन्ध भारत की अपेक्षा चीन के साथ अधिक निकटता के रहे । नेपाल ने चीन से न केवल हथियार बल्कि आर्थिक स्तर पर भी काफी सहायता नेपाल ने ली है । दूसरी ओर नेपाल ने भारतीयों पर भी कुछ नियंत्रण लगाया है । नेपाल स्वयं को " शांति क्षेत्र " बनाने की बात लम्बे अर्से से करता रहा है । भारत के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रीय राष्ट्रों ने नेपाल को " शांति क्षेत्र " के रूप में स्वीकार भी कर लिया है । भारत का कहना है कि नेपाल ही क्यों पूरा " हिन्द महासागर क्षेत्र" ही "शान्ति क्षेत्र " होना चाहिए । भारत के इस रवैये पर अपनी भौगोलिक स्थिति और हितों को देखते हुए नेपाल भी भारत के प्रति शंकालु ही है ।

भूटान के साथ संधि के तहत भारत उसकी सुरक्षा के लिए प्रतिबद्ध है, लेकिन भूटान भी बांग्लादेश के साथ मिलकर अपनी शंका को किसी न किसी रूप में प्रकट कर ही रहा है ।

श्रीलंका ने तमिल मुक्ति चीतों को नियंत्रित करने के लिए गयी भारतीय शांति सेना की वापसी को लेकर राष्ट्रपति प्रेमदास का भारत के प्रति आक्रोश स्पष्ट प्रकट है । इसके बाद छठे सम्मेलन से पूर्व भी श्रीलंका ने कोलम्बो सम्मेलन सम्पन्न न करने का आरोप भारत पर लगाया । श्रीलंका के राष्ट्रपति प्रेमदास दक्षेस का उपयोग भारत के विरोधी मंच के रूप में करने के लिए उतारू दिखाई देते हैं । प्रेमदासा दक्षेस जैसे गैर राजनीतिक संगठन का उपयोग शुद्ध राजनैतिक रूप में कर रहे हैं । यदि ये बहिष्कार कभी वास्तविकता बन गया तो परिणाम भयंकर हो सकते है । 7 वर्ष पुराना " दक्षेस " नामक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक संगठन अपनी अकाल मृत्यु का शिकार भी हो सकता है ।

यह दक्षेस की असफलता का ही प्रतीक है कि किसी एक प्रतिनिधि के उपस्थित न होने पर सम्मेलन स्थगित करना पड़ता है । वैसे बैठक हो जाने पर भी असफलता मिल सकती क्योंकि दक्षेस के समस्त निर्णय सर्वसम्मति से होने का विधान है

दक्षेस द्वारा क्षेत्रीय विवादो को हल न कर सकने की असमर्थता की निन्दा भी की जाती है क्यों कि तनावपूर्ण सम्बन्धों के साये में मैत्री एवं सहयोग की स्थापना हो ही नही सकती ।

आज दक्षेस देशी के समक्ष मुँहबाये खड़ी सामाजिक- आर्थिक पिछड़ेपन की समस्या क्षेत्रीय देशों के लिए द्विपक्षीय विवाद और भारत के प्रति अन्य देशों के मन में छाये संशय-तनाव से और भी गहरी हो गयी है ।

इकोनामिक टाइम्स के संपादक के अनुसार-

" सात वर्षों के उपरान्त भी दक्षिण एशियायी देशों की मुख्य पारस्परिक समस्याओं का निदान सम्भव नहीं हो सका है । सदस्य देशों के मध्य दूसरे के प्रति अविश्वास की भावना के कारण इस संगठन की सकारात्मक प्रगति संभव नहीं हो पा रही है।[1]

यह कहना गलत नही होगा कि दक्षेस देशों में आपसी सहयोग के कदम बहुत धीरे धीरे उठ रहे हैं । दूसरे क्षेत्रीय मंच जहाँ राष्ट्रीय सीमाओं को खत्म करने की तैयारी में है वहीं दक्षेस के देश आपसी व्यापार बढ़ाने के लिए भी सहमत नही हैं । अभी तक साझा बाजार के सिलसिले में एक भी समझौता नही हो पाया है ।

दक्षेस को सफलता की ओर अग्रसर करने की जिम्मेदारी सिर्फ भारत की ही नही बल्कि समस्त सदस्य देशों की साझा जिम्मेदारी है । श्रीलंका द्वारा उत्पन्न की गयी ध्वंसमुखी चुनौती का सामना शेष सभी देशों की एक साथ मिलकर करना चाहिए।

दक्षेस में आज ऐसी अनेक कमियाँ हैं जो उसके सिद्धान्त - सहयोग , सार्वभौम सहायता, संघीय एकात्मकता, राजनैतिक स्वतंत्रता, पारस्परिक लाभ एवं अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में दखल न देने से उसको दूर ले जाती है । इसलिये दक्षिण एशिया में दक्षेस न तो अपने उद्देश्यों में पूर्ण सफल रहा है और नहीं पूर्णतः असफल रहा है।

---

(1) आई0डी0एस0ए0 साउथ एशिया रिव्यू , फरवरी 1992 पृ0-170

## (ब) समस्यायें, निराकरण एवं सुझाव

विशाल दक्षिणी एशियाई क्षेत्र विगत वर्षों से अभूतपूर्व घटनाओं और गतिविधियों तथा मित्रता तथा तनाव के आपसी सम्बन्धों के कारण विश्व राजनीति एवं विश्व समस्याओं की सुर्खियों में रहा है । आर्थिक विकास की दृष्टि से दक्षिणी एशिया दुनियाँ के सबसे दरिद्र क्षेत्रों में से एक है यद्यपि विश्व की पाँचवी आबादी इसी क्षेत्र में निवास करती है । दरिद्रता का कारण मात्र यहीं नही कि यहाँ प्राकृतिक संसाधनो का अभाव है बल्कि यह है कि यहाँ एक सदी से भी अधिक अवधि तक औपनिवेशिक सत्ता बनी रही, जिसके कारण औद्योगीकरण मे बाधा उत्पन्न हुई । सम्पूर्ण क्षेत्र में केवल भारत ही अकेला ऐसा देश है जिसने दिनों-दिन विकास किया और निरन्तर औद्योगीकरण की दिशा में भी कदम बढ़ाया।

दक्षिण एशिया के देशों के मध्य अनेक **समस्यायें** विद्यमान हैं । इन समस्याओं में गरीबी, बीमारी और जनसंख्या पर दबाव की समस्या अत्यधिक महत्वपूर्ण है । इन देशों की भौगोलिक, ऐतिहासिक और समसामयिक राजनैतिक वास्तविकता कुछ विशिष्ट विभिन्नताओं के साथ सामानता स्थिति लिए हुए है । इन देशों के मध्य स्थित समस्यायें दक्षेस के कार्यो मे बाधा उत्पन्न करती हैं ।[1]

अन्य देशों की तुलना में भारत ही आकार एवं सम्पन्नता की दृष्टि से सबसे विशाल देश है । साथ ही एकमात्र भारत ही की सीमा प्रत्येक पड़ोसी देश को स्पर्श करती है । अन्य पड़ोसी देश जहाँ एक ओर आकार की दृष्टि से बहुत छोटे व अविकसित है, वहाँ दूसरी ओर किसी भी देश की सीमा किसी दूसरे देश को स्पर्श नहीं करती । समस्त देशों से जुड़े होने के कारण दक्षिणी एशिया के अन्य राष्ट्र भारत के प्रति सशंय से घिरे हुये हैं । दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने के लिये दक्षेस नामक क्षेत्रीय संगठन की स्थापना होने के पश्चात् भी इस क्षेत्र में सहयोग स्थापित नहीं हो सका बल्कि इसके विपरीत अत्यन्त तीव्र गति से इन राष्ट्रों में परस्पर ...

---

(1) पोलिटिकल सांइस रिव्यू , वाल्यूम, 26 , जुलाई - दिसम्बर 1986 पृष्ठ-53

अविश्वास, सन्देह , वैमनस्यता की भावना ने इस क्षेत्र में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया ।

दक्षेस के कार्यो को सफल या असफल बनाने के लिये उत्तरदायी समस्याओ में एक सबसे बड़ी समस्या यह है कि दक्षिण एशिया के देशों में **द्विपक्षीय विवाद** अत्यधिक मात्रा में है । भारत की सीमा का समस्त राष्ट्रों को स्पर्श करने के कारण उनमें से अधिकांश विवाद भारत के ही साथ है ।

पाकिस्तान में लोकतन्त्र से पूर्व जनरल ज़िया ने बाँग्लादेश के निर्माण का बदला लेने के लिये भारत के विरूद्धं अघोषित युद्ध छेड़ रखा था । उनका इरादा था कि पंजाब के कुछ सिरफिरे आंतकवादियों को हथियार और पैसा देकर भारत के ही दो टुकड़े कर दिये जाये ।[1] बेनजीर के सत्ता में आने के उपरान्त उन्होंने जहाँ एक ओर भारत की तरफ मित्रता का हाथ बढ़ाया वहीं दूसरी ओर सेना की कश्मीर में कार्यवाहियों की ओर आँखे मूँद ली । परिणाम यह हुआ कि भारत पाकिस्तान के सम्बन्धों में जहाँ सुधार होने की बात सोची गई थी, वहीं पुनः युद्ध की तैयारियाँ होने लगी । फलस्वरूप बिगड़ते सम्बन्धों के कारण, जिसका महत्वपूर्ण मुद्दा द्विपक्षीय विवाद ही है, इनके सम्बन्धों में एक लम्बी चौड़ी दरार पुनः पड़ गई ।

द्विपक्षीय विवादो की श्रृखंला में क्षेत्रीय सहयोग के मध्य आई समस्या का एक रूप बाँग्लादेश में भीषण बाढ़ के रूप में दिखाई दिया । 1987 के समान 1988 में बाँग्लादेश में " बाढ़ का वर्ष " रहा । भारत द्वारा पड़ोसी धर्म के रूप में दी गई सहायता को स्वीकार करने के बजाय बाँग्लादेश ने विरोधी रूख अपनाया । उसने भारतीय विमानों को वापस भेज दिया जबकि उनकी अत्यन्त आवश्यकता थी और वे उन स्थानों पर सामग्री गिरा रहे थे जहाँ जाने में बाँग्लादेश सहित सभी देशों के वैमानिक घबरा

---

(1) पब्लिक एशिया " भारत-पाक सम्बन्धों के एक सौ पचास दिन " ओम गुप्ता, जून-1989 पृष्ठ-6।

रहे थे । बाढ़ उतरने के बाद बाँग्लादेश के राष्ट्रपति जनरल इरशाद ने एक नई तरह की राजनीति का प्रारम्भ किया । बांग्लादेश में आई बाढ़ का पूरा दोष मानो भारत का है, इस तरह के परोक्ष संकेत उनके द्वारा दिये गये। वर्तमान समय में भी दोनों देशों के मध्य द्विपक्षीय विवादों को लेकर तनाव व्याप्त है ।

भारत - नेपाल सम्बन्धों में भी व्यापार तथा पारागमन सन्धि को लेकर विवाद हुआ । इसके अतिरिक्त दोनों देशों के मध्य अन्यकारणों से भी तनाव बना रहा । नेपाल ने चीन से शस्त्र लेने का निर्णय किया । इसके साथ ही नेपाल में काम कर रहे भारतियों को परमिट लेने के आदेश दिये । इन तमाम सारी बातों को लेकर दोनों देशों के मध्य द्विपक्षीय विवाद समय-समय पर उत्पन्न होते रहते है ।

दक्षिण - एशिया का कोई भी राष्ट्र दावे से नहीं कह सकता कि श्री श्रीलंका में इतने सारे लोकतांन्त्रिक समाधान भारत की प्रत्यक्ष सहायता के बिना भी हो सकते थे । जुलाई 1987 में भारत श्रीलंका की सहायता को नहीं आता , तो 1988 में श्रीलंका यकीनन दो हिस्सों में बँट चुका होता और सैकड़ों जयवर्धने और हजारों प्रेमदास भी इसे न रोक पाते ।[1] किन्तु फिर भी शांति सेना की वापसी के मुद्दे को लेकर श्रीलंका ने अनगिनत आरोप भारत पर लगाये । वर्तमान समय में भी श्रीलंका भारत को अविश्वास की दृष्टि से देखता है ।

इसके अतिरिक्त दक्षिण एशियाई देशों के मध्य **शक्ति का असंतुलित और असमान वितरण** है जिसके परिणामस्वरूप भारत क्षेत्रीय शक्ति के रूप में उभरा क्योंकि भारत अन्य एशियाई देशों से आकार, जन-संख्या,प्राकृतिक संसाधन, आर्थिक विकास की क्षमता तथा राजनैतिक व्यवस्था में उत्कृष्ट होने के कारण अधिक शक्तिशाली है। यह समस्या क्षेत्र के अन्य देशों के मध्य तनावपूर्ण सम्बन्धों को बढ़ाने का एक प्रमुख कारण रहा है । अन्य छोटे देशों को यह सन्देह है,कि कहीं भारत दक्षिण एशिया क्षेत्र की महाशक्ति का रूप न धारण कर लें । उनकी यह अवधारणा क्षेत्रीय सहयोग के निर्माण में बाधा उपस्थित करती है ।

---

(1) दैनिक जागरण "दक्षिण एशियाई परिदृश्य- संदेहों के साये में सहकार का सिलसिला " सूर्यकान्त बाली , 2 जनवरी-1989

तनावपूर्ण वातावरण के लिये उत्तरदायी समस्याओं में एक समस्या **आर्थिक विकास की स्थिति में स्पष्ट भिन्नता** की है । भारतीय अर्थव्यवस्था का तीव्र विकास और राजनैतिक स्थिति का संतुलित होना, भारत को प्रभुत्व स्थापित करनें में सहायक सिद्ध हुये है । फलस्वरूप अन्य दक्षिणी एशियाई देशों को भय है कि न केवल भारत का प्रभुत्व इस क्षेत्र में दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है बल्कि वह अन्य देशों के आर्थिक विकास को अवरूद्ध करने में भी सफल होता जा रहा है । श्रीलंका एवं मालदीव में ली गई भारतीय सैन्य कार्यवाहियों से इस आशंका को और बल मिला है ।

दक्षिण एशिया के प्रत्येक देश में **महाशक्तियों का हस्तक्षेप** भी क्षेत्रीय सहयोग में भी बाधा उत्पन्न करता है । दक्षिण एशिया का प्रत्येक देश किसी न किसी महाशक्ति से खुले रूप में जुड़ा हुआ है । जहॉ भारत सोवियत संघ को अपना मित्र मानता रहा है, वहीं पाकिस्तान का झुकाव अमेरिका की ओर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है । नेपाल ने चीन की ओर मित्रता का हाथ बढ़ाया और श्रीलंका ने भी अमेरिका और ब्रिटेन को हिन्द महासागर में अपना सैनिक अड्डा स्थापित करने की सहमति दे दी। बॉंग्लादेश भी अमेरिकी गुट से सम्बद्ध है । इस प्रकार दक्षिण एशिया में ब्रिटेन, अमेरिका और सोवियत संघ किसी न किसी देश के साथ अपने सम्बन्ध कायम किये हुये है । ये देश अपनी विदेश नीति और सैन्य शक्ति के द्वारा भारत और पाकिस्तान के मध्य युद्ध भी करवा चुके हैं और आज भी उन दोनों देशों में शीत युद्ध का वातावरण बनाये हुये है।[1] स्पष्ट है कि जब महाशक्तियों से देश सम्बद्ध होंगे तो उनमे परस्पर सहयोग स्थापित होना कठिन है ।

दक्षिण एशिया के देशों की आर्थिक स्थिति में विभिन्नता है । इसीकारण दक्षिण एशिया के देशों में **परस्पर व्यापार असंतुलन की समस्या** व्याप्त है । इन देशों में परस्पर व्यापार न के बराबर है । ये देश व्यापार के मामले में आपस में प्रतिस्पर्धा रखते हैं । इन देशों का अधिकॉंश आयात एवं निर्यात बाह्य देशों से है । जहॉं श्रीलंका व भारत चाय के निर्यात में आपस में प्रतिस्पर्धी हैं, वहीं भारत व बॉंग्लादेश जूट के निर्यात में प्रतिस्पर्धा रखते हैं । पाकिस्तान तो व्यापार के मामले में बाह्य देशों पर

---

(1) पोलिटिकल सांइस रिव्यू, वाल्यूम 26 जुलाई दिसम्बर 1986 पृष्ठ-57

ही निर्भर रहता है । इस प्रकार ये देश अधिक मूल्य चुकाकर जापान, ब्रिटेन, अमेरिका,फ्रांस , पश्चिमी जर्मनी आदि अनेक देशों अपना व्यापारिक सम्बन्ध बनाये हुये है ।

आज दक्षिणी एशियाई देशों के मध्य सबसे विकराल समस्या इन **देशों के आंतरिक ग्रह युद्ध** से सम्बन्धित है । भारत में पंजाब समस्या, श्रीलंका में तमिल समस्या, बाँग्लादेश एवं नेपालमें सुदृढ़ लोकतन्त्र की समस्या एवं भूटान में लोकतन्त्र की बहाली की समस्या विकराल रूप से विद्यमान है । दक्षिण एशिया के देशों की ये विभिन्न आंतरिक समस्यायें दक्षिण एशिया क्षेत्र को राजनैतिक दृष्टि से कमजोर बनाती है । बीसवीं शताब्दी के आधे दशकों में इस क्षेत्र के अधिकाँश देशों ने स्वतन्त्रता प्राप्त कर ली थी किन्तु आज भी इन देशों में आंतरिक क्षेत्रीय सुरक्षा की समस्या अभी भी देखी जा सकती है । इस समस्या का एक कारण यह भी हो सकता है कि इन देशों के नेताओं का ध्यान इस राजनैतिक अस्थिरता की ओर न जाकर केवल अपने स्वार्थो पर ही केन्द्रित रहता है । यहीं कारण है कि वर्तमान सरकारें सीमा से जुड़े हुये देशों से भी समझदारी एवं विश्वासपूर्ण सम्बन्ध कायम करने में असमर्थ है । भारत-पाक सीमा का तनाव इस तथ्य का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है ।

दक्षिण एशिया के नाम पर दक्षेस का निर्माण तो किया गया किन्तु उसमें **बर्मा और अफगानिस्तान को सम्मिलित नहीं किया गया** । भौगोलिक दृष्टि से ये देश भी दक्षिण एशिया में आते है । निःसन्देह अफगानिस्तान शतप्रतिशत मुस्लिम राष्ट्र है, पर वह अरब नहीं है । इतना ही नहीं, विशाल साम्राज्यों की विशाल परिधि में वह शामिल रहा है । उसका स्वभाव ठेठ भारतीय उपमहाद्वीप की अभिव्यक्ति करता है ।[1] ठीक यही स्थिति बर्मा के सम्बन्ध में भी कहीं जा सकती है । भाषाई और सांस्कृतिक दृष्टि से दक्षिण पूर्वी एशियाई देशों का अभिन्न अंग होने के बाद भी बर्मा अपनी भौगोलिक परिस्थिति के कारण दक्षिण एशिया का हिस्सा माना जाता रहेगा । अतः ये

---

(1) दैनिक जागरण " दक्षिण एशियाई परिदृश्य - संदेहों के साये में सहकार का सिलसिला " सूर्यकान्त बाली, 2 जनवरी 1989.

दोनों देश दक्षिण एशिया में गिने जाने के बाद भी दक्षेस संगठन में सम्मिलित नहीं किये गये ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि दक्षिण एशियाई क्षेत्र में उत्पन्न अनेक समस्यायें दक्षेस के कार्यो में बाधा उत्पन्न करने के लिये उत्तरदायी है । इन अनेकों समस्याओं के कारण ही दक्षेस इस क्षेत्र में सफलता पूर्वक भूमिका का निर्वाह नहीं कर पा रहा है।

दक्षिण एशिया में अनेक समस्यायें व्याप्त है किन्तु ऐसा नहीं है कि इन समस्याओं के **निराकरण के** लिये कुछ प्रयास ही न किये गये हो । समय-समय पर इन समस्याओं के निवारण हेतु प्रयत्न किया जाता रहा है । इन प्रयत्नों के माध्यम से दक्षिण एशिया में सहयोग स्थापित किया जा सकता है एवं दक्षेस को सफल बनाया जा सकता है ।

दक्षिण एशिया के क्षेत्र की प्रथम सबसे बड़ी समस्या यह है कि भारत को समस्त पड़ोसी देश शंका की दृष्टि से देखते हैं क्योंकि भारत इन समस्त देशों में आकार आर्थिक विकास , राजनैतिक विकास, सांस्कृतिक विकास एवं सैन्य विकास की दृष्टि से अपने पड़ोसी देशों की तुलना में अत्यधिक सुदृढ़ स्थिति रखता है और यहीं कारण है कि पड़ोसी देश भारत को एक उभरती हुई महाशक्ति के रूप में देखते है । और अपनी सुरक्षा के लिये आशंकित रहते हैं ।

भारत को इस शंका के समाधान के लिये समस्त पड़ोसी देशी से मित्रता-पूर्ण एवं स्नेहपूर्ण सम्बन्ध रखने होंगे । यदि देखा जाये तो प्रारम्भ से ही भारत में अपने सभी पड़ोसियों से अच्छे सम्बन्ध बनाने का प्रयास ही किया है । आवश्यकता पड़ने पर भारत ने पड़ोसी राष्ट्रों की मदद भी की है । दक्षेस की स्थापना के बाद भी उसका यहीं प्रयत्न रहा कि उसके सभी पड़ोसी देशों के साथ मित्रता पूर्ण सम्बन्ध बने रहे । दक्षेस के सचिवालय की स्थापना के समय भारत ने अत्यन्त नम्रतापूर्ण मार्ग अपनाया था । वास्तव में देखा जायें तो समस्त देशों में सबसे अधिक विशाल एवं

विकसित अवस्था में होने के कारण दक्षेस का सचिवालय भारत में स्थापित होना चाहिये था किन्तु फिर भी जब कांठमाण्डू में सचिवालय स्थापित करने का प्रस्ताव किया गया तो भारत ने उस प्रस्ताव का प्रसन्नता पूर्वक स्वागत किया और किसी भी प्रकार का विवाद उत्पन्न नहीं किया । उस समय कुछ देशों ने आपत्ति भी की थी कि भारत दब्बू रवैया अपना रहा है किन्तु भारत ने इस प्रकार की किसी बात की ओर ध्यानाकर्षण नहीं किया । अतः कहा जा सकता है कि भारत ने प्रारम्भ से ही अपने पड़ोसियों के साथ मित्रता पूर्ण मार्ग अपनाया है ।

द्वितीय व्यापक समस्या यह है कि दक्षिण एशिया के देशों में द्विपक्षीय विवाद उग्र रूप धारण किये हुये हैं जिसके कारण इस क्षेत्र की उन्नति में बांधा पहुँचती है । अधिकांशतः विवाद भारत से ही जुड़े है क्योंकि समस्त देशों की सीमायें भारत से स्पर्श करती है ।

दक्षेस ने इस समस्या के निराकरण में भी अपना योगदान दिया है । वर्ष में दो बार विदेश मंत्रियों के स्तर की बैठकें होती है और वर्ष में एक बार सभी देशों के राष्ट्राध्यक्ष मिलकर दक्षिण एशिया के सार्वभौमिकहित के लिये सम्मेलन करते है । यद्यपि द्विपक्षीय विवादों को उठाने का कोई भी नियम दक्षेस में नहीं है किन्तु फिर भी जब समस्त देश को शासनाध्यक्ष वर्ष में एकबार संयुकत बैठक करेंगे तो उसी दौरान वे प्रृथक बैठकर परस्पर अपने द्विपक्षीय विवादों को भी समाप्त करने का प्रयत्न करते रहते हैं । परस्पर दिये गये भोज आदि के निमन्त्रण के अर्न्तगत मिल-बैठकर वे अपनी समस्याओं को सुलझाने का प्रयास करते हैं और उसमें सफल भी होते हैं। इस प्रकार दक्षेस सम्मेलन के परोक्ष में धीरे-धीरे द्विपक्षीय मसलों का निवारण भी होता रहता है । उदाहरण के लिये अधिकाँशतः विवाद भारत और पाकिस्तान के मध्य हुये । दक्षेस के माध्यम से इनके मध्य की अनेकों समस्याओं का निराकरण किया गया । 31 दिसम्बर, 1988 को इनके मध्य तीन समझौते हुये । इसमें एक-दूसरे के परमाणु ठिकानों पर हमला न करने, सांस्कृतिक आदान-प्रदान बढ़ाने और अन्तर्राष्ट्रीय हवाई परिवहन से

होने वाली आय पर दुहरे करों से बचने की व्यवस्था है ।[1]

आंतकवाद के सम्बन्ध में अप्रैल, 1989 में बेनजीर सरकार ने दो कनाडावासी सिक्खों को देश छोड़ने का आदेश दिया । अब पाकिस्तान के हवाई अड्डों पर सिक्ख यात्रियों की बड़ी जाँच होती है । भारत ने पाकिस्तान को एक लम्बी सूची दी हुई है, इस सूची में उन सिक्खों का ब्यौरा है, जो विदेशी धरती से पंजाब में अलगाववाद का चिराग जलायें हुये हैं ।[2] बेनजीर की इस कार्यवाही से उनपर हमले का प्रयास किया गया । भारत ने अपनें कूटनीतिक सूत्रों से यह सूचना पूरे सबूतों के साथ श्रीमती बेनजीर तक पहुँचा दी । बेनजीर इसबात से बड़ी कृतज्ञ हुई।

वर्तमान में पुनः काश्मीर को लेकर भारत और पाकिस्तान के बीच विवाद उत्पन्न हो गया है फिर भी भारत ने कभी अपनी ओर से युद्ध करने की पहल नहीं की । वह अपनी ओर से सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों के लिये तत्पर है । इसी प्रकार भारत, बाँग्लादेश, नेपाल, भूटान, श्रीलंका आदि से भी अपने सम्बन्धों को अतिमधुरता पूर्ण बनाने का इच्छुक है । यह सही है कि उनके मध्य विवाद भी उत्पन्न हो जाते हैं किन्तु भारत अपने नम्रतापूर्ण रवैये से उन्हें दूर भी करता है । उदाहरण के लिये भारत-श्रीलका शांति सेना वापसी के विवाद पर भारत ने उदारतापूर्ण रवैया अपनाया । इसी तरह से बाँग्लादेश के साथ भी तीन बीघा के विवाद पर भारत ने सहृदयता का परिचय दिया ।

दक्षिण एशिया के मध्य एक समस्या-आर्थिक विकास की स्थिति में स्पष्ट भिन्नता है। इसके निराकरण के लिये दक्षेस सम्मेलन के अन्तर्गत एक संयुक्त खाद्य भण्डार का निर्माण किये जाने के लिये समझौते पर हस्ताक्षर हुये है । यदि किसी देश में खाद्यान्न का संकट उत्पन्न होता है तो वह इस खाद्यान्न भण्डार में सहायता प्राप्त कर सकेगा । दक्षिण एशिया के समस्त देशों ने अपनी अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने का भी प्रयास किया है । समस्त देश यह प्रयत्न कर रहे हैं कि उनका आर्थिक स्तर ऊँचा हो ।

---

(1) नव भारत टाइम्स " दक्षेस के कुहासे मे बढ़ता काफिला " , गिरीश मिश्र
10 जनवरी 1989 पृष्ठ-5

(2) पब्लिक एशिया " भारत-पाक सम्बन्धों के एक सौ पचास दिन " ओमगुप्ता
जून 1989 पृष्ठ-6।

दक्षिण एशिया के देशों मे समस्याओं की श्रृंखला में एक व्यापक समस्या महाशक्तियों के हस्तक्षेप की है । इन सम्बन्ध में दक्षेस के सम्मेलनों मे महाशक्तियों से अपील की गई कि परमाणु शास्त्रों मे कटौती करने के लिये वे परस्पर वार्ता करें , जिससे दक्षिण एशिया परमाणु शास्त्र रहित बन सकें । इसके अतिरिक्त समस्त देशों पर इस बात के लिये बल दिया गया कि समस्त देश एकजुट होकर महाशक्तियों को विरूद्ध आवाज उठायें एवं अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में और संयुक्त राष्ट्र संघ में एक जुट होकर इन महाशक्तियों का विरोध करें । हिन्द महासागर मे उपस्थित महाशक्तियों के लिये भी समस्त देशों को एक साथ आवाज उठाने के लिये प्रोत्साहित किया गया ।

संयुक्त राष्ट्रसंघ में परस्पर व्यापार असंतुलन को मिटाने के लिये इस बात पर बल दिया गया कि वे परस्पर वस्तुओं का आयात-निर्यात करें । इन देशों के मध्य व्यापार के लिये एक साझा बाजार की कल्पना भी की गई है जिससे व्यापार प्रणाली संतुलित हो सकें । इसके अतिरिक्त इस क्षेत्र के देशों की अर्थव्यवस्था एवं लोगों की बुनियादी ज़रूरतें पूरी करने के लिये आर्थिक कार्य योजना भी प्रस्तुत की गई है ।. जिसमें भोजन , कपड़ा, मकान, शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य एवं जनसंख्या नियन्त्रण जैसी बुनियादी आवश्यकतायें सम्मिलित की गई हैं ।

दक्षिण एशिया में लगभग समस्त देशों में ग्रह युद्ध की स्थिति बनी हुई है । इस स्थिति का कारण पड़ोसी राष्ट्रों से भिन्नता बनाये रखना है। जबकि देखा जाये तो दक्षिण एशिया के समस्त देश एक दूसरे से पृथक प्रतीत होते हुये भी एक क्षेत्र में स्थिति होने के कारण अनेक समानताओं को लिये हुये है । उदाहरण के लिये श्रीलंका में तमिल समस्या का प्रकरण भारत के तमिलों से सम्बन्धित है । दक्षेस के माध्यम से समय-समय पर इनके समाधान के लिये प्रयत्न किया गया है । तमिल समस्या के संदर्भ में ही थिम्पू वार्ता के द्वितीय सम्मेलन में भारत सरकार ने परिस्थिति का लाभ उठाकर श्रीलंका के साथ तमिल समस्या के समाधान हेतु विचार विमर्श किया था।

इन सम्मेलनों में परस्पर आर्थिक, सामाजिक , सांस्कृतिक क्षेत्रों में सहयोग पर बल दिया गया है तथा प्रभुसत्ता, क्षेत्रीय अखण्डता एवं आंतरिक विषयों में हस्ताक्षेप न करने पर विश्वास व्यक्त किया गया है । समस्त सम्मेलनो में सात देशों के मध्य कृषि , डाक व्यवस्था, और ऊर्जा और बायोगैस, जहाजरानी , नागरिक उड्डयन , यातायात, , तकनीकी सहयोग, अध्ययन और सांस्कृतिक आदान-प्रदान जैसे औपचारिक मुद्दों पर सहमति हुई थी। मुद्दों पर विशाल पुल के आधार स्तम्भ अवश्य बन सकते है, जिसे दक्षिण एशियाई देशों के बीच की खाई पाटने की परिकल्पना दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग के माध्यम से की गयी है ।[1]

अफगानिस्तान और बर्मा को सम्मिलित न करने की समस्या के निराकरण के लिये सम्मेलनों में जब अफागनिस्तान ने अपनी सदस्यता के लिये सिफारिश भेजी तो समस्त देशों द्वारा इस पर विचार विमर्श किया गया किन्तु समस्त देशों के मध्य हुये मतभेदों के कारण इस समस्या का समाधान सम्भव नहीं हो सका ।

दक्षिण एशिया में व्याप्त समस्याओं को दूर करने के लिये दक्षेस ने पर्यटन, टेक्नालॉजी , दूर-संचार, युवकों के शैक्षणिक आदान-प्रदान, महिलाओं और बच्चों के कल्याण के कार्यक्रमों द्वारा बेहतर जीवन देने पर बल दिया गया । इसके अतिरिक्त दक्षेस में विश्व शाँति, निःशस्त्रीकरण, स्वालम्बन और संतुलित क्षेत्रीय विकास के बारे में वार्ता की गई । भारत के प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी ने कहा था कि इससे भारतीय उपमहाद्वीप के देशों के बीच क्षेत्रीय सहयोग से पारस्परिक सम्बन्धों को सुधारने में सफलता मिलेगी ।[2] दक्षेस उनके इस कथन को चरितार्थ करता है ।

दक्षिण एशिया में अनेक समस्यायें सहयोग के मार्ग में बाधक है । यद्यपि इन समस्याओं के निराकरण के लिये प्रयास किये गये है किन्तु वर्तमान स्थिति को

---

(1) धर्मयुग " परस्पर विश्वास और सहयोग के खुलते द्वार " राजकुमार सिंह ,9 नवम्बर।986

(2) स्टेट्समैन, 8 दिसम्बर ।985

देखते हुये दक्षिण एशिया में सहयोग कायम करने के लिये और भविष्य में इस क्षेत्र को सुदृढ़ बनाने के लिये कुछ **सुझाव** दिये जा सकते है -

सर्वप्रथम भारत को समस्त पड़ोसियों के साथ अपनी स्थिति सुदृढ़ करके महत्वपूर्ण सहयोगी पड़ोसी बनने की कोशिश करनी चाहिये जिससे वह अन्य देशों को विश्वास में ले सके ।

यदि यह कामना की जाये कि क्षेत्रीय सहयोग एक वास्तविकता बन सके तो उससे पूर्व हमें दक्षिण एशिया में क्षेत्रीयता की उन्नति को अवरूद्ध करने वाली दो बाधाओं पर भी नियन्त्रण पाना होगा ।

**प्रथम** यह है कि क्षेत्रीय सहयोग को किसी भी स्थिति में प्रभुत्व-निर्भरता के सम्बन्धों का रूप नहीं लेने देना चाहिये । इस क्षेत्र में भारत हावी होने की स्थिति में है और अपने विशाल संसाधनों, वैज्ञानिक और तकनीकी कुशलता के साथ प्रभावशाली उपलब्धियों के रहते हुये किसी भी ढ़ाँचे में भारत अनिवार्यतः एक प्रभुत्वपूर्ण साझेदार के रूप में रहेगा । भारत , पाकिस्तान के अतिरिक्त इस क्षेत्र के अन्य देश वे छोटी-छोटी शक्तियाँ है जिन्हें शंका करने का पूरा औचित्य है कि कहीं क्षेत्रीय सहयोग एक तरफा सहयोग बनकर ही न रह जाये । इसके लिये निरन्तर प्रयास करना पड़ेगा ।

**द्वितीय** भारत- पाकिस्तान की पारस्परिक स्थिति से सम्बन्धित है । काश्मीर और कच्छ के सम्बन्ध में दोनों देशों के क्षेत्रीय विवादों, बांग्लादेश मुक्ति आंदोलन में भारत के समर्थन आदि के कारण दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग अवरूद्ध हो गया है । अणु शस्त्रों के निर्माण की क्षमता को लेकर दोनों देशों के मध्य आपसी संदेह और अविश्वास बना हुआ है, यदि ऐसी क्षमता किसी एक अथवा दोनों देशों में रहती तो भी इस कारण आर्थिक सहयोग की दृष्टि से दोनों देशों के निकट आने की संभावनाओं पर कोई प्रतिकूल असर नहीं पड़ना चाहिये । यह कहा जा सकता है कि यदि भारत की ओर से पाकिस्तान को अभी भी खतरा बना हुआ है तो विशाल शक्तियों के सैनिक समझौते के अभाव में उसके लिये क्षेत्रीय स्तर पर सदस्य बन जाना उसके हित

में होगा, जिससे उसकी सुरक्षा और अधिक सुदृढ़ हो सके ।

भारत और पाकिस्तान को एक दूसरे को प्रचार का मुद्दा बनाने के बजाय अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिद्वन्दता में साथ मिल कर एक क्षेत्रीय शक्ति का संगठन तैयार करना चाहिये , जो दक्षिण एशिया की सुरक्षा की समस्या को बाह्य ताकतों से सम्मानपूर्वक सुलझा सके, जिससे संगठन हिन्द महासागर सम्बन्धी निर्णय अपने क्षेत्र में ही ले सके । भारत - पाकिस्तान को विराधी नहीं बल्कि सहयोगी रूख अपनाना चाहिये और और ज्ञान- विज्ञान के क्षेत्रों में सम्मिलित प्रयास करके आत्मनिर्भरता की ओर अग्रसर होना चहिये ।

भारत एवं बांग्लादेश को भी परस्पर विरोधी रूख न अपना करके द्विपक्षीय सहयोग के साथ समस्याओं को हल करने का प्रयास करना चाहिये । परस्पर समझौते द्वारा सीमा विवाद, बाढ़ आदि समस्याओं को हल किया जा सकता है । जूट आदि के व्यापार में परस्पर प्रतिस्पर्धा का मार्ग न अपनाते हुये सहयोग का मार्ग अपनाना चाहिये और व्यापार बढ़ाना चाहिये ।

इसी प्रकार नेपाल एवं भारत को भी मैत्री पूर्ण मार्ग अपनाना चाहिये क्योंकि प्रारम्भ से ही ये दोनो देश सांस्कृतिक रूप से सम्बद्ध है । परस्पर विरोधी मार्ग ने चुन कर उन्हें सहयोग मार्ग चुनते हुये आपस में व्यापार में वृद्धि करनी चाहिये ।

श्रीलंका भी भारत का एक अभिन्न पड़ोसी देश है । श्रीलंका में एक अलग प्रकार का लोकतन्त्र विकसित हुआ है जिसकी पृष्ठभूमि पर दो समुदायों का झगड़ा लोक तन्त्रीय देश के विभाजन का मुद्दा बनने लगा था । जब भारत ने तमिलों के दमन का रास्ता पकड़ ही लिया था तो उसे सम्पूर्ण गुट को आत्मसमर्पण के लिये बाध्य कर देना चाहिये था और सिंहलियों के साथ सम्मान पूर्वक जीने के समझौते को आधार बना करके श्रीलंका की नवनिर्वाचित सरकार को सहयोग प्रदान करना चाहिये था । इसके अतिरिक्त श्रीलंका के साथ चाय आदि के व्यापार में प्रतिस्पर्धा को हटा कर सहयोग करना चाहिये और परस्पर व्यापार को वढ़ाना चाहिये ।

भारत, पाकिसतान, नेपाल, श्रीलंका में उभरता नया लोकतन्त्र यदि संगठन को हितों को अपने क्षुद्र राष्ट्रीय हितों से ऊपर रखकर सहयोग के क्षेत्र में कदम बढ़ाये तो पूरे महाद्वीप के लिये सन् 2000 तक सहयोग का व्यापक आधार प्राप्त हो सकेगा । अन्यथा सिर्फ वार्ता और सैर सपाटे से यह संगठन अधिक महत्व को नहीं प्राप्त कर सकेगा ।

सहयोग के नये क्षेत्र में पाकिस्तान आदि देशो के साथ मिलकर बर्मा और अफगानिस्तान की सदस्यता के प्रश्न को लेकर नीतिगत निर्णय लेना चाहिये । समस्त देशों को मिलाकर ही एक विस्तृत दक्षिण एशियाई संगठन निर्मित होना चाहिये तथा अफगानिस्तान-समस्या, श्रीलंका-समस्या और बर्मा की समस्याओं को हल करके सहयोग के साथ एक विशाल जन-समुदाय के आर्थिक एवं सामाजिक कल्याण में वृद्धि करनी चाहिये एवं इसके साथ-साथ विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में सहयोग के मार्ग खोजना चाहिये जिससे कि सम्पूर्ण क्षेत्र आर्थिक , सैनिक एवं तकनीकी दृष्टि से सहयोग एवं आत्मनिर्भरता का केन्द्र बन करके अन्र्तराष्ट्रीय राजनीति में उभरें ।

दक्षेस संगठन के सभी देशों को सर्वसम्मति से इस निर्णय पर पहुँचना होगा कि वे अपनी आन्तरिक एवं बाहृय , किसी भी प्रकार की समस्या के निराकरण के लिये महाशक्तियों की मदद नहीं लेंगे और इस क्षेत्र में उनकी हस्तक्षेप की नीतियों का एकजुट होकर विरोध करेंगे । ऐसी क्षेत्रीय समस्यायें , जो मूल रूप में द्विपक्षीय या बहुपक्षीय सम्बन्धों पर आधारित हैं, उन्हें आपसी सद्भाव और निर्णय से समाप्त करने का प्रयास करना होगा ।

दक्षिण एशिया के देशों में परस्पर व्यापार न के बराबर है । ये देश अन्र्तराष्ट्रीय व्यापार में परस्पर विरोधी हैं । ऐसी स्थिति में जब तक " साझा बाजार " जैसी व्यवस्था नहीं होती इन देशों का आपसी व्यापार बढ़ना कठिन है । यदि साझा बाजार की स्थापना हो जाती और क्षेत्रीय देशों के आयात-निर्यात का नियन्त्रण एक स्तर पर होता तो लाभ हो सकता था वरना महाशक्तियों का प्रभाव भी क्षेत्र से समाप्त

नहीं किया जा सकता क्योंकि यदि ये देश अपना आयात इन बाह्य देशों से रखते है तो निर्यात भी उन्हें ही करना इनकी मजबूरी बन जायेगी । भारत का उद्देश्य यह है कि क्षेत्रीय देश अधिक मूल्य चुकाकर जापान, ब्रिटेन, अमेरिका , फ्रांस , पश्चिमी जर्मनी आदि देशों से बस्तुयें लेने के बजाये वहीं वस्तुयें यदि भारत से खरीदें तो उन्हें सस्ता पड़ सकता है ।.

विकासशील देशों का आपसी व्यापार बढ़ाने के लिये तीन साधन हो सकते है । प्रथम-कस्टम क्षेत्र का निर्माण, द्वितीय-स्वतंत्र साझा बाजार का गठन । तृतीय-आपसी व्यापार में रियायतें देकर । इनमें से भारत केवल तीसरी स्थिति को अपने पक्ष में करने के प्रयास में है । पाकिस्तान से व्यापार समझौते के कारण स्थिति में परिवर्तन आ सकता है बशर्ते दोनो देशों के बीच राजनैतिक स्थिति को सामान्य बनाने का प्रयास जारी रहे ।

आर्थिक सहयोग के समर्थक यह तर्क भी प्रस्तुत करते हैं कि क्षेत्रीय स्तर पर आर्थिक एकीकरण से निजी तौर पर पूँजी लगाने वाले लोग छोटे और विकासशील देशों में पूँजी लगाने के इच्छुक नहीं रहते । व्यापारिक बाधायें समाप्त करने से अन्तः-क्षेत्रीय व्यापार की वृद्धि होती है । सहयोग का आशय यही हो कि उत्पादन में वृद्धि हो । विभिन्न देशों के उत्पादन कार्यक्रमों के बीच ऐसा तालमेल बिठाया जाना आवश्यक है, जिससे कि समूचे क्षेत्र में अर्थ-व्यवस्था के असंतुलित विकास पर अंकुश लगाया जा सकें ।

श्री तरलोक सिंह जी ने कहा है कि इस क्षेत्रीय सहयोग की दिशा में अभी हमें ठोस कदम उठाने पड़ेगे । दक्षेस मे जो प्रस्ताव पारित हो चुके है उन पर कार्य हों और फिर नये क्षेत्रों में समझौतों को पारित करके उन्हें क्रियान्वित करने के लिये दूसरी प्राथमिकता दी जानी चाहिये । इसका यह अर्थ नहीं कि प्रस्तावित क्षेत्रों को हम महत्वपूर्ण न समझें । ये अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं और इनका विकास निजी

देशों की परिस्थितियों के विकास पर निर्भर करता है ।[1]

दक्षिण एशिया में सहयोग स्थापित करने के लिये अन्य सामूहिक मुद्दों, जैसे-तकनीकी का आदान-प्रदान, परस्पर देशों से सहायता प्राप्त होना , घरेलू उद्योगों का प्रभाव आदि क्षेत्रों पर अत्यधिक गहन अध्ययन की आवश्यकता है। ये अध्ययन गैर सरकारी स्तर पर किया जाना चाहिये । इस क्षेत्र में मूल्यों और लाभ का सही-सही मूल्यांकन किया जाना चाहिये । इसके अतिरिक्त पृथक-पृथक समस्याओं को एक करके समाधान करना चाहिये क्योंकि जब समस्यायें अलग-अलग रहेंगी तो उनके समाधान में अधिक कठिनाई होगी । इस क्षेत्र में विभिन्न विभागों के विकास और राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर दूर दृष्टि डालनी चाहिये ।

दक्षिण एशिया के क्षेत्र की अर्थव्यवस्था पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये । भारत का यह कर्तव्य है कि वह इस क्षेत्र मे विशेष रूप से योगदान करे । यदि भारत इस क्षेत्र मे पहल करेगा तो कुछ समय बाद निश्चय ही अन्य देश भारत का अनुसरण करेंगे । तकनीकी क्षेत्रों आदि पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है । पर्यावरण, जिसमे सबसे बड़ी समस्या पेड़ों का कटना है, इस पर विशेष रूप से ध्यान दिया जाना चाहिये । समस्त शिखर वार्ताओं के द्वारा मनुष्य के मनुष्य से सम्बन्ध पर विशेष बल दिया जाना चाहिये । यद्यपि इस क्षेत्र में कार्य प्रारम्भ हो चुका है किन्तु व्यवहारिक रूप से इस दिशा मे कदम उठाना अभी शेष है ।

---

(1) बिमल प्रसाद, " रीनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृ0 159

## (स) संगठनात्मक दोष एवं सुझाव

सन् 1985 में जब दक्षेस की स्थापना हुई, तो उस समय ही इस संगठन की उपयोगिता पर शंका प्रकट की गयी थी । प्रारम्भ से ही दक्षेस उलझनों से घिरा हुआ रहा है और स्थापना के उपरान्त 7 वर्ष की लम्बी अवधि व्यतीत हो जाने के बाद भी यह सफलता की उन सीढ़ियों पर नहीं चढ़ सका, जिसकी इसके स्थापना के समय अपेक्षा की जाती थी । निश्चित ही इस संगठन में निर्माणकाल से ही कुछ दोष उपस्थित हैं, जिसके कारण ही यह संगठन दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने में सक्रिय भूमिका का निर्वाह नहीं कर पा रहा है ।

सर्वप्रथम, इसकी स्थापना में अत्यधिक शीघ्रता दिखायी गयी । जहाँ अन्य राजनैतिक आर्थिक संगठनों के निर्माण में पर्याप्त समय लग गया और अत्यन्त सूझ-बूझ के उपरान्त उनका निर्माण किया गया, वहीं दक्षेस के गठन में अत्यधिक शीघ्रता दिखायी गयी । यही कारण है कि इसके संगठन में भौगोलिक , सामाजिक एवं सांस्कृतिक आधार तो उपयुक्त है किन्तु आर्थिक एवं राजनैतिक सभ्यता के ढाँचे में सदस्य देश समान नहीं हैं । इसके विपरीत अब तक विश्व में जितने भी सफल क्षेत्रीय संगठन बने हैं वे आर्थिक एवं राजनैतिक एकरूपता के कारण ही टिक सके हैं ।

दक्षेस की स्थापना यूरोपीय साझा बाजार की कल्पना को लेकर की गई थी। यूरोपीय साझा बाजार पश्चिम यूरोप की पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्थाओं को जोड़ने के लिये अस्तित्व में आया । इसी एक रूपता के कारण वह सफल हो सका । कामकान पूर्वी यूरोप की साम्यवादी व्यवस्थाओं को समेकित करने के लिये गठित किया गया । यही नहीं एशियान का गठन भी समान अर्थव्यवस्था वाले देशों के द्वारा किया गया । सभी देश पूँजीवाद समर्थक तथा साम्यवाद विरोधी हैं। इन आर्थिक संगठनों के अतिरिक्त विश्व में, अनेक राजनैतिक संगठन भी हैं । अफ्रीकी एकता संगठन, लैटिन अमेरिकी संगठन तथा यूनजुस (UNZUS) सभी समान राजनैतिक संगठन है । इस मानचित्र में दक्षेस देशों में न तो आर्थिक सामंजस्य है और न ही राजनैतिक । राजनैतिक आधार पर गठित संगठन अधिक सफल भी नहीं हुये जबकि आर्थिक आधार पर गठित संगठन

कुछ सीमा तक सफल रहें।

दक्षेस संगठन में **आर्थिक दृष्टि से** अनेक दोष विद्यमान हैं ।

श्री ज़ियाउर्ररमान की दक्षेस की कल्पना भी यूरोपीय साझा बाज़ार जैसे संगठनों पर आधारित रही है । इस सात सदस्यीय संगठन के प्रारम्भ से यह आशा की जा रही थी कि यूरोपीय साझा बाजार या एशियान देशों के संगठन की तरह ही यह संगठन भी सदस्य देशों के बीच आर्थिक, सामाजिक , राजनैतिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्धों को विकसित करने में सहायक होगा किन्तु प्रारम्भिक काल से ही यह संगठन शंकाओं से ग्रस्त रहा है ।

यूरोपीय साझा बाजार की परिकल्पना की नकल तो आसान है पर उसे मूर्तरूप देना उतना ही कठिन है । वर्षों पूर्व यूरोप के चिन्तकों ने इस दिशा में सोचना प्रारम्भ किया था । द्वितीय महायुद्ध की विनाश लीला की पृष्ठभूमि में एक परिकल्पना को साकार रूप देने का सार्थक प्रयास हुआ । प्रारम्भिक कठिनाइयों के मध्य राष्ट्रीय सीमाओं के दायरे में यूरोपीय साझा बाजार का क्रमिक विकास हुआ । जब सामूहिक प्रयास के आधार पर एक ऐसी आर्थिक शक्ति के रूप में यह उभरा, जिसकी उपेक्षा करना सम्भव नहीं रह गया तब जाकर ब्रिटेन ने इसकी सदस्यता स्वीकार कर ली ।[1] समय व संकीर्ण राष्ट्रीयता के कड़वे लम्बे अनुभवों के बाद ही यूरोपीय साझा बाजार का प्रारम्भ हुआ ।

इसके विपरीत दक्षेस के सदस्यों को स्वतन्त्र संगठन के रूप में सिर्फ पाँच वर्ष की ही अल्पअवधि का समय लगा और अभी सात वर्षों के उपरान्त भी आर्थिक विकास की प्रक्रिया में जहाँ यूरोपीय साझा बाजार में अधिकांश देश काफी विकसित और सम्पन्न है, वहाँ दक्षेस के सभी सदस्य देशों में आधे से अधिक जनसंख्या गरीबी की रेखा के नीचे जीवन यापन की न्यूनतम आवश्यकताओं के लिये संघर्षरत है । ये देश अपनी आर्थिक प्रगति के लिये विश्व बैंक, अमेरिका, यूरोपीय साझा बाजार, जापान, सोवियत संघ

---

(1) दिनमान " दक्षेस की दयनीयता - संदेह , शंका और अविश्वास का माहौल," हरकिशोर सिंह 31 अगस्त 1989 - पृष्ठ 66

या अरब देशों के ऋण पर निर्भर हैं ।

जहाँ यूरोपीय साझा बाजार के संस्थापक सदस्य देशों में बुद्धिजीवी वर्ग के बीच लम्बे समय तक वार्तायें चली थीं एवं जनमानस द्वारा स्वीकृति प्राप्त होने पर ही इस संगठन की स्थापना की दिशा मे प्रयास हुये थे, वहीं इसके ठीक विपरीत दक्षेस की स्थापना सम्बन्धी विचार-विमर्श सदस्य देशों के सचिवालयों तक ही सीमित रहे । कहा तो यह जाता है कि विदेश मंत्री नटवरसिंह ने अपने अति उत्साह में प्रधानमंत्री की दक्षिण एशियाई देशों की एकता के रूप में प्रतिष्ठापित करने के उद्देश्य से इस संगठन की स्थापना में ज़रूरत से ज्यादा ज़ल्दबाजी दिखाई। नतीजा सामने है।[1]

इसके अतिरिक्त यूरोपीय साझा बाजार के सदस्य देशों में सामूहिक या द्विपक्षीय तौर पर ऐसी कोई बुनियादी समस्या नहीं थी जो उनके मध्य अलगाव की भावना उत्पन्न करती । ठीक इसके विपरीत दक्षेस के सदस्य देशों की परिस्थिति है । विशेष तौर पर भारत के प्रति अधिकांश देशों की अनेक कृत्रिम या सही शिकायते हैं । यही कारण है कि सामाजिक या राजनैतिक ढ़ाँचे में दक्षिण एशिया के देश स्थापित नहीं हो सके क्योंकि सभी में परस्पर मतभेद है । समस्त देशों के बीच आपस में अविश्वास की भावना बलवती है । आर्थिक दृष्टिकोण से भी देश समान नहीं है । यही कारण है कि यह संगठन प्रभावशाली सिद्ध नहीं हो पा रहा है । दक्षेस की स्थापना के समय इन बातों पर ध्यान देना आवश्यक था ।

**राजनैतिक दृष्टिकोण से** भी दक्षेस के संगठन में दोष विद्यमान हैं ।

विश्व में देखा जाये तो विदित होता है कि बड़े पड़ोसी के प्रति छोटे देशों मे रोष की भावना रहती है । घर, गाँव, आदि के संदर्भ में तो यह प्रतिदिन का अनुभव है । दोनों के बीच बुनियादी भावना और समस्या एक जैसी है सिर्फ दायरे का अन्तर हो जाता है किन्तु पड़ोसी मन एक जैसा होता है । व्यक्ति या राष्ट्र के संदर्भ

---

(1) दिनमान , 31 अगस्त, 1989- पृष्ठ-66

में भी इसमें कोई मौलिक भेद नहीं उत्पन्न होता । मैक्सिको और कनाडा का अमेरिका के प्रति, पूर्वी यूरोपीय देशों का सोवियत संघ के प्रति, दक्षिणी-पूर्वी एशिया के देशों में चीन के प्रति सन्देह से यह स्पष्ट है कि मनोवैज्ञानिक तौर पर बड़े एवं समृद्ध पड़ोसी के प्रति ईर्ष्या की भावना अन्य देशों में भी व्याप्त रहती है । दक्षेस के सातों देशों में भारत सबसे अधिक विशाल एवं समृद्ध है अतः अन्य छोटे देशों में भारत के लिये सन्देह एवं भय की भावना व्याप्त है । जब दक्षेस की स्थापना हुई थी उस समय इस ओर भी ध्यान देना आवश्यक था ।

दक्षेस के संगठनात्मक दोष के लिये उत्तरदायी एक कारण यह भी है कि दक्षिण एशिया की भले ही एक इकाई के रूप में गणना की जाती हो किन्तु वास्तव में यदि देखा जाये तो उसके समस्त राष्ट्र बँटे हुये हैं । कोई देश साम्राज्यवाद एवं पूँजीवाद का समर्थक है तो कोई देश साम्यवादी विचारधारा का अनुसरण करता है । यही कारण है कि दक्षिण एशिया कभी भी एक इकाई के रूप में संगठित नहीं हो सका । दक्षेस के संगठन के समय इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं दिया गया । अंग्रेजों द्वारा 'फूट डालो और राज्य करो' की कुटिल नीति ने इनके बीच जो कलह के बीज का वपन किया है, उसके समाधान में आज भी ये परस्पर अविश्वास एवं संदेह के घेरे में उलझे हैं ।

दक्षेस के संगठन में **सांस्कृतिक दृष्टि से भी** कुछ विसंगतियाँ विद्यमान है।

जहाँ एक ओर इन राज्यों में तानाशाही , राजतन्त्र, लोकतन्त्र है, वहीं धार्मिक एवं सांस्कृतिक भिन्नता भी इन देशों को जकड़े हुये है । दक्षेस के तीन राष्ट्र पाकिस्तान, बांग्लादेश एवं मालद्वीव इस्लामी राष्ट्र हैं । दो देश श्रीलंका व भूटान बौद्ध धर्म के प्रर्वतक हैं, नेपाल एक हिन्दू राष्ट्र है एवं भारत धर्म निरपेक्ष राष्ट्र है । इन विभिन्नताओं के कारण भी दक्षेस देशों में सामंजस्य की भावना स्थापित नहीं हो पाती।

दक्षेस के निर्माण के समय इस तथ्य की ओर भी ध्यान देना चाहिये था ।

दक्षेस के संगठन में कुछ **तकनीकी दोष** भी विद्यमान है-.

दक्षेस के चार्दर में वर्ष में एक बार शासनाध्यक्षों एवं दो बार विदेश मंत्रियों की बैठकों का प्रावधान है । यदि देखा जाये तो ये बैठकें बहुत कम है । जहाँ दक्षिण एशिया अनेक समस्याओं से ग्रस्त है, वहाँ शासनाध्यक्षों की मात्र एक बैठक जो कि दो या तीन दिन के लिये और कभी-कभी तो एक दिन के लिये भी सम्पन्न होती है, यह कैसे सम्भव हो सकता है कि इतनी कम अवधि मे इस सम्पूर्ण क्षेत्र की समस्याओं पर विचार विमर्श किया जा सके ।

दक्षेस संगठन का एक दोष यह भी है कि यह राजनैतिक गुटबंदियों से सम्बन्धित संगठन है । राष्ट्र के नेता सरकारी स्तर पर ही राजनैतिक , सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं को देखतेहैं एवं केवल कागज़ पर ही कार्यवाही करते है । व्यवहारिक रूप से इन विकराल समस्याओं पर ध्यान नहीं दिया जाता । दक्षेस संगठन की एक तकनीकी कमी यह भी है कि इसके उद्देश्य को देखते हुये जो प्रस्ताव पारित किये गये , उन पर विशेष रूप से कोई कार्य नहीं किया जा रहा है ; एवं विकास के नये क्षेत्रों पर भी ध्यान नहीं दिया जा रहा है ।

चार्टर के उद्देश्यों में एक उद्देश्य यह भी है कि दक्षेस आंतरिक विवादों को उठाने का मंच नही है । जिस समय इस संगठन की स्थापना हुई थी, उसी समय इन देशों के मध्य परस्पर अनेक विवाद उपस्थित थे, जिनको लेकर इन देशों के मध्य मतभेद एवं तनाव व्याप्त थे । इनते मतभेदों, तनावों एवं विवादो के रहते हुये परस्पर सहयोग की कामना कैसे की जा सकती है ? अतः दक्षेस के संगठन के समय इस मुद्दे पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिये था ।

इस प्रकार स्पष्ट है कि दक्षेस में प्रारम्भ से ही संगठनात्मक दोष विद्यमान हैं जिसके कारण इतने वर्षो के बाद भी आज तक यह संगठन दक्षिण एशिया के देशों में सामंजस्य स्थापित नहीं कर सका है ।

दक्षेस के इन संगठनात्मक दोषों को दूर करने के लिये निम्न **सुझाव** दिये जा सकते है ।

संगठनात्मक दोष की पहली समस्या आर्थिक एवं राजनैतिक स्थिति को लेते हुये है । दक्षिण एशिया के समस्त देशों में आर्थिक एवं राजनैतिक रूप से भंयकर बिखराव है । इसे दूर करना बहुत सरल कार्य नहीं है क्योंकि ये देशों की निजी समस्यायें है और इनमें हस्तक्षेप करना उनके आत्मसम्मान को ठेस पहुँचाना होगा फिर भी इस बात पर बल देना चाहिये कि समस्त देशों में परस्पर व्यापार द्वारा आर्थिक सहयोग स्थापित किया जाये , तभी साझा बाजार की परिकल्पना सार्थक होगी । राजनैतिक दृष्टि से भी समस्त देशों में सुदृढ़ लोकतन्त्र की स्थापना से इन देशों के बीच सामंजस्य स्थापित करने मे मदद मिल सकती है । जब समस्त राष्ट्र एक ही राजनैतिक विचारधारा पर अमल करेंगे तब उनके राजनैतिक हित समान होगे और उनमें परस्पर सहयोग स्थापित किया जा सकेगा । **आर्थिक एवं राजनैतिक स्तर पर** दक्षिण एशिया के समस्त देश जब एकजुट हो करके समस्याओं का निराकरण करेंगे तभी दक्षेस संगठन सुदृढ़ बन सकेगा ।

**सांस्कृतिक दृष्टि** से समस्त देशों को सहयोग स्थापित करना चाहिये। सांस्कृतिक समरूपता कायम रखने के लिये तथा सांस्कृतिक सहयोग हेतु सदस्य देशों को समृद्धि के आधार पर सांस्कृतिक संघ की स्थापना करना चाहिये ।[1]

दक्षिण एशिया के समस्त देशों में जो **विभिन्नतायें व्याप्त** है, उन्हें दूर करने का प्रयत्न करना चाहिये । इन विभिन्नताओं में एकता स्थापित करने से ही और

---

(1) बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपेशन इन साउथ एशिया - प्राब्लम्स एण्ड प्रोसपेक्ट्स" पृ0-147

परस्पर प्रेम और सौहार्द बढ़ाने से ही दक्षिण एशिया के समस्त देश दक्षेस संगठन को सुदृढ़ स्थिति का रूप दे सकते हैं ।

दक्षेस संगठन में जो वास्तव मे संगठनात्मक दोष हैं वे तकनीकी स्तर के ही हैं । यद्यपि आर्थिक , राजनैतिक एवं सांस्कृतिक समस्यायें भी इस संगठन को सफल बनाने में बाधा उपस्थित करती हैं किन्तु इन समस्याओं पर तो संगठन के निर्माण कर्त्ताओं को उसी समय ध्यान देना चाहिये था किन्तु संगठन में जो तकनीकी कमियॉ रह गई, उन्हें दूर किया जाना आवश्यक था ।

दक्षिण एशियाई देशों के शासनाध्यक्षों की दीर्घकालीन बैठकों की समस्या को लें, तो उसके लिये आवश्यक है कि वर्ष में कम से कम दो बार शासनाध्यक्षों की बैठके हो एवं इसके अतिरिक्त विदेश मंत्रियों की बैठके, विदेश सचिवों की बैठकें, सेमिनार एवं वर्कशापो का आयोजन भी किया जाता रहे । जल्दी-जल्दी परस्पर मिलने से एवं परस्पर विचार विमर्श करने से समस्याओं को दूर करने का प्रयास किया जा सकता है एवं दक्षेस को सफल बनाया जा सकता है ।

दक्षेस संगठन को **गैर राजनीतिक संगठन** बनाने पर बल दिया जाना चाहिये, जिससे यह संगठन राजनीतिक गुटबंदियों से दूर रह सके ।[1] गैर सरकारी स्तर पर विशेषज्ञों का चयन करके इस क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन उनके द्वारा होना चाहिये और यह अध्ययन काफी गहन होना चाहिये । इस अध्ययन के अन्तर्गत सामरिक मुद्दे जैसे- तकनीकी का आदान-प्रदान, पड़ोसी देशों से सहायता प्रदान करवाना, घरेलू उद्योगों पर बल, अच्छे विद्यार्थियों को दूसरे देशों से छात्रवृत्तियॉ दिलवाना एवं उन्हें पड़ोसी देशों में अध्ययन एवं अध्यापन कार्य के लिये भेजना, बीमारी, जनसंख्या

---

(1) विमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृ0 82

वृद्धि , बेरोजगारी आदि सम्मिलित हैं । सांस्कृतिक स्तर पर भी परस्पर देशों के कार्यक्रमों का आदान- प्रदान, दृश्य एवं श्रृव्य कार्यक्रमों का आदान-प्रदान, खेलकूद प्रतियोगिताओं का आयोजन सम्मिलित है । इन गैरसरकारी विशेषज्ञों के द्वारा इन क्षेत्रों पर गंभीरतापूर्वक अध्ययन करके इन्हें कार्यान्वित करने पर बल देना चाहिये ।

दक्षेस चार्टर में जो **उद्देश्य** निर्धारित किये गये थे, उन पर इस संगठन के द्वारा विशेष रूप से अमल नहीं किया गया । क्षेत्रीय विकास के लिए जो क्षेत्र प्रस्तावित किये गये थे, पहले उन क्षेत्रों पर प्राथमिकता देकर कार्य करना चाहिए तत्पश्चात् अन्य नये विकास के क्षेत्रों पर समझौतों को पारित करना चाहिये । उर्जा, व्यापार एवं उद्योग पर अधिक बल नहीं दिया गया है इन क्षेत्रों पर विशेष बल देना चाहिए ।

दक्षेस संगठन द्वारा **आन्तरिक विवादों** को सुलझाने का प्रयास भी होना चाहिए । वर्ष में कम से कम दो या एक बार ही द्विपक्षीय मुद्दों को सुलझाने के लिए अलग से बैठकें आयोजित करनी चाहिए जिससे क्षेत्रीय सहयोग के साथ-साथ समस्त देशों के द्विपक्षीय विवाद भी हल होते चलें । इसके अतिरिक्त द्विपक्षीय विवादों से सम्बन्धित एक यह भी सुझाव दिया गया क्षेत्रीय सहयोग के मध्य क्षेत्रीय विवादों को न उलझाया जाये । क्षेत्रीय सहयोग संगठन को अपने यथार्थ रूप में ही कार्य करना चाहिए जब क्षेत्रीय सहयोग परस्पर बढ़ेगा तो मनोवैज्ञानिक रूप से द्विपक्षीय विवाद भी हल होते जायेंगे ।[1]

दक्षेस के संगठनात्मक दोषों में एक दोष यह भी है कि इसके विदेश मंत्रियों की बैठकों में प्रत्येक देश के केवल विदेशमंत्री ही सम्मिलित होते है । यदि इन बैठकों में प्रत्येक देशों के अन्य विभागों के मंत्रीगण व उच्च श्रेणी के अन्य अधिकारी

---

(1) बिमल प्रसाद, " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-84

भी उपस्थित हों तो विभिन्न क्षेत्रों की वार्ताओं में अधिक प्रभाव पड़ेगा एवं सहयोग स्थापित करने में सरलता होगी । समस्त देश के मंत्रीगण अपने-अपने क्षेत्रों की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगे और उनकी आवश्यकताओं को देखते हुए सहयोग स्थापित किया जा सकेगा ।

दक्षेस संगठन के समय यदि इसके ऊपर कोई **केंद्रीय शक्ति का निर्माण** कर दिया जाता, तो वह संगठन पर दबाव रखती एवं अच्छे- बुरे का ज्ञान कराती ।[1] वर्तमान स्थिति यह है कि पूरा-पूरा वर्ष समाप्त हो जाता है और शासनाध्यक्षों की बैठक नहीं हो पाती, समस्त देशों के अध्यक्ष परस्पर टीका-टिप्पणी करते रहते है और बैठकों में उपस्थित होने में बहाना करते हैं । यदि इनके ऊपर भी कोई ऐसी प्रभुत्व केन्द्रीय शक्ति होती तो सम्भवतः संगठन अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर सकता था । इसके अतिरिक्त यह भी प्रबन्ध किया जाना चाहिए था कि एक निश्चित स्थान शासनाध्यक्षों की बैठकों को सम्पन्न करने के लिए तय कर देना चाहिए था, इससे श्रीलंका , भूटान जैसे देशों को यह तर्क नहीं देना पड़ता कि उनका देश सम्मेलन करवाने में असमर्थ है । सम्मेलनों के आयोजन में उक्त रूकावटें आने से संगठन को सफलतापूर्वक कार्यक्रमों को संपादित करने में बाधा उपस्थित होती है ।

दक्षिण एशिया के क्षेत्र में जहाँ तक **संचार एवं परिवहन** का प्रश्न है, इस विषय में कुछ भी कहें, कम ही है क्योंकि दिल्ली, इस्लामाबाद, कोलम्बो, माले, थिम्पू के मध्य आपस में कोई हवाई सम्पर्क नहीं है । इतना ही नहीं, इस्लामाबाद से किसी भी दक्षिण एशियाई देश की राजधानी को सीधी विमान सेवा तक उपलब्ध नहीं है । क्या यह सार्क देशों के क्षेत्रीय सहयोग पर कटु टिप्पणी नहीं है ? यही स्थिति डाक-संचार की भी है । यदि नई दिल्ली से ढ़ाका के साथ टेलीफोन या टेलेक्स पर सम्पर्क स्थापित करना है तो वह हाँगकाँग के माध्यम से ही संभव है । साधारण पत्र अमेरिका, यूरोप से शीघ्र आ जाते हैं , किन्तु दक्षिण एशियाई देशों से आने में काफी विलम्ब होता है ।

---

(1) बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया" पृ0 84

कारण है कि आपसी विश्वास व सेंसरशिप । इन देशों की परस्पर यात्रा की अपेक्षा अमेरिका, यूरोप आदि देशों की यात्रा सरल है । इन सब कठिनाइयों को भी दूर करने का प्रयास करना चाहिए । तभी यह संगठन सफलीभूत हो सकेगा । समस्त देशों के मध्य डाक-संचार आदि की पूर्ण सुविधायें बनाने का प्रयास करना चाहिए ।

इस प्रकार के कई चयन दक्षेस के लिए हो सकते हैं, किन्तु इन सबके परिप्रेक्ष्य में एक बात अत्यन्त आवश्यक है कि हमें आपसी सम्बन्धों को सुदृढ़ , घनिष्ठ एवं विश्वसनीय बनाना आवश्यक है । ये तथ्य दक्षेस के द्वारा क्षेत्रीय सहयोग स्थापित करने में नींव का कार्य करते हैं । इनके अभाव में किसी भी प्रकार का कोई भी प्रयास सफल नहीं हो सकता । अतः दक्षेस को सफलता प्रदान करने के लिए उसके मार्ग में उपस्थित समस्याओं का अध्ययन करके उनका निराकरण करते हुए एवं संगठन के दोषों को दूर करने का प्रयास करना चाहिए । इन प्रयासों के साथ दक्षेस के महत्वपूर्ण तत्व " परस्पर देशों में विश्वास " की भावना को संयोजित करने का भी प्रयत्न करते रहना चाहिए ।

---

## सप्तम अध्याय

### दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की समस्यायें एवं सम्भावनायें

(अ) विभिन्न समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में दक्षेस का भविष्य

(ब) राजनैतिक समझ एवं सहयोग के आयाम

**दक्षिण एशिया में क्षेत्रीय सहयोग की समस्यायें एवं सम्भावनायें**

परिवर्तन प्रकृति का नियम है । वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक परिदृश्य में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहे हैं । ये परिवर्तन क्षेत्रीय टकराव की संभावना कम करने और क्षेत्रीय सहयोग को बढ़ाने की दिशा में भी हो रहे हैं । क्षेत्रीय सहयोग वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत किसी क्षेत्रीय विशेष के समस्त राष्ट्र परस्पर वैमनस्यता को दूर करके पारस्परिक क्रिया द्वारा क्षेत्रीय सहयोग पर बल देते हैं, जिससे वे अधिकतम लाभ प्राप्त कर सकें एवं अपनी प्रगति व सुरक्षा को सुनिश्चित कर सकें । इसी आकांक्षा हेतु दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन का निर्माण किया गया था । दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन की स्थापना जिन मूलभूत उद्देश्यों को लेकर हुई थी , उससे यह आशा की गयी थी कि इस संगठन के द्वारा इस क्षेत्र के देशों में आपसी सहयोग एवं मित्रता की भावना सुदृढ़ होगी और समस्त देश आपस में मिल-बैठकर अपनी समस्या का निवारण कर लेंगे ।

विगत वर्षों में जहाँ एक ओर दक्षिण एशिया की आर्थिक , राजनैतिक, सामाजिक एवं सैनिक विकास की प्रक्रिया में वृद्धि हुई है, वहीं दूसरी ओर इस क्षेत्र के देशों के मध्य एक प्रकार के असुरक्षात्मक वातावरण में भी वृद्धि हुई । इनके मध्य हुये विवादों पर दृष्टिपात करने से ऐसा प्रतीत होता है कि दक्षिण एशिया के देश अपनी सुरक्षा के प्रति सशंकित हैं । इसका प्रथम महत्वपूर्ण कारण इस क्षेत्र की राजनैतिक एवं सैनिक अस्थिरता है एवं द्वितीय महत्वपूर्ण कारण समस्त देशों में परस्पर अविश्वास की भावना है । एक कहावत बहुत अधिक सटीक है कि-

" अगर प्रत्येक व्यक्ति अपने दरवाजे के आस-पास बुहारता रहे तो सारी सड़क साफ दिखायी पड़ने लगेगी ।

कहने का तात्पर्य यह है कि यदि सभी अपने मसलों का समाधान परस्पर बातचीत से करें तो तनाव समाप्त हो सकता है । इसी भावना को लेकर बांग्लादेश के तत्कालिक राष्ट्रपति श्री ज़ियाउर्रहमान की कप्तानी में दक्षेस रूपी जहाज को पानी में उतरवाया गया था । उनका कहना था--

" महत्वपूर्ण घटनाओं एवं राजनैतिक परिस्थितियों के आधार पर दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के मध्य काफी अन्तर हो सकता है, लेकिन वे विभिन्नतायें ऐसी बना सकने में समर्थ नहीं हैं, जिनपर पुल न निर्मित किया जा सकें ।"[1]

इन्ही आधार वाक्यों के सन्दर्भ में अगले पृष्ठों में विभिन्न समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में क्षेत्रीय सहयोग के भविष्य व विविध आयामों पर विश्लेषणात्मक समीक्षा प्रस्तुत करने की कोशिश की जा रही है ।

---

(1) प्रगति मंजूषा " शांति प्रयासों में सार्क की भूमिका" फरवरी मार्च 1987 पृ0-95

## (अ) विभिन्न समस्याओं के परिप्रेक्ष्य में दक्षेस का भविष्य

आत्मनिर्भरता और सतत् रूप में आर्थिक उन्नति और क्षेत्रीय सहयोग के रूप में पारस्परिक सहायता केवल पवित्र इच्छायें ही नहीं, अपितु समय की ऐसी महत्वपूर्ण आवश्यकतायें हैं, जिन्हें कार्य रूप दिया जाना परमावश्यक है । समसामयिक अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में क्षेत्रीय संगठनों के माध्यम से अन्तःदेशीय सहयोग की अवधारणा का व्यापक रूप से स्वागत किया जा रहा है । किसी भी संगठन का निर्माण कुछ इसी प्रकार के महत्वपूर्ण उद्देश्य की पूर्ति की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये किया जाता है । " दक्षेस " नामक संगठन का निर्माण भी दक्षिण एशियाई देशों में परस्पर आर्थिक , राजनैतिक , सामरिक, सांस्कृतिक, तकनीकी एवं वैज्ञानिक क्षेत्रों में सहयोग की आवश्यकता को ध्यान में रखकर किया गया ।

दक्षिण एशियाई देशों के सात देशों भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश , नेपाल, भूटान , श्रीलंका एवं मालदीव के शासनाध्यक्षों एवं राष्ट्राध्यक्षों ने 7 दिसम्बर, 1985 को ढ़ाका में " दक्षिण एशियायी क्षेत्रीय सहयोग संगठन " की स्थापना के साथ प्रथम सम्मेलन का आरम्भ किया । चूँकि बांग्लादेश ने सबसे पहले इस सहयोग के जहाज की कल्पना की थी, इसलिये सभी ने इसकी कप्तानी को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकृति प्रदान की । दक्षिण एशिया के समस्त देश मिलकर लगभग एक अरब जनता का प्रतिनिधित्व करते हैं, और आपसी सहयोग, मित्रता और व्यापार बढ़ाने तथा क्षेत्र में शान्ति बनाए रखने के लिए कृतसंकल्प है । समस्त देशों के शासनाध्यक्षों एवं राष्ट्राध्यक्षों के आशा व्यक्त की कि गम्भीर आर्थिक संकट और विकसित देशों के उपेक्षापूर्ण व्यवहार के बावजूद भी दक्षेस संगठन विकासशील देशों के बीच आपसी सहयोग का उदाहरण प्रस्तुत करेगा।

दक्षेस के उद्घाटन में सर्वप्रथम दक्षेस के अध्यक्ष बांग्लादेश के राष्ट्रपति ने आशा व्यक्त की कि सामूहिक आत्मनिर्भरता के माध्यम से दक्षेस देश आर्थिक स्वतन्त्रता का उद्देश्य प्राप्त करने में सफल होंगे । भारत के तात्कालिक प्रधानमंन्त्री श्री राजीव गांधी ने आशा प्रकट की कि भारतीय उपमहाद्वीप के देशों के मध्य क्षेत्रीय सहयोग से द्विपक्षीय सम्बन्धों को सुधारने मे सफलता मिलेगी । पाकिस्तान ने तात्कालिक राष्ट्रपति ने इसे ऐतिहासिक बताते हुए कहा कि दक्षेस देशों में शांति तथा स्थायित्व स्थापित होगा । नेपाल नरेश वीरेन्द्र विक्रम एवं भूटान नरेश जिम्मेसिग्में बांगचुक ने कहा कि विदेश नीति व सुरक्षा के विचार से भिन्नता होते हुए भी इस क्षेत्र के देशों में आपसी सहयोग बढ़ेगा ।

दक्षेस का उद्देश्य इसके सदस्य राष्ट्रों में आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विकास को बढ़ाना है । दक्षेस के इन महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करते हुए इसके भविष्य पर दृष्टिपात करें तो दिखाई देता है कि यद्यपि कुछ वर्षों में काफी सीमा तक सफलता प्राप्त हुई है किन्तु उतनी नहीं जितनी आशा व्यक्त की गई थी ।दक्षिण एशिया के राष्ट्र अपनी आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक स्थिति में प्रगति एवं विकास की प्रक्रिया को यथाशक्ति बढ़ाने के बजाय स्वयं को इस क्षेत्र में असमर्थ महसूस कर रहे है ।.

कोई भी संगठन दो आधारों पर ही फलफूल सकता है-

प्रथम- आर्थिक साझेदारी एवं

द्वितीय - राजनैतिक समझदारी

सर्वप्रथम दक्षिण एशिया के देशों की **आर्थिक साझेदारी** पर दृष्टिपात किया जायेगा तदन्तर आर्थिक क्षेत्र में सहयोग की सम्भावनाओं पर ध्यान आकर्षित किया जायेगा ।

अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में दक्षिण एशियायी राष्ट्र आर्थिक दृष्टि से प्रगति की ओर अग्रसर है। वर्तमान समय में दक्षिण एशिया के समस्त देशों की अर्थव्यवस्था

विकासशील अवस्था में है । विश्व के सफल राष्ट्रीय उत्पाद में इस क्षेत्र का अंश केवल 2% है तथा निर्यात में 0.6% है । भारत को छोड़कर अन्य देशों को खाद्यान्न का आयात करना पड़ता है । भारत का वर्तमान समय में औद्योगिक देशों में सातवाँ स्थान है तथा भारत विकास की दृष्टि से आवश्यक पदार्थों को रखता है ।[1] भारत की अर्थव्यवस्था विशिष्ट रूप से कृषि पर आधारित है । 70% व्यक्ति कृषि पर अपना जीवन यापन करते हैं । भारत द्वारा निर्यात की जाने वाली वस्तुएं सूती कपड़ा जूट का सामान, चाय , लोहा, चमड़ा , खनिज-पदार्थ, तम्बाकू , कपास , चीनी आदि है। भारत से ये निर्यात अधिकांशतः पश्चिमी जर्मनी , रूस, संयुक्त राज्य अमेरिका, ब्रिटेन, श्रीलंका एवं बांग्लादेश को होता है ।

पाकिस्तान का व्यापान भी पश्चिमी एवं दूरस्थ देशों से है ।[2] सूती, ऊनी कपड़ा , चीनी , सीमेन्ट, कागज तथा रसायन पाकिस्तान के प्रमुख उद्योग हैं । पाकिस्तान से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में कच्चे माल का स्थान महत्वपूर्ण है । विभाजन से पूर्व कृषि 10% से अधिक राष्ट्रीय आय में सहयोग करती थी ।

बांग्लादेश में जूट के उत्पादन का विशेष महत्व है। यहाँ पर जूट एवं उससे निर्मित वस्तुओं का भारी मात्रा में निर्यात होता है ।[3] बांग्लादेश से निर्यात की जाने वाली वस्तुएं सिंगापुर, अमेरिका, ब्रिटेन, जापान, सोवियत रूस आदि स्थानों पर जाती हैं।

नेपाल से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में लकड़ी , जूट, तिलहन, चमड़ा, आदि है । इस देश का अधिकाश व्यापार संयुक्त राज्य अमेरिका , ब्रिटेन , चीन

---

(1) डा0 परमानन्द " पॉलिटिकल डेवलपमेन्ट इन साउथ एशिया " पृ0-3
(2) एस0ए0ख्वालिक " पाकिस्तान पीस एण्ड वार" पृष्ठ-115
(3) एस0पी0 चक्रवर्ती एवं वीरेन्द्र नारायण" बांग्लादेश डोमेस्टिक पोलिटिकल वाल्यूम-11

एवं भारत से है ।

भूटान अपने समस्त उत्पादनों एवं जनशक्ति के लिए भारत पर पूर्ण रूप से निर्भर है । बाह्य जगत को मुश्किल से कुछ निर्यात कर पाने के कारण तथा आयात के लिये पूर्णतः अन्य देशों पर निर्भर होने के कारण भूटान का आर्थिक विकास बहुत सीमित है । अतः भूटान अपने विकास के लिए बाह्य जगत पर निर्भर है ।[1]

श्रीलंका का अधिकांश व्यापार ब्रिटेन से है । उसके बाद संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन एवं भारत का स्थान आता है । मालदीव की अर्थव्यवस्था का निर्णायककारक मत्स्य उद्योग रहा है ।[2] इसके अतिरिक्त जहाजरानी, नारियल एवं कृषि पर भी अर्थव्यवस्था आधारित रही है । मालदीव जापान एवं श्रीलंका को निर्यात करता है।

स्पष्ट है कि दक्षिण एशियाई देशों के मध्य परस्पर व्यापार सन्तुलन का अभाव है । ये देश अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये विदेशी राष्ट्रों पर निर्भर है । विदेशी शक्तियाँ इन राष्ट्रों को अधिक मात्रा में आर्थिक सहायता देकर इनकी विदेश नीति एवं उससे सम्बन्धित गतविधियों को अपने हितों के अनुरूप बनाने के लिये प्रयत्नशील रहती है ।

दक्षिण एशिया में भारत ही एकमात्र सर्वाधिक विकसित क्षेत्र है । शेष समस्त देश विकासशील अवस्था में है । ऐसी स्थिति में आर्थिक क्षेत्र में भारत की यह विशेष जिम्मेदारी है कि वह इस क्षेत्र में सहयोगात्मक सम्बन्ध बढ़ाने के महत्वपूर्ण प्रयास करें तथा इस क्षेत्र को सुरक्षा एवं स्थायित्व की नयी दिशा प्रदान करें ।[3] समस्त देशों का सर्वाधिक आदान-प्रदान भी भारत से ही सम्भव हो सकता है । किन्तु इस क्षेत्र में कुछ छोटे देशों को आशंका रही है कि सामूहिक आर्थिक, सामरिक नीति का लाभ केवल भारत जैसे बड़े देश को ही मिलेगा । भारतीय अर्थव्यवस्था का तीव्र गति से विकसित होना और राजनैतिक स्थिति का संतुलित होना, भारत को प्रभुत्व स्थापित करने में सहायक सिद्ध हुये हैं । जिसके फलस्वरूप इन राष्ट्रों को यह सन्देह है कि न

---

(1) यू0एस0 बाजपेयी " इण्डिया एण्ड इटस् नेबरहुड " पृष्ठ 305.
(2) -वही-
(3) नैन्सी जेटली " इमरजेंसी ऑफ सार्क" उद्घृत विमल प्रसाद " रीजनल कोऑपरेशन इन साउथ एशिया, प्राव्लम्स एण्ड प्रासपेक्ट्स " पृ0 -77

केवल भारत का प्रभुत्व इस क्षेत्र में प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है बल्कि भारत अन्य देशों के आर्थिक विकास को अवरूद्ध करने में भी सक्षम होता जा रहा है ।इसी भय के कारण आर्थिक विकास एवं आपसी आदान-प्रदान के माध्यम से अपना जीवन स्तर ऊचा करने के स्थान पर यह देश अन्य विकसित देशों पर निर्भर हो गये ।

भारत से आर्थिक-शोषण की चिन्ता , मगर जापाल को आर्थिक रूप से दोहने की खुली छूट क्यों ? ढ़ाका , काठमाण्डू, कोलम्बो, इस्लामाबाद आदि सभी स्थानों पर जापानी उत्पादनों से बाजार भरे पड़े हैं मगर वे देश भारत से व्यापार के इच्छुक नहीं है । स्पष्ट है कि सहयोग के लिये एक " न्यूनतम राजनैतिक समझदारी " ज़रूरी है । परेशानी यह है कि दक्षेस एक ऐसा संगठन है जिसके पास ये समझदारी अत्याधिक न्यूनतम रही है ।[1]

ऐतिहासिक , भौगोलिक , सांस्कृतिक तथा भाषाई दृष्टि से भारत और पाकिस्तान कदाचित विश्व के दो सर्वाधिक समान राष्ट्र हैं। दोनों की ऐतिहासिक विरासत भी एक है एवं जीवनदायिनी शक्ति भी । किन्तु आज भी दोनों के मध्य सम्बन्धों के सुधार की प्रक्रिया अस्थिर एवं अधर में लटकी हुयी है । भारत-पाकिस्तान के मध्य व्यापार का आंकड़ा पाँच करोड़ रूपये वार्षिक पर टिका हुआ है जो कि सौ करोड़ रूपये तक बढ़ाया जा सकता है । पाकिस्तान ही क्या, दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्र पारस्परिक प्रतिस्पर्धा में लगे हुये हैं । बांग्लादेश आस्ट्रेलिया से लौह-अयस्क मंगाता है जबकि बिहार, उड़ीसा से उसे बहुत सस्ते में वह प्राप्त हो सकता है । भारत एवं श्रीलंका की चाय में प्रतिस्पर्धा सर्वविदित है । यदि दक्षेस देशों पर विहंगम दृष्टि डाली जाये तो दृष्टिगोचर होता है कि समस्त देश परस्पर आर्थिक प्रतिस्पर्धा के शिकार बने हुये हैं । इन समस्त देशों को भय है कि परस्पर व्यापार प्रारम्भ किया गया तो भारत एशिया को अपना बाजार बना लेगा ।

---

(1) जनसत्ता हरिशंकर व्यास " सात वहनों के घोसले की डाल " 19 नवम्बर 1986

दक्षिण एशियायी देशों में परस्पर व्यापार न के बराबर है , तो ऐसी स्थिति में साझा बाजार की कल्पना कैसे की जा सकती है ! ? यूरोपीय साझा बाजार जैसा कि अतुलनीय संगठन अपने आप में एक महत्वपूर्ण एवं सवर्था उचित उदाहरण है। इस सफल आर्थिक संगठन पर संदेह एवं संका की छाया भी दृष्टिगोचर नहीं होती इसके विपरीत दक्षेस संगठन में संदेह एवं शंका की जड़े इतनी सुदृढ़ है कि उन्हें फिलहाल उखाड़ फेंकना सम्भव नहीं दिखायी दे रहा है आर्थिक एवं तकनीकी स्तर पर परस्पर साझा बाजार का उद्देश्य इस संगठन का मुख्य आधार है । दुर्भाग्यवश अव तक इस दिशा में कुछ भी सफलता पूर्वक नहीं किया सका है ।

कृषि , ग्रामीण विकास , दूर- संचार, मौसम, स्वास्थ्य, और जनसंख्या, डाक-सेवा, यातायात-सेवा , विज्ञान एवं तकनीक , खेलकूद , कला- संस्कृति, महिला कल्याण और नशीले पदार्थो पर रोक के क्षेत्र में सहयोग के संकल्प पूरे नहीं हो पा रहे हैं । और तो और व्यापार बढ़ाने के लिये सहमति भी नहीं बन पा रही है , जबकि दक्षेस की सार्थकता व्यापार एवं सहयोग में है । भारत के प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव ने पारस्परिक व्यापार एवं वाणिज्य के क्षेत्र में बढ़ावा देने के लिये जोर दिया । उन्होंने कहा कि इन देशों को मिल कर व्यापारिक क्षेत्र में प्रयत्न करना चाहिये । इन देशों को संयुक्त रूप से व्यापार करना चाहिये , जिससे अधिक से अधिक आर्थिक सहयोग सम्भव हो सके ।[1]

दक्षेस देशों के मध्य वर्तमान व्यापार में सौ गुना तक वृद्धि की जा सकती है किन्तु इसके लिये सर्वप्रथम सौहार्द एवं समझ को विकसित करना पड़ेगा । श्री रहमान सोभान का कथन है-

सदस्य देशों को आर्थिक क्षेत्र में सहयोग देना चाहिये । आर्थिक विकास हेतु एक-दूसरे पर विश्वास करना चाहिये , संदेह नहीं करना चाहिये ।[2]

---

(1) आई0डी0एस0ए0 साउथ एशियन न्यूज़ रिव्यू जनवरी 1992 पृ0-78

(2) रहमान सोभान " दि इकनॉमिक बैंक ग्राउण्ड", विमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-18-36

अन्य स्थापित संगठनों के क्रिया - कलापों को देखते हुये दक्षेस संगठन आज भी इस प्रकार के सहयोग को प्राप्त करने में पिछड़ा हुआ प्रतीत होता है । इसका एक कारण यह भी है कि उद्देश्यों में तो आर्थिक सहयोग पर आवाज बुलन्द की गयी थी किन्तु 1985 में अस्तित्व में आने के उपरान्त से ही दक्षेस परस्पर विरोधी नेताओं के समूह जैसा रहा , जो अपना वर्चस्व दिखाने पर जोर देते रहे । इस कारण से व्यापार, उद्योग, उर्जा, वित्त , जैसे महत्वपूर्ण मुद्दे दब गये हैं जबकि छोटे मुद्दे ही अभी तक विषयसूची में हावी रहे हैं ।[1] मालदीव के राष्ट्रपति अब्दुल गयूम की भी मान्यता है कि-

" दक्षेस देशों के मध्य व्यापार और आर्थिक सहयोग आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है । इसके लिये व्यापक कार्यक्रम बनाने होंगे । इसके कार्यक्रम से ही सदस्य देशों की जनता के स्तर में सुधार किया जा सकता है ।"[2]

श्री सैय्यद हैदर नवाब नकवी ने अपने लेख " पॉसिबिलिटीज ऑफ इकनॉमिक इन्टीग्रेशन " में कहा कि -

दक्षिण एशियायी क्षेत्र में आर्थिक क्षेत्र की समस्याओं के समाधान हेतु सदस्य देशों को एक-दूसरे देशों में अधिक से अधिक उत्पादन क्षमता बढ़ाने में सहयोग करना चाहिये तथा एक दूसरे को और भी अच्छा बाजार देना चाहिये । सदस्य देशों के शासनाध्यक्षों को क्षेत्रीय आर्थिक एकता में वृद्धि हेतु नीति का निर्धारण करना चाहिये तथा इस क्षेत्र के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में वृद्धि हेतु आगामी वर्षों में प्रयास करना चाहिये। इन देशों की उचित घरेलू एवं विदेशी व्यापारिक नीति अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकती है तथा इस क्षेत्र में आर्थिक प्रगति में सहायक हो सकती है । वास्तव में क्षेत्रीय आर्थिक एकता की सफल प्रक्रिया इन देशों की उचित घरेलू नीति पर ही आधारित है । समस्त देशों की क्षेत्रीय अर्थव्यवस्था में समग्र रूप से सुधार करना चाहिये। इस क्षेत्र में आर्थिक एकता वास्तव में तभी सम्भव हो सकती है जब इन देशों

---

(1) इण्डिया टू डे " दक्षेस शिखर पर संकट " दिलीप बॉब 30 नवम्बर, 1991 पृ076
(2) राजस्थान पत्रिका " दक्षेस सम्मेलन और भारत " संपादकीय- 12 नवम्बर 1991-पृ0-6

के लोग परस्पर एक-दूसरे के आर्थिक विकास में सहयोग दें एवं लें । [1]

संसार में हो रहे परिवर्तनों के फलस्वरूप क्षेत्रीय सहयोग में वृद्धि हेतु निरन्तर प्रयत्न हो रहे हैं । भविष्य में भी बड़ी-बड़ी संयुक्त अर्थव्यवस्थाओं का उदय और विकास होने की संभावना है । यूरोपीय साझा बाजार तथा दक्षिण पूर्वी एशियायी देशों का संगठन एशियान पथ प्रदर्शक हैं । इन नयी आर्थिक एवं व्यापारिक प्रक्रिया में उन राजनीतिक संकल्पों तथा शासन-प्रणालियों का भेद-भॉव हो गया है, जिनके कारण आतीत में बड़े-बड़े युद्ध तथा संघर्ष हो चुके हैं।

वर्तमान समय में बड़े - बड़े शत्रु भी एक हो गये है और सहयोग के लिये तत्पर है । ऐसे विश्व वातावरण में दक्षिण एशियायी देशों के आर्थिक सहयोग की सम्भावनाओं की आशा करना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगा । श्रीलोक राज बरल का कथन है कि--

दक्षेस के सदस्य देशों में नेपाल एवं भूटान जैसे चारों ओर से भूमि से घिरे हुये देशों के लिये विशेष नीति अपनानी चाहिये तथा श्रीलंका एवं मालदीव जैसे समुद्र से घिरे हुये देशों को विशेष सुविधा प्रदान करनी चाहिये, जिससे इनकी समस्याओं का समाधान हो सके । यदि ऐसा नहीं होगा तो ये देश एक आर्थिक इकाई के रूप में नहीं रह सकेंगे तथा दक्षेस का उद्देश्य पूरा नहीं हो सकेगा । दक्षिण एशियायी शक्तियों को आर्थिक स्थिति के सुधार के तरीकों को खोजने का प्रयास करना चाहिये ।[2]

दक्षिण एशिया के देशों की आर्थिक साझेदारी के उपरान्त इन देशों की **राजनैतिक समझदारी** पर दृष्टिपात किया जायेगा -

दक्षिण एशियायी देशों में राजनैतिक सहयोग की स्थिति को देखते हुये कहा जा सकता है कि इस क्षेत्र में जितनी राजनैतिक विकास की आकांक्षा की गयी थी, उतनी नहीं हुई है । एक निश्चित स्वरूप धारण करने के बावजूद राजनैतिक कारणों

---

(1) सैय्यद हैदर नवाब नकवीं " पॉसिबिलिटीज ऑफ इकनौमिकें इन्टीग्रेशन " बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ- 164

(2) लोकराज बरल " टुवार्ड्स ए रीजनल फॉरेन पॉलिसी " विमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया" पृष्ठ- 194-95

से दक्षेस सात बहनों का घोसला नहीं बन पा रहा है ।

दक्षिण एशिया के देशों की भू-राजनैतिक स्थिति पर ध्यानाकर्षित करें तो देखा जाता है कि सशक्त लोकतंत्र केवल भारत में ही है । दक्षेस के गठन की स्थापना के पश्चात् पाकिस्तान , बांग्लादेश एवं नेपाल में लोकतंत्र की स्थापना हुई थी जो अभी तक सुदृढ़ स्थिति प्राप्त नहीं कर सके हैं । मालदीव में संवैधानिक शासन है तो भूटान में अपने अलग किस्म का राजतंत्र है । इस प्रकार दक्षिण एशिया के देशों में राजनैतिक-असंतुलन स्पष्ट रूप से दिखायी देता है । दक्षेस के सदस्य देशों में वैचारिक मतभेद है । इन देशों में किसी भी रूप में प्रजातंत्र अपने आदर्श रूप में विद्यमान नहीं है ।[1]

दक्षेस का ध्रुव भारत है और हर मुद्दे, विवाद , मसले का केन्द्र भी भारत है । छः देशों की सीमा भारत से जुड़ी है । भारत निर्णायक है । यदि शक, अविश्वास, संदर्भों का दक्षिण एशिया में माहौल है तो भारत बीच में है । इस पूरे क्षेत्र का इतिहास , उसकी संस्कृति और अन्य तौर - तरीकें भारत से प्रभावित और जुड़े रहे हैं। जहाँ ये क्षेत्रीय राष्ट्र भारत से सहयोग की अपेक्षा रखते हैं, वहीं यह भारत से भयभीत भी रहते हैं कि भारत उनकी क्षेत्रीय अस्मिता एवं पहचान को कहीं नष्ट न कर दे । बांग्लादेश पश्चिम बंगाल के बंगालियों से अपनी पहचान के लिये प्रयत्नशील है तो दक्षिण भारत के तमिलों से श्रीलंका को प्रभावित न होने देने के लिये प्रयत्नशील है, वहाँ की " सिंहली जनता " । पाकिस्तान से हर तरीके से जुड़े रहने के बाद भी हर क्षेत्र में अपनी अलग पहचान बनाने के लिये कृत संकल्प है, जिसका उदाहरण उनके मध्य हुये युद्धों से पता चलता है । अतः दक्षिण एशिया के समस्त देश भारत के साथ प्रतिस्पर्धा करके अपनी अलग पहचान बनाने की इच्छा रखते हुये अपने संकीर्ण हितों की पूर्ति करने में लगे हुये हैं।

---

(1) लोकराज बरल" टुवार्ड्स ए रीजनल फॉरेन पॉलिसी " विमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-194-95

दक्षेस के देशों में राजनैतिक आधार पर भी बिखराव है । पाकिस्तान द्वारा शस्त्रास्त्र व प्रशिक्षण प्राप्त करके आंतकवादी उपद्रव कर रहे हैं । बांग्लादेश सीमा पर कटीली बाड़ का विरोध कर रहा है जबकि भारत के लिये विदेशियों की समस्या हल करने के लिये यह अत्यन्त आवश्यक है । बांग्लादेश में बसे चकमा आदिवासी भारतीय क्षेत्र में प्रवेश व लूटपात कर रहे हैं । भारत में तमिल उग्रवादी तत्वों के होने के सत्य भी अब छिपा नहीं रह पाया है । आतंकवादियों को प्रश्रय देने का आरोप लगाकर समस्त देश एक-दूसरे को संशय की दृष्टि से देखते हैं । अतः भू-राजनीति का यह आधार कब तक नकारा जा सकता है? राष्ट्रों में परस्पर विरोधाभास स्पष्ट रूप से दिखायी देता है । इन सब विरोधाभासों के बावजूद भी संदेह का ऐसा कोई कारण नहीं दिखायी देता कि अपेक्षित राजनैतिक सहयोग स्थापित नहीं किया जा सकता । फ्रांस एवं जर्मनी के मध्य एक ही पीढ़ी के दौरान दो बार युद्ध हुये फिर भी अपने सामान्य हितों को ध्यान में रखते हुये साझा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें स्थापित करने के प्रश्न पर उन देशों में भी पूर्ण मतैक्य है फिर दक्षेस संगठन के साथ भी यह संभव है । राजनीति से बचाने के लिये दक्षेस को मामूली क्षेत्रों के दायरे में समेटा जा रहा है जबकि आवश्यकता इस बात की है कि दक्षेस को राजनीतिक समझ का क्षेत्रीय मंच बनाया जाये।

जहाँ एक ओर दक्षेस नामक संगठन में एक - दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने पर बल दिया गया है वही दूसरी ओर इस संगठन के माध्यम से दक्षेस राष्ट्र पारस्परिक विवादों को उठाने के लिये प्रयासरत हैं । सबसे अधिक हस्तक्षेप करने के लिये भारत को ही दोषी ठहराया जाता है । दुर्भाग्य की बात है कि जिस भारत की पहल पर इस संगठन की स्थापना हुई, उसी पर इसके प्रभावहीन बनाने एवं विघटन करने का आरोप लगाया जाता है । पाकिस्तान हर क्षण भारत को ही प्रतिद्वन्दी मान उसे नीचा दिखाने की कोशिश कर रहा है । कश्मीर- समस्या एवं उग्रवादियों की समस्या दोनों देशों के मध्य विकराल रूप धारण किये हुये हैं । भारत-बांग्लादेश में

पानी विवाद, सीमा विवाद, शरणार्थियों की समस्या आदि के मसले पर भी भारत की ही छवि धूमिल की जाती है । भारत-नेपाल के मध्य उत्पन्न तनाव में पारागमन सन्धि के मुद्दे को लें तो भी नेपाल द्वारा भारत को ही अपराधी घोषित किया जाता है । भारत श्रीलंका के मध्य उत्पन्न तनाव में चाहें शान्ति सेना की वापसी के मुद्दें को देखें , चाहें तमिलों की समस्या लें, चाहे तमिल उग्रवादियों का उपद्रव देखें , सदैव श्रीलंका भारत पर आरोप लगाता है कि वह उसके देश में हस्तक्षेप कर रहा है । भारत के शक्तिशाली स्वरूप के भी प्रमाण दिये जाते हैं । जिसमें 1961 की गोया कार्यवाही , 1965 एवं 1971 का भारत-पाक युद्ध 1988 मालदीव में आक्रमण के समय की गयी भारतीय कार्यवाही, श्रीलंका में भारतीय शांति-सेना की गतिविधियाँ और फिजी में भारतीयों को लेकर व्यक्त की गयी प्रतिक्रिया का वर्णन किया जाता है।[1]

जैसे ही किसी सदस्य देश से भारत का कोई विवाद होता है तो यह जताया जाता है कि जैसे भारत के हित अन्य सभी सदस्य देशों के हितों के विरूद्ध पड़ते हों । वैसे तो दक्षेस के अन्तर्गत दो देशों के विवादों पर विचार नहीं किया जाता लेकिन विवाद के कारण पैदा गर्मी का प्रभाव दक्षेस के सम्मेलनों में अन्य विचारशील विषयों, बहसों, प्रस्तावों पर स्पष्ट झलकने लगता है । दक्षिण एशियाई देशों से अपने सम्बन्धों के संदर्भ में भारत को इस बात पर ध्यान देना ही पड़ता है । भारत अपने हितों की रक्षा या उन्हें आगे बढ़ाने के लिये कुछ भी करे, उस पर अपना प्रभुत्व जमाने का आरोप लग ही जाता है ।[2]

दक्षेस क्षेत्रीय सहयोग के लिये है न कि आपसी सम्बन्धों का भेदभाव मिटानें के लिये । दक्षेस का उद्देश्य द्विपक्षीय मामलों पर विचार न करना है किन्तु यदि 1985 के उपरान्त इसकी कार्यवाही पर दृष्टि डालें, तो स्पष्ट दिखाई देता है कि दक्षेस राष्ट्रों के मध्य द्विपक्षीय विवाद अपना अस्तित्व बनाये हुये हैं, विशेषतः भारत के

---

1- दिनमान " दक्षिण एशिया में भारत," ए0एस0 अब्राहम, 15 जून 1989 पृ0-25

2- -- वही -----

के प्रति अधिकांशतः देशों की कृत्रिम या सही शिकायतें हैं। श्रीलंका एवं नेपाल ने भारत की अन्तर्राष्ट्रीय छवि धूमिल करने की पूर्ण रूप से कोशिश की तथा दक्षेस के भविष्य पर अपनी कार्यवाहियों से एक प्रश्न चिन्ह लगा दिया ।

श्री पी0वी0 नरसिंह राव ने माले की जुलाई 1984 की दक्षेस देशों के सचिवों की सभा में कहा था-

" भय तथा अविश्वास ने इस क्षेत्र को कष्टप्रद बनाया है तथा केवल कार्यो के द्वारा ही हम स्थायित्व को पुनः प्राप्त कर सकते है।"[1]

अतः स्पष्ट है कि दक्षेस प्रारम्भ से ही उलझनों से घिरा रहा है । भारत एवं पाकिस्तान तो अपने जन्मकाल से ही एक - दूसरे के प्रति दुर्भावनाग्रस्त रहे है लेकिन बांग्लादेश , नेपाल एवं श्रीलंका के प्रति अविश्वास भरे व्यवहार के कारण दक्षेस संगठन चरमरा गया है । श्रीलंका ने 1985 में थिम्पू वार्ता तथा 1987 में विदेश मंत्रियों के सम्मेलन में भारतीय कार्यवाहियों पर आपत्ति उठाने का प्रयास किया था , किन्तु दोनों बार विवेक से कार्य लिया गया तथा विवाद टल गया । 1989 में श्रीलंका ने भारतीय शांति सेना की वापसी का ऐसा विषय उठाया जिसको टाला नहीं जा सका । श्रीलंका ने जुलाई 1989 में दक्षेस देशों के विदेश मंत्रियों की करांची में आयोजित होने वाली बैठक का बहिष्कार किया । श्रीलंका ने दक्षेस सम्मेलन में अपना प्रतिनिधि न भेजकर न केवल दक्षेस घोषणा पत्र का खुला उल्लंघन किया वरन् द्विपक्षीय विषयों को अपने निर्णय का आधार बनाया । उसने भारत पर दबाव डालकर बदनाम करने की कोशिश की ।

करॉंची में आयोजित विदेश सचिव स्तर की बैठक को स्थगित करवाकर श्रीलंका को निश्चित ही सफलता मिली । दक्षेस की बैठक स्थगित होने में प्रत्यक्ष रूप से श्रीलंका के साथ परोक्ष रूप से पाकिस्तान, बांग्लादेश एवं नेपाल का हाथ था । पाकिस्तान यदि प्रयास करता तो श्रीलंका को बैठक में आने के लिये सहमत कर सकता था क्योंकि पाकिस्तान उस समय दक्षेस का अध्यक्ष था ।

---

(1) के0पी0 मिश्रा वी0डी0 चोपड़ा " साउथ एशिया पैसफिक रीजन- इमर्जिंग ट्रेंड्स" पृष्ठ- 70

श्रीलंका ने मई 1985 में थिम्पू वार्ता के बहिष्कार की धमकी दी थी तो भूटान के मेजबान राजा बांगचुक ने समझा -बुझाकर संकट समाप्त करवाया था तथा जून 1987 में स्वर्गीय श्री राजीव गाँधी ने राष्ट्रपति श्री जयवर्धने से वार्ता करके दक्षेस की मंत्रिस्तरीय बैठक में श्रीलंका की उपस्थिति निश्चित कराई थी । पाकिस्तान ने ऐसा कुछ नहीं किया ।[1] अध्यक्ष के नाते पाकिस्तान का दायित्व येन केन प्रकारेण दक्षेस की गाड़ी खींचना था किन्तु पाकिस्तान ने भी परोक्ष रूप से बैठक स्थगित करने में सहयोग दिया । पाकिस्तान वास्तव में दक्षेस के माध्यम से द्विपक्षीय राजनीति का हिमायती है । पाकिस्तान , बांग्लादेश एवं नेपाल ने अपने - अपने ढंग से श्रीलंका का समर्थन किया था ।

7 नवम्बर 1991 को श्रीलंका में प्रस्तावित दक्षेस की शिखर बैठक नहीं सम्पन्न हो पायी । फलस्वरूप श्रीलंका और पाकिस्तान ने भारत को पुनः दोषी ठहराया जबकि भारत के प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव का कहना यह है कि दक्षेस की शिखर वार्ता के लिये एक आवश्यक शर्त यह है कि सभी निर्णय सर्वसम्मति से हों क्योंकि दक्षेस के घोषणापत्र में ऐसा ही प्रावधान है । भले ही माले में सम्पन्न हुये दक्षेस शिखर सम्मेलन में श्री प्रेमदास के स्थान पर उनके प्रधानमंत्री उपस्थित हुये थे किन्तु भूटान में शासनाध्यक्ष वांगचुक ही है और उनके स्थान पर वहाँ कोई विकल्प नहीं है इसलिये शासनाध्यक्ष वांगचुक का उपस्थित होना अनिवार्य था और भूटान नरेश ने सम्मेलन में भाग लेने से असमर्थता व्यक्त कर दी थी । इस आधार पर ही भारत ने भी सम्मेलन में भाग लेने से इंकार कर दिया । प्रधानमंत्री ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि भविष्य में जब कभी दक्षेस सम्मेलन तिथि तय की जायेगी, वे निश्चित रूप से उसमें भाग लेंगे ।[2]

---

(1) जनसत्ता " सार्क का भविष्य " सम्पादकीय 30 जून 1989 पृ० 6

(2) राजस्थान पत्रिका," दक्षेस सम्मेलन और भारत" संपादकीय, 12 नवम्बर 1991 पृ0-6

भारत एवं भूटान की अनुपस्थित में भी पाकिस्तान, बांग्लादेश, श्रीलंका और मालदीव के शासनाध्यक्षों ने कोलम्बो में औपचारिक रूप से बात की और यह तय किया कि दक्षेस के घोषणापत्र में जो सर्वसम्मति का प्रावधान है, उसमें परिवर्तन किया जाना चाहिये ।

प्रश्न यह उठता है कि सर्वसम्मति के प्रावधान को यदि बदल भी दिया गया और दक्षेस में बहुमत से हुये निर्णयों को भी किसी देश ने मानने से अस्वीकार कर दिया तो दक्षेस के पास ऐसी कौन सी शक्ति है जिसके बल पर वह उस देश से अपना निर्णय स्वीकार करवा ले । दक्षेस के गठन के समय ही यह निश्चित कर लिया गया था कि कोई भी देश आपसी विवादों की चर्चा इस मंच पर नहीं करेगा ।[1] किन्तु दक्षेस राष्ट्रों ने इसका पालन नहीं किया ।

दक्षेस देशों के आपसी सामान्य सम्बन्धों के कारण ही इस संगठन को राजनीति से मुक्त रखा गया तथा द्विपक्षीय विवादों को सुलझाने वाला मंच इसे नहीं बनाया गया । दक्षेस न द्विपक्षीय विवादों को सुलझाने का मंच है और न द्विपक्षीय सम्बन्धों से इसके कार्य प्रभावित होने चाहिये । इस सम्बन्ध में भारत को अपने विशाल सहृदय पता कर परिचय देना चाहिये । उसे पड़ोसी देशों के साथ छोटे भाइयों के समान मित्रतापूर्ण व्यवहार करना चाहिये । श्री कैलाश चन्द्र काला का कथन है-

" भारत दक्षिण एशिया के विकास हेतु महत्वपूर्ण योगदान दे सकता है, इसके लिये भारत को अपने दक्षिण एशियायी पड़ोसी राष्ट्रों के बीच विश्वास , सद्इच्छा मैत्री एवं सहयोग स्थापित करना होगा ।[2]

आर्थिक एवं राजनैतिक टकराव के साथ ही दक्षिण एशिया में **सामरिक क्षेत्र** में भी टकराव की स्थिति व्याप्त है ।

---

(1) राजस्थान पत्रिका " दक्षेस सम्मेलन और भारत " संपादकीय 12 नवम्बर 1991 पृ0 6.

(2) कैलाश चन्द्र काला " इम्पीडिमेंट्स इन दि कोआपरेशन एण्ड सेक्योरिटी ऑफ साउथ एशिया " पोलिटिकल साइंस रिव्यू वाल्यूम 26 जुलाई दिसम्बर 1986 पृ0-60

सामरिक रूप से प्रथम विश्वयुद्ध के समय से ही दक्षिण एशिया का विशेष महत्व रहा है । पश्चिम एशिया एवं दक्षिणी पूर्वी एशिया के मध्य स्थित होने के कारण इस क्षेत्र का सामरिक महत्व विशेष रूप से है क्योंकि ये दोनों क्षेत्र शताब्दियों से महाशक्तियों के हितों से जुड़े हुये हैं । रूस-चीन , अमेरिका-रूस एवं अमेरिका -चीन के मध्य सम्बन्धों में होने वाले परिवर्तनों का सीधा प्रभाव इस क्षेत्र पर पड़ता है। 70 के दशक से दक्षिण एशिया की सामरिक स्थिति में विशेष परिवर्तन आया है । पाकिस्तान का विभाजन एवं बांग्लादेश के अभ्युदय के साथ हिन्द महासागर में बढ़ती हुई सैन्य प्रतिस्पर्धा, पश्चिमी-एशिया में अशांति एवं युद्धों का वातावरण, चीन द्वारा महाशक्ति के रूप में उदित होना, भारत द्वारा शांति एवं पड़ोसी देशों में अस्थिरता एवं आतंकवादी गतिविधियाँ, अफगानिस्तान में रूसी हस्तक्षेप एवं खाड़ी युद्ध आदि अनेक सामरिक परिवर्तन हुये है, जिससे दक्षिण एशिया की सामरिक स्थिति में विशेष परिवर्तन आया है ।

महाशक्तियाँ अपने स्वार्थ पूर्ण हितों की पूर्ति के लिये इस क्षेत्र में तनाव उत्पन्न करती हैं। विश्व की समस्त महाशक्तियाँ श्रीलंका के कोलम्बो एवं त्रिकोमाली बन्दरगाहों में सैनिक अड्डे निर्मित करने एवं तेल आपूर्ति सुविधा के लिये प्रयत्नशील रहती है क्योंकि पूर्व से पश्चिम को सम्बद्ध करने वाले सभी वायु एवं जलमार्ग श्रीलंका से होकर गुजरते है । कोलम्बो हिन्दमहासागर में वायु मार्ग का केन्द्र बिन्दु है । भारत के माध्यम से वह अन्तर्महाद्वीपीय सेवा से सम्बन्ध रखता है ।[1] मालदीव को भी हिंदमहासागर में केन्द्रीय स्थिति प्राप्त होने से दक्षिण एशिया के सामरिक महत्व में वृद्धि हुई है । समस्त महाशक्तियाँ मालदीव में सामरिक सुविधायें प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील है । श्रीलोकराज बरल का यह कथन सही है ।

" इन्हें समग्र रूप से अपनी सामरिक रणनीति तैयार करनी चाहिये तथा अपने क्षेत्र को विदेशी आक्रमणों से बचाने के लिये समान रूप से सुरक्षा की नीति

---

(1) रामाराव " इण्डिया एण्ड श्रीलंका " पृष्ठ-8

अपनानी चाहिये ।" [1]

हिन्दमहासागर में तनाव बढ़ने की संभावनाओं को अस्वीकार नहीं किया जा सकता । अतः विशाल राष्ट्र होने के नाते भारत को सुरक्षा की दृष्टि से राजनीतिक, सैनिक सर्वोच्यता प्राप्त करना अत्यन्त आवश्यक है । कुछ विशेषज्ञों का मत है कि सुदृढ़ , शक्तिशाली एवं प्रसारशील भारतीय नौसेना हिन्द महासागर को शांति क्षेत्र बनाने के लिये एक कारगर साधन बन सकती है । यह सही है कि तटीय देशों के सागर और समुद्री किनारों की रक्षा उसे ही करनी चाहिये न कि विदेशी शक्तियों को । किन्तु भारत का पड़ोसी देश श्रीलंका भारत द्वारा ऐसा कदम उठाने पर नहीं रह सकता और भारत ने ऐसा किया तो चीन और उसका अभिन्न मित्र पाकिस्तान भी शांति क्षेत्र परिवर्तित करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने का भारत का निर्णय गलत सिद्ध हो सकता है । जबतक समस्त राष्ट्र एक जुट होकर इसके लिये आवाज न उठायें।

अतः स्पष्ट है कि अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दक्षिण एशिया अपना महत्वपूर्ण स्थान रखता है । विश्व की समस्त महाशक्तियाँ अपने आर्थिक, सामरिक एवं राजनैतिक हितों की पूर्ति के लिये दक्षिण एशिया में विशेष रूचि प्रदर्शित करती है । परस्पर समस्त देशों को एक साथ मिलकर इनका मुकाबला करने से ही दक्षेस की सफलता स्पष्ट होती है । इस क्षेत्र के देशों को अपने को प्रत्यक्ष रूप से बाह्य प्रभावों से बचाना चाहिये, अपनी राष्ट्रीयता का सम्मान करते हुये तथा समान सामरिक नीति अपनाना चाहिये , जिससे ये क्षेत्र अपनी समग्र रूप से ऐसी क्षेत्रीय विदेशनीति बना सकें जिससे दक्षेस की सार्थकता स्पष्ट हो सके । दक्षिण एशियायी देशों की सहयोगी क्षेत्रीय सविदेश नीति इस क्षेत्र में पारस्परिक समझ एवं सहयोग को बढ़ायेगी ।[2]

---

(1) लोकराज बरल " टुवार्ड्स ए रीजनल फॉरेन पॉलिसी " बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया " पृष्ठ-190

(2) -वही- पृष्ठ-194

दक्षिण एशियायी राष्ट्रोंने यद्यपि अपने आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विकास हेतु दक्षेस की स्थापना की है किन्तु दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के मध्य आर्थिक असमानता, पारस्परिक मतभेद एवं शक्ति असंतुलन ने दक्षेस के भविष्य पर प्रश्नचिन्ह लगा दिया है ।

दक्षेस के निर्माण के पश्चात् दक्षिण एशिया की तीव्र गति से बिगड़ती हुई स्थिति परस्पर देशों की प्रतिस्पर्द्धाओं ,मतभेदों आदि के होते हुये भी यह नहीं कहा जा सकता कि दक्षेस नामक संगठन ने इस क्षेत्र में सहयोग के द्वार नहीं खोले है । दक्षिण एशिया के देशों के मध्य उत्पन्न तनावों की विकराल स्थिति के बीच यह संभव नहीं है कि कोई भी संगठन अपने अस्तित्व में आते ही समस्त समस्याओं का अतिशीघ्र निदान करने में सफल हो जाये । विपरीत परिस्थितियों में सहयोग धीरे-धीरे ही संभव हो सकता है । अपने जन्म के सात वर्षो में ही दक्षेस ने सहयोग की दिशा में काफी उन्नति की है ।

श्री के0के0 भार्गव का मत है कि " दक्षेस के माध्यम से हम सभी सात राष्ट्रों की समस्याओं को हल कर सकते है । अगर यह संभव न हो तो आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक स्तर पर हमें दक्षिण एशिया के बाहर देखना पड़ेगा , बाह्य मदद लेनी पड़ेगी, जो एक इच्छी बात नहीं है ।"[1]

दक्षेस के द्वारा दक्षिण एशिया के देशों में आर्थिक प्रगति के लिये निरन्तर प्रयास किये गये । लोगों के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास किया गया । दक्षेस देशों के आर्थिक संकट को दूर करने के लिये संयुक्त खाद्यान्न भंडार एवं उद्यम प्रणाली को लागू करने पर बल दिया गया जिससे संकट की स्थिति में इन देशों को बाहरी राष्ट्रों पर निर्भर न रहना पडे ।

भारत के तत्कालीन विदेशमंत्री इन्द्रकुमार गुजराल ने कहा कि दक्षिण एशिया साझा बाजार कायम करने का विचार निकट भविष्य में ही साकार होगा।[2]

---

(1) राजस्थान पत्रिका " दक्षेस राष्ट्रों में पारस्परिक सहयोग की बड़ी जरूरत " 2 अगस्त 1991 पृ0-5
(2) दैनिक हिन्दुस्तान,"दक्षिण एशिया साझा बाजार बनने की संभावनायें" 7अगस्त 1990

व्यापार, उत्पादन और सेवाओं के बुनियादी क्षेत्रों में सहयोग के लिए इस आशा के साथ निर्णय किया गया कि इससे इस क्षेत्र के निवासियों के बेहतर कल्याण के नये क्षितिज ढूँढ़े जा सकें । एक अन्य महत्वपूर्ण निर्णय क्षेत्रीय परियोजनाओं के लिये एक कगोष तथा वित्तपोषण के दक्षेस क्षेत्रीय कोष की स्थापना का था ।[1] इस क्षेत्र में व्यापार को उदार बनाने का निर्णय भी सम्मिलित किया गया है, इससे सभी सदस्य राष्ट्रों को व्यापार के नये क्षेत्रों में विकास का लाभ बराबर मिलेगा । व्यापार को उदार बनाने के उपायों के अध्ययन के लिये एक अंतर सरकारी दल का गठन किया गया ।[2] इस प्रकार क्षेत्रीय सहयोग के माध्यम से आर्थिक विकास और सामाजिक परिवर्तन का प्रवास भी महत्वपूर्ण है ।

इस संगठन के माध्यम से न केवल आर्थिक क्षेत्र में ही सहयोग में वृद्धि हुई, वरन् राजनैतिक एवं सांस्कृतिक स्तरों पर भी समस्त देशों में सहयोग बढ़ा है । समस्त देशों में अनेक समस्याओं पर विचार विमर्श एवं समझौतों पर हस्ताक्षर हुये है-

भारत एवं पाकिस्तान के प्रधानमंत्रियों के मध्य कुछ समय पूर्व हरारे में बातचीत हुई । दोनों नेताओं ने द्विपक्षीय मुद्दों पर खुलकर बातचीत की । बातचीत सिर्फ समस्या के समझने तक ही सीमित रहीं ।[2] भारत एवं बांग्लादेश के मध्य तीन बीघा क्षेत्र से गुजरने का अधिकार बांग्लादेश को देने के पट्टों की शर्तों पर 26 मार्च 1992 में सहमति हो गयी । भारत एवं नेपाल के मध्य भी भारत-व्यापार संधि को 1989 से पूर्व की स्थिति में बहाल करवाने के लिये नेपाली प्रधानमंत्री श्री भट्टाराय ने सफलता प्राप्त की । नेपाल के प्रधानमंत्री श्री गिरिजाप्रसाद कोइराला की हाल में हुई यात्रा ने दोनों देशों के राजनैतिक, आर्थिक विकास को बढ़ाया । उन्होंने कहा- " मै आपका हूँ और आप हमारे है ।[3] उनका यह कथन भारतीय जनमानस पर एक छाप

---

(1) दैनिक हिन्दुस्तान " अनेक संकटों के बावजूद दक्षेस प्रगति कीर ओर " जनवरी 1992

(2) दैनिक हिन्दुस्तान " कश्मीर के भारत में विलय पर कोई समझौता नहीं " 14 नवम्वर 1991

(3) दैनिक हिन्दुस्तान " कोईराला की सफल भारत यात्रा", संपादकीय, 9 दिसम्वर 1991

छोड़ गया । श्री कोइराला की यात्रा के समय भारत के साथ उनमे पाँच समझौतों पर हस्ताक्षर हुये , जिससे दोनो देशों को लाभ होगा । भारत ने भारतीय मार्ग से एकबार फिर नेपाल को विदेश व्यापार की सुविधायें दी है इसके साथ ही सीमा में अवैध व्यापार रोकने के लिये संयुक्त प्रयास किये जायेंगे । इसके अतिरिक्त भारत ने नेपाल को अतिरिक्त बिजली देने का प्रस्ताव भी मान लिया है । नेपाल ने यह स्पष्ट किया कि वह अपनी भूमि में भारत-विरोधी ताकतों को नहीं पनपने देगा । साथ ही नेपाल ने यह महत्वपूर्ण बात कहीं कि अब वह चीन से भविष्य में हथियार नहीं खरीदेगा ।

अभी हाल ही में भारत और नेपाल आंतकवादियों के खिलाफ मिलकर काम करने पर सहमत हो गये है । प्रधान मंत्री श्री नरसिंह राव और नेपाली प्रधानमंत्री गिरिजा प्रसाद कोइराला के बीच सोमवार को हुई बातचीत में तय हुआ कि आंतकवादियों को नेपाल से भारत विरोधी गतिविधियाँ चलाने से रोकने के लिये दोनों देश मिलकर काम करेंगे ।[1]

भारत - श्रीलंका के मध्य 7 जनवरी 1992 में सम्पन्न हुई संयुक्त बैठक में अनेक क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने के लिये विचार-विमर्श हुआ । दोनों देशों ने तय किया कि वे इन क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने के लिये व्यापारिक प्रतिबंधों में ढ़ील देंगे तथा आर्थिक नीतियों को उदार बनाकर संयुक्त उद्यमों को प्रोत्साहित करेंगे । व्यापार- संतुलन ठीक करने के लिये भी उपाय करने के बारे में दोनों देशों में सहमति हुई । इस बैठक में श्रीलंका ने रेलवे, दूर-संचार, पेट्रोलियम, कृषि तथा लघु उद्योगों से सम्बन्धित परियोजनाओं और कार्यक्रमों में भारत के तकनीकी सहयोग की संभावनाओं पर विस्तार से चर्चा हुई । दोनों देशों ने उड्डयन और पर्यटन क्षेत्र में भी सहयोग का दायरा बढ़ाने का फैसला किया।[2]

भारत एवं मालदीव भी बीजा प्रणाली समाप्त करने पर सहमत हो गये हैं इस तरह वीजा समाप्त करने वाले दक्षेस देशों में भारत एवं मालदीव प्रथम स्थान पर आते है।

---

(1) जनसत्ता, " नेपाल से चलने वाली भारत विरोधी आंतकवादी कार्यवाही रोकी जायेगी" 21 अक्टूबर, 1992 पृष्ठ-1

(2) दैनिक हिन्दुस्तान " भारत-श्रीलंका कई क्षेत्रों में सहयोग का दायरा बढ़ायेंगे" 8 जन0 पृ0-1

अन्तर्राष्ट्रीय - राजनीति में भी दक्षिण एशिया के समस्त राष्ट्र राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं । गुटनिरपेक्ष आन्दोलनों में दक्षिण एशियायी राष्ट्रों की भूमिका निःशस्त्रीकरण एवं विकास के क्षेत्र में उभर कर सामने आई प्रत्येक सम्मेलन में भारत सहित दक्षिण एशियायी राष्ट्रों ने महाशक्तियों से परमाणु अस्त्रों को पूर्णतः समाप्त करने, निःशस्त्रीकरण की प्रक्रिया को सतत् रूप से चलाये रखने तथा आयुद्धों की दौड़ पर खर्च की जाने वाली राशि को विकासशील एवं अविकसित देशों के आर्थिक विकासके लिये नियोजित करने का आग्रह किया है तथा बाद में महाशक्तियों के कार्यों की आलोचनात्मक समीक्षा करने में पीछे नहीं हटे है ।

भारत के विदेश सचिव श्री जे0एन0 दीक्षित ने अमेरिका से कहा कि - दक्षिण एशिया को एटमी मुक्त क्षेत्र बनाने में मदद के लिये वह चीन, रूस, कजाकिस्तान और इज़राइल को समझाये ।[1] भारत यह सुनिश्चित करना चाहता है कि कजाकिस्तान जैसे नवोदित मध्य एशियायी देश एशिया में एटमी हथियारों के विस्तार में योगदान नहीं देंगे । उन्होंने कहा कि दक्षिण एशिया में एटमी हथियारों के नियंत्रण पर पाँच राष्ट्रों का सम्मेलन बुलाये जाने की होड़ की स्थिति वाले देशों के मध्य विश्वास उत्पन्न करने के लिये अंतिम उपाय करना आवश्यक है ।

दक्षेस संगठन के प्रकाश में आने के उपरान्त सांस्कृतिक दृष्टि से जिन क्षेत्रों में सहयोग पर सहमति हुई उनमें पर्यटन को बढ़ावा देने के ठोस उपाय, तकनीकी, वैज्ञानिक और विकास मामलों में छात्रों , विद्वानों और शोधकर्ताओं की सहायता के लिये आँकड़ा केन्द्र स्थापित करना , शिक्षा के क्षेत्र में छात्रवृत्तियाँ माध्यम से सहयोग बढ़ाना तथा क्षेत्रीय सहयोगी कार्यक्रमों में युवाओं को प्रोत्साहित करना आदि सम्मिलित हैं। दृश्य-श्रृव्य आदान-प्रदान के तहत प्रत्येक माह की पहली तारीख को सांय टेलीविजन पर दक्षेस देशों के कार्यक्रम भी प्रस्तुत किये जा रहे हैं । दक्षेस खेलों का भी आयोजन

---

(1) जनसत्ता , लंदन एर्जेंसिया " दक्षिण एशिया को एटमी मुक्त क्षेत्र बनाने में अमेरिका मदद दें " 14 मार्च, 1992

हो रहा है । अक्टूबर 1992 से " दक्षेस महोत्सव " का भी आयोजन किया गया है । इसका प्रारम्भ भारत से शुरू हुआ है ।

इसके अतिरिक्त भारत एवं मालदीव के मध्य दूरदर्शन कार्यक्रमों के आदान-प्रदान के प्रावधान पर हस्ताक्षर किये गये । सांस्कृतिक एकता पर बल देते हुये मालदीव के विदेशमंत्री ने बताया कि मालदीव के सात प्रमुख ऐतिहासिक स्थलों के सुधार कार्य में मदद करने के लिये भारतीय विशेषज्ञों की एक टीम अगले महिने मालदीव जायेगी ।[1] इससे पूर्व श्री गयूम ने एक समारोह में बीस करोड़ रूपये की लागत से बनने वाले इन्दिरा गाँधी स्मारक अस्पताल की आधारशिला रखते हुये भारत और मालदीव की मित्रता का स्मारक बताया ।

दक्षेस के महासचिव श्री के0के0 भार्गव ने कहा कि--

महिला विकास, गरीबी उन्मूलन , सांस्कृतिक सहयोग, पारस्परिक अनुसंधान आदि विषयों में दक्षिण एशियायी क्षेत्रीय सहयोग संगठन ने उल्लेखनीय सफलतायें अर्जित की है ।[2]

उन्होंने बताया कि सदस्य राष्ट्रों में सांस्कृतिक आदान प्रदान में आशातीत प्रगति हुई है ।

दक्षेस ने क्षेत्रीय राष्ट्रों के भारत के प्रति भय को समाप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । दक्षेस समस्त देशों को एक मंच पर ले आया है और उनमें सहयोग, विश्वास और राजनीतिक सम्बद्धता की भावना उत्पन्न की है । यह भी सत्य है कि इन राष्ट्रों में परस्पर मतभेद हो सकते हैं किन्तु सहयोग की पूरी मानसिकता बनी हुई है । भारत-पाकिस्तान, भारत-बांग्लादेश, भारत-नेपाल एवं भारत-श्रीलंका विवाद समय -समय पर उभरते रहे हैं किन्तु दक्षेस के कारण किसी क्षेत्रीय संघर्ष की स्थिति नहीं बनी है । चूँकि दक्षेस सम्मेलनों में द्विपक्षीय मसले नहीं

---

(1) नवभारत टाइम्स " भारत-मालदीव वीजा प्रणाली खत्म करने पर रजामंद" 15 जनवरी, 1990 पृष्ठ-1

(2) राजस्थापन पत्रिका " दक्षेस राष्ट्रों में पारस्परिक सहयोग की बड़ी जरूरत" 2 अगस्त, 1991 पृष्ठ-5

उठाये जा सकते इसलिये दक्षेस मंच तो सदा सर्वसम्मति का मंच ही रहता है और सदस्य राष्ट्र अलग से वार्ताओं द्वारा द्विपक्षीय विवादों को हल करने का प्रयास करते हैं । भारत के पाकिस्तान के साथ कश्मीर एवं आतंकवाद के प्रश्रय का विवाद, बांग्लादेश के साथ चकमा शरणार्थी एवं गंगाजल विवाद, नेपाल के साथ व्यापार एवं पारागमन सन्धि, श्रीलंका के साथ शांति सेना की वापसी सम्बन्धी विवादों को या तो सुलझा लिया गया है या सुलझाया जा रहा है ।

वर्तमान स्थिति को दृष्टिगत रखते हुये तथा आशावादी मार्ग अपनाते हुये यह आशा की जा सकती है कि सहयोग की अस्पष्ट तस्वीर भविष्य में अधिक स्पष्ट होकर अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति को अवश्य प्रभावित करेगी ।

इसके विपरीत कुछ विश्लेषकों द्वारा यह प्रश्न उठता है कि अपने निरन्तर सम्मेलनों और समुचित व्यय के पश्चात् दक्षेस के इन आयोजनों में अब तक वास्तविक उपलब्धियाँ क्या रहीं है ? सांस्कृतिक स्तर पर सहयोग की दिशा में थोड़ी - बहुत सफलता अवश्य मिली है लेकिन असली मुद्दा तो सदस्य देशों में आपसी सौहार्द के उस वातावरण का सृजन करना है, जिसके तहत यह संगठन इस वृहत्त्त उपमहाद्वीप में आर्थिक सहयोग के उद्देश्य को यूरोपीय साझा बाजार के रूप में विकसित करने में सफल हो सके । किन्तु इस क्षेत्र में सफलता नाममात्र की है। यह एक ऐसी विडम्बना है जिसका निदान यदि निकट भविष्य में नहीं खोजा गया तो दक्षेस संगठन पर ही प्रश्न चिन्ह लग जायेगा । वास्तव में दक्षिण एशियायी राष्ट्रों के पारस्परिक विश्वास पर टिका हुआ है । संदेह एवं अविश्वास के छोटे में कोई भी संगठन कभी फल-फूल नहीं सकता है । पाकिस्तान की भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्री बेनजीर भुट्टो का कहना है कि--

"हमें अपनी समस्याओं के समाधान के लिये साहस की आपवश्यकता है तथा भविष्य के लिये निर्धारित कार्यक्रमों की आवश्यकता है । हमें भयमुक्त होकर साथ-साथ काम करना चाहिये ।"[1]

---

(1) आई0डी0एस0ए0 साउथ एशिया न्यूज रिव्यू, जन0 1990

सम्पूर्ण विवेचन को देखकर यह कहना गलत नही होगा कि दक्षेस देशों में आपसी सहयोग के कदम बहुत धीरे-धीरे उठ रहे हैं । विकास की प्रक्रिया बहुत धीमी गति में है । इस क्षेत्र में आर्थिक संसाधन बहुत कम और अविकसित है । यहाँ एक ओर बढ़ती हुई जनसंख्या की समस्या है तो दूसरी ओर औचित्यपूर्ण अवस्था का अभाव है।

वर्तमान समय में किसी बड़े देश पर निर्भर रहने का काल बीच चुका है। आज जब विकसित देश स्वयं ही अपनी सुरक्षा के प्रति अधिक चिन्तित है तो वे कमजोर देशों का बोझ उठाने में सक्षम नहीं होंगे । संभवतः सोवियत संघ के विनाश से सभी को यह विदित हो चुका है कि आज के संदर्भ में कोई भी अर्थव्यवस्था दूसरे देशों का बोझ अधिक समय तक नही उठा सकती । भारतीय प्रधानमंत्री श्री नरसिंह राव का यह संकेत भी यथार्थ परख है कि-

आज विश्व के अधिक समृद्ध होने की जो संभावना दिखायी दे रही है, वह कल विपरीत भी हो सकती है । अतः क्षेत्रीय सहयोग की महत्ता और भी बढ़ जाती है । दक्षेस के स्वर्णिम भविष्य के लिये यह आवश्यक है कि दक्षेस के सदस्य देशों में व्यक्तियों के मध्य सांस्कृतिक एवं सामाजिक समझ हो । दक्षेस देशों की जनता के बीच वैचारिक समरूपता इसके विकास के लिये आवश्यक है । दक्षेस संगठन तभी सफलीभूत हो सकता है, जब इसको व्यक्तिगत राजनीति से हटा कर गैर राजनीतिक सहयोग संगठन के रूप में इसका प्रयोग किया जाये । तभी इस संगठन द्वारा क्षेत्रीय सहयोग एवं सदस्य राष्ट्रों के जीवन स्तर में सुधार लाने तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रभावी भूमिका का निर्वाह किया जा सकता है ।

## राजनैतिक समझ एवं सहयोग के आयाम

" दक्षेस" वस्तुतः " भारत-खण्ड" की राजनैतिक इकाइयों का एक गैर राजनीतिक लेकिन सरकारी संगठन है । इसका अस्तित्व संसार में बिल्कुल भी स्पन्दन उत्पन्न नहीं करता, किन्तु फिर भी यह अत्यन्त महत्वपूर्ण संगठन है क्योंकि भारत खण्ड की ये विभक्त इकाइयाँ किसी भी कारण से जब निकट आती हैं तो अपनी स्वाभाविक एकात्मकता का बोध भी उनको होता है । राजनैतिक रूप से घनीभूत कड़वाहट मन में लेकर भी श्रीलंका के राष्ट्रपति श्री रणसिंघे प्रेमदासा ने बांग्लादेश, पाकिस्तान व मालदीव के शासनाध्यक्षों के सम्मान में जो भाषण दिया, उसमें भी इस भू-, खण्ड की सांस्कृतिक एकात्मकता को उन्होंने रेखांकित किया ।

" दक्षेस " की विफलता भारत - खण्ड की निजी विफलता है । भारत-खण्ड के तथाकथित राष्ट्र-राज्य विश्व मंच पर तब तक कोई सार्थक भूमिका नहीं निभा सकते, जब तक वे अपनी एकात्मकता को पहचानकर सांस्कृतिक व राजनैतिक रूप से उसे अभिव्यक्त नहीं करते । किसी अन्तर्राष्ट्रीय संगठन के शिखर सम्मेलन का सम्पन्न होना या स्थगित होना एक बहुत महत्वपूर्ण घटना होती है । अरब लीग या कैरेबियन सागर के सम्मेलनों को भी विश्व-मीडिया महत्व देता है , लेकिन दक्षेस की तैयारियाँ व स्थगन को विश्व-समाचार तंत्र ने कोई वजनदार समाचार नहीं माना ।[1]

इसमें पाश्चात्य प्रभाव के समाचार साधनों की पक्षपातपूर्ण दृष्टि की आलोचना करने के बावजूद हमें आत्मावलोचन करना होगा कि भारत-खण्ड के देश "तृतीय विश्व " के तृतीय श्रेणी के देश क्यों बने हुये हैं ? विश्व इनकी महत्ता व अस्मिता को सम्मान देना आवश्यक क्यों नहीं समझता ? यदि देखा जाये तो इसके लिये ये देश स्वयं उत्तरदायी हैं । भारत खण्ड देश कश्मीर, लिट्टे व जीयेसिन्ध की घरेलू समस्याओं के लिये आपस में लड़ते रहते हैं । उनको अपनी साझी शक्ति का ...

---

{1} राजस्थान पत्रिका " दक्षेस देश आत्मावलोकन करें डा0 एस0 शर्मा, 14नवम्बर 1991 पृष्ठ-6

अहसास नही है तथा विश्व के नव निर्माण में अपनी सशक्त भूमिका का ज्ञान भी इन्हें नहीं है ? दुर्भाग्य यह है कि विश्व के बदले हुये समीकरण उनकी भूमिकाओं को सुनिश्चित करते हैं । विश्व में हो रहे नवीनतम परिवर्तनों में उनकी कोई भूमिका नही है । विश्व क्या एशियाई राजनीति में भी गैर-एशियाई शक्तियाँ ही निर्णायक भूमिका का निर्वाह करती है ।

वर्तमान समय में दक्षिण एशिया सहयोग संगठन-दक्षेस" के घोषणा-पत्र , क्षेत्रीय सहयोग के घोषित मंसूबों और संसार में नयी-नयी साझा मंडियों की स्थापना के वर्तमान दौर में सहयोग की संभावनाओं पर नये सिरे से विचार किया जाना चाहिये । इस बात की अवहेलना नहीं की जा सकती कि सातों सदस्यों के मध्य अनेक द्विपक्षीय विवाद ऐसी हैं, जिनका अभी तक कोई समाधान नहीं निकल पाया है। इसके अतिरिक्त उनके मध्य संदेह भी बहुत है, जिसके कारण नागरिकों के उन्मुक्त आवागमन और व्यापार तक के लिये सीमायें नहीं खोली जा सकी है । अब तक उनमें सहयोग की दिशा में जैसी प्रगति हुई है, उस गति से यूरोपीय साझा बाजार के सहयोग सतर तक पहुँचने में सदियों का समय लग सकता है । यूरोपीय देशों में संसद, संयुक्त नागरिकता, समान मुद्दा तथा समान व्यापार प्रणाली तक कायम कर ली है ।[1] उनकी अर्थव्यवस्थायें प्रतिस्पर्धी नहीं, एक-दूसरे की पूरक बन रही हैं । यदि भारतीय उपमहाद्वीप के देशों को उसी दिशा में अग्रसर करना है तो उसके लिये बड़ी राजनीतिक सूझबूझ दिखानी होगी, जिसमें पहला कदम एक दूसरे की राजनैतिक स्वतंत्रता व सुरक्षा की गारंटी प्रदान करना होगा ।

आज दक्षेस पर बिखराव का संकट झूल रहा है । आरोपों- प्रत्यारोपों का दौर चल रहा है । आज जिस तरह की कटुता जन्म ले रही है, उसको पहले ही समझकर संगठन को एक निरपेक्ष आधार प्रदान किया गया था, जिसमें किसी द्विपक्षीय असंगति, आपसी टकराव या आलोचना, प्रत्यालोचना को कोई स्थान नहीं दिया गया था

---

1- दैनिक हिन्दुस्तान " दक्षेस शिखर सम्मेलन " संपादकीय 7 नवम्बर 1991

और संगठन के उद्देश्यों को तुच्छ राजनीतिक स्वार्थों से ऊपर उठकर मानवता के आधार पर निर्धारित किया गया था जो कि अन्योन्याश्रित सम्बन्धों में एक कठिन कार्य था, जैसा कि अब स्पष्ट होने लगा है । द्विपक्षीय मामलों को न केवल दक्षेस के मंच पर उल्लेख वर्जित था, अपितु अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर ही हर तरह के किसी विवाद को खड़ा करना प्रतिबन्धित कर दिया गया था । सभी जानते थे कि ऐसा संभव होना कठिन है फिर भी यह आशा की गयी थी कि सदस्य राष्ट्र संयम अपनायें और संगठन के संविधान का उल्लंघन नहीं करेंगे किन्तु न तो कभी पाकिस्तान ने ऐसा संयम बरता, वह कश्मीर का मामला निरन्तर उठाता रहा है और श्रीलंका ने भी मान्य सिद्धान्तों का उल्लंघन किया।

वास्तव में दक्षेस संगठन का उद्देश्य इस आधार पर निर्धारित किये गये थे कि क्षेत्र की आर्थिक उन्नति का नया द्वार खुल सके । क्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि से अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे शोषण को रोका जा सके । दोनों महाशक्तियों के जो शक्ति केंन्द्र दक्षिण एशिया में स्थापित हो रहे हैं, उन्हें स्थापित न होने दिया जाये क्योंकि वे शोषण के आधार बन जायेंगे । अतः एक - दूसरे के ज्ञान एवं तकनीक के आदान - प्रदान से सस्ती टेक्नॉलाजी प्राप्त करने और उसके उपयोग का उद्देश्य था । इसी आधार पर क्षेत्रीय खाद्य भंडार तथा क्षेत्रीय वित्तीय कोष की स्थापना का लक्ष्य रखा गया था लेकिन वह आज भी अधर में है ।

आज आवश्यकता इस बात की है कि समस्त देश परस्पर राजनैतिक सूझ-बूझ के द्वारा दक्षेस की सफलता के बीच आने वाली कठिनाइयों का निवारण करें और इस संगठन को सफल बनायें जिससे सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के विकास का मार्ग प्रशस्त हो सकें।

भारतीय प्रधानमंत्री श्री राव ने ठीक ही कहा कि- " जिस समय दूसरे क्षेत्रों के देश तेजी से आगे बढ़ रहे है, हम सिर्फ बहस में समय नहीं गंवा सकते ।"[1]

---

(1) जनसत्ता " सार्क कामकाजी कैसे हो " संपादकीय 24 दिसम्बर 1991 पृ0-6

अब वक्त बहुत कम है , इसलिये दक्षेस के सम्मेलनों को ठोस कामकाजी बैठकों में बदला जाना चाहिये । विश्व में आर्थिक और राजनीतिक गुटों के बनने -बिगड़ने की प्रक्रिया काफी तीव्र हो गयी है । क्षेत्रीय और आर्थिक हितों की समानता के आधार पर सामूहिक समरनीतियाँ बनाने की प्रवृत्ति समस्त क्षेत्रों में दिखलायी दे रही है । इस मायने में सम्पन्न पश्चिमी देशों की गोलाबंदी से आर्थिकम रूप से विकासशील देशों के लिये सामूहिक खतरा उत्पन्न हो रहा है । इसलिये आवश्यक है कि ये देश मिल-बैठकर इस प्रतिस्पर्धा में अपने हितों की रक्षा का संकल्प करें । संकल्पों की घोषणायें पूर्व भी होती रही है किन्तु इनको पूर्ण करने के लिये ठोस नीति बनाने की व्यवहारिकता का सवर्था अभाव रहा है । दक्षिण एशिया के देशों में आर्थिक सहयोग के मार्ग में कुछ ऐसे मुद्दे बाधा बनते जा रहे हैं जो ऐतिहासिक कारणों से परस्पर अविश्वास का कारण बने हुये हैं किन्तु अब यह अहसास जन्म ले रहा है कि राजनैतिक विवादों के आवश्यकता से अधिक महत्व देने से दूरगामी आर्थिक हितों की हानि हो रही है ।

भारतीय प्रधानमंत्री ने यह आशा व्यक्त की है कि उस प्रवृति में बदलाव आ रहा है जिसके कारण दक्षेस के पहले कई सम्मेलन लंबे-चौड़े भाषणों के अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं कर पाये । अब यह अहसास बढ़ रहा है कि ऐसी समरनीति बन सकती है जिसका लाभ समस्त देशों को बराबर से मिलता रहे । प्रथम आवश्यकता इन देशों के मध्य व्यापारिक और औद्योगिक आदान-प्रदान बढ़ाने की है । इसके लिये सभी देशों में व्यवसायिक कायदे - कानूनों में समानता लाने की आवश्यकता है । एकाकी चलने का परिणाम यह निकला है कि दक्षिण एशिया के देशों में वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान में दुहरापन आ जाता है। इसलिये एक-दूसरे को वैज्ञानिक और तकनीकी उपलब्धियों से लाभ उठाने की व्यवस्था होनी चाहिये । इस आदान - प्रदान की अत्याधिक सम्भावनायें है और इससे दक्षेस के देश पश्चिमी अनुसंधान और मंहगी तकनीकों को खरीदने से बच सकते है । फिलहाल जीन बैंक स्थापित करने से इसका

प्रारम्भ किया गया है । एक गुट के रूप में दक्षेस शेष विकासशील देशों से भी सहयोग कर सकता है । इस प्रवृत्ति को आगे बढ़ाने के लिये आवश्यक है कि इन देशों के नेता व्यक्तिगत आग्रहों से ऊपर उठकर सर्वानुमति का मार्ग अपनायें ।

दक्षेस देशों में विकास बढ़ाने के लिये परस्पर सहयोग की नितान्त आवश्यकता है । यद्यपि इस क्षेत्र में अनेक प्रयत्न किये जा रहे हैं किन्तु फिर भी निम्नलिखित सुझाव ध्यान योग्य है -

1- समृद्धि स्वयं तो उत्पन्न होती नहीं। यह प्रयासों के माध्यम से ही आती है। विश्व की समृद्धि तो तभी संभव है जब धनी देश अपने संसाधनों और अर्थव्यवस्था में से कुछ निर्धन देशों को देना चाहें किन्तु वस्तुस्थिति कुछ और ही है । धनी देश अभी तक निर्धन देशों को अपने बाजार से अधिक कुछ नहीं समझते । अब तो ऐसा लगता है कि धनी देशों के मध्य अपना बाजार फैलाने के सवाल पर प्रतियोगिता उत्पन्न हो सकती है। ऐसी स्थिति में विकासशील देश आपस में जितना सहयोग बरतेंगे उतना ही वे अपना भला करने की स्थिति में होंगे ।

पूर्व विदेशमंत्री और जनता दल के नेता श्री इन्द्रकुमार गुजराल ने कहा कि नई आर्थिक चुनौतियों का सामना करने के लिये दक्षिण एशियाई देशों में और अधिक आर्थिक सहयोग बढ़ाने की आवश्यकता है ।[1]

2- आवश्यकता इस बात की है कि दक्षेस को यूरोपीय समुदाय की रूपरेखा पर विकसित किया जाये क्योंकि जब आर्थिक एवं औद्योगिक विकास की समस्या उठती है तो विकसित देश सभी के साथ एक तरह का व्यवहार करते है । मुद्रा का अवमूल्यन आदि विश्व बैंक एवं अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष के आवश्यक उपचार हैं जिन्हें विकासशील अर्थव्यवस्था के रूग्ण देशों को कड़वे घूँट की तरह पीने के लिये मजबूर

---

(1) राजस्थान पत्रिका , 16 फरवरी 1992

होना पड़ता है । विकसित देशों एवं अमेरिका द्वारा नियंत्रित विश्व की वित्तीय संस्थाओं के हाथों से मुक्ति पाने के लिये दक्षेस राष्ट्रों के लिये आपसी सहयोग के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं है ।

श्रीमती बेनजीर भुट्टो ने दक्षेस की मंत्रिमंडलीय स्तर की बैठक में 8 नवम्बर, 1989 को कहा था - दक्षेस देश यदि संयुक्त रूप से पारस्परिक विश्वास के साथ कार्य करें तो यह क्षेत्र आर्थिक क्षेत्र में एक सुदृढ़ शक्ति को प्राप्त कर सकता है उन्होंने कहा " हम इसे प्राप्त कर सकते हैं,यदि इसके लिये प्रयास करें तथा एक - दूसरे के लिये समस्या न उत्पन्न करें । " [1]

दक्षेस के सदस्य देशों के नेतृत्व की आपसी सहयोग कमी इस समस्या पर विशेष रूप से विचार करना पड़ेगा और निकट भविष्य में ही इसका निदान ढूँढना पड़ेगा **अन्यथा इस संस्था** की उपयोगिता नाममात्र की रह जायेगी और दक्षेस के समारोहों का औपचारिकता के अतिरिक्त कोई उपयोग नहीं रहेगा । [2]

1983 की सहयोग की पहली विदेश मंत्री स्तर की बैठक के अंत में जारी हस्ताक्षरित घोषणापत्र में श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था कि-

" आर्थिक विकास के माध्यम से सहयोग होगा जो कि बाह्य दबावों को रोकने में सहायक होगा ।"

3- साझा बाजार की समस्याओं और संभावनाओं में सम्बन्धित साहित्य के सर्वेक्षण से ज्ञात होता है कि एक कार्यवाही में सफलता प्राप्त होने पर दूसरी कार्यवाही की सफलता का मार्ग प्रशस्त होता है । सफल सहयोग से समन्वय स्थापित होता है, जिसकी सफलता की अंतिम कसौटी एकीकरण होती है । स्वतंत्र व्यापार संगठन में क्षेत्र के सदस्यों के मध्य व्यापारिक प्रतिबंध हटा लिये जाते हैं किन्तु तीसरे देशों के साथ

---

(1) आई0डी0एस0ए0 साउथ एशियन रिव्यू, जनवरी-1990

(3) दिनमान टाइम्स "यह युद्धों का समय नहीं है" हरिकिशोर सिंह 14-20 जुलाई 1991

कौन से प्रतिबंध लागू किये जायें, इस बात का निर्णय देश को अलग-अलग लेना पड़ता है। सेक्टर स्तर पर एकीकरण में विशिष्ट वस्तुओं के लिये एक ही बाजार स्थापित किया जाता है और क्षेत्र के दो या उससे अधिक दोनों देशों के बीच इन वस्तुओं के संचालन पर से व्यापारिक प्रतिबंध हटा लिये जाते हैं । यूरोपीय कोयला और तेल सेक्टर स्तर पर एकीकरण का ही एक उदाहरण है ।

दक्षिण एशिया के देशों के मध्य व्यापार की मात्रा बहुत ही कम और अधिकाँशतः पश्चिमी देशों की ओर झुकी हुई प्रतीत होती है। एशियाईकरण की भावना ने दक्षिण एशियाई साझा बाजार के स्वंय निर्माताओं को बहुत गहरे प्रभावित किया है किन्तु उनका यह स्वप्न एक सुखद भ्रान्ति से अधिक कुछ नहीं है किन्तु जब एक बार क्षेत्रीय सहयोग से होने वाले आर्थिक लाभ का व्यापक रूप से स्वागत किया जाता है , तब इस बात में संदेह करने का कोई कारण नहीं दिखाई देता कि अपेक्षित राजनैतिक सहयोग नहीं प्राप्त किया जा सकता । फ्रांस और जर्मनी के बीच एक ही पीढ़ी के दौरान दो बार युद्ध हुये, फिर भी अपने सामान्य हितों को ध्यान रखते हुये साझा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थायें स्थापित करने के प्रश्न पर दोनो में पूर्ण मतैक्य है ।

4- दक्षिण एशिया में सहयोग स्थापित करने के लिये आवश्यक है कि इस क्षेत्र में अर्न्तक्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि की जाये । व्यापारिक बाधायें समाप्त से अर्न्तक्षेत्रीय व्यापार में वृद्धि होती है । सहयोग का आशय यह होना चाहिये कि उत्पादन में वृद्धि हो । विभिन्न देशों के उत्पादन कार्यक्रमों के बीच ऐसा तालमेल बिठाया जाना आवश्यक है जिससे कि समूचे क्षेत्र में अर्थव्यवस्था के असंतुलित विकास पर अंकुश लगाया जा सकें । व्यापार-विस्तार को कार्यक्रम में परिणित करते समय इन देशों का परस्पर भौगोलिक सामीप्य, आर्थिक, विकास के प्रायः एक से स्तर और वांछित मात्रा में राजनीतिक सहयोग जैसी बातें ध्यान में रखनी चाहिये । बांग्लादेश के राष्ट्रपति एच0एम0 इरशाद ने कहा था -

" अब हमें सहयोग की दिशायें तेजी से तय करनी होंगी । यदि अपनी जनता तक सहयोग का लाभ नहीं पहुँचता है तो सब बेमतलब है । "

5- भारत ने प्रारम्भ से ही यह प्रस्ताव दिया था कि दक्षेस के माध्यम से सदस्य देशों के मध्य आर्थिक सहयोग बढ़ाया जाये किन्तु दक्षेस के अन्य सदस्य देशों के बीच आर्थिक सहयोग के माध्यम से उन पर प्रभुत्व न जमा लें । जब तक दक्षेस के देशों के मध्य आपसी विश्वास उत्पन्न नहीं होगा और वे अपने मौलिक मतभेद दूर नहीं करेंगे, दक्षेस देशों की सफलता संदिग्ध ही बनी रहेगी । आज अधिकांश देश इस आवश्यकता को महसूस करने लगे हैं किन्तु इस प्रश्न पर मतैक्य अभी तक नहीं हो पाया है ।[1]

6- दक्षेस देशों के मध्य सांस्कृतिक सहयोग स्थापित करने के लिये सांस्कृतिक समारोह आदि आयोजित करने की योजना बनानी चाहिये , जिससे सात देशों की प्रभावी भागीदारी को प्रोत्साहन मिल सके । सांस्कृतिक रूप से सहयोग स्थापित करने के लिये इन देशों की सरकारों को चाहिये कि वो अपने-अपने देशों के विद्यार्थियों को अध्ययन के लिये , शोधकार्य के लिये दूसरे देशों में भेजें जिससे सांस्कृतिक का प्रसार हो । उद्घाटन आदि समारोहों में भी परस्पर एक -दूसरे देशों के शासनाध्यक्षों, राजदूतों आदि को आमंत्रित करना चाहिये । इसके अतिरिक्त समय समय पर परस्पर विचार-विमर्श भी करते रहना चाहिये ।

लोकराज बरल का कहना है कि-

दक्षेस को प्रभावी बनाने के लिये इन क्षेत्रों में विश्वसनीय सहयोग की आवश्यकता है । समस्त सदस्य -देशों को अपने को दक्षेस की एक इकाई के रूप में प्रस्तुत करना चाहिये ।[2]

---

(1) राजस्थान पत्रिका"दक्षेस सम्मेलन और भारत"संपादकीय 12 नवम्बर 1991

(2) लोकराज बरल"टुवार्ड्स ए रीजनल फॅरेन पॉलिसी" बिमल प्रसाद"रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया पृ0-194

7- दक्षिण एशिया में लगभग 1 अरब जनता निवास करती है । अत्याधिक जनसंख्या वृद्धि यहाँ की प्रगति में बाधक है । जनसंख्या वृद्धि के संदर्भ ने दक्षेस देशों ने कोई निर्णय नहीं लिया ।[1] समस्त देशों को इस ओर ध्यान आकर्षित करके जनसंख्या की वृद्धि से रोकथाम लिये सचेत होना चाहिये ।

8- भारत-पाकिस्तान पारस्परिक स्थिति से सम्बन्धित है । कश्मीर और कच्छ के संबंध में दोनों देशों के क्षेत्रीय विवादों, बांग्लादेश-मुक्ति आन्दोलन में भारत के समर्थन और " सीटों " तथा " सेंटो" के साथ पाकिस्तान के पूर्व के सम्बन्धों के कारण दक्षिणं एशियाई क्षेत्रीय सहयोग अवरूद्ध हो गया है तथापि ऐसे सहयोग में भारत-पाकिस्तान की साझेदारी की आज सम्भावनायें पहले की तुलना में उत्साह वर्धक हैं । अणुशस्त्रों के निर्माण की क्षमता को लेकर दोनों देशों के बीच आपसी सन्देह और अविश्वास बना हुआ है जिससे दोनों देशों के निकट आने की संभावनाओं पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है । यह तर्क दिया जा सकता है कि यदि भारत की ओर से पाकिस्तान को अभी भी खतरा बना हुआ है तो विशाल शक्तियों के सैनिक समझौते में इसके लिये क्षेत्रीय स्तर पर सदस्य बन जाना. उसके हित में होगा, जिससे उसकी सुरक्षा सुदृढ़ हो सके । किन्तु फिर भी पहले के भारत-पाक सम्बन्धों की अपेक्षा वर्तमान में इनके सम्बन्धों मध्य प्रगति दिखाई दे रही है । भारत-पाकिस्तान के सेनाओं की वापसी दोनों देशों के मध्य सहयोग एवं सद्इच्छा का उदाहरण है । भविष्य में भी इनके मध्य उत्पन्न अविश्वास एवं निराशा को सद्इच्छा के माध्यम से दूर करके इस दिशा में सफल कदम उठाया जा सकता है ।[2]

9- भूटान नरेश ने कहा था कि-

" दक्षिण एशिया में आंतकवाद के लगातार प्रसार में आज क्षेत्रीय सहयोग की नींव ही चरमरा उठी है।"[3]

---

(1) कोआपरेशन इन साउथ एशिया"पृष्ठ- 194

(2) कैलाश चन्द्र काला " इम्पीडिमेंट्स इन दिन कोआपरेशन एण्ड सेक्योरिटी इन साउथ एशिया" पोलिटिकल साइंस रिव्यू वाल्यूम 26 जुलाई - दिसम्बर 1986 पृ0-59

(3) दैनिक हिन्दुस्तान ' 23 दिसम्बर 1991

आतंकवादी गतिविधियों, नशीली दवाओं और हथियारों पर रोक आदि समस्याओं के निवारण के लिये हमें ऐसे कानून बनाने चाहिये, जिससे सात देशों की प्रभावी भागीदारी को प्रोत्साहन मिल सके । यदि दक्षेस देश पूरी गम्भीरता से इस तथ्य को स्वीकार कर लें कि आंतकवाद को शह देकर कोई भी देश अन्ततः अपनी ही हानि करेगा तो वह गम्भीरतापूर्वक इसे रोकने का प्रवास करेगा । इन देशों के विकास के लिये शाँति की इतनी अधिक आवश्यकता है कि इस पर सोचने के लिये उन्हें बाध्य होना ही पड़ेगा । श्री राजीव गांधी का कहना था कि--.

" हमें किसी भी तरह आंतकवादियों को मदद या प्रश्रय नहीं देना चाहिये । अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के जिम्मेदार समुदायों के रूप में हमें इस बात पर आस्था रखनी चाहिये कि हमारी भूमिका कभी भी आंतकवादी कार्यवाही के लिये उपयोग न की जा सके ।"

दूसरे शिखर सम्मेलन के उद्घाटन अधिवेशन में भाषण देते हुये पाकिस्तान के प्रधानमंत्री श्री मोहम्मद जुनेजो ने कहा कि-.

" आंतकवाद का मुकाबला करने के लिये सामूहिक रूप से काम करना चाहिये । पाकिस्तान आंतकवाद खतरे का मुकाबला करने के लिये हर सहयोग देने को तैयार है ।

10- इस क्षेत्र में महाशक्तियों के आमंत्रण की ललक सामान्य व सहज सम्बन्धों में एक उभयनिष्ठ के रूप में सदैव उपस्थित रहा । इस क्षेत्र के अधिकांश राष्ट्रों ने राजनैतिक व्यवस्था का स्वरूप सैनिक शासन ही रहा है । ऐसा देखा गया है कि सैनिक शासन के दौरान देश के विकास का अधिकांश भाग सैन्य विकास के रूप में होता है और यह प्रक्रिया उन देशों को शस्त्र निर्मातक देशों से महत्वपूर्ण सम्बन्ध बनाने के लिये बाध्य करती है जिससे इन शक्तियों को अपने पाँव जमाने का आधार मिलता है । अतः ---------

शक्ति की स्थापना और महाशक्तियों से बचने के लिये इस क्षेत्र में वास्तविक रूप से सशक्त लोकतंत्र की स्थापना पर बल देना चाहिये । इसमें अत्याधिक सावधानी एवं धैर्य की आवश्यकता है । दक्षेस संगठन के समस्त देशों को सर्वसम्मति से इस निर्णय पर पहुँचना होगा कि वे अपने आन्तरिक या बाह्य किसी भी प्रकार की समस्या के निराकरण के लिये महाशक्तियों की सहायता नहीं लेंगे और इस हस्तक्षेप की कार्यवाहियें का विरोध करेंगे ।

11- दक्षेस ने अन्य क्षेत्रीय संगठनों के समान अपनी कोई क्षेत्रीय सामरिक नीति नहीं बनायी है, न ही सदस्य देशों ने विदेशी खतरों से सुरक्षा के सम्बन्ध में किसी नीति का निर्धारण किया है- इन्हें समग्र रूप से अपनी सामरिक रणनीति तैयार करना चाहिये तथा अपने क्षेत्र को विदेशी आक्रमणों से बचाने के लिये समान रूप से सामूहिक सुरक्षा की नीति अपनानी चाहिये ।[1]

12- यदि यह विचार किया जाये कि क्षेत्रीय सहयोग एक वास्तविकता बन सके, तो उससे पूर्व दक्षिण एशिया में क्षेत्रीयता की उन्नति को अवरूद्ध करने वाली बाधाओं को भी समाप्त करना होगा । क्षेत्रीय सहयोग को किसी भी स्थिति में प्रभुत्व निर्भरता के सम्बन्धों का रूप नहीं लेने देना चाहिये । इस क्षेत्र में भारत हावी होने की स्थिति में है और अपने विशाल संसाधनों, वैज्ञानिक और तकनीकी कुशलता के साथ प्रभावशाली उपलब्धियों के रहते हुये किसी भी ढाँचे में भारत अनिवार्यतः एक प्रभुत्वपूर्ण साझेदार के रूप में रहेगा । पाकिस्तान के अलावा इस क्षेत्र के अन्य देश ऐसी छोटी-छोटी शक्तियों की तरह हैं, जिन्हें ऐसी शंका करने का पूरा औचित्य है कि कहीं क्षेत्रीय सहयोग एक तरफा सहयोग बनकर ही न रह जाये । भारत और पड़ोसी देशों के बीच व्यापारिक सम्बन्धों से यह प्रकट होता है कि पड़ोसी देशों का आयात उसके निर्यात की तुलना में निरन्तर बढ़ता जा रहा है ।

---

(1) लोकराज बरल " टुवार्ड्स ए रीजनल फॉरेस पालिसी" बिमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया" पृष्ठ-190

भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व0 श्री राजीव गांधी ने इस्लामाबाद सम्मेलन में आशवस्त करते हुये कहा था कि-

" भारत किसी भी देश से गलत फायदा नहीं उठाना चाहेगा और दक्षेस के देशों को बराबरी का दर्जा देगा ।"[1]

13- भारत की विदेश नीति में छोटे देशों, विशेष रूप से पड़ोसी देशों के साथ मधुर सम्बन्ध बनाने पर बल दिया गया है । क्षेत्रीय सहयोग के प्रति भारत की दृष्टि रचनात्मक होनी चाहिये । भारत दक्षिण एशिया के देशों में सबसे अधिक विशाल एवं विकसित है । इसके अतिरिक्त समस्त देशों की सीमायें भारत से मिलती हैं, इसलिये द्विपक्षीय विवादों का सामना भी भारत को ही करना पड़ता है । भारत को इस क्षेत्र में अन्य देशों के साथ द्विपक्षीय स्तर पर काफी बड़े पैमाने पर सहयोग स्थापित करना चाहिये । यह सहयोग आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक व तकनीकी स्तर पर होना चाहिये ।

ऐसा नहीं है कि भारत की दक्षिण एशियाई नीति में कोई कमी ही नही है । नेपाल के ही मामले में भारत की प्रतिक्रिया अत्यन्त कठोर रही है ।

इस स्थिति में सहयोग तभी स्थापित हो सकता है, जबकि भारत नीतियों का पालन करते समय दक्षिण एशियाई देशों की आवश्यकताओं, भावनाओं का भी ध्यान रखे और देशों को किसी प्रकार का नुकसान न पहुँचायें । किन्तु अन्य राष्ट्रों को भी यह सोचना होगा कि हर मसले पर भारतीय दृष्टिकोण के बारे में अरोप लगाकर उसे अपने हित की अपेक्षा करने पर मजबूर न करे ।

14- भारत को भी इस संगठन को और अधिक व्यापक और शक्तिशाली तथा कार्यक्षम बनाने का समर्थक होना चाहिये ताकि न केवल यह इन सभी एशियाई देशों को एक-दूसरे के अधिक समीप ला सके, बल्कि यह आपसी सहयोग तथा सहायता इन सभी छोटे - बड़े देशों को अधिक समृद्ध बना सके और एक-दूसरे के अधिक निकट ला सके।.

---

(1) नवभारत टाइम्स " दक्षेस के कुहासे में बढ़ता काफिला " गिरीश मिश्र, पृष्ठ-5

15- वर्तमान समय में भारत को नई रणनीति अपनानी चाहिये । उसे अमेरिका की भाँति विरोधियों की आलोचनाओं की परवाह न करते हुये उन्हें अपने पक्ष में करने का प्रयास करना चाहिये । कुल मिलाकर भारत को दक्षेस का मंजक नहीं सिद्ध होना चाहिये । दक्षेस देशों में शासन प्रणालियाँ अलग-अलग हैं । उनकी अपनी-अपनी छवि है । भारत -श्रीलंका ने द्विपक्षीय स्तर पर क्रोधित हो सकता है किन्तु दक्षेस को धक्का न पहुँचे, यह उसे सोचना चाहिये । क्योंकि तकनीकी दृष्टि से सबसे अधिक सक्षम भारत को क्षेत्रीय व्यापार की आधारभूमि तैयार करनी है ।

मालदीव के राष्ट्रपति श्री गयूम इस बात से दुःखी हैं कि बड़े पैमाने पर आपसी मतभेद के कारण दक्षेस की कार्य प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है । सदस्य राष्ट्रों में सभी तरह साधन सम्पन्न भारत और पाकिस्तान जहाँ एक ओर हैं, वहीं नेपाल, भूटान, बांग्लादेश, मालदीव और श्रीलंका जैसे देश हैं, जो अनेक मामलों में विदेशों पर निर्भर हैं अतः भारत को ऐसी भूमिका निभानी चाहिये कि छोटे सदस्य राष्ट्रों को विकसित देश या क्षेत्र से बाहर के देशों से सामान के आयात की आवश्यकता न पड़े । यदि उनकी आवश्यकतायें क्षेत्रीय स्तर पर पूरी हो जायें तो उनका शोषण कम होगा। क्षेत्र में कच्चे माल का उत्पादन बढ़ाने के लिये तथा नई परियोजनाओं पर काम के लिये यदि कोई वित्तीय कोष बन जाता तो उसमें भारत को सक्रिय योगदान करना चाहिये जैसे कि उसने 1987 के काठमाण्डो सम्मेलन में 2.21 लाख टन के खाद्य भंडार के लिये 1.53 लाख टन अनाज देने का प्रस्ताव मान लिया । अतः भारत को संयम से पाकिस्तानी कूटनीति का जवाब देना चाहिये .वह क्षेत्र पर हावी हो सकता है ।

16- ऐसी क्षेत्रीय समस्या जो मूल रूप से द्विपक्षीय या बहुपक्षीय सम्बन्धों पर आधारित है, उन्हें आपसी सद्भाव और निर्णय से समाप्त करने का प्रयास करना होगा । नेपाल नरेश श्री वीरेन्द्र वीर विक्रम शाहदेव ने आशा व्यक्त की है कि-

" हम सब मिलकर अपने इलाके में अस्थिरता दूर करने का यत्न करें और शांति तथा सहयोग के साथ मिलकर आगे बढ़े । हम सब मिलकर अपने इलाके को उन्नत और प्रगतिशील बना सकते है।"

17- दक्षिण एशिया के राष्ट्रों में सर्वाधिक मतभेद भारत एवं पाकिस्तान के मध्य है । इन राष्ट्रों को परस्पर मतभेद समाप्त करने होंगे एवं सहयोग में वृद्धि करनी पड़ेगी । भारत एवं पाकिस्तान की सीमाओं से सेनाओं की वापसी दोनों देशों के मध्य सहयोग एवं सद्इच्छा का उदाहरण है भविष्य में भी इन दोनों देशों के मध्य अविश्वास, संदेह एवं निराशा को सद्इच्छा के माध्यम से दूर करके इस दिशा में सफल कदम उठाया जा सकता है ।[1]

18- नये प्रौद्योगिकी क्षेत्र में तथा वैज्ञानिक अनुसंधान और ऊर्जा के क्षेत्र में भी आपसी सहयोग बढ़ाने की अधिक गुंजाइश है । दक्षेस के सभी पड़ोसी देशों के बीच सीमा- व्यापार अधिक सस्ता भी होगा और अधिक विश्वसनीय भी ।[2]

19- इस संगठन में अफ़गानिस्तान व बर्मा को भी दक्षेस का सदस्य बनाने के मुद्दे पर भी विचार करना चाहिये । अफ़गनिस्तान सदियों से भाषाई और सांस्कृतिक सहयोगी के रूप में दक्षिण एशिया का अभिन्न अंग है और उसे सदस्य न मानना उसकी पहचान से अन्याय करना है ।

बर्मा भारत-खण्ड का नैसर्गिक अंग है । बर्मा अपनी भौगोलिक परिस्थिति के कारण बहुत समय तक दक्षिण एशिया का अंग भी माना जाता रहा है । अफगानिस्तान व वर्मा को जोड़कर हिमालय से सिंहलद्वीप तथा हिन्दकुश से श्रृंगपुर तक का अखण्ड भारत दक्षेस में परिलक्षित होना चाहिये ।

20- दक्षेस को एक सकारात्मक व रचनात्मक नेतृत्व की आवश्यकता है । दक्षेस जब अपनी अन्तर्निहित उर्जा को महसूस करेगा तब विश्व भी दक्षेस के अस्तित्व को पहचान सकेगा ।

---

(1) दैनिक हिन्दुस्तान 23 दिसम्बर 1991

(2) कैलाशचन्द्र काला " इम्पीडिमेंट्स इन दि कोआपरेशन एण्ड सेक्योरिटी ऑफ साउथ एशिया " पोलिटिकल सांइस रिव्यू वाल्यूम 26 , जुलाई दिसम्बर 1986 पृष्ठ-59

21- दक्षेस का एक विशेष सम्मेलन बुलाकर संविधान में सर्वसम्मति से निर्णय के स्थान पर " बहुमत का निर्णय " शब्दावली रख दी जाये ताकि भविष्य में यदि दक्षेस सम्मेलन का कोई देश बहिष्कार करे तो इस तरह का संकट न आये ।

22- दक्षेस में यह संशोधन करने की भी आवश्यकता है कि वर्ष में शासनाध्यक्षों की एक बार से अधिक बैठकें होनी चाहिये । पूरे वर्ष में एक अल्पकालीन बैठक से सहयोग का मार्ग पूर्णतः प्रशस्त नहीं हो पा रहा है, इसलिये आवश्यक है कि वर्ष में दो या तीन बार दक्षेस की बैठकें सम्पन्न होनी चाहिये । विदेश सचिवों की बैठकें भी अधिक होनी चाहिये जिससे परस्पर वार्तालाप द्वारा उनके मध्य उत्पन्न द्विपक्षीय इन बैठकों में मंत्रियों के साथ अन्य विभागों के मंत्रीगण व उच्च श्रेणी के अन्य अधिकारी भी उपस्थित हों जिससे विभिन्न क्षेत्रों की वार्ताओं में अधिक प्रभाव पड़ेगा एवं सहयोग स्थापित करने में सरलता व तत्परता रहेगी । विवाद भी धीरे-धीरे समाप्त होते जायें ।

23- दक्षेस संगठन राजनैतिक गुटबन्दियों से सम्बन्धित संगठन है । दक्षेस राष्टों के नेता सरकारी स्तर पर ही राजनैतिक, सामाजिक एवं आर्थिक समस्याओं को देखते हैं एवं केवल कागज पर ही कार्यवाही करते है । व्यवहारिक रूप से समस्याओं पर ध्यान नहीं देते । आवश्यक है कि दक्षेस संगठन को राजनैतिक गुटबन्दियों से दूर रखना होगा ।

24- के0पी0 सक्सेना ने अपना सुझाव देते हुये कहा विशेषज्ञों का एक आयोग गठित किया जाये जो कि किसी भी प्रस्ताव को स्वीकार अथवा असवीकार करने में सक्षम हों तथा जिनका निर्णय अन्तिम हो । विशेषज्ञों का यह आयोग राष्ट्राध्यक्षों से भी ऊपर होना चाहिये । अनेक क्षेत्रों की तकनीकि समितियों के स्थान पर इसको निर्मित किया जाये, जिसको इस संगठन को सहयोग प्रभावी हो तथा संगठन सफलता की ओर अग्रसर हो सके।[1]

---

(1) के0पी0 सक्सेना " इंस्टीट्यूशनल फ्रेमवर्क" विमल प्रसाद " रीजनल कोआपरेशन इन साउथ एशिया" पृ0- 97

इस प्रकार के अनेक चयन दक्षेस के लिये हो सकते हैं किन्तु इन सबके परिप्रेक्ष्य में यह बात अत्यन्त आवश्यक है कि आपसी सम्बन्धों को सुदृढ़ , घनिष्ठ और विश्वसनीय बनाना आवश्यक होगा । इनके अभाव में किसी भी तरह का कोई भी प्रयास सफल नहीं हो सकता । भारत के पूर्व प्रधानमंत्री स्व0 श्री राजीवगांधी ने दक्षेस के प्रथम सम्मेलन में दक्षेस के भविष्य के संदर्भ में कहा था-

" दक्षेस का भविष्य तभी सुरक्षित रह सकता है जब समस्त सदस्य राष्ट्र यह समझे कि वे भौतिक रूप से एक है तथा अपने आपसी सम्बन्धों को गलतफहमी एवं अविश्वसनीय बातों से अलग रखे"।[1]

दक्षेस के स्वर्णिम भविष्य के लिये यह आवश्यक है कि दक्षेस सदस्य देशों के व्यक्तियों के मध्य सांस्कृति एवं सामाजिक समझ हो । इनके विचारों में समरूपता हो । दक्षेस के भविष्य के संदर्भ में एक आशावादी दृष्टिकोण यह है कि यदि समस्त सदस्य राष्ट्र अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक एवं व्यापारिक क्षेत्र में समान दृष्टिकोण का अनुसरण करें , हिन्दमहासागर को शांति क्षेत्र घोषित करने के संदर्भ में अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर समान मत प्रकट करें तथा इस संगठन को द्विपक्षीय विवादों से मुक्त रखे तो सम्भवतः यह संगठन क्षेत्रीय सहयोग एवं सदस्य राष्ट्रों के जीवन स्तर में सुधार लाने तथा अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रभावी भूमिका का निर्वाह कर सकता है । .

जहाँ समस्यायें हैं, वहीं समाधान होता है ।दक्षेस के ढाँचे के अन्तर्गत सहयोग की क्षमता निहित है । सहयोग के वे क्षेत्र राष्ट्रों को आत्मनिर्भरता की दिशा में आगे ले जायेंगे , ऐसी संभावनायें हैं । परस्पर सहयोग से सम्पन्नता और आत्मनिर्भरता धीरे-धीरे ही प्राप्त होगी । यद्यपि यह क्रांतिकारी प्रयास है परन्तु विकास की प्रक्रिया क्रमिक है । दक्षेस में हिमालयन सम्पत्ति का विकास , समुद्रीय सम्पत्ति का विकास, यातायात और दूर-संचार का विकास, औद्योगिक सहयोग, तकनीकी का स्थानान्तरण,

---

(1) स्टेट्समैन- 10 दिसम्बर 1985

खाद्यान्न , सुरक्षा-व्यवस्था , कृषि- सहयोग, स्वास्थ्य एवं जनसंख्या नियंत्रण, ग्रामीण विकास , डाक-सेवा , यातायात, खेल, कला, सांस्कृतिक सहयोग के क्षेत्रों की सहयोग के लिये चुना है ।

वास्तव में कोई भी व्यवस्था एकदम पूर्ण विकसित नहीं होगी । यदि इस क्षेत्र में पारस्परिक सहयोग और पारस्परिक निर्भरता की स्थिति लानी है तो इसके लिये एक वातावरण बनाना आवश्यक है । दक्षेस के माध्यम से इस क्षेत्र के राष्ट्रों के मध्य परस्पर विश्वास का वातावरण निर्मित करने में मदद मिली है । दक्षेस सम्पूर्ण दक्षिण राष्ट्रों की आकांक्षाओं एवं इच्छाओं का प्रतिनिधित्वकर्ता है । परस्पर सहयोग से गम्भीर से गम्भीर समस्याओं का समाधान किया जा सकता है । निश्चित ही दक्षिण एशिया के राष्ट्रों में परस्पर विश्वास एवं सहयोग की भावना जितनी शीघ्रता से पनपेगी यह क्षेत्र उतनी ही तीव्र गति से उन्नति की ओर अग्रसर होगा । दक्षेस सम्मेलन इस प्रगति के लिये एक प्रेरणादायी संजीवनी है । इसका भविष्य सुखद है ।

---

# परिशिष्ट

## DHAKA DECLARATION

The Dhaka Declaration of The Heads of State or Government of the Member States of South Asian Associatiion for Regional Cooperation-8 December 1985.

The President of Bangladesh,the King of Bhutan, the Prime Minister of India,the President of Maldives, the King of Nepal, the President of Pakistan and the President of Sri Lanka met in Dhaka on 7 and 8 December 1985.

2. The Heads of State or Government underscored the historic significance of their first ever South Asian Summit meeting.They considered it to be a tangible manifestation of their determination to cooperate regioinally, to work together towards finding solutions towards their common problems in a spirit of friendship,trust and mutual undeerstanding and to the creation of an order based on mutual respect,enquiry and shared benefits.

3. They recognized that periodic meetings at their levele wre central to the promotion of mutual trust,confidence and cooperation among their countries.

4. The Heads of State or Government reaffirmed that their fundamental goal was to accelerate the process of economic and social development in

in their respective countries through the optimum utilization of their human and material resources. so as to promote the welfare and prosperity of their peoles and to improve their quality of life. They were conscious that peace and security was an essential prerequisite for the realization of this objective.

5. The leaders of the South Asian countries reaffirmed their commitment to the UN Charter and the principles governing sovereign equality of States, peaceful settlement of disputes, non-interference in internal affairs and non-use or threat of use of force against the territorial integrity and political independence of other States. They reiterated that the United Nations constituted the most important forum for the resolution of all issues affecting international peace and security.

6. They also reaffirmed their deep conviction in the continuing validity and relevance of the objectives of the Nonaligned movement as an important force in international relations.

7. The Heads of State or Government acknowledged that the countries of South Asisa, who

constituted one-fifth of humanity, were faced with the formidable challenges posed by poverty, underdevelopment, low levels of production, unemployment and pressure of population compounded by exploitation of the past and other adverse legacies. They felt that, bound as their countries were by many common values rooted in their social, ethnic, cultural and historical traditions, regional cooperation provided a logical response to these problems. They were conscious of their individual and regional strengths, their potential as a huge market, their substantial human and natural resources and the complementarities of their economies. They were confident that with effective regional cooperation, they could make optimum use of these capacities for the benefit of their peoples, accelerate the pace of their economic development and enhance their national and collective self-reliance. They were convinced that their countries, which had made important contributions to the enrichment of human civilization, could together play their due role in internatrional relations and influence decisions which affected them.

8. The Heads of State or Government emphasised that strengthening of regional cooperation in South Asia required greater involvement of their peoples. They agreed to increase interaction and further promote people-to-people contacts at various levels among their countries. To this end, they decided to take steps to create awareness and public opinion in the region.

9. The Heads of State or Government welcomed the progress already made in the implementation of the Integrated Programme of Action in the nine mutually agreed areas. They expressed their desire to consolidate and further expand cooperative efforts within an appropriate institutional framework in a spirit of partnership and equality.

10. The leaders were convinced that they could effectively pursue their individual and collective objectives and improve the quality of life of their peoples only in an atmosphere of peace and security. In this context, they expressed concern at the deteriorating international political situation. They were alarmed at the unprecedented escalation of arms

race particularly in its nuclear aspect.They rcgnized that mankind today was confronted with the threat of self extiction arising from a massive accumulation of the most destructive weapons ever produced.The arms race intnsified internatiional tension and violated the principles of the UN Charter. The leaders called upon the nuclear weapons-states for urgent negeotiatieons for aComprehensive Test Ban Treaty leading to the complete cessation of testing,productiion and deployment of nuclear weapons. In this connectiion,they welcomed the recent meeting between President Reagan and General Secretary Gorbachev in Geneva and expressed the hope that the meeting would have a positive effect on internatioinal pace and security.

11. The EHeadse of Staete or Government expressed deep concern at the countinuing crisis in the global economy.They underescordthat detereiorating conomic and social conditiions had seriously retarded development prospects in South Asia and other developing countries. Sharply falling commodity prices, deterioration in the terms of trade,intensification of protectionist measures, spiralling debt burden and a decline in the flow of external resources, especially concessional assistance, had causedea srious setback to the economic development of the developing countries.These had been compounded by natural disasters and precarous world food security sitdation affecting developing countries.They also expressed conceren over thediminishing capacity of international financial and technical institutions to respond effectively to the needs of the disadvantaged and

poorer countereis and regrettedthat the spirit of multilateral cooperation had begun to falter and weaken. This was particularly disturebingin the face of increased interdependence of developed and developing countries and the fact that economic revival of North was closely linked to economic progress in South. Thy believed that developments during the pmast decades had clarly demonstrated the structural imbalances and inequitiesinherent in the existing internationaleconomic system and its inadequacy to deal with problems of developmnt.

12. They strngly urged that determind efforts should be made by the international communitytowards realization of the goalsand targets of the International Development Strategyas wellas thee Substantial New Programme of Action for the Least Developed Countries.They called for urgentresumption of the North-South dialogue and early convening of an International Conference on Money and Finance for Development with universal participation.

13. The Heads of State and Government were concious ofthe historic importance of the Dhaka Summit and reiterated their conviction that the launching of the South Asian Association for Regional Cooperation (SAARC), which they had established at this meeting,would place regional cooperationon a firm foundation,play an important role in accelerating the pace of economic and social development of their countries, promote the objectives of individual and collective self-reliance and

further the cause of peace, progress and stability in their region and the world.

14. The Heads of State or Government of Bhutan, India,Maldives, Nepal, Pakistan and Sri Landa were deeplyappreciative of the exemplary Chairmanship of their Meeting by the President of Bangladesh. They expressed their pmrofound gratitude for the warm and gracious hospitality extended to them by the Govrnment and the people of Bangladesh and for the excellent arrangements made for the meeting.

BANGALORE DECLARATION

Thee Baangaloree Declaration of the HeadsofState or Govern -ment of the member countries of the member countries of the South Asian Association for Regional Cooperation issued on November 17, 1986.

The President of Bangladesh,the King of Bhutan the Prime Ministerof India, the Presidentof Maldives, the King of Nepal,the Prinister of Pakistan and the Presidentof Sri Lanka assembled at the second SAARC Summit in Bangalore on 16 and 17 November, 1986.

2. The Heads of State or Government reiterat ed their desire of promoting peace, stability, amity and progrss in the region through strict adherence to thee principles of the United Nations Charter and Non-alignment,particularly respect for the principles of sovereign equality, territorial integrity,natiional independence, non-use offorce and non-interference in the intrenal affairs of othr States and peaceful settleemnt of disputes.

3. The Heads of State or Government reaffirmed the will of their peoples and Government to work together in accordance with the SAARC Charter to devise common policies and approaches for finding common solutions to the shared problems that all of them face.They stressed that mutual trust,goodwill and understanding must animate their cooperative effort under SAARC. Progress and prosperity in each countrywould redound

to the benefit of others.This was what constituted the SAARC sprit.

4. The leaders reaffirmed that the principal goal of SAARC was to pronote the welefaere of the peoples of South Asia, to improve their quality of life, to accelerate economic growth,social programmes and cultural development in the region and to provide all individuals the opportunity to live in dignityand to realize their full potential.

5. The Heads of State or Government recalled that the countries of South Asia had been linked by age-old cultural, social and historical traditions. These had led to enriching interaction of ideas,values,culture and philosophies.These commonalities constituted solid foundations for regional cooperation for addressing more effectively the economic and social problems.

6. The Heads of State or Government recalled that the South Asian Association for Regional Cooperation was the most populous regional grouping in the world.The countries of the region had large,rich and varied human and natural resources. They expressed their determinatioin to achieve the optimum utilization of these resources by intensifying their cooperation,bearing in mind the immense present and potential complementarities among their economies.They recognised that this would require increasing exchange among their countries,on the basis of mutual benefit,of ideas,experience and technology as well as goods and services,which utilize and enhance

the productive capacity of each of their countries and build their collctive self reliance.They were convinced that the countries of South Asia which had been the cradle of human civilization and culture could,acting together cooperatively and cohesively,once again play their due role in th comity of nations.

7. The Heads of State or Government reiterated the great importance of the increasing involvement of the people for ensuring the success ofregiional co-operation. They emphasized the need for promoting greater contacts among the peoples of the regioin through such action as regular and frequent interchange of scholars, academics, artists,authors,professionals and businesesmen as well as facilitation of tourism.

8. The Heads of State or Government noted with satisfactioin that considerable progress had been achieved in the impleemntation of SAARC Integrated Programme of Action.They expressed their firm commitment to consolidate and streamline further thee implmentation of the IPA.They agreed that progressive movement towards more concrete and action-oriented projects and programmes was essential to ensure more tangible benefits from SAARC to the peoples of the region. The Heads of State or Government emphasized the importance of expanding cooperative endeavours under SAARC.Theywelcomed the establishment of the Technical Committees on Women in Development,and on the Prevention of Drug Trafficking and Drug Abuse.

9. The Heads of State or Government welcomed the signing of the Memorandum of Understanding on the establishment of the SAARC Secretariat by the Council of Ministers andtheir decision to locate the Secretariat in Kathmandu and appoint Ambassador Abdul Ahsanof Bangladesh as the first Secretary General of SAARC.They were convinced that the establishment of the Secretariat would assist in the coordination of SAARC activities and more fruitful implementation of its programmes and projects.

10. The Heads of State or Government recognised that the meeting of the needs of all children was the principal means of human resources development.Children was the principal means of human resources development.Children should,therefore,be given the highest priority in national development planning. The Heads of State or Government underlined the importance of enhancing public consciousness and building a national political consensus on the rights of the children. In this context they called for and early conclusion and adoption of the UN Convention on the Rights of the Child. They subscribed to the goals of universal immunization by 1990, universal primary eeducation, maternal and childe nutrition, provision of safe drinking water and adequate shelter before 2000 A.D. They also believed that it should be possible to ensure at the end of the century, that no child need die or be denied development, for reasons of material poverty in the family. They directed the Standing Committee to undertake annual views of the

situation of children in the SAARC countries, monitoring of programmes and exchange of experience.

11. The Heads of State of Government agreed that cooperation among SAARC States was vital if terrorism was to be prevented and eliminated from the region. They unequivocally condemned all acts, methods and practices of terrorism as criminal and deplored their impact on life and property, socio economic development, political stability, regional and international peace and co-operation. They recognized the importance of the principles laid down in UN Resolution 2625 which among others required that each State should refrain from organizing, instigating assisting or participating in acts of civil strife of terrorist acts in another State or acquiesingin organized activities within its territory directed towards the commission of such acts.

12. The Heads of State or Government expressed their concern at the crisis facing the United Nations system. They reiterated their deep commitment to the purposes and principles of the United National Charter and their support for the faith in the United Nations as the most important international forum for addressing issues of peace, disarmament and development ande an essential instrument for bringing about justice and equity in international political and economic relations. They resolved to concert their efforts in all multilateral fora within the United Nations system to

preserve and strengthen the organisation and to prevent erosion of its role, functions and preinciples.

13. The Heads of State or Government reiterated their deep commitment to the principles and objectives of the Non-aligned Movement and underlined the historic role the Movement had been playing in strengthening international peace promoting development, establishing equitable and just econocic relations and strengthening internationsl co-operation in all fields. The success of the Harare Summit of the Non-aligned countries was yet another demonstration of the strength and unity of the Movement and the increasing respect that it had come to command in the international community. They affirment full support for the edcisions adopted at the Summit and calleed for their early implementation.

14. The leaders of the South Asian countries were convinced thate an environment of peace, security and respect for international law was essential for their growth and stability. Unfortunately, this environment had become increasingly adverse for the pursuit of their cherished goals. The international political scence was marred by strife and tension due to Great Power policies and practices of domination and intervention as well as the increased resort to the threat or use of force, aggression, occupation, pressure, economic coercion and interference in Clagrant violation of the principles and

purposes of the Charteer of the United Nations. The arms race, particularly the nuclear arms race, hade escalated to a point where it jeopardizes the most fundamental of all human rights - the right to live.

15. The Heads of state or Government noted with deep disappointment that the promise held out by the reykjavik Summit could not be realized. They however, noted with satisfaction that the proposals made at the Summit weree still on the table. They expressed the earnest hope that the negotiations would be resuemed without delay so that a decisive step could be taken towards realizing the ultimate goal of eliminating nuclear weapons altogether. The Headsof State or Government called for the earl;y conclusion of a Compreheensiv Test Ban Treaty.

16. The Heads of State or Government were deeply conceerned that the world economy continued to be in the throes of crisis, with particulary harsh and severe consequences for the enconomies and development prospects and aspirations of the developing countries. They endorsd the Declaration of the SAARC Ministerial Meeting on International Economic Issues held in Islambad and its analysis of the exceeptionaly advers external economic environment which retards the development of the South Asian and other developing countries. These negative factors include depressed commodity prices, rising protectionism, global recession, lower export earnings,

net outflow of financial resources from developing countries and an aggravated debt crisis.

17. The Heads of State or Government noted that the rates of growth in the developed countries had turned out to be much lower than what was earlier projected and that the projection for future growth in these countries was not at all encouraging. They expressed their concern at the implications of these trends for the developmnt prospects of the developing countries They welcomed the recent recognition by the developed countries that the chronic problems of massive payment imbalances,high interest rates,untable exchange rates and high unemployment are structural in nature. In view of global interdependnce,the co-ordination of macro-economic policies,contemplated at the Tokyo Summit of the seven major industrialized countries, cannot be effective in achieving sustained global economic growth unless it encompasses the developing countries.

18. The laders urgd that the recent retreat from multilateralism should be urgently reversed through a revival of the North-South dialogue which is responsive to the changed circumstances in the world economy. This must include a process of reform of monetary and financial system through an Internatioinal Conference on Mony and Finance for Developmnt, and urgent measures for preserving and strengthening the multilateral trading system. In the search for revivalof global

growth,priority must be accorded to exploiting the vast potential for expanded production, consumption and trade which exists in the developing countries. In all these endeeavours, high priority should be accorded to supporting the development of the least dveelopd countris,in particular, throughthe full and effective implementation of the Substantial New Programme of Action for the Least Developed countries for the 1980s.

19. The Heads of State or Government noted with satisfaction that at the SAARC Ministerial Meeting on International Economic Issues a number of priority objectives of the SAARC countries have been identified. Theseinclude: nlarged concessional assistance, the doubling in three years of the financial flows for the development of developing countries, amelioration of official debts,trade liberalization,espcially in textiles and agriculture,commodity price stabilization, transfer of technology and special treatment for least developed RAARC countries. The Heads of State or Government agreed that the SAARC members should closely and regularly consult and co-operate in relevant international economic conferences and institutions in order to promote the above mentioned objectives.They recognised that an important opportunity in this context wouldbe provided by UNCTAD VII.

20. The Heads of State or Government were of the view that the forthcoming New Round of Multilateral Trade Ngotiatiions posed a challenge for their countries as well as an opportunity to accelerate their development through the expansion of thir exports. They underlined the importance of the effective implementation with immediate effect and continuance until the formal completion of the negotiations, of the commitment to observe a standstill on protectionist measures and to roll these back under multilatral surveillance. They also expected that the principles of transpareency and differential and more favourable treatment for the developing countries would be applied systematically and in concrete terms in the negotiations. They decided to concert their positions in these negotiations with a view to deriving maximum benefits from them in accordance with their national objectives and priorities.

21. The Heads of State or Government expressed their conviction that the Bangalore Summit had helped in consolidating the gains of regional co-operation activities so far undertaken by SAARC while, at the same time, exploring new avenues and possibilities forsuch co-operation. The Bangalore Summit had made a significant contribution to strengthening and streamlining th institutional basis for such Co-operation.

22. The Heads of State or Government reiterated their determination and will to expand and strengthen their co-operation under SAARC.They undrlined their belief that SAARC reflected a resurgence of the South Asian consciousness which had inspired the peoples of this region over several millenia. The leaders expressed their deep conviction that South Asian regional co-operation would not only have a salutary effect on bilateral relations between th countries of the region, but also impart strength and stability to these relations.

23. The Heads of State or Government of Bangladesh Bhutan, Maldives, Nepal, PMakistan and Sri Lanka were deeply appreciative of the exemplary manner in which the Prime Ministeer of India dischargd his responsibilities as Chairman of the Meeting.They expressed their profound gratitude for the warm and gracious hospitality extended to them by the Government and people of India and for the excellent arrangements made for the Meeting.

**KATHMANDU DECLARATION**

The Kathmandu declaration of the Heads of State or Government of the member countries of the South Asian Association for Regional Cooperation issued on November 4, 1987.

The President of Bangladesh,the King of Bhutan, the Prime Minister of India,the President of Maldives, the King of Nepal,the Prime Minister of Pakistan and the President of Sri Lanka assembled for the Third Summit of the South Asian Association for Regional Cooperation (SAARC)in Kathmandu 2-4 November, 1987.

2. The Heads of State or Government recalled with pleasure the launching of SAARC which marked the beginning of a new era of regional cooperation for the promotion of peace and progress,mutual trust and goodwill in South and underlined the importance of annual meetings at their level, as a prime mover, in consolidating and accelerating the pace and process of overall social,economic and cultural development in the region. They renewed their commitment to the SAARC Charter. They reiterated their desire of promoting peace, stability,amity and progress in the region through strict adherence to the principles of the United Nations Charter and Nonalignment,particularly respect for the principles of sovereign equality,territorial integrity,national independence,non-use of force and non-interference in the internal affairs of other States and peaceful

settlement of disputes.

3. The Heads of State or Government emphasized that a fundamental goal of SAARC was to promote the welfare of the peoples of South Asia and to provide them with the opportunity to live in dignity and realise their full potential. They were conscious of the formidable tasks ahead of eradicating poverty, hunger, disease, illiteracy and unemployment and alleviation of environmental degradation facing South Asia today.They were convinced that the peoples and governments of South Asia could, acting in unison, surmount these challenges.

4. The Heads of State or Government expressed their faith in and commitment to the principles and purpose enshrined in the United Nations Charter. They further believed that the United Nations has an important role to play in promoting universal trust, understanding and concerted actions for the attainment of lasting peace, global development and general disarmament. They reiterated their concern at the crisis facing the United Nations. They expressed their commitment to the multilateral negoiating process and called upon all states to help strengthen the UN system. They reaffirmed their belief that SAARC will reinforce this process by promoting South Asian cooperation.

5. The Heads of State or Government also reaffirmed their deep commitment to the principles and objectives of the Non-Aligned Movement. They

under;scored the validity of its philosophy and the historic role the Movement has been playing and continues to play in strengthening world peace and harmony as well as in promoting development with justice and equity. They also noted that institutionalization and strengthening of regional cooperation in South Asia had further nurtured the sprit of South- south cooperation on the basis of mutual respect, equity and common benefit. They expressed satisfaction over the result of the Ministerial Conference on Nanaligned Countries held in Pyongyang in June 1987. and urged the Non-aligned and other developing countries to take action to implement effectively the Pyongyang Declaration and Plan of Action on South-South Cooperation.

6. The Heads of State or Government recognised that the external environment had a critical bearing on the development of the economies of the South Asian Region. They noted with deep concern that growth in the world economy had again slowed down with adverse consequences for South Asia and other developing countries, especially for the least developed and landlocked countries. They observed that equitable participation of the developing countries in international trading and economic systems and in arrangements for the coordinatiion of global macro economic policies was essential for enhancing propects and performance of the world economy.

7. The South Asian leaders noted that the world economy had long suffered from a structural disequilibrium. The pace of global economic expansion had further slowed down. The downward trend in commodity prices had continued. The net export earnings had fallen aggravating payment imbalances in developing countries. The terms of trade had further deteriorated with enormous losses to developing countries. At the same time, the diminishing financial flows to developing countries remained unchanged with contraction in new lendings and growing burden of debt servicing. In fact there had been a reverse flow of resources from developing to developed countries. The trade conflicts had also sharpened with the rise of protectionism thus fujrther weakening the internatiional trading system and eroding the pjrinciple of special and differential treatment in favour of developing countries.

8. The Heads of State or Government reiterated the urgent need for resumption of North-South Dialogue with a view to promoting coordinated actions by developed and developing countries to channel trade surpluses for development, revive growth in flagging economies,overcome debt difficulties, expand export access to the developing countries and stabilise commodity prices, regulate capital flows and exchange rates more closely, and provide emergency relief and assistance to the poorest countries.They

called for an early convening of the International Conference on Money and Finance for Development. They also stressed the need for preserving and liberalizing the multilateral trading system with renewed efforts both within and outside the GATT Uruguay Round of Multilateral Trade Negotiatiions. They also underscored the importance of the develop -ed countries fully respecting the commitments made in Punta del Este on "standstill and rollback" and called for the early and effective implementation of this commitment. The Heads of State or Government also reviewed the outcome of UNCTAD VII. They hoped that UNCTAD would play an increasingly effective role in promoting harmonious and equitable international economic relations.

9. The Heads of State or Government reaffirmed the need for special measures in favour of the least developed countries in order to strengthen their resource capabilities and structural transformation and urged the international community, in the light of recent decisiions at UNCTAD VII, to speed-up tangible assistance including increased resource flows to these countries within the framework of the Substantial New Program of Action (SNPA) for the Least Developed Countries for 1980s.

10. The Head;;s of State or Gvernment expressed concern at the deteriorating international political environment which was due to great power policies and practices of dominatioin and intervention as well as the increased resort to threat or use of force, aggression,occupation, pressure, economic coercion and interfrence in violation of the principles and purposes of the Charter of the United Nations. These destabilising measures were creating a climate detrimental to the policies of peace, goodwill, stability, prosperity and respect for each othjer.

11. The Heads of State or Government believed that the escalation in military expenditure was a major constraint on world development. In this regard they noted that the UN Conference on Disarmament and development had clearly established a link between disar,aa,emt amd development and had provided a valuable framework for future action in this vital area.

12. They welcomed the understanding reached between the United States and the Soviet Union on Intermediate Nuclea r Forces. This should be a precursor of further accords between them to reduce drastically their strategic nuclear missiles and to refrain from extending the arms race to Outer Space. They called for the early conclusion in the Geneva Conference on Disarmament of a Comprehensive Test

Ban Treaty and a Convention to Ban Chemical Weapons. They declared their intention to continue their effortsto contributreto the realisation of the objectiveof halting the nuclear arms reace and eliminating nuclear weapons. They declared their resolve to support every effort to conclude a treaty prohibiting vertical and horizontal proliferation of nuclear weapons.

13. The Heads of State or Government expressed their deep concern at the fast and continuing degradation of the environment , including extensive destruction of forest, in the South Asian region. They also noted that South Asia was afflicted with such natural disaster as floods, droughts, landslides, cyclones, tidal waves which have had a particularly severe impact recently, causing immense human suffering. At the same time they expressed concern over the danger posed bythe global sea level rise and its effects on Sount Asian countries. These natural disasters and the degradation of the encironment were severely undermining the development process and prospoects of the member countries. They, therefore,decided to intensify regional cooperation with a view to strengthening their disaster management capabilities. They also decided to commission a study for the protection and preservartion of the

environment and to the causes and consequences of natural disasters in a well-planned comprehensive framework. They entrusted the Secretary-General with this task.

14. The Heads of State or Goverfnment reaffirmed their conviction that the region being most populous in the world and having age-old socio-cultural links,rich and varied human and natural resources,offered immense scope and potential for regional cooperation and that the growing interaction among its people had added stimulus towards this end. They reiterated their determination to pursue their individual and collective-efforts for the optional utilisation of the vast human and untapped natural and other material resources.

15. The Heads of State or Government reviewed with satisfaction the progress made so far in the implementation of the SAARC Integrated Programme of Action and emphasised the need to further consolidate and streamline the process. They were conscious of the need to exercise greater discretion in the selection of activities in different sectors. They took note of the criteria and procedures relating to administrative structuring and financing of regional institutions endorsed by the SAARC Council of Ministers. They directed that the establishment of such regional institutions should proceed only

after taking into account their viability and benefits to the member countries with due consideration to economy ande efficiency.

16. The Heads of State or Government expressed satisfaction at the launching of the SAARC Audio Visual Exchange programme coinciding with the opening of the Third SAARC Summit in Kathmandu.While taking note of the dates for the institution of the SAARC Chairs,Fellowships and Scholarships and the commencement of Organised Tourism among SAARC membercountries,they directed that theschemes for the SAARC Documentation Centre and the SAARC Youth Volunteer Programme be implemented at the earliest.

17. The Heads of State or Governmentnoted with satisfaction the signing of the Agreement estab lishing a South Asian Food Security Reserve and expressed confidence that this will provide a much-needed cushion against food shortagesand scarcity situationsin the region.

18. The Heads of State or Government expressed happiness at the signing of the SAARC Regional Convention on Suppression of Terrorism and considered it a historic step towards the jprevention and elimination of terrorism from the region. In this regard,they also reiterated theirunequivocal condemnation of all acts,methods and practices of

terrorism as criminaland expressed their abhorrence of their impactof life and property,socio-economic development, political stability, regional peace and cooperation.

19. The Heads of State or Government reaffirmed their agreement to expand SAARC activities in other concrete areas of cooperation in order to ensure more tangible benefits from SAARC to the peoples of theregion. They were convinced that regional cooperation could be consolidated and expanded on the basis of growing regional complementarities and inter-dependence. They believed that the SAARC long-term perspective should,therefore, focus on measures to expand and strengthen such areas of regional complementaritiesand inter dependence not only through formulation and implementation of more concrete and action-oriented programmes but also through coordination of national policies and approachesfor finding common solutions to their common problems.

20. The Heads of State or Government welcomed the first annual review ofthe Situation of Children in the SAARC member countries. They reiterated their commitment made in the Bangalore Declaration to accord highest priority to the needs of children in national development planning and emphasised that more intensified action should be taken for the

welfare and well-being of children.They further reiterated their call for an early conclusion and adoption of a United Nations Convention on the Rights of the Child.

21. The Heads of State or Government expressed their satisfaction at the establishment of the SAARC Seretariat in Kathmandu,strengthening further the process of regional cooperation in South Asia. They expressed their gratitude to His Majesty King Birendra Bir Bikram Shah Dey for most graciously inaugurating the SAARC Secretariat.

22. The Heads of State or Government were conscious of the aspirations of the peoples of South Asia to communicate and cooperate with each other at the people-to-people level. They recognised that academics, researchers, non-governmental organizations and others have an important role to play in promoting the SAARC sprit and giving impetus to regional programmes and projects.They further observed that the interest and enthusiasm so far demonstrated by the increased interactions and exchange of information at the inter-governmental level should be capitalised and translated into tangible programmes and projects. They recognised the vast potential for the generation of friendship, goodwill and trust through interactions between the peoples which would foster harmonious relations in South Asia.

23. The Heads of State or Government expressed their deep conviction that the Kathmandu Summit has further consolidated the gains of SAARC and given a renewed trust and direction to the future course of regional cooperatiion. They were also convinced that the Kathmandu Summit has helped to create an atmosphere conducive to strengthening this process.besides generating further goodwill and friendship among the member countries in the larger interest of the region.

24. The Heads of State or Government were convinced that SAARC should be increasingly oriented to the people's needs and aspiratioins so that the masses of the region could be drawn to a greater extent into the mainstream of SAARC activities. This they firmly held, would help bring about a qualitative improvement in the general atmosphere of the region contributing to pmeace, friendship and cooperation in the area.

25. The Heads of State or Governmentreiterated their firm commitment to the spirit and objectives with which the South Asian Association for Regional Cooperation was launched and reaffirmed their determinatioin to work, individually and collectively, towards the attainment of these objectives.

26. The Heads of State or Government of Bangladesh, Bhutan, India, Maldives, Pakistan and Sri Lanka were deeply appreciative of the exemplary manner in which His Majesty the King of Nepal discharged his responsibilities as Chairman of the Meeting. They expressed their profound gratitude for the warm and gracious hospitality extended to them by His Majesty's Government and the people of Nepal and for the excellent arrangements made for the Meeting.

**MALE DECLARATION**

The Male' Declaration of the Heads of State or Government of the Member Countries of South Asian Association for Regional Cooperation issued on 23rd November, 1990.

The President of the People's Republic of Bangladesh, His Excellency Mr.Hussain Muhammad Ershad,the King of Bhutan,His Majesty King Jigme Singye Wangehuck,the Prime Minister of the Republic of India, His Excellency Mr. Chandra Shekhar, the President of the Republic of Maldives, His Excellency Mr. Maumon Abdul Gayoom, the Prime Minister of Nepal,The Right Honourable Krishna Prasad Bhattarai,the Prime Minister of the Islamic Republic of P:akistan, His Excellency Mr.Mohammad Nawaz Sharif and the Prime Minister of the Demoratic Socialist Republic of Sri Lanka, His Excellency Mr.Dingiri Banda Wijetunga met at the Fifth Summit of the South Asian Association for Regional Cooperation at Male' on 21-23 November, 1990.

2. The Heads of State or Government reiterated that cooperation among the countries of South Asia was necessary for improving the quality of life of the peoples of the region. They recalled their conviction that the objectives of peace and stability in South Asia could be best served by fostering mutual understanding, cooperation and good

neighbourly relations.They reaffirmed their commitment to the purposes and principles of the South Asian Association for Regional Cooperation and renewed their resolve to intensify cooperation under its aegis in pursuit of their common objectives.

3. The Heads of State or Government stressed their desire to promote peace,stability, amity and progress in the region through strict adherence to the principles of the United Nations Charter and the Non-aligned Movement, particularly respect for the principles of sovereign equality, territorial intergrity, natiional independence,non-use of force non-interference in the internal affairs of other States and peaceful settlement of disputes.

4. The Heads of State or Government expressed satisfaction that the launching of SAARC in 1985 and the initiatives under the Integrated Programme of Action for strengthening regional cooperation in South Asia had generated much enthusiasm and hope in their people,and that the South Asian consciousness necessary for the success of regional cooperation was gradually permeating the region. They reiterated their resolve to make optimal use of the positive forces of good-will,trust and understanding existing among their peoples and to turn SAARC into a dynamic instrument for achieving its objectives and creating an order based on mutual respect,equity,cooperation and shared benefits.

5. The Heads of State or Goverment reviewed the status of children in South Asia and noted that the recent World Summit for Children had imparted a new impetus to the ongoing efforts in this field. They believed that relevant recommendations of the World Summit could be usefully incorporated into a Plan of Action in the South Asian context and its implementation should be reviewed annually. The guidelines for such Plan of Action could be prepared by a panel of experts to be appointed by the Secretary General and examined by the Technical Committee on Health and Population Activities. They also welcomed the adoption of the Convention on the Rights of the Child and its entry into force. they expressed the hope that those Member States, who have not already become party to the Convention, would do so at an early date.

6. The Heads of State or Government endorsed the recommendations made by the Second SAARC Ministerial Meeting on Women in Development held in Islamabad in June 1990. They noted with satisfaction the enthusistic reponse in all Member States to their collective call for the observance of 1990 as the "SAARC Year of the Girl Child".They decided that in order to maintain focus on the problems of the Girl child, the years 1991-2000 AD should be observed as the "SAARC Decade on the Girl Child".

7. The Heads of State or Government noted with satisfaction the growing regional cooperation in combating the problems of drug trafficking and drug abuse. They expressed serious concern over the growing linkages between drug traffickig and international arms trade and terrorist activities. They agreed that observance of 1989 as the "SAARC Year for Combating Drug Abuse and Drug Trafficking" had had a profound impact in drawing attention to the menace and to the need for its eliminatiion. They expressed satisfaction that following the decision of the Fourth SAARC Summit, the SAARD Convention on Narcotic Drugs and Psychotropic Substances had been signed at Male'. They urged the Member States to take early measures to ratify the convention for its entry into force. They were convinced that the Convention would help in making SAARC efforts in this area more effective.

8. They endorsed the decision of the Council of Ministers in regard to the timeframe for completion of the Regional Study on the Causes and Consequences of Natural Disasters and the Protection and Preservation of the Environment. They noted with satisfaction that the methodology for undertaking the Study on the 'Greenhouse Effect' and its impact on the region was likely to be finalized in the near future and desired that the Study itself be completed for consideration at the

Sixth Summit. In this context, they noted that the destruction ofreinforests, the world over, was contributing significantly to adverse climatic changes and this aspect should also be covered in the proposed Study. They expressed the hope that these Studies would lead to an action plan for meaningful cooperation in the field of Environment and Disaster Management.

9. Recognizing that environment had emarged as a major global concern, the Heads of State or Government noted with alarm the unprecedented elimatic changes predicted by the inter-governmental Panel on Climate Change (IPCC). They urged the internatiional community to mobilize additional finances and to make available appropriate technologies to enable the developingg countries to face the new challenges arising from climate changes and sea-level rise. They agreed that Member Countries should coordinate their positions at international fora on this issue. They also decided to observe 1992 as the "SAARC Year of Environment".

10. The Heads of State or Government noted withsatisfaction that the national studies on Trade, Manufactures and Services had been completed. They underlined the need for expeditious action for comp;leting the Regional Study within the timeframe stipulated by the Council of Ministers. They expressed the hope that it would open new avenues of cooperation for the prosperity of the peoples of the region.

11. The Heads of State or Government approved the recommendations of the Council of Ministers regarding Special SAARC Travel Document and decided to launch the scheme.

12. The Heads of State or Government expressed concern that Member States were compelled to divert their scarce resources in combating terrorims. They called for expeditious enactment of enabling measures for the implementation of the SAARC Regional Convention on Suppression of Terrorism.They also urged Member States to continue to cooperate in accordance with the Convention.

13. The heads of State or Government noted that as their countries stood on the threshold of the next millennium, the world was undergoing profound transformations characterised by popular upsurge for democracy, liberty and exercise of human rights, lowering of ideological barriers and the relaxation of global tensions and progress towards disarmament and the resolution of a number of regional and global conflicts. There was also a welcome trend towards the opening up of the global economy and integration of national economics into the mainstream of the world economy. They further noted the trend of increasing integration of the pattern of global productiion, consumption and trade, growing multipolarity of the world economic structure and integration of the markets of the

developed countries in order to maintain their technological lead and competitive edge. These changes presented new challenges and opened up new opportunities to the South Asian countries, as to the rest of the developing world. The Heads of State or Government were convinced that their mutual cooperation can be a critical factor in enabling them to pursue these objectives more effectively.

14. The Heads of State or Government, noting the vital importance of bio-technology for the long-term food security of developing countries as well as for medicinal purposes, decided that cooperation should be extended to this field and, in particular, to the exchange of expertise in genetic conservation and maintenance of germplasm banks. In this connection, they welcomed India's offer of training facilities and agreed that cooperation in the cataloguing of genetic resources stored in different SAARC countries would be mutually beneficial. Taking note of the proposal made by the Group of Fifteen Developing Countries (G-15) for the establishment of a gene bank for developing countries, they agreed to p;articipate in the venture.

15. The Heads of State or Government welcomed the idea of setting up of a Fund for regional projects which could make available credit on easy terms for the identification and development of

regional projects. They agreed that representatives of the national development banks of the Member Countries should get together to work out the precise modalities for the source of funds and the manner in which these could be related to joint venture projects. They accepted India's offer to host this meeting.

16. The Heads of State or Government regarded the recent developments in the Gulf as the most unfortunate aberration from the p;resent trend of detente, cooperation and peaceful settlement of disputes. They reaffirmed their adherence to UN Security Council Resolutions on this issue. While emphasizing the need for a peaceful solution of the issue,they called for immediate and unconditional withdrawal of Iraqi forces from Kuwait and the restoration of its legitimate Government. They stated that the Gulf crisis had dealt a severe below to their economies. They needed massive international assistance to compensate the loss suffered by them due to a sharp decline in remittances, setback to their exports and severe strain on their balance of payments position imposed by increased oil prices. They recognized the potentiality of cooperation among themselves for mitigating the impact of these adverse consequences.

17. The Heads of State or Government nted with satisfaction that the initiative of the Government of the Maldives for the Protection and Security of small States at the UN in 1989, which they all supported, had also received overwhelming support of the international community. They agreed that,because of their particular problems, small states merited secial measures of support in safeguarding their independence and territorial Integrity.

18. The Heads of State or Government expressed the hope that the talks between the two Super powers on arms control would eulminate in the conclusion in their nuclear arsenals leading to the total elimination of nuclear weapons. While welcoming the measures beig considered for arms reduction at the global level,they were convinced that the objective could be best achieved through the promotion of mutual trust and confidence among the Member States They underlined the inherent relationship between disarmament and development and called upon all countries, especially those possessing the largest nuclear and conventional arsenals, to rechannel additional financial resources, human energy and creativity into development. They expressed their support for the banning of chemical weapons and early conclusion of a Comprehensive Test Ban Treaty. In this context,they welcomed the convening of the UN Conference in

January 1991 to consider amendments to the Partial test Ban Treaty to convert it into a Comprehensive Nuclear Test Ban Treaty.

19. The Heads of State or Government expressed concern that the internatiional economics environment for the developing countries had been characterised by negative resource flows, high trade barriers, serious external debt problems and high interest rates. The need of SAARC countries for increased concessiional resources and technology as well as access to markets for their exports could not, therefore, be under estimated. They called for collective efforts based on mutuality of in terest and felt that regular North-South consultations were essential for ensuring equitable management of global interdependence.

20. The Heads of State or Government recalled the usefulness of the First Ministerial Meeting on International Economic Issues held in Islamabad in 1986. They agreed that the second such Ministerial Meeting be held in India in 1991 to review the outcome of the Uruguay Round and to coordinate positions at internatiional conferences including the U.N. Conference on Environment and Development, 1992.

21. Notwithstanding the continuing efforts on the internatiional economic plane, the Heads of State or Government emphasised the presssing need for the Ministerial Meeting to address itself

vigorously to the objective of self-reliance. They directed the Ministers to prepare a strategy for mobilishing regional resources which would encourage and strengthen individual and collective self-reliance in the region.

22. The Heads of State or Government expressed their support for the Paris Declaration (1990) and Programme of Action adopted by the Second United Nations Conference on the Least Developed Countries. they called upon the internatiional community to contribute to the successful implementation of the Programme of Action which is of special importance for the socio-economic development of the region.

23. The Heads of State or Giovernment recognized the imperative need for providing a better habitat to the peoples of South Asia through optimum utilization of indigenous technology, know-how and material, and decided that 1991 be observed, as to "SAARC Year of Shelter".

24. The Heads of State or Government noted that millions of disabled persons lived in the SAARC region and immediate action was required to reduce their sufferings and to improve their quality of life.They decided to observe 1993 as the "SAARC Year Disabled Persons".

25. The Heads of State or Government were particularly happy that the Fifth SAARC Summit coincided with the Twenty Fifth Anniversary of the Independence of the Maldives which provided them with the opportunity to express their solidarity with the people and the Government of the Maldives. They expressed their conviction that the Male' Summit had helped in consolidating the gains of regional cooperation and in strengthening the institutiional base of SAARC.

26. The Heads of State or Government gratefully accepted the offer of the Government of Sri Lanka to host the Sixth SAARC Summit in 1991.

27. The Heads of State or Government of Bangladesh, Bhutan, India, Nepal, Pakistan and Sri Lanka ex;pressed their deep appreciation for the exemplary manner in which the President of the Maldives had discharged his responsibilities as Chairman of the Meeting. They expressed their profound gratitude for the warm and gracious hospitality extended to them by the Government and the people of the Maldives and for the excellent arrangements made for the Meeting.

## COLOMBO DECLARATION

The Colombo Declaration of the Heads of State or Government of the Member Countries of South Asian Association for Regional Corporation issued on 21st.December 1991.

**INTRODUCTION**

1. The Prime Minister of the People's Republic of Bangladesh, Her Excellency Begum Khaleda Zia; the King of Bhutan. His Majesty King Jigme Singye Wangchuck;the Prime Minister of the Republic of India,His Excellency Shri Narasimha Rao; the President of the Republic of Maldives, His Excellency Mr.Maumoon Abdul Gayoom; the Prime Minister of Nepal,the Rt.Hon. Girija Prasad Koirala;the Prime Minister of the Islamic Republic of Pakistan, His Excellency Mian Mohammed Nawa Sarif and the President of the Democratic Socialist Republic of Sri Lanka, His Excellency Ranasingha Premadasa met at the Sixth Summit of the South Asian Association for Regional Cooperation (SAARC) at Colombo, Sri Lanka on 21st. December, 1991.

**REGIONAL COOPERATION**

2. The Heads of State or Government reaffirmeed their commitment to the principles and objectives enshrined in the Charter of SAARC.They resolved to promote regiional cooperation for the benefit of their people, in a spirit of mutual accommodation,with full respect for the principles of sovereign equality, independence and territorial integrity of all States and in strict adherence to the principles of non-use of force,

the peaceful settlement of disputees and non-interferenc in each other's internal affairs. They also reiterated their commitment to the priniciples of the United Nations Charter and the Non-aligned Movement.

**INTERNATIONAL ECONOMIC ISSUES**

3. The Heads of State or Government emphasised the vital importance of assessing the nature and extent of international economic inter-dependence and of the need for reviving the North/South dialogue. They noted the recent developments that had radically transformed the international development relationship deeply affecting the prospects for the economies of the seven SAARC countries. The Heads of State or Government emphasised the need for vigorously promoting South-South economic cooperation to off-set the negative consequences of international economic developments.

4. The Heads of State or Government also exchanged views on the priorities of their respective national economies. They identified for the further development of their economies, the importance of securing less restrictive trading and marketing opportunities for their products, more extensive technology and resource transfers to South Asia, debt relief and access on favourable and on more concessional terms to resources from multilateral

financial institutions. They agreed to keep on open dialogue on these aspects through mutual consultatioins.

**INTERNATIONAL POLITICAL DEVELOPMENTS**

5. The Heads of State or Government assessed current international developments in the political sphere particularly those that affected the lives of the people of South Asia. They noted the changing power structures in international relations and the reduction of confrontations and tensions, particularly among the Super Powers. These have contributed to the receding of the threat of nuclear confrontation and to agreements on disarmament measurese. The Heads of State or Government hoped that these developments would restrain the pursuit of military power in all areas of the world. They expressed the hope that the peace dividend would be used for promoting further development of developing countries. They welcomed the trend towards popularly based democratic governments in different parts of the world including in South Asia.

6. The Heads of State or Government observed however that some political issues in particular the Palestine question, the final elimination of Apartheid as well as other problems remained unresolved despite efforts towards their settlement.

7. In regards to human rights, the Heads of State or Government observed that civil and political rights on the one hand and economic and social rights on the other are inter-dependent and of equal importance Hunam rights issues should not therefore be viewed in narrow and exculsively political terms. In this context they underlined the need to view the efforts of States to guarantee human rights in their full context, through the pursuit of development for all citizens in conditions of stability, which in turn guarantees the enjoyment of human rights of all persons.

8. The Heads of State or Government while reaffirming their commitment to democracy, human rights and the rule of, law, embhasised the need to ensure that development remains at the centre of international attention.

9. The Heads of State or Government agreed to participate in the on going process of revitalising the United Nations as an effective universal instrument for addressing international issues on an equitable and democratic basis, taking fullaccount of the interests and concerns of all states, including those in South Asia. Issues such asthe protection and preservation of the environment and the equitable and sustainsable emeaneagment of global resources, economic development and the alleviation of poverty,

the suppression of terrorism. drug trafficking and other international crimes required global responses and solutions calling for action by all states.

**PROJECTION OF COLLECTIV POSITIONS**

10. In the context of the SAARC Charter-objective to strengthen cooperation among member-states in international fora, the Heads of State or Government resolved to encourage consulations among delegations of SAARC countries at all international fora and to promote articulation of joint positions where such action would be in the interests of all. They felt that the development of a collective position in international fora would accord them greater credibility and enhance the international profile of South Asia.

**STRENGTHENING OF SAARC**

11. The Heads of State or Government welcomed the Report presented by the Chairmanof the Fifth SAARC Summit, the Presiden of Maldives, and the Head of Government of Bangladesh on the adoption of a more businesslike and functional approach in the conduct of SAARC meetings, as well as the Report submitted by the Chairman of the Ninth Session of the Council of Ministers, the Foreign Minister of maldives, on rationalizing SAARCactivities. The Heads of State or

Government also consideered other proposals submitted by Member,States and by the Secretariat to make theAssociation a more effective instrument for the realisation of the aspirations of the people of South Asia.

12. They decided that the standing committee should meet in special session in Colombo in April 1992in orderto collate and study all proposals and comments in this respect and to submit a report with its recommendations to the Eleventh Session of the Council of Ministers.

**INTERNATIONAL COOPERATION**

13. The Heads of State or Government re-emphasised that regional self- reliance should be resolutely promoted through closer cooperation among countries of the Association and that this would help mitigate the adverse consequences of negative international developments operating against them.

14. The Heads of State or Government requested the Standing Committee at its Special Session to study the question of cooperation between SAARC and appropriate international and regional organizations taking into account the evolution of SAARC activities in the core economic areas and to report to the Eleventh Session of the Council of Ministers.

**INTEGRATED PROGRAMME OF ACTION**

15. The Heads of State or Government noted the progress made by the Integrated Programme of Action (IPA)in expanding to cover a number of sectors crucial for the economic and social progress of the peoples of South Asia. They were of the view that the challenge facing the IPA was to achieve its identified targets within specific time periods. The Heads of State or Government welcomed the proposals made and the discussios proceeding in SAARC to heighten the effectiveness of the IPA.

**POVERTY ALLEVIATION**

16. The Heads of State or Government accorded the highest priority to the alleviatiion of poverty in all South Asian countries.They affirmed that South Asia's poor could constitute a huge and potential resource,provided their basic needs were met,and they were mobilized to create economic growth. This requires that the poor are empowered and are irreversibly linked to the mainstream of development. It was noted that each South Asiancountry has had significant success cases of this approach to poverty alleviation.

17. Recognising that a great majority of these people remain below the poverty line,they evinced keen interest in a "Daal-Bhaat", or assured nutritional standards approach towards the satisfadtion of basic needs of the South Asian poor.

18. Deeply conscious that primary education is the cutting edge in the struggle against poverty and the promotion of development, the Heads of State or Government reaffirmed the importance of attaining the target of providing primary education to all children between the ages of 6-14 years by the year 2000..They agreed to share their respective experiences and technical expertise to achieve this goal.

19. The Heads of State or Government decided to establish an independent South Asian Commission on Poverty Alleviatiion consisting of eminent persons from each SAARC membere stat to conduct an in-depth study of diverse experiences of the seven countries on poverty alleviatiion, and to report to the Seventh Summit, their recommendations on the alleviationof poverty in South Asia.

**TRADE MANUFACTURES AND SERVICES**

20. The Heads of State or Government were pleased to note the establishment of the Committee for Economic Cooperation as an important outcome of the Regional Study on Trade Manufactures and Services. They declared their commitment to the liberalisation of trade in the region through a step approach in such a manner that all countries in the region share the benefite of trade expansion equitably.

21. The Heads of State or Government approved that the Inter Governmental Group (IGG) set up on the recommendation of the Committee on Economic Cooperation should formulate ande seek agreement on an institutional framework under which specific measures for trade liberalisation among SAARC member-states could be furthered. It should also examine the Sri Lankan proposal to establish a SAARC Preferential Trade Arrangement (SAPTA) by 1997. They directed that the IGG should meet as early as possible and report to the Committee on Economic Cooperation. The Heads of State or Government accepted the offer of the Government of Sri Lanka to host the Second Meeting of the Committee on Economic Cooperationat Colombo in June/July 1992 at which the report of the Inter Governmental Group would be considered.

**ENVIRONMENTAL ISSUES**

22. The Heads of State or Government recognised that the degradation of the environment has emerged as a major global concern. While the protection of the environment is a common imperative for all humankind,the main responsibility in this regard rests on developed countries since most of the emission of pollutants originates in those countries

and since they also have greater capacity for taking or facilitating corrective measures.

23. The Heads of State or Government called on the einternational community to address the question of unsustainable production and consumption patterns and life-styles which lead to environmeenetael degradation. They were also of the view that environmental standards applicable to developed countries may have excessive and unwarranted economic or social costs if applied in developing countries.

24. Adequate new and additional resources are needed for developing countries to pursue an environmentally sensitive process of development that will banish the underlying causes of environmental degradation poverty, malnutrition and unemployment. Such resources should be transferred to developing countries on an assured basis together with environmentally sound technology at preferential and concessional terms.

25. The Heads of State or Government expressed their conviction that the framework could be laid for an equitable global partnership of all countries with a view to safeguarding the environment.

26. The Heads of State or Government noted that in preparation for the SAARC Year of the Environment

SAARC countries had taken various national as well as regional measures for the preservation of the environment.

27. The Heads of State or Government expressed their satisfaction at the completion of Regional Study on the Causes and Consequences of Natural Disasters and the Protection and Preservation of Environment. They urged the member countries to promote cooperation amongst themselves for enhancing theri respective disaster management capabilities and for undertaking specific work-programmes for protection and preservation of the environment. They endorsed the decision of the Council of Ministers to establish a Committee on Environment to :

- Examine the recommendations of thee Regional Study
- identify measures for immediate action
- decide on modalities for their implementation.

and welcomed the offer of Bangladesh to hold the first meeting of the Committee in Dhaka.

28. The Heads of State or Government noted with satisfaction the decision of the Standing Committee concerning the time frame to finalise the regional study on the " 'Greenhouse Effect' and its Impact on the Region". They urged member countries to consult each other on key issues concerning climate

change, Bio-diversity and Biotechnology, a global consensus on forestry principles, transfer of environmentally sound technology, management of waste and other issues for discussion at Inter-governmental Negotiating Committee and the UNCED in 1992 so that the concerns of SAARC countries could be effectively articulated and projected keeping in mind their respective national priorities.

29. The Government of India renewed its offer to host a Ministerial Meeting to harmonise the views of SAARC countries on these issue beforee UNCED 1992. The Heads oif State or Government welcomed the offer.

**SHELTER**

**30.** The Heads of State or Government noted the useful activities conducted during 1991 which was observed as SAARC Year of Shelter. They decided to continue to work towards the global objective of "Shelter for All by the Year 2000".

31. The Heads of State or Government were of the view the Government should plau the critical role of facilitator and supporter of the initiatives of the people and non-govermental agencies in the field of shelter. In this rolee they should be involved in the provision of affordable sites with secure tenure, making housing finance available on an affordable and sustainable basis,providing infrastructure

development such as water supply and sanitation, energy and waste disposal increasing the supply of building materials at reasonable prices using indigenous resources, removing constraints to building activities, and creating maximum opportunities for public participation in decision making and management of shlter activities in the overall context of poverty alleviation. Such activities would be facilitated by the exchange of experience, personnel, research and information among the SAARC countries .

32. The Heads of State or Government welcomed the recommendation on the establishmente of a shelter information network to be called "SHELTERNET".

**CHILDERN**

33. The Heads of State or Government accorded the highest priority to the question of child survival protection and development. They welcomed the adoption of a Plan of Action on Children for South Asia which incorporated relevant recommendations of the World Summit on Childern.

34. The Heads of State or Government noted in this context that some member countries had completed their national Plans of Action and urged other member countries to complete their respective Plans. They also urged Member- States to ensure coordinated follow-up action on their respective Plans.

35. The Heads of State or Government welcomed the offer of Sri Lanka to host a Conference on Children in South Asia in 1992 to consider implementation of the regional Plan of Action.

36. The Heads of State ore Govrnment welcomed the adoption of the Plan of Action for 1991 - 2000 A.D as the SAARC Decade of the Girl Child. They requested the Council of Ministers to ensure an annual review of the States of implementation of the Plan of Action during the decade.

**TERRORISM**

37. The Heads of State or Government expressed serious concern on the spread of terrorism in the region affecting the security and stability of all member-states and unequivocally condemned all acts, methods and practices of terrorism as criminal..They deplored all such acts for their impact on live, Property,secio-economic development and political stability as well as on regional and international peace and cooperation.

38. They recognised that cooperation amont SAARC States was vital if terrorism was to be prevented and eliminated from the region. In this regard they urged member-states to take all necessary measures to give full effect to their obligations under the SAARC Regional Convention on Suppression of Terrorism. They

stressed in particular, the urgent need for the expenditious enactment of enabling legislation by those member-.states which had not yet done so, for the implementation of the Convention and the need for a constant dialogue and interaction among the concerned agencies of member-states, including submission of periodic recommendations to the Council of Ministers.

**SECURITY OF SMALL STATES**

39. The Heads of State or Government welcomed the initiative of the Government of the Republic of Maldives in drawing the attention of the international community to the protection and security of small states. They noted with satisfaction that the resolution submitted by the Maldives to the United Nations during the 46th Session of the General Assembly ande co-sponsored by 65 countriees including all the members of SAARC was adopted without a vote. They agreed that small states may be particulatly vulnerable to external threats and acts ofinterferencein their internal affairs and that they merit special measures of support in safeguarding their sovereign independence, territorial integrity and the welfare of their people.

**DRUG TRAFFICKING**

40. The Heads of State or Government noted with satisfaction the increasing regional cooperation in combating the problem of durg trafficking and drug abuse. They expressed serious concern over the growing linkges between drug trafficking, international arms trade and terrorist activities. While expressing satisfaction at the signing of the SAARC Convention on Narcotic Drugs and Psychotropic substances at the Fifty SAARC Summit at Male, they urged member-states which had not yet done so to ratify the Convention for its entry into force. They also recognised the need tor greater cooperation, including the submission of periodic recommendations to the Council of Ministers.

**PEOPLE-TO-PEOPLECONTACT**

41. The Heads of States or Government recalled that important initiatives and been taken at the Bangalore and Kathmandu Summits whichhad subsequently resulted in the increased involvement of the peoples of South Asia in the process of Regional Cooperation. They welcomed the steps beingtaking by business organisations/professional bodies, scholars, academics, National Cultural Councilsand the media in South Asia to form regional entities/bodies. They called on the Standing Committee to expedite the formulation of guidelines for extending recognition to such groupand bodies.

**FUND FOR REGIONAL PROJEECTES**

42. The Heads of State or Government welcomed the setting up of a SAARC Fund for Regional Projects (SFRP) for identification and development of regional projects. They noted that the Fund would be managed by a Regional Council of Development Financing Institutions of the SAARC Member States and that the First Meeting of the Council would take place in India.

**SOUTH ASIAN DEVELOPMENT FUND**

43 The Heads of State or Government requested the Secretary-General of SAARC to set up a panel of experts to examine the proposal of His Majesty the King of Bhutan to undertake a pre-feaesibility study for the establishment of a South Asian Development Fund, taking into account the views of all member-states.

**SAARC VISA EXEMPTION SCHEME**

44. The Heads of State or Government noted with satisfaction that the Scheme in regard to the entitled categories of Members of Parliament, Judges of the Supreme Court, Heads of national academic institutions and the accompanying spouses and dependent children will become operational from 1st March 1992. They called for expeditious action to implement the scheme as well as to consider other

categories eligible for exemeption.

**SCIENCE AND TECHNOLOGY**

45. The Heads of State or Government were conscious of the vast potential being afforded by current advances in scientific research for the application of science and technology towards the well being of the peoples of South Asia. They agreed that for the south Asian region to derive the maximum benefitee, scientific ande technological cooperation should transcend national frontiers.

46. Recalling the decision of the Male Summit to institutionalise Cooperation in the field of bio-technology, they welcomedthe proposal for the establishment of a networking arrangement between Research and Development Centres in the member-states as an important step in advancing such cooperation. They also welcomed the emphasis on organised study tours, workshops and seminars proposed in the identified areas of cooperation in the field of science and technology.

**DATE AND VENUEE EOF THE SEVENTH MEETING OF THE SAARC HEADS OF STATE OR GOVERNMENT**

47. The Heads of State or Government gratefully accepted the offer of the Government of Bangladesh to host the Seventh SAARC Summit in 1992.

48. The Heads of State or Government of Bangladesh Bhutan, India, Maldives, Nepal and Pakistan expressed their deep appreciation for the exemplary manneer in which the Presideent of Sri Lanka had discharged his responsibilities as Chairman of the Meeting. They expressed their profound gratitude for the warm and gracious hospitality extended to them by the Government and the people or Sri Lanka and for the excelleent earereanyments made for the Meeting .

-----------

*Table I*

## Trade Complementaries in Identified Products in South Asia

| *Importing Country* | *SITC* | *PRODUCT* | *Exporting Country* | *SITC* | *PRODUCT* |
|---|---|---|---|---|---|
| BD | 2631 | Cotton, not carded or combed | PAK | 2631 | Cotton, not carded or combed |
| | 4242 | Palm oil | NPL | 424 | Vegetable oil |
| | | | SL | 4243 | Coconut Oil |
| | 6513 | Cotton yarn, 80,000 and above M/Kg. | PAK, IND | 6513 | Cotton yarn 8000 and above M/Kg. |
| IND | 0542 | Beans and peas | NPL | 054 | Pulses |
| | 0577 | Edible nuts fresh dried | SL | 05771 | Dessicated coconut. |
| | 0752 | Spices except Pepper and Pimento | NPL | 075 | Cardamom Large. |
| | 2922 | Natural Gums Resins | NPL | 292 | Katchhu (Kattha) |
| | 2929 | Other materials of vegetable origin | NPL | 292 | Crude vegetable materials |
| | 4249 | Fixed vegetable oil nes | NPL | 424 | Vegetable oil |
| | 6411 | Newsprint | BD | 6411 | Newsprints |
| | 6712 | Pigiron, Cast iron, Spiglsm in Pigs blocks etc. | PAK | 6712 | Pigiron, Cast iron, Spiglsm in Pigs blocks etc. |
| NPL | 054 | Vegetables Fresh, dried & frozen (edible) | IND, BD | 0545 | Other Fresh or Chilled vegetables. |
| | 334 | Petroleum products refined | BD | 3341 | Light oils nes. |
| | 541 | Medicinal and pharmaceutical products | IND | 5417 | Medicaments |
| | 562 | Fertilizers and manufactures | BD | 5621 | Urea fertilizer |
| | 641 | Paper and Paper board | BD | 6411 | Newsprint |
| | 651 | Textile yarn | PAK | 6513 | Cotton yarn |

| *Importing Country* | *SITC* | *PRODUCT* | *Exporting Country* | *SITC* | *PRODUCT* |
|---|---|---|---|---|---|
| | | | BD | 6519 | Jute yarn or other fibre |
| | 652 | Cotton fabrics, woven | IND, PAK | 6521 | Cotton fabrics woven unbleached not mercerised. |
| | | | | 6522 | Cotton fabrics woven bleached and mercerised. |
| | 773 | Equipment for distribution of electricity | IND | 7732 | Electrical insulating equipments |
| | 784 | Parts and accessories of motor vehicles. | IND | 7849 | Other parts and accessories for motor vehicles |
| PAK | 0741 | Tea | IND, BD | 0741 | Tea |
| | 4242 | Palm oil | NPL | 424 | Vegetable oil |
| | 5417 | Medicaments | IND | 5417 | Medicaments |
| SL | 054.51.2 | Bombay onions | IND, NPL | 0545 | Other fresh or chilled vegetables |
| | 0350.1 | Dried and salted fish | IND, BD | 0350 | Fish dried, salted or smoked |
| | 042.11& 042.22 | Rice husked or broken | NPL, PAK | 0422 | Rice, semi or wholly milled. |
| | 263.1 | Raw cotton | PAK | 2631 | Raw cotton |
| | 541.71 | Other Medicaments | IND | 5417 | Medicaments |
| | 651.31 | Cotton yarn | PAK, IND | 6513 | Cotton yarn |
| | 641.1.9 | Newsprint | BD | 6411 | Newsprint |

*Source* : CSCD, Trade Expansion in South Asia — Liberalization and Mechanisms : A Synthesis Study, December 1986

*Table II*

## Import-Export Balances in Selected Identified Products in South Asia Trade

| *SITC* | *COMMODITY* | *Importing Country* | *World Imports (Mn) a* | *Year* | *SA%WD* | *Exporting Country* | *World Export (Mn)a* | *Year* | *SA%WD* |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 035.0 | Dried and salted fish | SL | 280.91 | 1985 | 99.26 | IND | 61.76 | 1983-84 | 40.40 |
| | | | | | | BD | 71.25 | 1983-84 | – |
| 0741 | Tea | PAK | 2566.83 | 1983-84 | 25.26 | IND | 5151.72 | 1983-84 | 0.80 |
| | | | | | | BD | 1699.52 | 1983-84 | 48.52 |
| 2631 | Raw cotton | BD | 1647.69 | 1983-84 | 35.60 | PAK | 1771.82 | 1983-84 | 2.33 |
| | | SL | 259.71 | 1985 | 88.16 | | | | |
| 5417 | Medicaments | NPL | 277.81 | 1983-84 | NA | IND | 1452.64 | 1983-84 | 7.30 |
| | | PAK | 1067.14 | 1983-84 | N | | | | |
| | | SL | 544.05 | 1985 | 31.91 | | | | |
| 6411 | Newsprint | IND | 1127.18 | 1983-84 | 2.40 | BD | 160.0 | 1983-84 | N |
| | | SL | 208.33 | 1985 | 0.12 | | | | |
| 6513 | Cotton yarn | BD | 485.04 | 1983-84 | 36.0 | PAK | 3047.11 | 1983-84 | 1.59 |
| | | SL | 29.74 | 1985 | 75.39 | IND | 255.30 | 1983-84 | 20.0 |
| 6712 | Pig iron, cast iron etc. | IND | 450.25 | 1983-84 | 23.30 | PAK | 606.36 | 1983-84 | 35.12 |

***Source*** : As in Table 1

***Note*** : a - Value in national currencies.
N - Negligible.

*ANNEXURE II*

## INTRA SOUTH ASIAN COUNTRIES' EXPORTS/ EXPORT POTENTIAL OF MAJOR COMMODITIES

### I. EXPORTS OF BANGLADESH TO:

(1) India: Newsprint, Jute goods, textile yarn and fabrics, paper and paper boards, timber, fresh water fish, vegetables, wood, naphtha, bamboo, cane, handicrafts, handloom, sarees, molasses, fine jute carpets, bitumen, glycerine, viscose filament rayon yarn, cattle hides, goat skin.

(2) Nepal: Paper, newsprint, hides and skin, jute goods.

(3) Pakistan: Raw jute cuttings, jute goods, tea, betel leaves, ginger, rayon, newsprint, paper.

(4) Sri Lanka: Raw jute, jute goods, newsprint, hides and skin.

### II. EXPORTS OF INDIA TO:

(1) Bangladesh: Fruits and nuts-fresh or dried, coal, lignites, peat, briquettes, synthetic organic dyestuff, textile yarn, glassware, pig iron, ferrous alloys, ingots and other primary forms of iron steel plates and sheets of iron or steel, tubes, pipes, and fittings of iron or steel, manufacture of metals n.e.s., text and leather machinery and parts thereof, machinery for special industries n.e.s., motor cycles, scooters and other motorised cycles, railway vehicles, internal combustion engines, non-electrical machinery, textile machinery, metal working machines, iron and steel manufactures, plastic articles, processed foods, spices, cigarettes, paints and varnishes, drugs, tyres and tubes, hand tools and small tools, civil engineering plant and equipment, telecommunication equipment, office machines, sanitary wares and fittings, medical apparatus and scientific instruments.

(2) Nepal: Spices, crude vegetable materials, petroleum products, paper and paper boards, textile yarn, cotton and woven fabrics, lime cement, and fabricated construction materials, manufacture of metals n.e.s., electrical machinery and apparatus n.e.s., parts and accessories of motor vehicles, medical and pharmaceutical products, synthetic textiles, readymade garments, transport vehicles, telecommunication equipment, agricultural tractors and parts and hydro-electrical equipment.

(3) Pakistan: Wheat and meslin unmilled, tea, crude vegetable materials n.e.s., rubber tyres, tyre cases, tyre flaps, and inner tubes, glassware, hardwood, organic and inorganic compounds, mineral manufactures n.e.s., parts and accessories of motor vehicles, chemicals, construction machinery, port equipment, telecommunication equipment, machine tools, workshop equipment, high grade refractory, power generation, transmission and distribution equipment, iron ore, iron and steel products, oil prospecting equipment, textile machinery and food processing equipment.

(4) Sri Lanka: Fish dried, smoked fish, tobacco, vegetables, cane sugar refined, spices, rice, cereal preperation, preparation of flour, starch of fruits and vegetables, medical and pharmaceutical products, textiles yarn, cotton fabrics woven, blooms, billets, slabs, sheets of iron and steel, manufacture of metals, n.e.s., internal combustion pistons, engines and parts thereof, machine tools for working metal, heating and cooling equipments and parts thereof, electrical apparatus for making and breaking electric circuits, motor vehicles for transport and vehicle parts, motor cycles, scooters, electrical machinery and apparatus n.e.s.

## III. EXPORTS OF NEPAL TO:

(1) India: Food and live animals, tobacco and beverages, crude material inedible (except fuel), mineral fuels and lubricants, animal and vegetable oil and fats, chemicals and drugs, goat skin, pulp, bamboo, cane products and handicrafts.

## IV. EXPORTS OF PAKISTAN TO:

(1) Bangladesh: Fruits, oilseeds, raw cotton, vegetable oils, dyeing and tanning substances, pharmaceutical products, rubber manufactures, textile yarns and fabrics, metal manufactures, machinery, footwear.

(2) India: Raw Cotton, rocksalt, furnace oil, naphtha, petroleum products, gypsum, onyx, industrial alcohol, fertilisers, textiles, raw wool, sulphur, unroasted iron pyrites, vegetable oils, organic and inorganic chemicals, pearls, artificial resins, precious and semi precious stones, sports-goods, soda ash, low grade coal, surgical goods, acetate filament yarn, carbon black, plastic materials, cotton fabrics, blended fabrics, insecticides, pesticides, and fungicides, ceramics, etc.

(3) Sri Lanka: Rice, petroleum products, cotton yarns, cotton threads, cotton fabrics, synthetic tèxtiles.

## V. EXPORTS OF SRI LANKA TO:

(1) Bangladesh: Chanks, arecanuts, coconut oil, lobsters, spices, natural rubber, crude fertiliser, vegetable oils, rubber manufactures, textile yarn.

(2) India: Natural graphite, dried vegetables, fruits, cloves, coffee, tea, cocoa, residual fuel oil, cinnamon leaf oil, raw hides and skin, lobsters, spices, copra, crude rubber, petroleum products, lifting and loading machines, transport equipments.

(3) Pakistan: Arecanuts, coconut oil, natural graphite, natural rubber sheets, lobsters, black tea, betel leaves, margarine, nutmeg and mace, cardamon, coir yarn, dessicated coconut and copra.

## Source:

(1) P.B. Bhatt: *Trade Flows in South Asia, India Quarterly* July-December 1984, pp. 292-294.

(2) Indian Institute of Foreign Trade (New Delhi) *Report on Import-Export Structure and Trade Expansion in South Asia*, p. 95-113. N.D.

(3) *Indo-Pak Economic Cooperation*, n. 26.

(4) I.N. Mukherji, "India's Trade and Investment Opportunities in Manufactures in South Asia. With special reference to Sri Lanka and Bangladesh", n. 12, pp. 118-124.

| *Countries* | *Economic Base/Mode of Production* | *Social Stance* | *Political Order* |
|---|---|---|---|
| Bangladesh | Feudal + a weak fringe of dependent manufacturing sector | Islamic, Bengali dominated | Parliamentary democracy |
| Bhutan | Pre feudal and feudal + infant fringe of dependent trading class | Drukpas, Buddhist dominated | Traditional Monarchy |
| India | Elements of Feudal + Modern capitalist with nationalist as well as dependent manufacturing sectors | Hindu dominated but secular | Parliamentary democracy, federal constitutional structure |
| Nepal | Pre-feudal + Feudal + a marginal dependent commercial sector dominated by feudal interests | Hindu Kingdom | Traditional monarchy with a non-party elected legislature |
| Pakistan | Feudal + modern capitalist sector with dependent monopolies | Islamic, Punjabi dominated | Military Dictatorship with the facade of elected legislature |
| Sri Lanka | Plantation + small dependent capitalist manufacturing and commercial sectors | Sinhala, Buddhist dominated | Presidential democracy with strong political controls |

Maldives has been omitted in the above list owing to the paucity of even broad based general data.

in this category.

| Country | Population | Total Armed Forces | Estimated GNP(US $) | Defence Expen - diture (US $) |
|---|---|---|---|---|
| Bangla-desh | 92900000 | 77000 | 9.5 bn[a] | 158 m |
| Bhutan | n.a. | n.a. | n.a. | n.a. |
| India | 683900000 | 1104000 | 116 bn[b] | 5.12 bn |
| Maldives | n.a. | n.a. | n.a. | n.a. |
| Nepal | 14309000 | 25000 | 1.76 bn[c] | 22 m |
| Pakistan | 88950000 | 450000 | 30 bn[b] | 1.54 bn |
| Sri Lanka | 14900000 | 14840 | 3.2 bn[c] | 63 m |

Source: The Military Balance, 1981-1982. The International Institute of Strategic Studies, 1981, pp. 76-87.

a. GDP (1979) b. Figure for 1980
c. Figure for 1979

## BIBLIOGRAPHY

1. Aiyer,S.P., "The Commonwealth in South Asia" Lalwani Publishing House, Bombay-1969-

2. Arasarathan.S., "Ceylon"- Printice Hall 1964.

3. Appadora, A., "Tahe Domestic Roots of India's Foreign Policy-1947-72" Delhi-1981.

4. Amarra Sekera Anil, "Crisis in Sri Lenka" Colomba-1975.

5. Akhtar Majeed, "Indian Ocean Conflict and Regional Co-operation". A.B.C.Publishing House-New Delhi 1984.

6. Appadorai,A & M.S. Rajan, "India's Foreign Policy and relations" South Asian Publishers New Delhi 1985.

7. Agarwal, Govind R.Acharya, Rajeshwar Pradhan Pustan "Fundamentals on Nepalese Foreign Policy"Published by-Centre for Ecnomic Development and Administration Kathmandu-Nepal-1985

8. Aris,Michael "Bhutan" The Early History of a Himalayan Kingdom" Vikas Publishing House PVT.Ltd.New Delhi 1980.

9. Adams John & Iqbal Sobiha — "Exports,Politics & Economics Development in Pakistan."

10. Amarasingam,S.P. — "Rice and Rubber-The story of China-Ceylon Trade".

11. Anthony,Mas Carenhas — "The Rape of Bangladesh" Vikas Publications Delhi-1971.

12. Abbas, B.M. — "Ganga Water Dispute", Vikas Publication, New Delhi-1982.

13. Agarwal R.C. — "Foreign Policy of India" Agra-1979.

14. Bindra, S.S., — "Ditermination of Pakistan Foreign Policy".

15. Bindra,S.S., — "Towards a New India and Her Neighbour's Era". Deep & Deep Publications,New Delhi-1985.

16. Bhandarnaike, S.W.R.D., — "The Foreign Policy of Ceylon" 1968.

17. Bailey, S.D. — "Ceylon"-New York-1953.

18. Bains, J.S. — "India's International Disputes." Bombay-1962

19. Bhatt, S.R. — "Ceylon-A Second South Asia." Allahabad- 1963.

20. Brecher,Michael — "The New States of Asia-A Political Analysis". London- 1963.

21. Brecher,Michael, — "India in world Politics" Krishna Memon Views- London 1968.

22.Bajpai, U.S. "India and its Neighourhood" Lancer International 1986 in Association with Indian International.

23.Bajpai, A.B., "India's Foreign Policy" Rajpjal & Sons, K.K.Printers, New Delhi-1979.

24.Bhandari, A., Banarjee, B.N. "India's Aid to Neighbouring Countries" New Delhi, Paribus Publications-1983.

25.Bhargava.P., "Political Economy of Sri Lanka." New Delhi-Navrang- 1987.

26.Brown, Norman, "India, Pakistan and Ceylon" University Press Philadelphia-1966.

27.Berindranath, Dewan, "South Asia Co-operation.A case of Caution Democratic World" April 12, 1981.

28.Bendhyopadhyay,J "The Making of India's Foreign Policy". New Delhi-Allied Publishers-1980.

29.Bhambheri,C.P., "The Foreign Policy of India" Strelling Publications, New Delhi- 1987.

30.Bahadur, Kalim. South Asia in Transition Conflicts and Tensions." Patriot Publications,New Delhi-1986.

31.Bimal Prasad, "Regional Co-operation in South Asia-Problems & Prospects". Vikas Publishing House- 1989.

32. Birender.S.S. "India and Her Heighbours."A study of Political Economic & Cultural Relations and Interaction."New Delhi 1984.

33. Bhaneja, Balwant, "The Politics of Tniangles." Published by P.Jain, Reseach publications 1973.

34. Brines, Russel, "The India-Pakistan conflict.London-1968.

35. Burke, S.M. "Pakistan Foreign Policy-An Interpretations, New yark- 1957.

36. Bhasin, (Ed). "Documents on Nepal's Relations with India" Bombay-1970.

37. Banerjee, Subrat, "Bangladesh" National Book Trust India", New Delhi.

38. Birandra, S.S. "India-Bangladesh Relations" New Delhi, Deep & Deep-1982.

39. Bhatia, B.L. "Anter-Rashriya Rajneet". Sahitya Bhawan-Agra- 1986.

40. Coelho, V. "Across the Palk Straits-India Sri Lankia Relations" PJalit & Palit 1976.

41. Chattopadhyay.H, "Indians in Sri Lanka."

42. Choudhary, J.N., "India's Problem of National Security in the Seventies"New Delhi-1973.

43. Choudhary, G.W., "Pakistan'sRelations with India." 1947-66, Indiona University Press 1968.

44. Callard, Keith. "Pakistan,A.Political Study." New Yark-1957.

45.Coelho.,V.H. "Sikkim and Bhutan." New Delhi 1970.

46.Chakarbarti,S.K "The Evolution of Politics in Bangladesh New Delhi- 1978.

47.Chattarji,Bola "A study of Recent Napalese politics Calcutta Wo rld Press- 1967.

48.Crunden,Robert M.Manoj Joshi & Rao,R.V.R.Chandra-Shekhar "New Perspectives, On America and South Asia," Chanakya Publications,Delhi-1984

49.Cauhan. R.S. "The Political Development in Nepal." Associated Publishing House New Delhi-1971.

50.Chopra, Pran, Hasan,Mubashir, Haq,Shamsul, Kodicara,Shelton Shoha, Rishikesh "Future of South Asia" Macmillan India Ltd.,Delhi 1986.

51.Chakravarti,S.R. and Verandra Narayan "Bangladesh" South Asian Publica-cations, New Delhi- 1986.

52.Chand, A. "Non-Aligned States-A Great Leap Forward" UDHPublishers, New Delhi- 1983.

53.Desai,Hiralal M. "India and Ceylon"Agra-1963.

54.De Silva,K.M. "History of Sri Lanka" Delhi Oxford University Press-1981.

55.Desai, W.S., "India and Burma"India Council of World Affairs 1954.

56.Dharamadasani.M.D (Cd)"Contemparary South Asia" Shalimar Publishing House Varanasi 1985.

57.Dharamadasani,M.D "Sri Lanka-An Island in Crises". Shalimar Publishing House Varanasi- 1988.

58.Dutt.,V.P. "India's Foreign Policy." Vikas Publishing House, New Delhi- 1987.

59.Dube, Ravikant "India and Sri Lanka Relations"

60.Doig, Desmond "Shutan,The Mountain Kingdom". September - 1961.

61.Deb, Arbinda. "Bhutan and India-A Study in Frontier Political Relations." Calcutta- 1976.

62.Das, 'Ravindra.K. "Nepal and its Neighbours." Konark Publishing House, Bhubaneswar 1986.

63.Dhar, D.P. "Emergence of Bangladesh, Socialist India, Delhi- 1972.

64.Dutta, V.P. "Relations with Neighbours," World Focus- 1981.

65.Das, Gupta, Sukhrajan, "Midnight Massacre in Dacca", Vikas Publications- 1979.

66.Elridge. P.J. Politics of Foreign Aid in India" New Delhi- 1969.

67.Enjstrom, Barbie, "India, Nepal and Sri Lanka." Pennsylvania, Kurios Press-1981

68.Farmer, B.H . "Ceylon-A Devided Nation" London 1963.

69.Fodar's India, Nepal and Sri Lanka". Hodder and Stoughton, 1983.

70.Fisher,margaret W "Selected Bibliography of Source Matrials for Nepal," Institute of International Studies. University of California, 1966.

71.Farouk, A. "Changes in the Economy of Bangladesh" The University Press Dacca- 1982.

72.Fisher, james F. "Trans-Himalayan Traders Economy Society & Culture in Northwest Nepal",Delhi, Varanasi, Patna, Madras, 1987.

73.Frankel,Francise R. " India's Political Economy" New Delhi- 1978.

74.Frauda (Marcus) "Bangladesh-The First decate, New Delhi South Asian- 1982.

75.Gupta, Anurodha, "Politics in Nepal" Bombay-1964

76.Gupta, Shanti Swarup. "British Relation with Bhutan, Jaipur- 1974.

77.Garge,Frederie,H "Regionalism and National Unity in Nepal," Vikas Publishing 1975.

78.Greene, Fred, "U.S.Policy and the security of Asia", New Yark-1968.

79.Ghosh, Rama., "Bangladesh" Sterling publication, New Delhi- 1985.

80.Gatam, Ranjit Singh "India-Pakistan Trade Relations Depp & Deep Publications-1986.

81.Gahbriel.A.Almond and James, S. Coleman. "Polities of Developing Area". Princeton 1970.

82.Ganguli, B.N. "India's Economic Relation with the far Eastern and Pacific Countries in the Present Country" Calcutta- 1956.

83.Gupta,K. "Indian Foreign Policy Calcutta World Press- 1955.

84.Gupta M.C. "India and its Neighbours".

85.George Timothy & others. "Security in Southern Asia India andthe Great Powers" Aldershort Gower Publishing Co. 1984.

86.Gupta,Vijay,(Ed) "India and Non Alignment." New Delhi, New Literature- 1986.

87.Gupta, B., "ThePolitical and Civic Status of of Indians in Ceylon"Agra-1963.

88.Harrission Selig "India, The Most Dangerous Decade" Princetn University Press-1960

89.Hellman Donold, "Southern Asia,The Polities of Poverty and Peace." Laxington Books-Laxington 1976.

90.Hasrat,Bikram Jit "History of Bhutan" Education Department Bhutan - 1980.

91.Halbraad(Corsten) (ed). "Super Powers & World Order. Canberra, Australian National University Press- 1971.

92.Heyerdahl,Thor. "The Maldive Mystry. George Allen & Uniwin,London-1986.

93.Imran, Zafar., "World Powers in South and South East Asia." New Delhi- 1972.

94.Indra Ratna A.D.V "The Ceylon Economy Colombo 1966.

95.Iyer Reghwan "South Asia Affairs." St.Anthony Papers, Chattoand Vinds London-1966.

96.Jayaraman, R "Caste Continuties in Ceylon" Popular Prakashan Bombay-1975.

97.Jain B.M. "South Asia Security,Problems E.Kalkaji, New Delhi- 1985.

98. Jackson Robert :'Asian Crisis' India,Pakistan, Bangladeshe, Nw Delhi 1978.

99. Jaameel Jalibl 'Pakistan, the identify of culture Alpna & Alpna Publication 1983.

100.Joshi,Bhuwan Lal &Rose,Leo.E. "Democratic Innovations in Nepal" A case study of Political Acculturation Berkeley, University of California Press 1966.

101.Kennerdy,D.E. 'Th security Soutehren Asia' New Yark 1965.

102.Kearney,Robert N 'Ceylon,The continuing crisis' Asian Survey. February. 1963.

103.Kohli,Manorama 'India and Bhutan,A study in Interrelations', 1972-1010 Munshiram Manoharlal Publishers 1982

104.Karan,Pradyumna P. 'Bhutan,A Physical and cultural Geography,' Lexington 1967.

105.Kumar D.P. 'Nepal year of Decision' Vikas Publishing House 1980.

106.Kodikara,S. 'Foreign Policyof Sri Lanka-A third World Perspective" Chankya Publication Delhi 1982.

107.Kodicara.S. 'India Ceylon Relations Since Independence 1965.'

108.Kumar Lalit — 'India and Sri lanka' Srimavo Shastri Pact 1977.

109.Kodikara S., — 'Ceeylon's Rlations with Communist Countries 1948-1966." South Asian Studies, July 1967.

110.Karuna Karan,K.P — 'India in world Affairs 1947-50' Oxford University Press Bombay 1952

111.Kole,Winet — 'A cross the Pak Strait.'

112.Kothori,Rajni — 'Bharat me Rajneet.'

113.Kulshreshtha,K.K. — 'Antr Rashtriya Sambandh' S.Chand & Co.,New Delhi 1986.

114.Khan, Azizur Rahman, — 'The Economy of Bangladesh' London Macmillan 1972.

115.Kidwai, Saleem — 'Indo-Soviet Relations.' New Delhi Publishing House,1985.

116.Keene, Sir,John — 'State Ceremoniesof the Maldive Island', Empire Rivew Vol.I3 February 1907.

117.Lachhman Singh — 'Victoryin Bangladesh,' Dehra Dun, Manjag Publications 1981.

118.Ludowyk,E.F.C. — 'The Modern History of Ceylon.' London Weidenfeld and Nicotson-1966

119.Low. D.A. — 'Soundings in Modern South Asia History' London,Weidnfeld and Nicolson-1968.

120.Landor A,Henry Savage. — 'Tibet and Nepal, Political, cultural,Geographical & Histprical' New Delhi Light & Life Publishers 1975

121.Misra,K.P.Chopra, V.D. 'South Asia Pasific Region Emer' pub.International Institute for Southern Asia,Pacific Studies,1988.

122.Misra P.K. 'India,Pakistan, Nepal and Bangladsh' Sandeep Prakashan, Delhi-1979.

123.Muni, S.D. 'Foreign Policy of Nepal' New Delhi 1973.

124.Moson Philip, 'India and Ceylon',Unity and Diversity (London Oxford University Press 1967).

125.Murti B.S.N. 'India in the common wealth' New Delhi Beacon Information and publication 1953.

126.Murti,Sat cehidanand,K Indian Forign Policy' Calcutta, Scientific Book Agency.1964.

127.Mendis,G.C. 'Ceylon Today and Yesterday', Main currents of Ceylon History' (Colombo Associated News Papers of Ceylon 1963.

128.Muni,S.D. 'Nepal An Assertive Monarchy' Chetna Publications,New Delhi-1977.

129.Mihaly,Eugene, Bramer, 'Foreign Aid and Politics in Nepal: A case study' London Oxford University Press 1965.

130.Nurtu K.K. 'Bhutan the Economic Scene'For Eastern Economic Review Vol.31 1961

131.Misra, Pramod Kumar 'Dhaka Sumit & SAARC'Institute for Asian Studies.New Delhi 1986.

132.Misra Pramod Kumar — 'South Asia in International Politics' UDH Publishers New Delhi , 1984.

133.Mukherji,Amitava — 'Indian Policy towards Associated Book Centre",New Delhi- 1983.

134.Muni S.D. And Anuradha Muni, — 'Regional Co-operation in South Asia',National Publishing House New Delhi- 1984.

135.Masan Philip, — 'India and Ceylon Unity and Diversity"

136.Misra, K.P. — 'Foreign Policy of India-A Book of Readive' Jhonson Press New Delhi 1977

137.Maheswari — 'India & Sri Lanka Economic Relations"

138.Mohanty Jivendra Nath — 'China, Bangladesh Relations" 1971-76 New Delhi J.N.U. 1979.

138.Memoria Chaturbhuj — 'Adhunic Bharat Ka Bhugol.'

139.Mahendra Kumar — 'Antre-Rastriya Rajaneet Ke Shadha-ntic Pakch' New Delhi 1980.

140.Narayan,Shriman — 'India Nepal Relations'.An Excrcise is open Diplomacy' Bombay 1970.

141.Naqvi,Jamal,Ali Shaukat Ali Farz — 'Inside Pakistan' Patriot Publishers New Delhi 1986.

142.Narayan Virendra & S.R.Chakravarti — 'Foreign Policy of Bangladesh' Aalekh Publishers Jaipur 1987.

143.Naseem, S.M. 'Under development Poverty and Inequality in Pakistan.'Vanguard Publications Lahore 1986.

144.Navaratham,C.S. 'Tamil & Ceylon' Saivn Prakashan Press Jaffna.

145.Nissanka,H.S.S. 'SriLanka's Foreign Policy' Vikas Publications 1984.

146.Nehru Jawahar Lal 'India Foreign Policy'New Delhi Publications Division 1971.

147.Narani, A.G. 'India,The Super Powers and the Neighbour,'Essays in Foreign Policy South Asian Publications New Delhi 1985.

148.Oliver Henry M.I. 'Economic Opinion and Policy in Ceylon' Duke University Press 1957.

149.Olschak, Balanche C. 'Bhutan: Land of Hidden Treasures',New Delhi 1971.

150.Ostheimer,John M. 'Then Politics of the Western India Ocean Islands.' Praeger Publishers, New yark 1975.

151.Olivr,Jhomas W 'United Nations in Bangladesh' Prineeton Univrsity Press.

152.Palmre, N.D. 'South Asia and United States Foreign Policy',Boston:Houghton Mifflin 1966.

153.Paranjpe,Shrikant 'India and South Asia,Since 1971' Radiant Publisheres Ne.Delhi-1985.

154.Phadnis,Urmila 'Ceylon and India Pakistan Conflict'. South Asian Studies, 1967.

155.Phadnis,Urmila & Luithui,Ela Dutta 'Maldives Winds of Change in an Atoll State.' South Asian Publishers New Delhi 1985.

156.Phadnis Urmila 'Religiion and politics in Sri Lanka Manohar Publishers Delhi 1976.

157.Paniker K.M. 'India and Indian Ocean ,an Ocean the Influence of Sea Power in Indian History.'London 1962.

158.Prasad Bimal 'The Origins of Indian Foreign Policy.' Calcutta 1960.

159.Pillay, K.K. 'South India and Sri Lanka.' Madrass 1975.

160.Paper H. 'Ancient Ceylon', New Delhi Marwah Pub.1982.

161.Pant Chandra Shekhare, 'Indo Bangladesh Trade Relations Problems and Prospects',New Delhi JNU 1980.

162.Dr.Parmanand 'Political Development in South Asia' Sterling Publishers New Delhi 1988.

163.Murphy, Leslie 'Maldives Emerging from Long Isolation.'

164.Rao,P.K.Ram Chandra 'India & Ceylon: A study.'Bombay Orient Longamans, 1954.

165.Rose, Saul, 'Politics in Southern Asia.' London:Macmillan and Co. 1963.

166.Rose, Saul, 'Socialism in Southern Asia' London Oxford 1959.

167.Rose, Lio,E. 'Bhutan's External Relations: Pacific Affairs, Vol.47 No.2 Summer 1974.

168.Rose, Lio, E, 'ThePJolitics of Bhutan.'Londan 1977.

169.Rahul, Ram. 'The Government and Politics of Tibet Delhi 1969.

170.Rahul, Ram 'Modern Bhutan.'Delhi- 1971.

171.Rose,Leo, E & Scholz John I, 'Nepal Profile of a Himalayan Kingdom',Westview Press, 1980.

172.Ramakant 'Indo-Nepalese Relations 1816 to 1877 Published by S.Chandee & Co.New Delhi 1968.

173.Rahman, Atiur, 'Political Economicof SAARC' Storling Publishers,New Dedlhi 1986

174.Rahul, Ram 'Rise of Nepal & Bhutan Munshiram Manoharlal, Publishers New Delhi 1984.

175.Raunaq Johan 'Bangladesh Politics Problems & issues.'University Press Bangladsh 1980.

176.Richard, F 'Sri Lanka - A country Study.' Washington D.S.,U.S.Govt.Printing Press .

177.Roy Chaudhry P.C 'Sri Lanka.'New Delhi Strellingn Publications 1985.

178Ramakant China & South Asia.

179. Ramaswamy. P. 'New Delhi & Sri Lanka' Allied Publications, New Delhi 1987.

180. Singh Patwant 'India and Future of South Asia" L London - 1966.

181. Srivastava, N.K. 'Foreign Policy of India' Sahitya Bawan, Agra, 1979.

182. Singh Rajveer, 'National Defence & Security.

183. Singh, Nagendra 'Bhutan, A Kingdom in the Himalayas New Delhi. 1972.

184. Shaha,Rishikesh, 'Nepal and the world Kathmandu-1955

185. Singh Kuldeep. 'India and Bangladesh Anmal Publications, 1987.

186. S.R.Chakravarti, Virendra Narayan 'Bangladsh'Vol.I History and Calture, South Asia Publishrs Jaipur

187. Sharma, Dr. S.R. 'Bangladesh Crisis and Indian Foreign policy Published by young Asia Publication, New Delhi 1978.

188. Saraf, Basant kumar 'Bharat, Adhunic Vishwa Lok Chetna Prakashans Jabalpur 1968.

189. Tresidder,A.J. 'Ceylon An Introduction to the Reseplendent Land Princetion, New Jercy, 1960.

190. Thomson, I. 'Changing Pottern in South Asia Poll Mall Press London.

191. Tinker, High 'India and Pakistan: A Political Analysis New Yark 1962.

192. Tinker High 'South Asia: A short History London Pall Mall press 1966.

193. Tiwari, J.N. 'War of Indpendence in Bangladesh Nav Chatan Prakashars Varanasi, 1971.

194. Upadyaya, 'Indo Soviet Cooperation Delhi-1975

195. Verma, S.P. and Misra K.P. 'Forign Policy in South Asia New Delhi- 1969.

196. Vas, Lt.Gen, E.A. 'The Dragan Kingdom Lancer International New Delhi 1986.

197. Vaidya, K.P. 'The Naval Defence of India Bombay, Thakker & Co.

198. Venkatchalam, M.S. 'Genocide in SriLanka Gian Publisheing House, Dlhi 1987.

199. Vedalankar, Haridutta 'Anter- Rashtrya Sambandh."

200. Verma Deenanath, Anter-Rashtriya Sambandh New Delhi 1970.

201. Wilcox, Wayne, 'The Emergency of Bangladesh foreign Affairs study 1973.

202. Welrawardhana, I.D.S. "Minority Problems in Ceylon" Pacific Affairs , 1952.

203. White John, Claude 'Castlas in Bhutan Geographical Journal 1910.

204. Williams,E.T., 'Tibet and her Nighbours. Berkeley 1937.

205. Wadhva,Charean D.
Raza,e Sadrel A
Siddiqui Haliz G
Mahamood Zafer
Sureshwaran,S. 'O Regional Economic Cooperation in
Schokman Y, Asia Allied Publishers , 1987.

206. Williams, L.F. Rushbrook, "The State & Pakistan Pub by faber & Faber, London 1966.

207. Westergaard, Kirsten 'State and rural Society in Bangladesh; A study in Relationship; 1986.

208. Wilson,Jayratnam "A Politics on sriLanka, 1947-73 Macmillan- 1974

209. Ziring Lawarence The Sub Continent in world Politics Praeger Publishers, 1978

210. Zafrulla,Khan,M. 'Pakistan's Foreign Relations, Karachi 1951.

211. Ziring, L. Politics in Pakistan 195859 New York, 1971

212. Zylanicus "Ceylon Between Orient and Accident Elek, 1970.

## Articles & World Affairs (Journals)


1. Ahmed Farid Khan — "Pakistan under foreign Yoke International Affairs 79-84 October 1959
2. Appadori , A — "The Tragedy of Pakistan Foreign Policy Eastern Economist 54,8May 1970.
3. Appadori, A — "Pakistan's Foreign Policy Objectivs weekend Review, 13 May 1967.
4. Appadori ,A — "India and Nepal : Politics of Aid and Trade". The Institut of Defence Studies and Analysis Journal, Newe Delhi 1970.
5. Aggawala, Merendra — Nepal plans Major Hydro Power Dam Eastern Economist 1977.
6. Arora, C.K. — Koirala Returns Home, Economic and Political weekly.
7. Abide,A.H.H. — "Regional Co-operations for Development Th formative phase Indian Journal of Politics Aug.1977
8. Adency,M.W.K.Carr, — "The Maldives Republic The Politics of the Western Indian Ocean Island, New York- 1975.
9. Anand J.P. — "Focus on Maldives, Century, Vol-12 Fab, 8,1975.

10. Alexandroweiz,C.H "India and the tibetan Tragedy, Foreign Affairs Vol. 31 No.3 1953

11. Appodorai,A. Chiness Aggression and India International Stadies,Vol 51963

12. Bista, K.N. "Interview on the foreign Policy of Nepal" for Eastern Economic Review

13. Brown ,M.A. The diplomatic Development of Nepal Asian Survey, July 1971.

14. Bvindword, Lord, "Pakistan in world Affairs year Book of world Affairs 1958.

15. Baral, L.S. "Opposition Groups in Nepal, 1960-70 India quarterly March 1972

16. Bhutto, Z.A. "Foreign Policy of Pakistan" Karachi 1964

17. Batuta, Abu abdallab 'Ibn Batuta in the Malaves and Ceylon." Journal of Royal Asiatic Society 1882.

18. Bell,H.C.P. The Maldives Island 2-4 April 1916

19. Bailay, F.M., 'Travels in Bhutan Journal of the Royal Control Asian Society, Vol. 17.1930.

20. Choudhary, A.H. "Pakistan's Foreign Relations Muslim Internation 7(2) Aug. 1968.

21. Consing,Artura,Y. "The Economiy of Nepal International Monetary Fund Staff Papers, Nov,. 1963.

22. Chauran, R.S. "Struggle and Change in South Asia Monarchies, New Delhi 1977.

23. Chari, P.R. "Pakistan's Nuclear Option Indian Journal of Asian Studies, Jan 1977.

24. Chari, P.R. Political Paralysis in Pakistan Strategic Analysis Dec, 1977.

25. Chaudharys Nwmuddin, "Industrial Conflict in Bangladesh, 1947.

26. Diwan, Ramesh, Development Education and the poor; Context of South Asia Economic and Political Weekly Feb. 1977.

27. Dupree, L. 'The Regional Co-operation for Development, Pakistan, American University field staff Reports South Asian series Nov. 1966.

28. "Destroyers sent to Maldives," Sunday Telegraph 6 Jan 1963.

29. Facts About Nepal Kathmandu, H.M. Government Ministry of Communication.

30. Foreign Affairs Pakistan Ministry of foreign Affairs

31. Gupta Sishir, Power Structure of South Asia The Round Table, Vol 238 April 1970.

32. Ghorie, K.K., Nepal and its Neighbovrs Pakistan Harizan, Vol XVIII, 1964.

33. Hasan, Zubeida "Pakistan-U.S.S.R. Relations Pakistan Horizan Vol XXI.

34. Hasan Zubeida, "Soviet Arms Aid to India and Pakistan, Pakistan Horizon. Vol XXI

35. Inteernational Quaterly Journal of the International Studies J.N.U. 1974

36. Jacksori, Calori- "A Fresh Start with pakistan New Commonwdth, February, 1960.

37. Jain, R.K. "China Pakistan and Bangladesh, V 2 Basic Documents, 1950-76 New Delhi. 1977.

38. Khan, Mohammad Ayub "The Foreign Plicy of Pakistan, Pakistan Harizan Vol XVIII, 1964.

39. Khan M.Sher Ali, "Some Aspects of Pakistan's Foreign Policy Pakistan Harizan Vol XXIII 1970.

40. Khan, Mohammad Ayub Speeches and Statements. Karachi, Vols 1-4

41. Levi, Werner, "Nepal's International Position United Asia, 12(4)

42. Levi werner, Nepal in world Politics Pacific Affairs 30 Sep. 1957.

43. Lyon, Peter "Bangladesh, Fashioning a foreign Policy South Asian Review, London April 1972.

44. Lallanji, Gopal and Verma "Studies in History and Culture of Nepal Varanasi 1977.

45. Mehta,Balraj, "Nepal in world Affairs Mainstream 1(39) May 25, 1963.

46. Muni, S.D., "Nepal-Pakistan Relations, Partnership in Expediency South Asian Studies Vol.V Nov 1970.

47. Muni,S.D., "Ceylon, Nepal and the Emergance of Bangladesh ande Phadnis Urmila, Economic and Political Weekly (Bombay) Vol VII Feb. 1972.

48. Mustfa, Zabeida, "Thoughts on Indo Pakistan Relations in the Taskand Era.

49. Mehra,P.L. " Lacunae in the study of the History of Bhutan and Sikkim Indian History Congress, Proceedings of 23rd session, Calcutta 1961.

50. Moorthy, K.K., Bhutan- the Economic Scene for Eastern Economic Review, Vol 31. Feb. 23 1961.

51. Mehrotra, O.P. "Political Crisis in Pakistan Stratesie Analysis 1 April, 27-30

52. Mehrotra, O.P. "Recent Development in Pakistan Strategic Analysis, Nov 1977.

53. Maloney,Clarence, 'The Maldives:New Stress in an old nation" Asian survey, 7 July 1976.

54. Marphy, Leslie, 'Maldives Emerging from Long Isolation

55. Nepal's Indiscreption' Organiser 20(2) October-30,1966

56. Nepal, The Himalayan Kindom, Kathmandu Ministry of Communications

57. O' Ballancs,E, The Struggle for Nepal's Fastern world, August/September, 13-14 1965

58. Pant Yadav prasad 'Nepal's Recent Trade Policy' Asian survey, IV July 1964.

59. Pradhan,Manik Lal 'Studies on soils of Tarai Belt of Nepal Nepaleese Journal of Agriculature

60. Problems of food Distibution in Nepal Economic Affair Report (Kathmandu) II 1964.

61. Proclamations, Speeches and Massages of H.M. king Birendra, 1972-1981 Kathmandu 1982

62. Rose, Leo, E 'Bhutan's External Relations, Pacific Affairs Vol. 47 1974

63. Rana,Pashupati, Shumshere, J.B., 'India and Nepal The Palitical Economy of Relationship Asian Survey, July 1971

64. Ray, H. 'Communism in Nepal Contemporary Review ,'Jan 1968

65. Regmi,Mahsh Chandra,"Recent Land Reforms Programs in Nepal." Asian Survey September. 1961.

66. Salisbury, H. 'Troubled India and Her Neibour Foreign Affairs Vol 43. 1965.

67. Shreshtha, Badri Prasad, 'Current Land Reforms Programme in Nepal " Nepalese Prosperctive, II (1966)

68. Common Quest for peace and Development Inaugural Address by Smt. Indira Gandhi at SAARC Meeting of Foreign Ministers, 1 Aug. 1983.

69. Sri Lanka Foreign Affairs Record (Colombo)

70. Trade with Burma, 'Bangladesh and SriLanka Eastern Economist 69, Sep. 23 1977.

71. White,John Claude 'Castles in Bhutan' Geographical Journal Jannary 1910.